भ, मान, अमू[illegible]नते रहितहौं, कर्म रूपहौं कि अकर्म रूपहौं, सब जगत्का उपादान कारण अज्ञान वा
च्छौं, सम्[illegible] पदार्थोंके मध्ये मैं कौनहौं हे शांतिदायक कृपालो? सर्वहितेच्छु सर्व शिष्योंके संताप
रके [illegible]नबंधो हे यथार्थदर्शी संशय विध्वंसक सतगुरो इस संशय रूपी समुद्रसे आप कृपा करके मु-
[illegible] शरणको प्राप्त हौं, इस प्रकार श्रद्धावान शिष्य मैत्रेयकी [illegible]

द्रियोंका तथा मनादिकोंका मैं विषयहौं
रसके विकारोंसे रहित और रसका मुख्यज्ञाता जो आत्मा उस स्वप्रकाशहौं वा परप्रकाशहौं कर्मवान्हौं वा
परिमाण करनेवाला स्पर्शके सर्व विकारोंसे रहित स्पर्श र्ताहौं कि नहीं वा कोई अन्यकर्ता है ॥ मैं निष्कर्तव्य
पदार्थ भिन्न देशमें स्थित हैं अरु रूपादिकोंके कारण स्वरूपहौं कि कार्य्य स्वरूपहौं वा तिनते रहितहौं
इसीते रूपादिकोंके गुण दोपको चक्षु आदि वस्तु स्वरूपहौं कि तिनते रहितहौं, नाम रूप स्वरूपहौं वा
जानते भी नहीं तैसेही प्रत्यक् आत्मा स्वरूपहौं कि नहीं, यज्ञ दानादि रूपहौं कि तिनते रहितहौं,
काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहं जंगमहौं, बालकहौं कि युवाहौं वृद्धहौं वा बालकादि अवस्था रूप हौं
दंभ, अदंभ, मान, अमान रूपहौं कि प्रकाशरूपहौं सुख दुःख रूपहौं कि तिनते रहितहौं लक्ष्य रूप
मरण, मूर्च्छा, सुषुप्ति तिनते रहितहौं, कर्म रूपहौं कि अकर्म रूपहौं, सब जगत्का उपादान कारण अज्ञान वा
ज़िस करके बंधो पदार्थोंके मध्ये मैं कौनहौं हे शांतिदायक कृपालो? सर्वहितेच्छु सर्व शिष्योंके संताप
माण सर्व हे यथार्थदर्शी संशय विध्वंसक सतगुरो इस संशय रूपी समुद्रसे आप कृपा करके मु-
शरणको प्राप्त हौं, इस प्रकार श्रद्धावान् शिष्य मैत्रेयकी रस भरी हुई वाणी सुनके पराशर मुनि
एकही समाधानसे करतेभये हे मैत्रेय? पूर्वही जो तुमने देहसे लेकर अज्ञान पर्यंत सब पदार्थ कहे हैं सो तू
ज्ञान अरु अज्ञानके कार्य जो सर्व पदार्थहैं वे परस्पर व्यभिचारी हैं तथा परस्पर सापेक्षावाले हैं तथा आपसमें कार्य
हैं तथा चेतनके दृश्यहैं तथा देश काल वस्तु परिच्छेद वाले हैं तथा पट्भाव विकार वाले हैं तथा अतिशयतादि
वा भ्रम ज्ञानके विषय हैं तथा जड़हैं तथा वाचारंभण मात्र हैं तथा स्वप्नवत् प्रतीतिमात्र हैं तथा अविद्याके

नके
देक
स्थितहैं
कोंको
सकर
स्मृति,
ग्रुति,
कि
परि-
शसे
प्राण
यना-
योंके
अरु
ना एक
होनेवाले

तनके विवर्तहैं और रज्जु सर्पकी न्यांई केवल मिथ्याही तुम्हारे स्वरूपमें कल्पित प्रतीतिमात्र होतेहैं, स्वप्नदृश्यकी न्यांई-
नहींहैं हे मैत्रेय ! वास्तवसे जो तुमने देहसे लेकर अज्ञानपर्यंत पूर्वपदार्थ कहेहैं तथा अन्यभी अनेक पदार्थहैं सो
चरहैं और तुम्हारा स्वरूप अवाङ्मनसगोचरहै सो साक्षात् कहनेके हमभी समर्थनहीं तैसेही तुमभी उसको साक्षात्
नेको समर्थ नहीं कांहेते सर्वजीव जिसको हररोज़ विषयसुखको अनुभव करतेहैं वह जो शब्द स्पर्शादिक विषय
क्षात् दृश्यकी न्यांई कहनेको तथा जाननेको कोई समर्थ नहीं होता तो सर्वप्रकारके अवाङ् मनसगोचर
को साक्षात् किसी मिसविना विद्वान् कैसे कहेंगे और कैसे मुमुक्षु जानेंगे किंतु कहना और जानना
इसका कहना और जानना दोनोंही होसक्ताहै जैसे मनकरकेभी अचिंतनीयहै रचना
उत्पत्ति पालना और संहारका रूप व्यवहार जो करनेवालाहै जगत्का स्वामी
का रूप जाननेमें आताहै तथा जैसे चित्रोंको देखकर चित्रेलेका होना
ख दुःखादि सर्व पदार्थ जिसकरके सिद्ध होतेहैं वही तुम्हारा स्वरूप है
नके शुभाऽशुभ फुरनेका जो साक्षीरूप करके निर्विकार
स्थितहै सो तुम्हारा स्वरूपहै जैसे घट् प्रकारके रूपकी
पके विकारोंसे रहित रूपका उपचारक द्रष्टाहै “तथा
ब्द विकारोंके रहित शब्दका उपचारक ज्ञाताहै ॥ २
ाला घ्राण इंद्रिय गंधसे भिन्न सर्व गंधके
करनेवाला रसनेंद्रिय रससे भिन्न सर्व

रसके विकारोंसे रहित और रसका मुख्यज्ञाता जो आत्मा उसकी उपाधि होनेते गौणज्ञाताहै जैसे स्पर्श विषयके न्यून अधिक भावके परिमाण करनेवाला स्पर्शके सर्व विकारोंसे रहित स्पर्श विषयका उपचारक ज्ञाता त्वचा इन्द्रिय स्पर्शते भिन्न है" काहेते रूपादिक पदार्थ भिन्न देशमें स्थित हैं अरु रूपादिकोंके परिमाण करनेवाले चक्षु आदिक उपचारक द्रष्टाभिन्न देशमें नाम देह विषे स्थितहैं इसिते रूपादिकोंके गुण दोषको चक्षु आदिक इंद्रियरूप द्रष्टा स्पर्श नहीं करते तथा रूपादिक पदार्थ अपने द्रष्टा चक्षु आदिकोंको जानते भी नहीं तैसेही प्रत्यक् आत्माभी इस देहरूप संहात विषे मन वाणीके कथन चिंतनते रहित स्थित हुआ हुआभी जिसकर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, लज्जा, अलज्जा, धृति, भय, अभय, शांति, अशांति, यथार्थज्ञान, अयथार्थज्ञान, स्मृति, अस्मृति, दंभ, अदंभ, मान, अमान, मनकां शुभाशुभ फुरणा, हर्ष, शोक, ध्यान, अध्यान, बंध, मोक्ष, ग्रहण, त्याग, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, मरण, मूर्च्छा, समाधि आदिक सारांश यह कि दैवी आसुरी गुण वा मन सहित सर्व मनके धर्म जिसकर सिद्ध होतेहैं तात्पर्य्य यह कि जिस करके पूर्वोक्त सर्व पदार्थ जाननेमें आतेहैं सोई तुम्हारा स्वरूपहै दुःख सुखादि पदार्थोंको अंतरताकडीन्त् [तराजू] जो परिमाण करनेवालाहै जो मनादिकोंकूं करके परिमाण कराजावे नहीं सो मनादिकोंका साक्षी प्रकाशक परमात्मासे अभिन्न महाकाशसे अभिन्न घटाकाशकी न्याँई प्रत्यक् आत्मा तुम्हारा स्वरूपहै तथा प्राणादिकोंके क्षुधा पिपासादिक धर्मोंको जो जानताहै तथा प्राण अपानादिकके न्यून अधिक भावको जो जानताहै सो प्रत्यक् आत्मा तुम्हारा स्वरूपहै । अरु जो शरीर तथा शरीरके शयनादिक सर्व धर्मोंको जो जानताहै वहिर्घट द्रष्टाकी न्याँई; तथा चक्षुआदिक इंद्रियोंका तथा चक्षु आदिक इंद्रियोंके मंद वधिरत्वादिक सर्व धर्मोंकी न्यूनता अधिकताको जो अंतर जाननेवाला है सोई प्रत्यक् आत्मा तुम्हारा स्वरूपहै अरु जो शरीरात्मक पंचमहाभूतोंको तथा शरीरके अंतर रहनेवाले पंचमहाभूतोंका कार्यरूप क्रोधादिक पच्चीस वा सत्ताईस वा एक सौपच्चीस १२५ प्रकृतियोंका तथा भूत भविष्यत् वर्तमानकालको जो सिद्ध करताहै तथा भूत भविष्यत् वर्तमानकालमें होनेवाले

पदार्थोंका जो सिद्ध करनेवालाहै सो तुम्हारा स्वरूपहै अरु जो मन बुद्धि अहंकार चित्तादिक अंतःकरणको तथा अंतःकरणकी सात्विकादिक वृत्तियोंको सिद्ध करनेवालाहै सो तुम्हारा स्वरूपहै अरु जो सगुण वा निर्गुण परमेश्वरके ध्यान अध्यानका जो अंतर साक्षी ज्ञाताहै तथा भाव अभावकी तथा अस्तिनास्ति सर्व पदार्थोंको जो सिद्ध कर्ताहै सो तुम्हारा स्वरूपहै ॥ अरु जो सात्विकी वृत्तियोंकी उत्पत्ति अनुत्पत्तिको तथा राजसी वृत्तियोंकी अनुत्पत्ति उत्पत्तिको तथा तामसी वृत्तियोंकी उत्पत्ति अनुत्पत्तिको जो जानताहै सोई तुम्हारा प्रत्यक् भाव स्वरूपहै ॥ अरु जो सात्विकी वृत्ति अंतःकरणते उदय होकर नष्टहोगई जबतक राजसी वा तामसी वा पुनः सात्विकी वृत्ति उदय भई नहीं तिस संधिमें स्थित होकर दीपक देहली न्यायकर सात्विकी वृत्तियोंके अस्तभावको अरु दूसरी राजसी तामसी तथा सात्विकी वृत्तियोंके अनुदयको अपने स्वप्रकाश रूप करके जो सिद्ध करताहै सोई तुम्हारा स्वरूपहै तैसे जब राजसी वृत्ति उदय होकर नष्ट होगई और सात्विकी तामसी वा पुनः राजसी वृत्ति उदय नहींभई तैसेही जब तामसीवृत्ति उत्पन्न होकर पुनः नष्ट होगई और जबतक सात्विकी वा राजसी वा पुनः तामसी वृत्ति उत्पन्न हुई नहीं तब लग तिसकालमें जिस शांतरूप निर्विकल्प प्रकाश करके पूर्वोक्त व्यवहार सिद्ध होताहै सोई सत्रूप तुम्हारा स्वरूपहै तात्पर्य्य यहकि सर्व वृत्तियोंकी संधियोंमें स्थितहुआ हुआ दीपक देहली न्यायवत् सर्व वृत्तियोंके भाव अभावको जो सिद्ध करनेवालाहै सो प्रत्यक् आत्मा तुम हो अरु जिसको मन मनन कभीभी नहीं करसक्ता अरु जिसको बुद्धि निश्चय नहीं करसक्ती और जिसको चित्त चिंतन नहीं करसक्ता अरु जिसको अहंकार अहंपना नहीं करसक्ता क्योंकि वह जाति गुण क्रियादि संबंधवाले पदार्थोंकोही मनादिक चिंतन करसक्तेहैं और यह प्रत्यक्आत्मा जातिगुण क्रियादि संबंधवान् दृश्यपदार्थोंसे रहित है और तिनका द्रष्टा है और यह नियमहै कि दृश्य द्रष्टाको प्रकाश नहीं करसकती उलटा द्रष्टाही दृश्यको प्रकाश करताहै सूर्य दीपकादिकोंसें यह प्रसिद्ध दृष्टांतहै इसीलिये मनआदिकोंके साक्षीद्रष्टा आत्माको मनआदिक पूर्वोक्त मननादिक नहीं करसकते किन्तु मन बुद्धिआदिकोंके भावाभावको ताथ उन्होंके न्यून अधिक भावको तथा मनआदिकोंके शांति अशांति

धृति अधृति आदिक धर्मोंको जो जानताहै सोई वस्तु तुम्हारा स्वरूपहै। तथा यह जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्त्यादि प्रपंच जिसकरके सिद्ध होताहै औ जिसकरके पंचकोशोंका परिमाण होताहै तथा जो पंचकोशोंसे अतीत पंचकोशोंका साक्षीप्रकाशक वा स्वामीहै सो चैतन्य वस्तु तुम्हारा स्वरूपहै। हेशिष्य! सर्व पदार्थ व्यभिचारीहैं इसीसे मिथ्याहैं जो अव्यभिचारी वस्तुहै सोई सत्यहै जैसे घटमें पट नहींहै और पटमें घट नहींहै किन्तु सर्व घट पटादिकों में मृत्तिका अनस्यूत अव्यभिचारीहै तैसे अज्ञानसे लेकर देह पर्यंत सर्व पदार्थ परस्पर एक दूसरेमें नहींहैं अर्थात् सबका सबमें अभावरूप व्यभिचारीहै इसीसे मिथ्याहै परन्तु अस्ति भाति प्रियरूप प्रत्यक् आत्मा तिन सर्व पूर्वोक्त पदार्थोंमें अनस्यूत अव्यभिचारीहै इसीसे वह सत्यहै जैसे भूषण व्यभिचारीहैं अरु स्वर्ण अव्यभिचारीहै इत्यादि अनेक दृष्टांतहैं सोई दिखलातेहैं, जैसे वर्तमान जाग्रत् अवस्थाका सिद्धकर्ता प्रत्यक्आत्माका जाग्रत अवस्थाके साथ अन्वय नाम अभेदहै और स्वप्न सुषुप्ति मूर्छा मरण समाधि आदिक अवस्थाका जाग्रत् अवस्थासे व्यतिरेक नाम अभावहै तथा जाग्रत्अवस्थाके सिद्धकर्ता आत्मासेभी इनका व्यतिरेकनाम अभावहै तैसेही स्वप्नअवस्थामें आत्माका स्वप्न अवस्थाके साथ अन्वयनाम अभेदहै अरु जाग्रत् सुषुप्ति मरण मूर्छा समाधिका स्वप्न अवस्थाके साथ व्यतिरेकहै तथा आत्माके साथभी व्यतिरेकहै तैसेही सुषुप्ति अवस्थाका सिद्धकर्ता प्रत्यक् आत्मा सुषुप्तिसे अन्वयनाम मिलाहै अरु जाग्रत, स्वप्न, मरण, समाधि, आदिक अवस्थाका सुषुप्तिअवस्थासे व्यतिरेकहै नामभेदहै तथा उक्तआत्मासेभी उनका व्यतिरेक नामभेदहै सारांश यह कि जब जाग्रत् अवस्थाहै तब स्वप्नादिक अवस्थाका अभावहै परंतु जाग्रतके सिद्ध करनेवाले केवल आत्मास्वरूपका अभाव कदाचित् नहीं किंतु हाज़िरहुजूरहै उलटा स्वप्नादिकोंका अभाव और जाग्रतका भाव प्रत्यक् आत्मा करकेही सिद्ध होताहै तैसेही जब स्वप्न अवस्था होतीहै तब जाग्रतादिक अवस्थाका अभाव होताहै परंतु स्वप्न सिद्धकर्ता आत्माका अभाव नहींहोता उलटा जाग्रतादिकोंके अभावको अरु स्वप्नके भावको सिद्धकर्ता यह प्रत्यक् आत्माहीहै तैसेही जिसकाल में सुषुप्ति होतीहै तिसकालमें स्वप्नादिक अवस्थाका अभावहै परंतु सुषुप्तिके सिद्धकर्ता आत्माका अभाव नहीं उलटा सुषुप्तिके

भावको अरु स्वप्नादिकोंके अभावको तुम्हारा प्रत्यक्आत्मा स्वरूपही सिद्धकर्ताहै इसीरीतिसे जब समाधिनाम चित्तकी एकाग्रता अवस्था होतीहै तब जाग्रतादिक अवस्थाका अभाव होताहै सही परंतु तिसकालमें जाग्रतादिक विक्षेप अवस्थाके अभावको तथा समाधिरूप एकाग्रताके भावको सिद्ध करनेवाला प्रत्यक् आत्माका अभाव नहीं है यहीरीति मरण आदिक अवस्थामेंभी जानलेनी तैसेही घटादिक पदार्थोंका पटादिक पदार्थोंमें अभावहै तथा पटादिक पदार्थोंका घटादिक पदार्थोंमें अभावहै परंतु जिस सच्चिदानंद शब्दोंका पर्य्यायरूप यह अस्तिभाति प्रियशब्दोंका अर्थरूपप्रत्यक् आत्मा करकेही घट पटादिकोंकी सिद्धिहोतीहै तिसका अभाव कदाचित् नहीं है तैसेही जब सत्वगुण होताहै तब रजोगुण और तमोगुण नहीं होते परंतु सत्वगुणके भावको और रजोगुण तथा तमोगुणके अभावको जो सिद्धकर्ता प्रत्यक् आत्माहै तिसका अभाव नहीं तैसेही जब रजोगुण आताहै तब सत्व और तमोगुणका अभाव होता है परन्तु रजोगुणके भावको और सत्व तमगुणके अभावका सिद्धकर्ता आत्माका अभाव नहींहै तैसेही जब तमोगुण आताहै तब सत्व रजगुणका अभाव होताहै परंतु तमोगुणके भावको अरु रज तथा सत्वगुणके अभावको आत्माही सिद्धकर्ताहै तिसका अभाव नहीं तैसेही जब अज्ञान होताहै तब ज्ञान नहीं होता अरु जब ज्ञान होताहै तब अज्ञान नहीं होता परंतु आत्मा तिनके सिद्ध करनेवाला हाज़िर हुजूर सदासर्वदाही वर्तमान है तैसेही जब शुभसंकल्पचिंतन अनिश्चय औ शुभअहंपण होताहै तब अशुभसंकल्प अशुभ निश्चय अशुभचिंतन और अशुभ अहंपन नहीं होताहै तैसेही जब अशुभसंकल्प निश्चयचिंतन अहंपण होताहै तब शुभसंकल्प निश्चय चिंतन अहंपण नहीं होता परंतु तिनके सिद्धकर्ता आत्माका कदाचित्भी अभाव नहीं होता सदा हाज़िर हुजूरहै तैसेही कामवृत्तिके उदय हुआ हुआ क्रोधादिक वृत्तियोंका अभाव होताहै और जब क्रोधवृत्ति होतीहै तब कामादिक वृत्तियोंका अभावहोताहै परंतु तिनके सिद्धकरनेवाले आत्माका अभाव नहीं होता इसीरीतिसे सर्व पदार्थोंमें जानलेना सारांश यह कि जब सम्यक्विचार करें तो यही सिद्ध होता है कि घट औ भूषणादिक जो सब कल्पित पदार्थ मृत्तिका सुवर्णादिक अपने २ अधिष्ठान विषे हैंही नहीं केवल

स्वर्णादिक अधिष्ठानही हैं परंतु यह बात अलौकिक बुद्धिके नेत्रोंसे देखी जातीहै चर्म बुद्धि रूपी नेत्रोंसे यह देखी नहीं जाती हेमैत्रेय! जो पदार्थ किसी कालमें होवे और किसी कालमें नहीं होवे और तैसेही जो पदार्थ किसी देशमें होवें किसी में नहीं होवें और तैसे जो पदार्थ किसी वस्तु में होवे और किसी वस्तुमें नहीं होवे सो पदार्थ व्यभिचारी नाम मिथ्या होता है और जो सर्व देशमें होवे और जो सर्वकालमें होवे और जो सर्व वस्तुमें होवे सो वस्तु अव्यभिचारी नाम सत्य होतीहै जैसे सर्प दंड माला लकीर वृक्षकी जड़ इत्यादिक पदार्थ आपसमेंभी व्यभिचारी नाम भिन्न भिन्नहैं और रज्जुसेभी भिन्न हैं तात्पर्य्य यह है कि सर्प प्रतीति कालमें दंडकी प्रतीति होवे नहीं जब दंडकी प्रतीति होवे तब सर्पादिकोंकी प्रतीति होवे नहीं तैसेही जब मालाकी प्रतीति होती है तब सर्प दंडादिकोंकी प्रतीति होवे नहीं परंतु रज्जुका अभाव किसीकालमेंभी नहीं किंतु इदंत रूप रज्जुही सर्पादिकोंमें अनुस्यूत नाम व्यापक है तैसेही भूषणोंकाभी आपसमें व्यभिचारी नाम भेदहै क्योंकि वे आपसे भेद भिन्न हैं परंतु कल्पित भूषणोंके सिद्ध करने वाले स्वर्णका भूषणोंमें व्यभिचारी नाम अभाव नहीं इत्यादि अनेक दृष्टांत हैं इसलिये हे शिष्य! जो कल्पित तथा व्यभिचारी जाग्रतादिक सत्य असत्य सर्व पदार्थोंका सिद्धकर्ता परमात्मा महाकाशसे अभिन्न घटाकाशकी न्याईं अभिन्न सर्वत्र अव्यभिचारी जो प्रत्यक् आत्मवस्तुहै सोई तुम्हारा स्वरूप है और जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों करके जाननेमें नहीं आता किंतु जिस करके प्रत्यक्षादि प्रमाण सिद्ध होतेहैं और प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय, ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, द्रष्टा, दर्शन, दृश्य इत्यादि त्रिपुटी जिसकी कृपादृष्टिसे सिद्ध होतीहै सोई चैतन्य तुम्हारा स्वरूपहै और जो प्रत्यक्षादि षट प्रमाणों करके जाननेमें आताहै सो मायातत्कार्य जगत्का रूपहै तुम्हारा रूपनहीं और सर्व जगत्का उपादान कारण अज्ञान तथा सुषुप्ति कालका आवृत सुख सुषुप्तिमें जिसकी सत्तासे सिद्ध होताहै तथा जाग्रतमेंभी भ्रम अभ्रम वा भूल अभूल वा स्मरण अस्मरण रूप ज्ञान अज्ञान जिस करके सिद्ध होताहै सोई तुम्हारा स्वरूपहै हे शिष्य! मस्तक पर चंदन लगानेसे शीतलता होतीहै तथा पाँउमें अग्निका स्पर्श होनेसे वा पाँउमें कांटाही लगनेसे जलन होतीहै सो मस्तककी शीतलता तथा पाँउमें

जलनता जिस बुद्धि उपहित चैतन्य करके एकही काल विषे जानी जाती हैं सोई निराकार सच्चिदानंद पूर्वोक्त शीतलादिक पदार्थोंके भावाभावको जानने वाला प्रत्यक् आत्मा तुम्हारा स्वरूप है हे शिष्य! जो यदि यह कहोकि सर्व पदार्थोंको बुद्धि जानतीहै सो नहीं क्योंकि जो बुद्धिको प्रकाशता है सोई सर्वपदार्थोंको प्रकाशता है किन्तु इससे अन्यबुद्धि आदिक किसीकोभी नहीं प्रकाश करसक्ते जैसे बारियांवाले मंदिरमें वा छिद्रोंवाले घटमें अंधेरीरात्रिमें दीपकधराहोवे तथा मंदिरकी वारीयोंके वा घटके छिद्रोंके अग्रभागमें स्वभाविकही अनेक प्रकारोंके नील पीतादिरंगोंवाले पदार्थभी धरेहोवें, इसमें तुमको विचारकरा चाहिये किमंदिरकी वारीयोंके वा घटकेछिद्रोंके अग्रभाग धरे जो नील पीतादि रंगवाले पदार्थहैं सो किसकरके तिन पदार्थोंका प्रकाश होताहै कुछ वारीयों करकेभी तिन वारीयोंके अग्रभागधरे पदार्थोंका प्रकाश नहीं होता, तथा मंदिरकी दिवालोंसेभी तिन वारीयोंके अग्रभागधरे पदार्थोंका वा मंदिरके अंतरधरे पदार्थोंका प्रकाश नहींहोता, तथा मंदिर भीतरधरे जो पलंग वरतनादिक अनेक पदार्थ हैं तिनसेभी वारीयोंके अग्रधरे पदार्थोंका वा मंदिरका प्रकाश नहींहोता तथा तेलका आधारभूत जो मट्टी रूप काँचका गिलासहै तिससेभी किसी पदार्थका प्रकाश नहींहोता तथा गिलासके मध्येधरे तेलसेभी उस अपने आधारभूत परंपरा गिलासका। तथा अन्य किसी पदार्थका प्रकाश नहींहोता तथा परंपरा करके पृथिवीका कार्यभूत जो रुईकी-वत्तीसेभी अपना साक्षात् वा परंपरा करके आधारभूत जो तेल गिलासमंदिरादिक पदार्थोंका तथा मंदिरकी दीवालोंका तथा वारीयोंके अग्रभागधरे पदार्थोंका तथा मंदिरभीतरधरे अनेक पलंग आदिक पदार्थोंका किसीरीतिसेभी प्रकाश नहींहोता तथा वारीयोंके अग्र-भागमें धरे नीलपीतादिक पदार्थोंसे किसीभी पदार्थका प्रकाश नहींहोता किंतु शेषरही जो चम्पेकीकलीकीनाई अग्निरूप लाट ज्योति सोई वारीयोंके अग्रधरे नील पीतादिरंगों वाले पदार्थोंको तथा वारीयोंको तथा दीवालोंको तथा मंदिरको तथा मंदिरभीतरधरे पलँग आदिक पदार्थोंको तथा गिलासको तथा तेलको तथा पूर्वोक्त बत्तीको वत्तीपर आरूढअग्निरूपी लाटही सर्वको प्रकाश करैहै पूर्वोक्त-रीतिसे अन्य कोई पदार्थ प्रकाश करेनहीं लाटको अन्य लाटभी प्रकाश करे नहीं यह दृष्टांत अपरोक्ष सर्वके अनुभव सिद्धिहै तैसेही

यहां पंचभूतोंका कार्य जो देह मंदिररूपहै और श्रोत्रादि इंद्रिय वारीयां रूपहै, शब्द स्पर्शादिक श्रोत्रादिकइंद्रियोंके विषयवारीके अग्रभागधरे पदार्थों की न्याई हैं त्वचादीवालरूपहै मांस चूना औ गाराके तुल्यहै, पृष्ठ में दीर्घ अस्थिछतीरतुल्यहै छोटी अस्थिवाला बलिया [कडी] आदिक अनेक काष्ठरूपहै, पच्चीस प्रकृतियाँ मंदिर भीतरधरे पलँग वर्तन आदिकके समान हैं प्राण १ श्रद्धा २ सूक्ष्मआकाश वायु ज्योति अप औ पृथ्वी ७ दशइंद्रिय ८ मन अन्न वीर्य्य ११ तप मंत्र कर्म्म लोक लोकों विषयनाम १६ यह षोडशकलाहैं वा पंचज्ञानेंद्रिय, पंचकर्मेंद्रिय पंचप्राण एक अंतष्करणगिननेते षोडशतत्त्वहुये मन बुद्धि दो गिननेते सत्रहहुये चार गिननेते उनीस होतेहैं इन षोडशकलाप्रधान सूक्ष्मशरीर गिलासतुल्यहै तिनके मध्यमें प्राण रुधिरके तुल्यहै काहेते जैसे शरीर में रुधिर व्यापकहै तैसे प्राण भी शरीरमेंव्यापकहै अन्तष्करण तेलतुल्यहै बुद्धि बातीतुल्यहै मंदिरमें आकाशके तुल्य अज्ञानहै जैसे वत्ती आरुढ़ अग्निहीवत्तीसहित सर्वपदार्थोंको प्रकाशे है तैसेही बुद्धि पर आरूढ प्रत्यक् चैतन्य आत्माही बुद्धिसहित देह आदि अज्ञान पर्य्यंत सर्व जड़ अनात्म पदार्थोंको प्रकाश करैहै ताते बुद्धि आदिक सर्व पदार्थोंके जाननेहारे साक्षी आत्माको तुम अपना स्वरूप जानो हे शिष्य ! सुख दुःख तथा हर्ष शोक तथा धर्माधर्मका जो ज्ञाता है तथा जिस करके ग्रहण और त्याग दोनों सिद्ध होतेहैं तथा स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर और तिन तीनों शरीरोंके धर्मोंका जिस करके प्रकाश होताहै और जिसको कोई भी दृश्य पदार्थ प्रकाश नहीं करसकता सो प्रत्यक् चैतन्य स्वयंज्योति तुम्हारा स्वरूप है । तात्पर्य्य यह कि जो बुद्धि आकाश काल दिशा अतिसूक्ष्म अज्ञान आदिक सर्व अनात्म दृश्य पदार्थोंको तथा पृथिवी अप तेज वायु तथा तिनके कार्य देह पर्वतादिक अति स्थूल पदार्थोंको आत्मा समही प्रकाशता है जैसे हम लोगोंकी दृष्टिसे परमाणु अतींद्रिय है और देह पर्वत आदिक अति स्थूल है और सूर्यकी दृष्टिसे परमाणु सूक्ष्म नहीं और देह पर्वतादिक स्थूल नहीं काहे ते सूर्य परमाणु आदिक पदार्थको तथा पर्वतादिक पदार्थको तुल्यही प्रकाश करता है तैसे पृथिवी आदिक कार्य्यों की अपेक्षा करके पृथिवी आदिक कार्योंका कारण अज्ञानको अनादि तथा अतुच्छ तथा सूक्ष्म पनाहै चैतन्यकी तरफसे नहीं तू अस्ति

भाति प्रिय समान चैतन्य स्वमहिमा में स्थित हुआ हुआ अंतःकरण रूप अविद्या मायादिक उपाधिके योगते जीवत्व ईश्वरत्व भाव तथा ब्रह्मभाव तथा सर्वदृश्यका साक्षीभाव सच्चिदानंदादिक विशेष रूप करके अंतःकरण में तथा माया में स्फुरण होताहै परंतु समान विशेष भाव में तू चैतन्य स्वरूप समहै उपाधिकरके समान विशेष भाव है वास्तव नहीं जैसे रूप मात्र समान अग्नि सर्व घट पटादिक पदार्थों में तथा सूर्यकांतमणि में तथा सूर्य्य में सम है भी परंतु सूर्य्य और सूर्य्यकांतमणिके संयोगरूप उपाधिके संबंधसे समान अग्निही दाहकता उष्णता प्रकाशकता विशेष अग्निभावको प्राप्त होजाती है परंतु अग्नि निजस्वरूपसे समान विशेष भाव में समहै तात्पर्य्य यह कि जो बुद्धि आदिक सर्व अनात्म दृश्य पदार्थोंकी इयत्ता नाम परिमाण करने वालाहै और जिसकी किसी बुद्धि आदिक दृश्य अनात्म पदार्थोंसे इयता नाम परिमाण करा जाता नहीं सोई तुम्हारा स्वरूप है काहेते दृष्टासेही दृश्यकी इयता होतीहै दृश्यसे द्रष्टाकी इयता नहीं होती जैसे चक्षु आदिक इंद्रियोंसेही रूपादिक दृश्य पदार्थोंकी इयता होतीहै रूपादिक दृश्य पदार्थोंसे चक्षु आदिक इंद्रिय गौण दृष्टाकी इयता नहीं होती और जो सर्व देश काल वस्तुमें अस्ति भाति प्रियस्वरूप करके तिन देश कालादिकोंका अधिष्ठान सर्वदा हाज़िरहुज़ूरहै और जो हृदय देश विषे मन आदिकोंका साक्षी चैतन्य पुरुष स्थितहै और जो मनके चिंतनमें नहीं आता और जो मन आदिकोंके देखने हाराहै तिसी को तुम अपना स्वरूप ब्रह्म जानो और जो मन वाणीके चिंतन कथनमें आताहै तिसको तुम अज्ञान माया तत्कार्य्य प्रपंच जानो सो तुम्हारा स्वरूप ब्रह्म नहीं वो संसारी मायाका स्वरूपहै हेशिष्य! देह आदि माया पर्य्यंत सर्व दृश्य अनात्म पदार्थ किसी कालमें होतेहैं और किसी कालमें नहीं होते तैसेही सर्व पदार्थ किसी देशमें होतेहैं किसी देशमें नहीं होते तैसेही सर्व अनात्म पदार्थ आपसमें एक दूसरेमें व्यभिचार स्वभाव वालेहैं इसीसे सर्व पदार्थ मिथ्या हैं तथा जड स्वरूप और अप्रकाश स्वरूपहैं तथा दुःख रूपहैं तथा मायाके कार्य्य रूपहैं तथा उत्पत्ति विनाश स्वभाव वालेहैं तथा न्यून अधिक स्वभाव वालेहैं तथा आपसमें विरोधी अविरोधी स्वभाव वालेहैं तथा तुच्छ रूपहैं इसीसे मिथ्याहैं चैतन्य पूर्वोक्त सर्व पदार्थोंके स्वभावते अतीतहैं इसीसे

सत्यहै यद्यपि पूर्वोक्त सर्व पदार्थोंका उपादान कारण अज्ञान माया अपने कार्यकी अपेक्षा करके अनादि औ अतुच्छहै तथा अव्यभिचारी है तथा सर्व देश काल वस्तुमे व्यापकहै तथा अतीन्द्रिय औ सूक्ष्महै तथापि जबलग हृदय देशमें प्रत्यक् आत्मासे अभिन्न ब्रह्म वस्तुका बोध नहीं भया तब तकही अज्ञान वा मायामें अनादिपना आदिक पूर्वोक्त धर्महैं जैसे जब गुफामें वा ब्रह्मांडमें दीपक वा सूर्य्य उदय नहीं भया तबलगही अंधकारमें अनादिपनाआदिक धर्महैं किन्तु जब दीपक वा सूर्य उदय हुआ तब गुफामें वा ब्रह्मांडमें अंधकार खोजनेसेभी मिलता नहीं तैसेही जब ज्ञानरूपी हृदय देशमें सूर्य्य उदय हुआ तब अज्ञान वा मायाका अत्यंता भावहै क्योंकि घटादिकोंकी न्याई अज्ञानभी आत्मामें कल्पित है और जो कल्पित होताहै सो मिथ्या होताहीहै इससे कार्य्य कारण रूप कल्पित प्रपंचको आत्मा चैतन्यकी तर्फसे सत्ता औ स्फूर्तिदेना समानही धर्महै न्यून अधिक नहीं तैसेही कल्पित पदार्थोंमें भी स्वअधिष्ठान में कल्पितत्त्व धर्मभी समानही है न्यून अधिक नहीं नाम कल्पित पदार्थों में कार्य कारण भाव नहीं होता स्वप्न पदार्थोंवत् ताते अज्ञानादि देह पर्य्यंत सर्व पदार्थ व्यभिचारी होने ते मिथ्या हैं और तुम चैतन्य एकरस अव्यभिचारी आनंद स्वरूपहो ॥ हे शिष्य तू साक्षी चैतन्य आत्माही अस्ति भाति प्रिय समान रूप करके समान अग्निकी न्याई सर्व देश में तथा सर्व काल में तथा सर्व वस्तु में हाज़िर हुज़ूर औ अपरोक्ष स्थितहै यह बात विद्वान् लोक जानते हैं परंतु अस्तिभाति प्रिय समान रूप तू ही अंतःकरण नामक उपाधिके विषे सच्चिदानंद बुद्धि आदिका साक्षी रूपकरके विशेष स्फुरण होता है परंतु समान विशेष में तुझ चैतन्यका भेद नहीं जैसे सर्वत्र व्यापक रूप मात्र समान अग्निही काष्ठ मथनादि द्वारा दाहकता उष्णता प्रकाशकता विशेष रूपकरके स्थित होताहै परंतु अग्निका समान वा विशेष स्वरूपसे भेद नहीं तैसे सूर्यका प्रकाश सर्व में एकरस व्यापक है परंतु वही प्रकाश सूर्यकांतमणिके संबंधसे विशेष रूपताको प्राप्त होता है तैसेही अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वत्र समान चैतन्य आत्माही अपनी महिमा में स्थित हुआ हुआ अंतःकरण रूप अविद्या मायादिक उपाधिके योगसे जीवभाव ईश्वर भाव ब्रह्म भाव तथा सर्व दृश्य

प्रपंचका साक्षी भाव औ सच्चिदानंद भाव इत्यादिक विशेष रूप करके अंतःकरण में तथा माया में स्फुरित होताहै परंतु समान विशेष भावों में सामान चैतन्य स्वरूप समहीहै क्योंकि उपाधि करकै समान विशेष भाव है वास्तव नहीं ॥ हे शिष्य तू जो अवाङ्मनस गोचर चैतन्य आनंद स्वरूपहै तेरेही आनंदकी लेस लेकर सर्व दृश्यप्रपंच आनंद मान होरही है तात्पर्य्य यह कि यह जो असत् जड औ दुःख रूप सर्व दृश्य जात है यह भी जिस तेरे सच्चिदानंद स्वरूपहीसे सत् चित् औ आनंद रूप हो रहाहै हे साधो जैसे अन्न के बने हुये मोदक जलेबी आदि मधुर पदार्थ स्वयं मधुर रहित होके भी एक गुडके द्वाराही मधुर होतेहैं किन्तु आपसमें वा कौंचा कड़ाही आदि किसी अन्य साधन द्वारा मधुर नहीं होते परंतु गुड किसी पदार्थसे मधुर नहीं होता क्योंकि वह स्वरूपहीसे मधुरहै तैसेही देहादिक सर्व पदार्थ तुझ चैतन्य आत्मा करकेही सोभायमान होरहेहैं और तुझ दृश्यके द्रष्टा आत्माको दृश्य पदार्थ कोई भी सोभायमान नहीं करसक्ता इसीते तुम्हारा स्वरूप प्रत्यक् आत्मा स्वयं प्रकाश रूपहै हे बुद्धिमान् शिष्य ! जैसे पंचमहाभूत अपने कार्यरूप जो भौतिक पदार्थहैं उनमें लौकिक दृष्टि करके प्रविष्टभी हैं तथा अप्रविष्टभी हैं जैसे स्वर्ण अपने कार्य भूषणोंमें प्रविष्टभी है तथा अप्रविष्टभी है जैसे मृत्तिका अपने कार्यरूप सर्व घटोंमें प्रविष्टभी है तथा अप्रविष्टभी है जैसे रज्जु अपने में अध्यस्त सर्पादि-कों में प्रविष्टभी है तथा अप्रविष्टभी है जैसे स्वप्न द्रष्टा अपने विवर्त स्वप्न पदार्थोंमें प्रविष्टभी है औ अप्रविष्टभी है इत्यादि अनेक दृष्टांत हैं तैसेही सर्व नाम रूपात्मक जगत्का विवर्त उपादान कारण सच्चिदानंद स्वरूप तुम्हारा आत्माभी अपनेमें कल्पित नाम रूप संबंध क्रियावान् सर्व पदार्थों में प्रविष्ट और अप्रविष्ट दोनों है । प्रविष्ट कैसे है सुनो नामरूप संबंध क्रियावान् जगत् रूप भूषणोंका ऐसा अवयव कोई नहीं जो अस्ति भातिप्रिय रूप प्रत्यक् अभिन्न ब्रह्मात्मारूप स्वर्णसे खाली होवे तात्पर्य यह कितू अस्ति भाति प्रियरूप आत्मारूपहै और स्वर्ण नाम रूपात्मक जगत्रूपी भूषणोंमें ऐसा व्यापक होरहाहै मानो नामरूपात्मक भूपणों का स्वरूप तुझ आत्मासे जुदा कुछ हैहीनहीं सुतरां मानो आत्माने उनका अत्यंताभाव करदियाहै यह वात बुद्धिमान जानतेहैं जैसे देखिये अस्ति भाति प्रिय ब्रह्मरूप स्वर्णसे विना नामरूप भूषण

कहीं खोजनेसे मिलते नहीं किंतु आत्मारूप स्वर्ण नाम रूप भूषणोंविषे व्यापकहै इसीलिये कहा गयाहै कि अस्ति भाति प्रियरूप ब्रह्मनाम रूप भूषणोंविषे प्रविष्टहै तैसेही अप्रविष्टभी है क्योंकि प्रविष्टपना एक वस्तु विषे दूसरी वस्तुका होता है किंतु अस्ति भाति प्रिय स्वरूप ब्रह्मरूपी स्वर्णते नाम रूपात्मक भूषण पृथक्है नहीं सुतरां अस्तिभाति प्रिय स्वरूप ब्रह्मरूपी स्वर्णका नाम रूपात्मक जगत्रूपी भूषणों विषे प्रविष्टपनाभी नहीं वनसक्ता अज्ञजनोंको यद्यपि प्रविष्टपना तथा अप्रविष्टपना दोनो विरुद्ध धर्म एक अधिकरणमें नहीं बनसक्ते तथापि इहां मुमुक्षुके बोधवास्ते यह सब वर्णन है क्योंकि नामरूप कल्पित पदार्थोंके अधिष्ठान आत्माकी तो उन कल्पित पदार्थों में अव्यापकताकी प्रतीति होती है और कल्पित पदार्थोंकी प्रधानता करके प्रतीति होती है इसवास्ते कल्पित पदार्थोंमें अधिष्ठान की अनुस्यूतता तथा असंगता तथा सत्यरूपता तथा मुख्य प्रतीय मानता वा प्रधानता तथा अद्वैत रूपताके बोधवास्तेही यह उक्त वर्णन किया गयाहै तथा अधिष्ठानके अज्ञानसे प्रतीत होता जो यह नाम रूपात्मक कल्पित प्रपंचहै तिसकी तुच्छ रूपता तथा अत्यंताभावरूपता बोधनके लिये तथा अधिष्ठानसे पृथक् अन्य पदार्थोंकी सत्ताका अभाव तथा अधिष्ठानकी प्रतीति पूर्वकही कल्पित पदार्थोंकी प्रतीति तथा अधिष्ठानकीही प्राप्तिसे सर्व कल्पित पदार्थोंकी प्राप्ति तथा अधिष्ठानके स्फुरणसेही कल्पित पदार्थोंकी स्फूर्ति तथा अधिष्ठानके श्रवण मनन निदिध्यासन औ साक्षात्कारसे अधिष्ठान में कल्पित सर्व पदार्थोंका श्रवण मनन निदिध्यासन औ साक्षात्कार होता है इत्यादि तत्त्व मुमुक्षुको बोधन वास्ते येही प्रविष्ट अप्रविष्ट इत्यादि पूर्वोक्त श्रुतिका परिश्रम है वास्तव ते प्रविष्टता वा अप्रविष्टता आत्मामें नहीं इत्यादि दृष्टांत तथा दार्ष्टांत विषे यह अर्थ सर्व विद्वानोंको अनुभव सिद्ध है ताते हे अधिकारी जनो जो तुम ऐसा मानते हो कि हम आत्माको जानते हैं तो तुम नहीं जानते काहे ते जो जाननेमें आताहै सो दृश्य होता है तथा जड़ अनित्य किसीका कार्य्य मिथ्या व्यभिचारी तथा न्यूनाधिकाभाव आदि विशेषणों वाला होता है जो तुम आग्रहसे आत्माको ज्ञानका विषयही मानोंगे तो वेदादिक सर्व शास्त्र औ विद्वानोंके अनुभवसे विरोध होवेगा क्योंकि सर्व शास्त्र और विद्वानोंने आत्माको दृश्य किसीनेभी नहीं माना

अतएव आत्मा ज्ञानकाविषय है यह विपरीत बुद्धिहै यथार्थ नहीं ताते यही जानो कि सर्व प्रकारसे आत्मा तुम्हारा स्वरूप अवाङ्मनसगोचरहै जो वस्तु मनादिकों करके जानने में न आवे अरु अपरोक्ष होवे परंतु मन आदि जिसके द्वारा जानेंजाय अर्थात् उलटा मनादिकोंको प्रकाशे सो वस्तु स्वयं प्रकाश स्वरूप होती है ऐसा लक्षण इस बुद्धि आदिकोंके साक्षीआत्मामेंही घटै है अन्य दृश्य वस्तुमें नहीं घटै है हे शिष्य तू चैतन्य आत्मस्वरूप सुषुप्ति स्वप्न कालमेंभी सोवता नहीं जो तू सोजावे तो तुझको सोनेका ज्ञान कैसे होवे इसवास्ते तैल और वत्तीविना इस देह रूप मंदिरमें तू चैतन्य दीपक सर्वदा काल अखंड ज्योतिहै हे साधु स्वभाववाले अधिकारी जनो जैसे कोई उदासीन पुरुष चौथे अंबाले ऊपर की अटारी ऊंची जगहमें स्थित होवे तिसके नीचे चारों ओर से चौरस्ता चलता है तिन चौरस्तोंमें आप अपनी कामनाके अनुसार कोई तो जर जोरू जमीनके ग्रहणवास्ते तथा कोई मोक्षवास्ते अनेक प्रकारके स्त्री, पुरुष, राजा, साधु, पंडित, वेश्या, हस्ती, घोड़ा, रथ, भंगी चले जाते आतेहैं तथा शांतिमान्, अशांतिमान्, क्रोधी, आलसी, अभिमानी, दंभी अर्थात् अशुभ गुणवान् तथा शुभ गुणवान् स्त्री पुरुष चलेजाते आते हैं, तथा अनेक विधिके नाटक करनेवाले चलेजाते आते हैं तथा बाजा बजानेवाले चलेजाते आते हैं सारांश यहहै कि राजसी, तामसी, सात्विकी पदार्थों सहित पुरुष औ स्त्री चलेजाते आते हैं तथा अनेक विधिके इंद्रजालिक लोक अपने गुण दोषों सहित आते जाते हैं तथा उन्हीं रस्तोंमें अनेक शुद्ध अशुद्ध आदिक दोषवाले पदार्थ भी पड़े होतेहैं तथा अनेक विधिके विवाद भी होते रहतेहैं परंतु तिन गुण दोष सहित स्त्री पुरुषादिक पदार्थोंका तथा शुद्धि अशुद्धि सहित रस्तोंका तथा नित्यस्थित ऊंचे मंदिरके गुण दोषोंका तथा रस्तिओंका गुण दोषोंका ऊंचेस्थित द्रष्टा पुरुषकूं स्पर्श नहीं होता तैसेही अन्य देहोंकी दृष्टिसे यह पंचभौतिक मनुष्य शरीर ऊंचे मंदिर स्थानापन जानना, तथा पंच ज्ञानेंद्रिय औ पंच कर्मेंद्रियोंके छिद्र रस्तोंके समान हैं वा ज्ञानेन्द्रियोंका विषय शब्द स्पर्श रूप रस गंध औ कर्मेन्द्रियोंके विषय शब्द उच्चारण, ग्रहण, त्याग, गमनागमन मल मूत्रका त्याग रूप इत्यादि तथा मनादिकोंके विषय रस्तियोंके समान हैं वा सात्विकी राजसी तामसी स्वभावको लियेही सर्व देह इंद्रिय मनादिकोंकी

प्रवृत्ति निवृत्ति होती है इसलिये सत्व, रज, तम गुणही रस्ता (मार्ग) के समानहैं ॥ देह रूप मंदिरके पंचभूतोंकू चूना पत्थरकी न्यांई जानना माया वा अज्ञानको भूमि रूप जानना तथा समष्टि स्थूल सूक्ष्म औ कारण शरीरके अभिमानी जो विराट् हिरण्यगर्भ ईश्वर वा स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरोंके अभिमानी जो विश्व तैजस प्राज्ञ हैं व मंदिरके अभिमानी पुरुषोंके समान है और समष्टी वा व्यष्टी स्फुरणात्मक हैं वह आप अपने मतके अनुसार जीवकी वा ईश्वरकी फुरणाही मंदिरके बनानेवाले चेजारे (राज) के समान हैं तथा दश इंद्रिय प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान यह पंचप्राण और कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय यह पंच उपप्राण तथा चतुष्टय अंतःकरण तथा पच्चीस वा एकसौ पचीस वा २७ जो प्रकृति हैं वे भिन्न भिन्न आने जाने वाले लोकोंके समानहैं चक्षु आदिक इंद्रियोंकी तथा चक्षु आदिक इंद्रियोंके सूर्य्यादिक देवताओंकी जो अपने २ विषयोंमें स्वतंत्र प्रवृत्ति औ निवृत्ति हैं वे आप अपनी कामनाके समान हैं सुख दुःख हर्ष शोक मान अपमान बंध मोक्षादिक पदार्थ ही सांसारिक पदार्थ (जर जोरू जमीन) के समान जानने तथा पुण्य पाप रस्तयोंकी शुद्धि अशुद्धिके तुल्यहै तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिकी अपेक्षा जो तुरीय नाम चतुर्थी अवस्था है सो चौथे अंबालेके समान जाननी तथा पूर्वोक्त सर्व दृश्यके न्यून अधिक भावको जानने वाला तथा पूर्वोक्त सर्व पदार्थोंके भावाभावको तथा तिनके सर्व धर्मोंको जानने वाला जो सच्चिदानंद साक्षी स्वप्रकाश निर्विकार निर्विकल्प आत्माहै सोई उदासीन पुरुषकी न्यांई तुम्हारा स्वरूपहै नाम सो तुमही हो हेशिष्य तू चैतन्य आत्मा सर्व पदार्थोंमें स्थितभी निर्विकार स्थितहै जैसे आकाश कज्जलकी कोठडीमें स्थितभी निर्विकार औ अचल स्थितहै हे शिष्य ! जैसे आकाशमें सप्त ऋषियोंसे आदि लेके सर्व चंद्रमा सूर्य्यादिक नक्षत्र तारामंडलका चक्र दिन रात फिरता रहताहै क्योंकि रात्रिके आदि कालमें जिस स्थानमें जो नक्षत्र देखनेमें आतेहैं रात्रिके मध्यमें अन्य स्थानमें तथा रात्रिके अंत भागमें वही नक्षत्र अन्य स्थानमें देखनेमें आतेहैं ताते जाना जाताहै कि तारोंका चक्र फिरता रहताहै परंतु ध्रुव तारा अचल एकरस रहताहै जो अन्यताराओंकी न्यांई ध्रुवभी चलायमान होवे तो तिसका नाम ध्रुव नहीं किंतु अध्रुवहै तैसे माया वा अज्ञान रूप आकाशमें नक्षत्र ताराके समान

देहादिक पदार्थोंका चक्र निरंतर फिरता रहताहै कैसे सुनो जैसे अनेक वार जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्था होतीहैं पुनः मिटजातीहैं पुनः
होतीहैं पुनः मिट जातीहैं तैसेही वालक युवा वृद्ध अवस्था अनेक शरीरोंमें अनेक वार प्राप्तभई तथा मिटगई तैसेही कभी भविष्य-
त्काल वर्तमान काल होजाताहै वोही वर्तमान काल भूतकाल होजाताहै और पुनः पुनः भूत भविष्यत् वर्तमान काल होता रहताहै
तैसेही सत्वादिक गुणोंका अदल वदल पड़ा होताहै जाग्रतादिक अवस्थाके अदल वदलसे जाग्रतादिक अवस्थाके अंतरभूतस्थूल
सूक्ष्म कारणशरीर तथा तिनके अभिमानी विश्व तैजस प्राज्ञ तथा पंचकोशोंकाभी अदल वदल जानलेना तैसेही वैखरी मध्यमा पश्यंति
परा नाम वाणीका तैसेही ग्रहण त्याग तथा दिन रात ज्ञान अज्ञान काम क्रोध लोभ मोह शांति आदिकोंका अदल वदल जानलेना
तात्पर्य यह कि कभी दैवी गुण कभी आसुरी गुणोंका चक्र निरंतर फिरता रहताहै कभी संयोग कभी वियोग होजाताहै संयोगका वियोग
होजाताहै वियोगका संयोग होजाता है तैसेही मन बुद्धि चित्त अहंकारका चक्रभी फिरता रहताहै इसीते पूर्वोक्त सर्व चक्र मिथ्या है
परंतु जिस करके पूर्वोक्त चक्र फिरते सिद्ध होते हैं वा अदल वदल होते सिद्धहोते हैं सोई चैतन्य निर्विकार निर्विकल्प अचल असंग
तुम्हारा स्वरूप है जो प्रत्यक् आत्माभी पूर्वोक्त चक्रोंवत् चलायमान होगा तो अनित्य होजावेगा ॥ ॥ ॥

इति पक्षपात रहित अनुभव प्रकाशस्य प्रथमस्सर्गः ॥ १ ॥

हे मैत्रेय ! इसी प्रसंग ऊपर एक इतिहास कहताहों सो अमृत समान है बुद्धिरूपी श्रोत्रोंसे जव श्रवण करेगा वा बुद्धिरूपी
पात्रसों पीवेगा तव तू अमृत रूप हुआ हुआ अमृत भावको प्राप्त होवेगा पर ऐसा नहीं कि एक कानसे सुने दूसर कानसे
निकास देवे इसते प्रयोजन तेरा सिद्ध न होगा स्वयंभू मनुके कुलमें उत्तानपाद और प्रियव्रत नाम दो भाई चक्रवर्ती
राजा होते भये, उत्तानपादकी दो स्त्रियांथीं एकका नाम सुरुचि और दूसरीका नाम सुनीति था सुरुचि राजाको अत्यन्त प्यारी थी प-
हिली स्त्री सुनीतिसे ध्रुव नामा पुत्र हुआ वह पिताको अतिप्रिय था एक दिन राजा सिंहासनपर वैठा था तव ध्रुव आयकर राजाकी गोद-

सर्व जगत् जिसकी शरणागत है तिसीको तू एकाग्र चित्त करके स्मरण कर जिससे परमपद पावे हे ध्रुव सर्व कामना ते रहित हो-कर सर्व जगत् मय विष्णु जान जो संसारसे निराश होकर प्रेम संयुक्त औ निष्काम होकर तिस जनार्दनका ध्यान कर्त्ता है वह मन वां-छित फलको पाताहै तिस्से तुम भी जगत्की दृष्टी उठायकर जो सगुण वा निर्गुण जनार्दनमें मनको जोड़ो तो तुम्हारा कार्य्य सिद्ध होवे इस प्रकार मुनियोंने अनेक प्रकारका उपदेश करा और मंत्रभी उपदेश करा सो मंत्र यह है " ओं नमोनारायणाय " सो ध्रुव दृढ़ निश्चयको धार कर तपका आरंभ करने लगा जब ध्रुवका सभ हाल राजाने सुना तब अपना एक अनुचर भेजा और उसके द्वारा कहा हे ध्रुव तुम चतुर्थांशराज्यले पर इस निश्चयका त्याग कर तब भी ध्रुवने नहीं माना पुनः कहा कि अर्ध राज्यले और इस प्रणका त्याग कर तब भी ध्रुवने नहीं माना पुनः कहा कि सर्व राज्य ले तब भी नहीं माना और अपने मनमें विचारा कि देखो एक पाँव संसारसे निराश होकर हरिकी तरफ रखनेसे मुझे अब सर्व राज्य मिलताहै तो जो मैं सम्यक् हरिका चिंतन करोंगा तो अवश्यही अनंत फल पा-वोंगा इसीवास्ते अत्यंत दृढ़ निश्चय धार ऐसा तप करने लगा जो एक अंगुष्ठके ऊपर सर्व शरीरका भार रखदिया तब यह सब हकी-कत इंद्रादि देवता सुनकर आश्चर्यवान् हुये और भयको भी प्राप्त होते भये कि यह बालक हमारा स्वर्ग छीनेगा तब इंद्रादिक देव-ताओंने अनेक प्रकारके ध्रुवके तप नष्ट करने वास्ते राक्षस अग्नि वायु अप्सरा कामदेवसे आदि लेकर भेजे परंतु ध्रुव उनके विघ्नोंसे चलायमान न हुआ क्योंकि तिस कालमें ध्रुव अपने बीच नथा यह जानता था कि गुप्त और प्रकट सर्वत्र एक नारायणही है जब सर्व नारायणहै तो भय किसते होवे भय दूसरेसे होताहै जैसे जहाँ सर्व अग्निही अग्निहो दूसरी काष्ठादि वस्तु न होवे तब अग्नि किसको जलावे अग्नि अग्निको तो दाह करताही नहीं तैसेही जहाँ सर्व वायुही है दूसरी वस्तु नहीं तो वायु किसको शोषण करे तैसेही जहाँ जलही जलहै अन्य वस्तु नहीं तो जल किसको गाले जल जलको गालही नहीं सक्ता ताते महात्मा ध्रुव सूक्ष्म औ स्थूल परिछिन्न अहंकारको त्यागकर " अपने सहित सर्व नारायणहै " इस दृढ़ भावनाके वशते अग्नि आदि सर्व जगत्

स्थिर रहेगी तब एक वेरतो कुछ ध्रुवको अहंकारभी हुआ कि मैं सबते ऊंचाहों परन्तु उसी समय तपके प्रतापसे तथा प्रभुके दर्शनके प्रतापसे पुनः निरहंकार और शुद्ध भयाहै अंतःकरण जिसका ऐसा जो ध्रुव सो प्रभुके आगे प्रश्न करता भया हे स्वामी मैं कौन हों अटल पदवी लेने वाला और तुम कौनहो अटल पदवी देने वाले और अटल पदवी का क्या स्वरूप है और जगत्का क्या रूप है हे यथार्थवक्ता यथार्थ कहो कि मैं कौनहों यह मेरा संदेह दूरकरो विष्णुने कहा हे ध्रुव तुमको इन वातोंसे क्या प्रयोजन है इस प्रश्नके उत्तर देनेसे न तुम रहितेहो नमैं रहताहों न यह जगत् रह सकताहै न अटल पदवी रहतीहै तिस्से यह वात मत पूछ अन्य प्रसंग पूछो तब ध्रुवने कहा जो कुछ होय सो हो पर प्रश्नका उत्तर मुझको यथार्थ कहो ॥ तब विष्णुने कहा कि हे ध्रुव वास्तव ते न तू न मैं न जगत् यह सब भ्रम मात्र है सत्य नहीं सत्य एक अवाङ्मनसगोचर तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का जो साक्षी स्वरूप है सोई सत्य है तिसते व्यतिरेक वाणीका विलास मात्र है जैसे रज्जुमें मिथ्या रज्जुसे भिन्न सर्पादिक वाणीका विलास मात्र है इसीकारणसे हे ध्रुव मैं अद्वैतहों तब ध्रुवने कहा मेरी कामना पूर्ण न भई व्यर्थही भ्रम कर यह निश्चय किया है कि विष्णुने मुझको अटल पदवी दीनी हैं जैसे स्वप्नद्रष्टामे कल्पित जो स्वप्नके नर तिनको स्वप्नद्रष्टा अटल पदवी देवे अरु स्वप्न नर अटलपदवी लेवे सो भ्रम मात्र है ॥ विष्णुने कहा हे ध्रुव अटल पदवीको मत त्याग काहेते ज्ञानीको जैसे पदार्थ प्रारब्ध करके प्राप्त होवें तिन्हींसे प्रसन्न रहताहै ध्रुवने कहा जो सर्व तूही है तो फिर ज्ञानी अज्ञानी जुदे कहां हैं पर कहो मेरा रूप क्या है विष्णुने कहा वड़ा आश्चर्य्यहै जो स्वप्ननर स्वप्न द्रष्टा से कहै कि हे स्वप्नद्रष्टा मेरा स्वरूप क्या है जैसे सर्प रज्जुसे पूछे मेरा रूप क्या है जैसे भूषण स्वर्णसे पूछे मेरा रूप क्या है पर स्वप्नकेनर भूषण सर्पादिक जानते नहीं जड़ होनेते जो हम सर्वथा स्वप्नद्रष्टादिक रूप हैं हे ध्रुव यदि स्वप्नके नरादिक ऊंची भुजा करके पुकारें कि हम स्वप्नद्रष्टा रूप नही किंतु स्वप्नद्रष्टा ते भिन्न हैं स्वतंत्र हमारी सत्ता है यह बात तिनकी सुनके विद्वान लोग हँसते हैं और कहते हैं कि यह वृथा विलाप करते हैं जैसे कल्पित नाम रूप कहै

में बैठ गया तिस कालमें सुरुचि राजाके पास बैठी थी तब सुरुचिके मनमें यह बात सहन न हुई तब ध्रुवको बोली अरे तू राजाकी गोदसे निकस जा नहीं तो प्राण तेरे चले जायँगे और जो तेरी इच्छा राजाकी गोदमें बैठनेकी थी तो मेरे उदर विषे आके जन्म लेता जब ध्रुव इतने कहनेसेभी गोदसे न उतरा तब तो गुस्सेमें आके सुरुचिने एक हाथसे ध्रुवके मुखपर ऐसी चपेट मारी कि ध्रुव मूर्छा खाय-कर धरतीपर गिड़ पड़ा और पीछे बहुत रुदन करता २ अपनी माताके पास आया ध्रुवको व्याकुल देखके माता बोली कि हे पुत्र ! तू किसकारण व्याकुल हुआ है तब ध्रुवने सब हाल कह सुनाया तब माताने कहा कि हे पुत्र ! सुरुचिने सत्य कहा है क्योंकि जो तेरे जन्मके ग्रह नीच थे तभी मेरे उदर विषे आया नहीं तो उसके उदर विषे आता ॥ सुन ! अब क्रोध किये क्या होताहै हे पुत्र राज्य और यश आदि ऐश्वर्य तिसको प्राप्त होताहै जो तप करताहै ताते राज्यादिक पदार्थोंके भोगनेकी जो तेरी इच्छा हो तो गोविंदका भजन कर जो पूर्णकाम होवे जो तू पूछे कि भजन कैसे करों तो सुन अपने आत्मा सहित सर्व पदार्थोंको गोविंद स्वरूप जान इस प्रकार माताका वचन ध्रुव सुनके वनको जाता भया आगे सप्तऋषि ब्रह्माके पुत्र बैठे थे तिनको देखकर ध्रुवने नमस्कार किया और उन्होंने जब पूछा तो अपना वृत्तांत सब कह सुनाया औ प्रश्न किया हे भगवन् मुझको भजन गोविंदका उपदेश करो ? ऋषियोंने कहा कि अरे ध्रुव अभी तू बालक है अरु इसी कारण वैराग्य तुझको हुआ है अरु शीतोष्णादि द्वंद्व तैंने अभी सहन नहीं करे और संसारके सुख तैंने भोगे नहीं ताते तू उपदेशके योग्य नहीं॥तब ध्रुवने आग्रहसे कहा कि जो आप मुझको उपदेश नहीं करोगे तो मैं प्राणोंका त्याग करोंगा तब ऋषियोंने दृढ़ निश्चय देखके आश्चर्यमान् हुये और मनही मनमें कहने लगे यह ध्रुव नारायणको जरूर मिलेगा ऋषि बोले कि हे ध्रुव तेरा क्या प्रयोजन है तब ध्रुवने कहा कि हे भगवन् ! मैं माता पिता सहित ऐसी पदवीको पावों जो आगे कोई मनुष्य न पहुँचा हो तब ऋषि बोले हे ध्रुव ! जो तू आपा त्यागकर गोविंदकी शरण प्राप्त होवे तो वांछा तेरी पूर्ण होवे अत्रिने कहा हे ध्रुव जो सर्व दृश्यते अतीत है तथा सर्वमे व्यापक है तिसको अपने मन विषे ऐसा जान जो सर्व वही है इस निश्चय करकेही तू वांछित पद पावेगा पुनः अन्य ऋषियोंने कहा हे ध्रुव

सर्व जगत् जिसकी शरणागत है तिसीको तू एकाग्र चित्त करके स्मरण कर जिससे परमपद पावे हे ध्रुव सर्व कामना ते रहित हो-
कर सर्व जगत् मय विष्णु जान जो संसारसे निराश होकर प्रेम संयुक्त औ निष्काम होकर तिस जनार्दनका ध्यान कर्त्ता है वह मन वां-
छित फलको पाताहै तिस्से तुम भी जगत्की दृष्टी उठायकर जो सगुण वा निर्गुण जनार्दनमें मनको जोड़ो तो तुम्हारा कार्य्य सिद्ध
होवे इस प्रकार मुनियोंने अनेक प्रकारका उपदेश करा और मंत्रभी उपदेश करा सो मंत्र यह है " ओं नमोनारायणाय " सो ध्रुव दृढ़
निश्चयको धार कर तपका आरंभ करने लगा जब ध्रुवका सभ हाल राजाने सुना तब अपना एक अनुचर भेजा और उसके द्वारा कहा
हे ध्रुव तुम चतुर्थांशराज्यले पर इस निश्चयका त्याग कर तब भी ध्रुवने नहीं माना पुनः कहा कि अर्ध राज्यले और इस प्रणका त्याग
कर तब भी ध्रुवने नहीं माना पुनः कहा कि सर्व राज्य ले तब भी नहीं माना और अपने मनमें विचारा कि देखो एक पाँव संसारसे
निराश होकर हरिकी तरफ रखनेसे मुझे अब सर्व राज्य मिलताहै तो जो मैं सम्यक् हरिका चिंतन करोंगा तो अवश्यही अनंत फल पा-
वोंगा इसीवास्ते अत्यंत दृढ़ निश्चय धार ऐसा तप करने लगा जो एक अंगुष्ठके ऊपर सर्व शरीरका भार रखदिया तब यह सब हकी-
कत इंद्रादि देवता सुनकर आश्चर्यवान् हुये और भयको भी प्राप्त होते भये कि यह बालक हमारा स्वर्ग छीनेगा तब इंद्रादिक देव-
ताओंने अनेक प्रकारके ध्रुवके तप नष्ट करने वास्ते राक्षस अग्नि वायु अप्सरा कामदेवसे आदि लेकर भेजे परंतु ध्रुव उनके विघ्नोंसे
चलायमान न हुआ क्योंकि तिस कालमें ध्रुव अपने बीच नथा यह जानता था कि गुप्त और प्रकट सर्वत्र एक नारायणही है जब
सर्व नारायणहै तो भय किसते होवे भय दूसरेसे होताहै जैसे जहाँ सर्व अग्निही अग्निहो दूसरी काष्ठादि वस्तु न होवे तब
अग्नि किसको जलावे अग्नि अग्निको तो दाह करताही नहीं तैसेही जहाँ सर्व वायुही है दूसरी वस्तु नहीं तो वायु किसको
शोषण करे तैसेही जहाँ जलही जलहै अन्य वस्तु नहीं तो जल किसको गाले जल जलको गालही नहीं सक्ता ताते महात्मा
ध्रुव सूक्ष्म औ स्थूल परिछिन्न अहंकारको त्यागकर " अपने सहित सर्व नारायणहै " इस दृढ़ भावनाके वशते अग्नि आदि सर्व जगत्

कि हम अस्ति भाति प्रिय रूप जो अधिष्ठान सो रूप हम नहीं सो तिनका कहना हाँसीका आसपद है हे ध्रुव तैसे तू मुझसे पूछता है मैं कौनहों यह भी हास्यका विषयहै हे ध्रुव अहंभाव त्वंभावका मुझमें मार्ग नहीं केवल स्वयंप्रकाश स्वरूप अद्वितीय मैं हों ध्रुवने कहा तब तो मैंने व्यर्थ देहको कष्ट दियाहै काहेते जब तुम अद्वितीय हो तो मैं नहीं हों जब मैंहीं नही तब अटल पदवीसे तथा तुमसे तथा भजनसे तथा इस लोक परलोकसे क्या प्रयोजनहै विष्णुने कहा हे ध्रुव बालकोंकी न्याई विलाप मतकर, अविद्या करके जो काम हुआ सो हुआ तिसका क्या पश्चात्तापहै जो तैंने किया है सो अपनी वासना करकेही किया है मैंने तेरेको कछू दिया नहीं ध्रुवने कहा आश्चर्य्य है कि मुझ मूर्खज्ञान नेत्रोंसे अंधको अंधे कूपमे तुमने डाला क्योंकि तुझ चैतन्यते पृथक् यह अटलपदवी साहित संपूर्ण जगत् अंधकूप रूप है तथा मिथ्या है ताते सोई उपाय कहो जिसते इस अंध कूपते निकसों, विष्णुने कहा उपाय निकसनेका यही हैकि अपने सहित तथा अटलपदवी सहित सर्व जगत्को गोविंद जान और पश्चात्तापका त्यागकर, हे ध्रुव जब लग निद्रा दूर नहीं होती तबलग स्वप्न नर स्वप्नके स्थानोंमें कहीं नकहीं यात्रा करनीहीं होगी और स्वप्न स्थानोमे बुद्धिमानोको न्यूनाधिक भाव है नहीं हे ध्रुव सर्व शरीर सहित स्वप्न जगत् मिथ्याहै औ स्वप्नद्रष्टा ही सत्यहै यह जाननाही संसाररूपी अन्धकूपसे निकसना है तब ध्रुवने कहा कुछ चिंता नहीं जब सर्व गोविंद है तो पश्चात्तापभी गोविन्द है और न पश्चात्तापभी गोविंद है विष्णुने कहा अब हम जाते हैं तुम्हारा कल्याण हो और संत तुमको मिलैंगे ऐसे कहकर विष्णु अंतर्ध्यान भये अरु ध्रुव तिसी वनमें विचरने लगा और विचार करने लगा जो संत अचाहहैं मुझ सचाहको संत कैसे मिलेंगे सचाह पुरुषते वृक्षभी भय पातेहैं ताते मैं चाहसे अचाह हो वों तब संतसंग हो पुनः यही निश्चय किया कि सर्व नारायण है जब सर्व नारायणहैं तो लोक परलोक सों क्या प्रयोजनहै हे मैत्रेय ऐसे विचार करता था जो वामदेवादिक संत आवत भये कैसे संत हैं जो देह अभिमान रूपी पहरावेते नग्नहैं अरु यही कहतेथे कि हम अवाङ्मनसगोचरभी सर्व रूपहैं तथा सर्वरूप हुयेभी हम द्रष्टा सर्वरूप हैं जैसे स्वप्नद्रष्टा प्रपंचते अवाङ्मनसगोचर हुआ हुआभी स्वप्नमें सर्वरूपहै तथा सर्वरूप हुआभी असर्वरूपहै अरु सर्वभोक्ता-

भी हम अभोक्ताहैं अभोक्ताभी हम भोक्ताहैं विकल्प सहितभी हम निर्विकल्प हैं नीच ऊंच ग्रहण त्यागादिक सर्वरूप हमही हैं यह संपूर्ण नामरूप प्रपंच हमारे स्वरूप भूत सूर्य लालकी किरणा दमकाहैं सविकार सहित प्रतीती स्वमाया कर होते हुयेभी हम निर्विकार हैं चलतेभी हम अचलते हैं अरु अचलतेभी हम चलते हैं उपाधिकर कर्तेभी हम अकर्ते हैं अकर्ताभी हम कर्ता हैं निद्रा सहितभी निद्रा रहितहैं निद्रा रहितभी सनिद्रालू हैं इस रीतिसे परस्पर सर्व पदार्थोंको उलट पलट कर लेना शरीरसहितभी अशरीर हैं माया अविद्या सहितभी माया अविद्या रहित हैं निर्गुणरूप हुयेभी हम स्वमायाकर सगुणरूपहैं मन वाणीके अविषय हुये हुये भी सर्व मन वाणीके विषय रूपभी हमही हैं अरूप भी स्वरूप हैं अरस भी हम सरस हैं सशब्दभी अशब्द रूप हैं अशब्द भी सशब्द रूप हैं अस्पर्श भी सस्पर्श रूप हैं सस्पर्शभी अस्पर्श रूप हैं सगंधभी निर्गंध रूप हैं निर्गंधभी सगंध रूपहैं जैसे स्वप्नद्रष्टा निद्रा कर स्वप्नमे सर्वरूप प्रतीत होता हुआ भी वास्तव ते शुद्ध निर्विकार निर्विकल्प अद्वितीय असर्व रूप हैं पंचकोशोंते रहित भी हम चैतन्य पंचकोश रूप हैं अपंचकोश हुयेभी पंचकोश रूप हैं षट्भाव विकारोंते रहितभी हम चैतन्य षट्भाव विकार रूप हैं षट्भाव विकार हुये भी षटभाव विकारोंते रहित हैं सत रज तम गुणो ते तथा तिन गुणोंके कार्य जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तथा स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर तथा इंद्रियोंते तथा मन बुद्धि चित् अहंकारते तथा प्राणोंते तथा और प्रकृतियोंते असंगीभी संगी हैं तथा संगीभी असंगी हैं तात्पर्य्य यह कि सर्व नाम रूप स्वरूपभी हम नाम रूपते रहित हैं अरु सर्व नाम रूपते रहितभी हमही चैतन्य हैं नाम रूप स्वरूप अरु सर्वनाम रूपते रहितभी हम चैतन्य सर्वनाम रूप स्वरूप हैं सर्व शब्द स्पर्श रूप रस गंध, तथा पृथिवी अप तेज वायु आकाश अहंकार तथा महत्तत्त्व तथा प्रकृति रूपभी हम चैतन्यही हैं तथा इनते रहितभी हमही चैतन्य हैं काम क्रोधादि रूपभी हमही स्वप्नद्रष्टारूप हैं तथा तिनते रहित तिनका साक्षीरूपभी हमही हैं अमानित्वादिक दैवी गुण तथा दंभादिक आसुरी गुणरूपभी हमहीं स्वप्नद्रष्टारूप हैं तथा तिनते रहित तिनका साक्षीरूप असंगभी हमहीं चैतन्य हैं ज्ञान अज्ञान शुभ अशुभादि सर्व द्वंद्वरूप स्वप्न रूपभी हमही हैं तथा

हमही स्वप्नद्रष्टारूप हैं तथा तिनते रहित तिनका द्रष्टारूपभी हमही स्वप्नद्रष्टारूपहैं स्वप्नमे ब्रह्मा विष्णु शिवादि मूर्ति रूप हुये हुये भी हम
स्वप्नद्रष्टा असंग निर्विकार तिनके प्रकाशक चैतन्य साक्षीभूतहैं षट्ऊर्मी रूपभी हम षट ऊर्मी रहित हैं जीव ईश्वर रूपभी हम चैतन्य जीव
ईश्वर भावते रहितहैं आत्मा नात्मा भेद सहितभी हम चैतन्य तिस भेदते रहितहैं कायिक वाचस मानसिक सर्व चेष्टा कर्तेभी हम चैतन्य अक
र्ता हैं फुरणा रूपभी हम चैतन्य वास्तवते अफुररूप हैं माया कर महाकर्ता महाभोक्ता महात्यागी हम चैतन्य आत्मा वास्तवते अकर्ता अ-
भोक्ता अत्यागी हैं सर्व देश काल वस्तु रूपभी हम पूर्ण चैतन्य आत्मा वास्तवते देश काल वस्तुते रहितहैं तथा तिनके भेदते रहितहैं धर्माधर्म
रूपभी हम चैतन्य वास्तवते धर्माधर्मते रहितहैं सुख दुःख रूपभी हम अनंतात्मा वास्तवते सुख दुःखते रहितहैं माया अविद्यामें हम चैतन्य
सूर्य्यका वा आकाशका आभास पडताहै तिसीको जीव ईश्वर कहतेहैं अरु तिन आभासोंमेंही सर्वज्ञतादकहैं समुद्र तथा तलावडीमें सूर्य्य
वा आकाशके आभासवत् जैसे सूर्य्य वा आकाश रूप बिम्ब समुद्र वा तलावडीके आभास सहित तिनकी सर्वचेष्टाते निर्लेप असंग शुद्ध
निर्विकारहैं तैसे हम बिम्बभूत चैतन्य माया अविद्या सहित जीव ईश्वर आभासोंकी सर्व चेष्टाते रहित निर्विकार निर्विकल्पहैं हम चैतन्यही
इस नाम रूप जगत्की स्वमाया कर उत्पत्ति पालन संहारकर्ते हुयेभी वास्तवते निर्विकारहैं स्वप्नद्रष्टावत्॥हम नित्य सुख चिद रूपही सर्व
जगत्कर पूज्यहैं जैसे स्वप्न जगत्कर स्वप्नद्रष्टा ही पूज्य होताहै अरु हम चैतन्यही इस मनआदिक जड़ जगत्की चेष्टा करातेहैं जैसे
तंत्री पुरुष जड पुतलियोंकी चेष्टा कराताहै हम चैतन्य आधार रहितभी सर्वका आधारहैं हम चैतन्य ही सर्व मनआदिक नामरूप
जगत् का प्रकाशक द्रष्टा अधिष्ठानहैं हम चैतन्यका प्रकाशक द्रष्टा अधिष्ठान अन्य नहीं इसीते हम चैतन्य स्वयंप्रकाश रूपहैं भूत
भविष्यत वर्तमान तीनों कालोंके तथा तीनो कालोंमें वर्तने वाले पदार्थोंका हम चैतन्यही सिद्धकर्ता हैं हमारा कोई सिद्धकर्ता नहीं
हमारे चैतन्य स्वरूपमें ज्ञान अज्ञान नहीं जैसे सूर्य्यमें दिन रात्रि नहीं उलटा सूर्य्य करही दिन रात्रिकी सिद्धी होतीहै तैसे ज्ञान अज्ञानकी
हम चैतन्य करही सिद्धी होतीहैं सुख दुःखादिकोंके साक्षी हम चैतन्य आत्माको सुख दुःखकी प्राप्ति निवृत्ति वास्ते किंचित् मात्रभी

12

कर्तव्य नहीं जैसे दो पुरपोंके झगड़ेमें साक्षी पुरुषको तिनकी हानि लाभमें किंचित्भी कर्तव्य नहीं काहेते अकर्तव्यमें कर्तव्य बुद्धि ही भ्रांतिहै सो भ्रांतिकी निवृत्ति करने वास्तेही वेदांत शास्त्रका विचार रूप चिंतनहीं कारणहै अन्य जप तपादि साधन नहीं जैसे अंधकारके दूरकरनेका साधन केवल दीपकका चसाना(जगाना)है अन्य नहीं प्रारब्ध करके प्राप्त भया जो सुख दुःख तथा सुख दुःखके साधन स्त्री पुत्र इष्ट पदार्थ तथा ज्वरादिक अनिष्ट पदार्थ तिनको अनुभव कर्ते हुयेभी हम चैतन्य समहैं इस समता रूप पुष्पोंकर नित्य निजात्मा देवका यत्न विना पूजन पड़ाहोताहै अपने स्वरूपका सम्यक् अपरोक्ष जानना रूप पुष्पों करही सम्यक् देवका पूजन होताहै तथा शम दमादिक देवी गुणही आत्मदेवकी प्रसन्नता वास्ते पुष्पहैं जन्मना मरना तथा हर्ष शोक पुण्य पाप स्वर्ग नरक बंध मोक्ष श्रवण मनन निदिध्यासनादि सर्व देवके आगे पुष्प हैं हेयोपादेय बुद्धि रहित प्रारब्ध वेगकर जो प्राप्त होवे सोई आत्मा देवको भोग लगावे तथा आपा परिछिन्न अहंकारको देवके आगे अर्पण करना यही देवकी पूजाहै मानो हम चैतन्य मनके पास बैठे हुये निरंतर मन रूप पुजारीकी पूजाके द्रष्टाहैं तथा मनरूप पुजारीके द्रष्टाहैं हे संतो पूर्वोक्त जितनाही विचार कथन चिंतन कराहै सो सर्व माया रूप मनका धर्महै हम चैतन्य इस कथन चिंतनते रहितहैं देह रूप घटकाही गमनागमनहै तथा टूटना फूटनाहै तथा घटमें जलका शुद्ध मलिन पनाहै स्थिर चलन पनाहै वास्तवते जलमें प्रतिविम्बकाभी नहीं है तो मुझ घटाकाश रूप असंग चैतन्य विंवका पूर्वोक्त कोईभी धर्म नहीं ताते हमारी हमको नमस्कार है हम कोही सर्व दृश्य नमस्कार कर्ताहै हमारीही जयहै जैसे स्वप्नद्रष्टा कोही स्वप्न सृष्टी नमस्कार कर्ता है स्वप्नद्रष्टा विना स्वप्नस्रष्टी सिद्ध नहीं होती यही नमस्कार है तद्वत् इस मिथ्या नामरूप प्रपंचके हमहीं पूज्य हैं तद्वत इस पंचभूत रूप संघात देवलमे हम साक्षी चैतन्यही लिंग रहित शिवलिंग है कर्म उपासना ज्ञान इन तीनों कांडोंकर हमही नित्य सुखचिद्रूप आत्माही मुमुक्षुओंको प्राप्त होने योग्य हैं जैसे फल पत्र पुष्पोंकी उत्पत्ति नाशमें वृक्ष ज्यों का त्यों है तैसे यह देह इंद्रिय सुख दुःखादि सुषुप्ति आदि अवस्थामे अभाव होनेसे तथा जाग्रतादि अवस्थामें उत्पत्ति होनेसे तथा जाग्रतादिकोंकी उत्पत्ति नाश होनेसे

हम आत्मा ज्यों का त्यों है हे मैत्रेय इस प्रकार उत्तम उदार अमृतरूप वाणी ध्रुव सुनकर आश्चर्य्यमान हुआ अरु रोम खड़े हो आये शास्त्र रीति अनुसार विनय पूर्वक महान पुरुषोंको प्राप्त होताभया पराशर कहा हे मैत्रेय ध्रुव माताका वचन सुनके वैरागको प्राप्तहुआ पर तुझको मैं अनेक वचन वैरागके कहे हैं तुझको वैराग नहीं हुआ मैत्रेय कहा मुझको ध्रुवकी न्यांई कि सीने दुःख नहीं दिया जो वैराग होवे पर कथा ध्रुवकी कहो हे मैत्रेय कथा ध्रुवकी यहीहै जो आपने सहित सर्वको वासुदेव निश्चय कर जान ! मैत्रेय कहा जाननेते सर्व वासुदेव होता नहीं स्वतः सिद्धही सर्व वासुदेवहै जाननेसे क्या प्रयोजनहै जो कृत्रिम है सो नाशी है अरु जो अकृत्रिम है सो अविनाशी है अरु मैं आत्मा सपेक्षक शब्दों ते तथा शब्दोंके अर्थते रहित हों मुझ विषे जानने नजा-ननेका मार्ग नहीं पराशर कहा देह अभिमान रूपी कपटकीखफणी पहरे हुये खान पानादिक विषयोंमें बंध है अरु कहता है सर्व मैंही वासुदेवहों यह कपट है मैत्रेय कहा सर्वव्यापक इसी कारण हों जो कामनामें तथा सर्व विषयोंमें तथा चाहिना अचाहिनामे तथा कपटमें तथा खान पानमें तथा कपट करनेवाले इत्यादिमें व्यापकहों पराशर कहा हेमैत्रेय जवलग जीवता न मरे अरु मर कर न जीवे तव लग अमृत निश्चयका न पावेगा मरना नाम देह अभिमानका सांगोपाग त्यागनाहै त्रिकाल बाध स्वरूप शिवसाक्षी रूप आत्मामैंहों कदाचित्तभी देहादिक संघात मैं नहीं इस दृढ़ निश्चयका नाम जीवनाहै हे मैत्रेय जो पुरुष चाहनामें बंध है सो नारा-यणसाक्षी निजआत्माको पहिँचान नही करसक्ता अरु कहता हैकिमैं सारे राति दिन भजन गोविंदका किया पर दर्शन न देखा हे मूर्ख ! विचार नेत्रों सों अंध गोविंद आत्मा तुझको कैसे प्राप्त होवें काहेते गोविंदको प्राप्त होनेवालेकाही गोविंद निज रूपहै तिसका तू अभ्यास कर्ता नहीं सो अभ्यास तेरा उपजावने सुख इंद्रियोंके विषयोंमें है माता पितादिक संबंधी मरे तैंने अग्निमें जलाये अरु यह न समझा कि मेरी अवस्थाभी यही होगी उलटा माता पितादिक संबंधियोंसे भी अहंता ममता अधिक करी ताते शरीरको नाशी जान अरु आपको अविनाशी जानकर बंध मोक्षके कर्तव्यते रहित हो पर तैंने मानाहै जो मैं परमऋषिहों पंडितहों परम

13

हंसहों पर जिसमें मन वाणीका मार्ग नहीं तिसको तू देह अभिमानी कैसे जानेगा हे मैत्रेय तिस अवाङ्मनस गोचरपद
विषे संत स्थित हैं तिस पदको वेद भी सलज्जामानहोकर कथनकर्त्ताहै हे मैत्रेय ! जिसने निजस्वरूप जानाहै कहना ति-
सका चुपहै अरु अपने स्वरूपके पहिचाननेविषे लज्जाते निर्मूलभयेहैं अरु इस झूठे देह रूप पहरावेते नग्न भये
हैं अरु निज स्वरूपमेंही मग्न होते भये हैं मैत्रेय कहा कथाध्रुवकी कहो पराशर कहा कथा ध्रुवकी यही है जो जान
सर्व हरि है हे मैत्रेय ध्रुव माता पितादिक सर्व जगत्की लज्जाको त्याग कर गोविंद स्वरूप होता भया पर तेरी क्या
शक्ति है जो उस जैसा होवे मैत्रेय कहा मैं उस जैसा नहीं होता पर कथा उसकी कहो पराशर कहा उस जैसा नहीं होता
तो कथा उसकी सुननेसे क्या प्रयोजन है मैत्रेय कहा तुम मेरे गुरुहो उस जैसे करो पराशर कहा श्रद्धा तेरी जगत्के पदार्थोंमे
है मेरे में नहीं ताते कैसे करों मैत्रेय कहा मुझको अतीत करो अपना शिष्य करो अरु मंत्र उपदेश करो अरु शिखा
सूत्रको लेकर परमहंस करो अरु भेषका भगवा वस्तर देउ अरु कंठी बाँधो पराशर कहा मेरे करनेसे कछु प्रयोजननहीं
काहेते एक पैसेकी गेरी लेकर कपडे रंगले शिखासहित रोम मूछ नाईसे दूर करवादे यज्ञोपवीत आप उतारदे इन अती-
तोंका चेला होजाय अरु एक पैसे की दशकंठी मिलती हैं सो लेकर बांधले मंत्र इन अतीतोंसे सुनले हेमैत्रेय इन देह
इंद्रियादिकोंके बाहरके व्यवहारके त्यागते अतीत नहीं होता काहेते देह इंद्रियादि संघातही कर्म हैं संघात संघात ते अतीत नहीं हो
सका जो देहके कर्तव्योंके त्यागसे अतीत होता होवे तो आलसी दलिद्री रोगी चिंतातुर मूर्छित इत्यादि मनुष्यभी देहके कर्तव्योंसे
अतीत हैं सो अतीत होनेका फल जो जन्ममरणादिकों की निवृत्तिहै सो तिनको नहीं होती ताते कायिक वाचिक मानसिकचेष्टामें परि-
छिन्न अहंकारका त्याग कर जो ठीकठीक अतीत होवें काहेते प्रथम अहं होताहै पश्चात् त्वं मम होताहै जब अहंही नहीं तब त्वं औ मम
अरु ममताके विषय देह पुत्रादि पदार्थ कैसे होवेंगे किंतु नहीं होवेंगे ताते अहंकारपनेके त्यागका भी त्याग कर हेमैत्रेय अज्ञान

आदि देह पर्यंत कार्य्य कारण प्रपंचके पहरावेसे जो नग्नहै सोई अतीत है तात्पर्य्य यहकि जैसे आकाश सब मे स्थित भी सबसे नग्न
अतीतहै जैसे रज्जुमे सर्पादिकोंकी प्रतीती होते भी रज्जु सर्पादिकों ते अतीत नाम नग्न है तैसे तू चैतन्य आत्माही इस देहादि प्रपंचते
नग्न है अन्य कोई अतीत नहीं मैत्रेय कहा मैं जलता हों कारण दुःखसे छूट जावोंगा अरु सुखको पावोंगा अतीत तो नहीं होता परंतु
देहको जलाता हों पराशर कहा हे मैत्रेय इस अनादि संसारमें लाखों बार तुम्हारे अरु यह लोगोंके देह उत्पन्न होकर जलते खाक-
होते प्रथिवीमें मिलते आय हैं परंतु दुःख न मिटते भये ताते जड़ देहके जलानेसे दुःख नहीं मिटता हे मैत्रेय बंबीके मारने जलाने गालनेसे
सर्प नहीं मरता विप सर्पमें है बंबीमें नहीं तैसे देहरूप बंबीमें अहंकार रूप सर्पमें जन्म, मरण, बंध, मोक्ष, अहं, त्वं, हर्ष, शोक, सुख
दुःखादिक विष है देह रूप बंबीमें नहीं जब तुम अहंकार रूप सर्पको ज्ञानाग्नि करके राख करोंगे तब अहंकार रूप सर्प सहित पंचभूत
देहरूप बंबी भस्मीभूत हो जावेगा अहंकार रूप कारणके नाशते नाम रूप जगत् कार्य यत्न बिना आपसेही नाश होगा जैसे दीपक
के उज्यारकरनेसे यत्न बिना अंधकार नाश होता है प्रकाशके होनेसे अंधकार जातानहीं दीखता कि कहांगयाता ते हे मैत्रेय सर्व अ-
नर्थोंके देनेवाला जो देहादिकों विषे अहंकार है तिसको जब तू जलावेगा राखकरेगा शेष जो पद है तामें मनवाणीका
मार्ग नहीं जो मैं वर्णन करों अरु तू सुने परंतु देहके जलानेसे सुख होता नहीं देह जलानेसे सुख हो तो सतीको भी सुख
होवेगा जन्म मरणादि अहंकारके जलानेसेही सुख होता है मैत्रेय कहा अहंकार मुझ चैतन्य स्वरूप विषे है नहीं बिना
हुये वस्तुका त्याग करना लज्जाकाकाम है जब अहंकार मुझमें है नहीं तब क्या त्यागों औ क्या ग्रहण करों जैसे आका-
शको भूत भौतिक पदार्थोंका ग्रहण त्याग नहीं बनता हे गुरो! जैसे मल स्पर्श बिना मलके दूर करनेका उपाय करना
मूर्खताहै ग्रहण त्यागते रहित यत्न बिनाही निर्विकल्प निर्विकार मुझ चैतन्यमें स्वतःही अहंकारका अत्यंताभावहै लाखोंतर
हके अहंकार अरु कोटानकोटितरहके संकल्प कोटानकोटि तरहके निश्चय तथा हजारों तरहके चिंतन तथा हजारों तरहके शोक

मोहादिक तथा हजारों तरहके खानपानादिक तथा शयनादिक तथा अनेक प्रकारके चक्षु आदिक इंद्रियोंके रूपदर्शनादिकव्यवहार सारांश यहकि मनादिक धर्मी अरु तिन अनात्म मनादिकोंके संकल्पादिक धर्म मुझ अवाङ्मनसगोचर चैतन्य पूर्ण आकाश विषे बिजुली मेघादिवत् हजारों दफा होकर मिट जाते हैं औ उत्पन्न होते हैं परंतु मुझ चैतन्य आकाशका रोम मात्रभी छेदन नहींहोता जैसे भूताकाशमें मेघ बिजली वर्षा अंधेरी अंधकार प्रकाश सूर्य्य चांद तारामंडल स्वर्ग नरक मलीन शुद्धपदार्थ इत्यादिक अनेक पदार्थ होते हैं पुनः मिटजाते हैं परंतु आकाशज्योंकात्यों है जैसे समुद्रमें तरंग बुदबुदा फेन उत्पन्न होकर मिट जातेहैं परंतु समुद्र ज्योंका त्यों है तैसे मुझ चैतन्य समुद्र विषे अनंत ब्रह्मांडरूपी तरंग उत्पन्न होकर मिट जाते हैं मैं चैतन्य ज्योंका त्योंहीं पराशर कहा हे मैत्रेय बड़ा आश्चर्य्य है अहंकार विना वा अंतःकरण विना मुझ निर्विकल्प चैतन्य विषे अहंकार है नहीं अरु जगत्रूप तरंग होने मिटनेसे हानि लाभका मुझमें अभावहै यह वृत्तांत तुझ निर्विकल्प चैतन्यको कैसे मालूम हुआहै हे मैत्रेय मुझ चैतन्यमें अहंकार नहीं यह जाननाही अहंकारहै इसीते कहता हूं तू अवाङ्मनसगोचर निजस्वरूप विषे यह जानना रूप अन होता अहंकारका त्याग कर जो सुखी होवे मैत्रेय कहा मैं सुखी नहीं होता काहेते सुखी होना न होनाभी अहंकारही है पराशर कहा यही समझ संतोंकी है परंतु तैंने तो निर्विकल्पको सविकल्प जाना है अरुसविकल्पको निर्विकल्प जानाहै हे मैत्रेय तू सम्यक्दर्शी होय जो संत पदवी पावे मैत्रेय कहा जब मैं ही नहीं तो संत पदवी कहां है अरु संतकहां हैं पराशर कहा हे मैत्रेय जब तू नहीं तब यह अपना अभाव तैंने जाना कैसे जैसे वंध्यापुत्र शशशृंग अपनेअ भावको जानते नहीं परंतु तू चैतन्य भावरूप नाम सत्यरूपहै भी परंतु तुझ चैतन्यमें जाननेका मार्ग नहीं काहेते तुझ सच्चिदानंद स्वरूपते भिन्न असत जड़ दुःख रूप सर्व कल्पित पदार्थ हैं सर्वत्र कल्पित पदार्थ अधिष्ठानको जानतेही नहीं अरु चैतन्य अधिष्ठान ही अपनेमें कल्पित पदार्थोंको जानताहै बुद्धिद्वारा। अद्वैत होनेते जानताही नहीं काहेते मनकी कल्पनारूप विकारते आत्मा निर्विकल्पहै जाने तो निर्विकल्प नहीं परंतु जानता हुआभी आत्मा निर्विकल्पहै स्वप्नद्रष्टावत् जैसे रज्जु शुक्तिमें कल्पित सर्प

दंडमाला रजतादिक अपने अधिष्ठान शुक्ति रज्जुको जानते नहीं तथा जैसे स्वप्ननर स्वप्नद्रष्टाको जानतेही नहीं स्वप्नद्रष्टा चैतन्यही जानताहै जैसे स्वप्न नर स्वाधिष्ठानको जानतेही नहीं कि हमारा कोई स्वामी है वा नहीं वा रूपवान्है वा नहीं महानहै वा तुच्छहै सत्यहै वा असत्यहै इत्यादि विकल्प जानतेही नहीं तैसेही अधिष्ठान रज्जु शुक्ति स्वर्णादिकभी अपनेमें कल्पित सर्प दंड माला रजत भूषणादि पदार्थोंको जानतेही नहीं जैसे स्वप्नद्रष्टा अपनेमें कल्पित स्वप्न नर तथा घट पट सर्पादि नाम रूपको जानताही नहीं कि स्त्री पुरुष घट पट सर्पादिकहैं वा नहीं रूपवानहैं वा नहीं वा किसी दूसरेने हमारेमें कल्पना करे हैं वा नहीं दीर्घकालके प्रतीतिवान्हैं वा अल्पकालके प्रतीतिवान् हैं उत्पन्न होकर नष्ट होते हैं वा नहीं सुख रूप हैं वा दुःख रूप हैं व्यवहारक सत्तावाले हैं वा प्राती- तक सत्तावाले हैं सत्यरूप हैं वा असत्यरूप हैं अनादि हैं वा सादि हैं सोते जागते मूर्छापाते हैं वा नहीं बंध मोक्षवान हैं वा नहीं माया अज्ञानके कार्य्य हैं वा नहीं दृश्यरूप हैं वा नहीं हर्ष शोकके देनेवाले हैं वा नहीं क्रियावान हैं वा नहीं विकारवान् हैं वा नहीं आपस में कार्य कारण भाव हैं वा नहीं इत्यादिक अनेक विकल्पोंको स्वप्नद्रष्टा अधिष्ठान जानतही नहीं वा उपाधिसे जानता भी है वास्तवते नहीं अद्वितीय निर्विकार होनेते काहेते जानना द्वैतमें होता है स्वप्न कल्पित पदार्थोंका अधिष्ठान ते पृथक् सत्ता होती नहीं किंतु तिस स्थल में स्वप्नद्रष्टाही है स्वप्ननर घट पट रज्जु सर्पादिकोंका अत्यंताभाव है बल्कि स्वप्नद्रष्टा आ- पको भी नहीं जानता काहेते आत्माश्रय दोष होनेते तथा जानना जुदापदार्थ है अरु जिसको जानता है वह जुदापदार्थ है जानने वाला जुदा पदार्थ है जानना अहंकार त्रिपुटी विना होता नहीं अरु आत्मामें अहंकार है नहीं ताते हे मैत्रेय तू चैतन्य अधिष्ठान कैसे जानता है जो कल्पित अहंकारादिक मुझमें हैही नहीं मधुरता शीतलता द्रवतारूप जल अपनेमें अन्यकर कल्पित तरंगोंको जानताही नहीं तैसेही अस्ति भाति प्रियरूप तुझ आत्मामे अन्यकर कल्पना स्वरूप जगत्को कैसे जानता है जैसे मंदिरमें दीपक मंदिर अरु मंदिरमें स्थित पदार्थोंको जानताही नहीं अपनी महिमामें स्थित है तैसेही मंदिरमें स्थित

पदार्थभी अपने प्रकाशक दीपककोभी नहीं जानते अरु अपनेकोभी नहीं जानते मैत्रेयने कहा ठीकहै वह रज्ज्वादिक अधिष्ठान तथा दीपकादिक जड़ पदार्थ हैं अरु मैं चैतन्यहों इस कारण ते दृष्टांत विषे रज्जु आदिकोंके अरु शुद्ध चैतन्यके विवर्त स्वप्नके पदार्थ अपने अधिष्ठान स्वप्नद्रष्टाको ठीक ठीक नहीं जानते कि हमारा कल्पक स्वामी कौन है परंतु स्वप्न पदार्थोंके अधिष्ठान चैतन्य स्वप्नद्रष्टाकरही कल्पित स्वप्न पदार्थोंकी सिद्धि होती है अन्य कर नहीं काहेते जो मैं स्वप्नद्रष्टा स्वप्नपदार्थोंको न प्रकाशों तो स्वप्न पदार्थोंका ज्ञानही नहीं हुआ चाहिये काहेते अविद्या में वा अंतःकरणमें चैतन्यके आभाससे भी स्वप्न कल्पित पदार्थोंका प्रकाश नहीं होता काहेते अविद्या बुद्धिकी न्याईं आभासभी जड़ कल्पित होनेते कल्पितका प्रकाशक नहीं होता अन्य कोई स्वप्नका प्रकाशक है नहीं बाकी शेष शुद्ध चैतन्य स्वप्नद्रष्टाकरही स्वप्नके अहंकारादिक पदार्थ सिद्ध होते हैं तैसेही नहीं सुषुप्ति समाधि आदिक अवस्थामेंभी अज्ञान अरु समाधि सुख शुद्ध चैतन्य करही सिद्ध होताहै यद्यपि जाग्रत् की मुवाफ़िक़ सुषुप्ति समाधि अवस्थामें कहना सुनना चिंतनकरना आपको द्रष्टा साक्षी प्रकाशक निर्विकार निर्विकल्प सत् चित् आनंद स्वरूप ज्ञानी अज्ञानी इत्यादि विशेषणों संयुक्त मानना अरु दृश्यको असत जड दुःखरूप कल्पित मानना नहीं है काहेते कहने चिंतन करनेके साधन वाक् मनादिकों का अपने उपादान कारण अज्ञानमें लीनताहै तथापि सुषुप्तिमें अज्ञानके अनुभव औ आवृत सुखका तथा समाधिमें निरावरण सुख के अनुभवका बाध नहीं होता काहेते अनुभव पूर्वकही स्मृति होती है जो कल्पित पदार्थोंका ज्ञाता प्रकाशक चैतन्य नहीं मानोगे तो स्वप्न पदार्थोंके न्यून अधिकताके वृत्तांतका ज्ञान अरु सुषुप्तिके अज्ञानका ज्ञान अरु समाधिके सुखका ज्ञान सर्वके अनुभव सिद्ध कथाका विरोध होवेगा ताते शुद्ध निर्विकल्प निर्विकार चैतन्य करकेही कल्पित अहंकारादिकोंके भावाभावकी सिद्धि होती है ना अन्यकर पराशरने कहा हे मैत्रेय अवाङ्मनसगोचर जो तुम्हारा हमारा तथा सर्व कल्पित जगत्का स्वरूपहै सो उपाधि विना प्रकाश्य प्रकाशक भाव नहीं वनसक्ता काहेते सुषुप्तिमें यद्यपि अंतःकरण जाग्रतकी न्याईं नहीं भी तोभी अज्ञानमें संस्काररूप करके स्थित

है तिसकालमें अज्ञानही उपाधिहै तैसेही विद्वानपुरुषको समाधि अवस्था में भी अंतःकर्ण यद्यपि जाग्रतकी न्याईं स्पष्ट नहीं भी तथापि स्वरूप अज्ञात अवस्थाकी न्याईं अज्ञानभी नहीं है तथापि प्रारब्ध क्षय पर्य्यंत ज्ञानाग्नि कर बाध रूप दग्ध अज्ञान तिस समाधि कालमें भी हैं सोई तिसकालमें उपाधि है तिसीको लेसा विद्या भी बोलते हैं जैसे अश्वत्थामाके बाणकर दग्ध अर्जुनका रथ कृष्णरूप प्रतिबंधक कर पूर्वकी न्याईंही सर्वको प्रतीत होता भया तैसेही ज्ञानाग्नि कर दग्ध कार्य कारण संघातभी प्रारब्ध रूपी कृष्णके प्रतिबंधकके विद्यमान होते कार्य्य कारण संघातकी प्रतीतीही उपाधिहै हे मैत्रेय प्रारब्धरूपी उपाधिके क्षय हुये तात्पर्य्य यह कि उपाधि निर्मुक्त विदेह कैवल्यमें पूर्वोक्त व्यवहार नहीं हे मैत्रेय तिस अवस्थाका कोई दृष्टांत है नहीं काहेते समाधि सुषुप्तिमें भी उपाधि पूर्व कथन कर आये हैं ताते हे मैत्रेय तू श्रवण कर्ता हुआ स्पर्श करता हुआ देखता हुआ रस लेता हुआ सूंघता हुआ वास्तवते आपको निर्विकार निर्विकल्प जान हे मैत्रेय ! कल्पित उपाधिको अंगीकार करके उपाधि संयुक्तही विशेष अग्निही काष्ठा-दिकोंका दाहक उष्ण प्रकाशादि व्यवहार करैहै उपाधिरहित समान अग्निदाह उष्ण प्रकाशादि व्यवहार नहीं करै है ताते कल्पित अहंकारादिकोंके भावाभावको अनुभव करनाभी उपाधि करही है उपाधि विना नहीं जैसे उपाधि सहित अरु उपाधिरहित अग्निमें भेद नहीं व्यवहारमें भेद है जैसे वायु चलने ठहरनेमें आप एकसरीखी है परंतु चलनेमें भासती है अरु अचलमें नहीं भासती जैसे आकाश घटादिक उपाधि सहितमें भी अरु घटादिक उपाधिरहितमें भी आपको एक रस जानता है तैसे हे मैत्रेय तू अपने निजात्मा स्वरूपको माया अहंकारादिक कल्पित उपाधि सहितमेंभी अरु कल्पित माया अंतःकरणादिक उपाधिरहितमें भी निर्विकल्प निर्विकार जान यही संतजनोंका निश्चय है मैत्रेयने कहा कथा ध्रुवकी कहो कि संत अरु ध्रुव आपसमें क्या चर्चा करते भये पराशरने कहा कथा ध्रुवकी यही है जो जान आप सहित सर्व हरिहैं हे मैत्रेय चाहते अचाहहो अरु ग्रहण त्यागका त्यागकर अरु देह अभिमान रूपी वस्त्र ते नग्न हो अरु मैं निर्विकल्प निर्विकार चैतन्यमात्रहों मुझ चैतन्यको बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते किंचितमात्रभी कर्तव्य नहीं

16

काहेते बंध मोक्षादि व्यवहार भ्रममात्र होनेते इस निश्चय रूप खफणीको पहनो अरु सूक्ष्म अहंकारको जलावो मैत्रेयने कहा मैंहीं नहीं तो अहंकारको कौन जलावे पराशरने कहा यही अहंकारका जलाना है जो मैं नहीं जब मैं नहीं तो अहंकार कहां है शेष जो पद है तामें मन वाणीकी गम नहीं हे मैत्रेय! जैसे आकाश सर्व प्रकारसे सर्व पदार्थोंते अतीत है तैसे तूभी अतीतहो अरु जो कहता है मैं शिवको जानताहों वही गृहस्थहै काहेते शिवमें जाननेका मार्ग नहीं शिवको ज्ञानका विषे जानना यही गृहस्थ है नाम ग्रसाहै कारण निज स्वरूप शिवको ज्ञान-का विषय दृश्य मिथ्या जाना है हे मैत्रेय जहां ग्रहण त्यागकी इच्छा नहीं तहां आपसे आप है नग्न वही है जो शरीर होते इस लोक पर-लोककी चाहनाते नग्न है हे मैत्रेय इतने कहनेका प्रयोजन मेरा यही है जो तू अपने स्वरूपको जाने अरु मनुष्य देहको दुर्लभ जानके भजन गोविंदका करे जो पूछे भजन गोविंदका क्या है आप सहित सर्व गोविंदहै गोविंदते वितरेक कछू नहीं यही भजन है जब सर्व गोविंद हैं ॥ तो खाना, पीना, देना, लेना, सोना, जागना, बैठना, चलना, ध्यान करना, न करना इत्यादिक सर्व भजनही हैं हे मैत्रेय जो तुझको नग्न होनेकी इच्छाहै तो सूक्ष्म अहंकारका त्यागकर और जान जो नमैं हों न मेरा कोई है जन्म मरण सूक्ष्म अहंकार ते है जो पूछे सूक्ष्म अहंकार क्या है अस्ति भाति प्रियरूप जो अपना वास्तवस्वरूप है तिसते दृश्यको भिन्न जानना यही सूक्ष्म अहंकार है ताको त्याग है सोई त्यागहै हे मैत्रेय चाहिये कि भ्रम और प्रीति शरीरकी त्याग कर गोविंद सों मिल रहो जैसे घटाकाश भ्रम सिद्ध परिछिन्न घटाकाशपनेको त्यागे तो महाकाशको मिलता है नाम अभेदरूप हुआ हुआ पुनः अभेदरूप होता है मैत्रेयने कहा कथा ध्रुवकी कहो पराशरने कहा तुझे कथा ध्रुवकी सों क्या प्रयोजन है आप शरीरके भ्रममें बंध हैं चाहता है ध्रुव जैसे होवों पर शांति न होवेगी जब देह अभिमान भ्रमका त्याग करे तब तू ही ध्रुव होवे ताते दृश्य अहंकारते अतीत हो जो निर्वाणपदको पावे मैत्रेयने कहा जब सर्व मैंहींहों निर्वाणपदकी प्राप्ति तथा अनिर्वाण रूप बंध भ्रम भी मैंहीं हों तो त्यागों क्या औ ग्रहण क्या करों वा वाण रूप संघातते रहित मैं आपही निर्वाण हों निर्वाणपद पावों कैसे पर भ्रमके त्यागका उपाय कहो पराशरने कहा जैसे अंधेरा दूर करनेका उपाय दीपकका चसाना है तैसे दृश्य अहंकारते अतीत होना

ही उपाय है मैत्रेयने कहा क्यों ढीलकर्त्ते हो जो कुछ कहो सो कर्त्ता हों पराशरनेकहा मुझके हाथमें दंडकमंडलु नहीं न मैं संन्यासी हों न मैं वैरागी हों न मैं लौकिक अतीत हों तुझको अतीत कैसे करों मैत्रेयने कहा मैं क्या करों ? और कहां जावों पराशरने कहा कछु कर नहीं अ- लौकिक अतीत हो हे मैत्रेय डाढी शीश तेरा मुंडित करावों हों तो वह रोम फेर उपज आवेंगे काहेते नख केश सदा आपसे आप बढ़ते रहते हैं और मैं मंत्रनहीं पढ़ा जो तुझको सिखावों मैत्रेयनें कहा मैं रोता हों पराशरने कहा द्रष्टाने दुःख रूप दृश्यको जो अपना रूप जानना है वही रोना है दृष्टाको दृश्यसे मिला न जानना यही हँसना है पूर्णको अपूर्ण असंगको संगी सत् चित् सुखरूपको असत् जड दुःख रूप जा- ननाही रोना है ताते तू इस रोनेसे अतीत हो मैत्रेयने कहा बड़ा आश्चर्य है जो अतीत होता हों तो कर्त्तेनहीं अरु कहते हो अतीत हो क्या करों मैंने समझाथा कि गृहकी सब सामग्री मैंने त्यागी है ईश्वर कृपा करेगा तो मैं परमशांत होवोंगा और मुझको इन अटलादि पदवियोंकी भी चाहना नहीं जगत् सुखोंते अचाह हों यही चाहना है जो स्वरूपको पावों पराशरने कहा विलाप मतकर ध्रुवकी न्याईं निश्चय कर मूलको खोज जो स्वराज स्थित होवें पर स्वरूपका पावना निर्लज्जोंका काम है काहेते कार्य कारण संघात रूपी वस्त्रते रहित होना है यही नग्न होना है यही निर्लज्जोंका काम है परंतु मैं पंडित नहीं हों जो तुझको अनेक प्रकारका सिद्धांत कथा सुनावों पर सिद्धांत यही है जो सर्व तू ही है न कोई और मैत्रेयने कहा मुझको ब्रह्मचारी करो पराशरने कहा जो ब्रह्मको अपना रूप जानता है सोई ब्रह्मचारी है जैसे घटाकाश महाकाशको अपना स्वरूप जाने अन्य नहीं काहेते जो सर्व ब्रह्मही है तो ब्रह्मविषे चारीपना क्या मैत्रेयने कहा कुछ उपदेश करो पराशरनेकहा मैं श्रोताको नहीं देखता आपही आप हों किसको उपदेश करों मैत्रेयने कहा मुझको तुमते भय हुआ है अब प्रश्न करोंगा तो दीनता पूर्वक करोंगा पराशरने कहा शक्ति राखता हों जो सर्वको भस्मीभूत करडालों परंतु कपटियोंकीन्याईं भय मतकर ऐसा भय कर जो जीव ई- श्वर ब्रह्ममाया जगत् इत्यादि भेदका त्याग होय द्वैतभय रहित अभय रूप स्थितिको पावे मैत्रेयने कहा यह काम मुझसे नहीं हो

सत्ता पराशरने कहा तुझते नहीं होता तो तुझ चैतन्य ते कौन व्यतिरिक्त है जो तिससे होवे मैत्रेयने कहा जीव ईश्वर दोनो शास्त्र प्रमाण कर सिद्ध हैं कैसे त्यागों पराशरने कहा जीव ईश्वर सहित सर्व जगत् तेरी अविद्याते प्रतीति होते हैं नहीं तो जीव ईश्वर कहां हैं परंतु जीव ईश्वरकी एकता भी श्रुतिसिद्ध है अप्रमाण नहीं परंतु तुझ चैतन्य विषे जीव ईश्वर भाव है नहीं जो जाने तो तू ही चैतन्य अविद्या कर जीव संज्ञाको प्राप्त भया है और माया कर ईश्वर संज्ञाको प्राप्त भया है जैसे एकही आकाश घट उपाधि कर घटाकाश संज्ञाको पाता है मठ उपाधि कर मठाकाश संज्ञाको पाता है वास्तवते नहीं हे मैत्रेय जब तू अपने चैतन्य स्वरूपको सम्यक् जाने तो जीव ईशादि संज्ञा कहूं खोजे भी नमिलेगी मैत्रेयने कहा जब जीव ईश अपनी अविद्याते उपजे हैं तो मुझको क्या घाटा है जैसे स्वप्नके जीव ईश्वर निद्रा दोषकर प्रतीति होनेसे स्वप्नद्रष्टाका एकरोम भी छेदन नहीं होता पराशरने कहा ठीक ऐसेही है परंतु स्वप्न औ जाग्रत् कालमें भी यद्यपि वास्तव स्वप्न पदार्थ स्वप्नद्रष्टाको स्पर्श नहींकर्त्तें तथापि निज स्वरूपके अज्ञानसेती भ्रमकर आपनिर्विकार निर्विकल्प भी सविकार सविकल्प मानता है आप महान भी तुच्छ मानता है भ्रमके निवृत्त हुये ज्योंका त्यों आपको मानता है हर्ष शोक नहीं करता हे मैत्रेय और कर्तव्य मतकर भ्रमकी निवृत्तिवास्ते ज्ञानरूपी दीपकको जगाय मैत्रेयने कहा तेरे कहनेसे जानताहूं जो भ्रमको त्यागों अरु अभ्रमको ग्रहण करों कुछ बनो परंतु मैं स्वयंप्रकाश अद्वितीय हों मुझमें ग्रहण त्यागका मार्ग नहीं मैत्रेयने कहा प्रथम मैंने आपसे प्रश्न किया था कि मोक्षका उपाय कहो तो आपने कहा था जो तू आपही आप स्वयंप्रकाश स्वरूप है तुझमें बंध मोक्ष रूप अंधकारकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते किंचित् मात्रभी कर्तव्य नहीं अब कहते हो कछुकर जो कुछ होवें पराशरने कहा यही कर नमैं हों न जगत् न जीव ब्रह्म एक अद्वितीय नारायण है मैत्रेयने कहा जब मैं परिछिन्न अहंकार रूप जीव नहीं तो नारायण सों क्या प्रयोजनहै परंतु मैं जीवत्वके अहंकारमें बंध हों कैसे कहों जीव ब्रह्महै पराशरने कहा जीव ब्रह्मका रूप क्याहै मैत्रेयने कहा मैंने जीव ब्रह्मका रूप नहीं देखा पराशरने कहा जब रूप नहीं देखा तो नाम कैसे राखा मैत्रेयने कहा सुनकर

कहता हों पराशरने कहा जिसते तैंने सुनाहै तिसते जीव ब्रह्मका रूप पूछ मैत्रेयने कहा उसनेभी सुनकर कहाहै पराशरने कहा सर्व सुनकर कहते हैं पर मूल नहीं खोजा हे मूर्ख जैसे सुनकरही जीव ब्रह्मका निश्चय कियाहै तो मुझते सुन करकेभी जीव ब्रह्म रूपहै ऐसा निश्चय कर जो तुझको इच्छा देखनेकी हो तो अतीत हो मैत्रेयने कहा मुझे वैराग्य हुआहै चाहता हूं जो उदासीन गृहस्थते होवों पराशरने कहा जिन और भूत मृग वनचर अनेक वनों विषे फिरते हैं तूभी तिनकी पंक्ति विषे प्रवेश कर हे मैत्रेय लोकोंने जो पुत्र स्त्री धन गृहादिक गृहस्थ समझाहै सो झूठहै काहेते गृह शरीरको कहतेहैं जो शरीरके अहंकारमें बंधहै सोई गृहस्थ है और जो इस अहंकारसे मुक्तहै सोई वैरागीहै हे मैत्रेय एक आश्रमको त्यागना दूसरे आश्रमको ग्रहण करना तैसेही एक नाम त्यागके दूसरा नाम रखना तथा सफेदरंगके वस्त्र छोड़के दूसरे रंगके वस्त्र पहरने तथा यज्ञोपवीत तोड़के कंठी आदिक अनेक पदार्थ बांधने तथा शास्त्र प्रतिपाद्य संबंधियोंसे प्रीति त्यागके अशास्त्रोक्त संबंधी बनाकर प्रीति करना किंतु सर्वको अपना आत्मा जानकर प्रीति न करना रागपूर्वक प्रीति करना यह व्यवहार विद्वानों-को हँसने योग्यहै हे मैत्रेय! अतीत वहीहै जो अपने सहित सर्वको आत्मारूप जानताहै जो शरीरके अहंकारमें बंधहै और चाहते अचा-ह नहीं हुवा सो मेरे वचनोंको सुनकर प्रसन्नता नहीं राखता जो नाम रूप बंधनते छूटाहै सो आपही आप सुखरूपहै जब भेद नाम रूप कामिटा तब जीवना मरना भ्रम होय जाताहै काहेते नाम रूप स्वप्रकाश नहीं परप्रकाशहै तुझते प्रकाश राखतेहैं ताते इस नामरूपा-त्मक देहादिकोंके अहंकारको त्याग जो यही अहंकार चौरासीमें डोलाताहै हेमैत्रेय आदि अंत्य मध्य अपने सहित सर्वको नारायण जान जब अस्ति भाति प्रियरूप अधिष्ठान सर्व नारायणहैं तब कल्पितरूप अहंकार जुदा कहां रहेगा किंतु अहंकारभी नारायणहै यही अहंकारका त्यागहै जैसे नाम रूप कल्पित भूषण स्वर्णरूपहैं वा स्वर्णमें भूषणहैंहीं नहीं केवल स्वर्णही अपनी महिमामें स्थित है यही भूषणोंका त्यागहै हेमैत्रेय जैसे घट पटादिक पदार्थ मृत्तिका रूप जानने वा मृत्तिका विषे तिन घट मठादिकोंका अत्यंता भाव जानना यही घट मठादिकोंका त्यागहै जैसे स्वप्नद्रष्टामें कल्पित स्वप्न पदार्थ स्वप्नद्रष्टारूपहैं वा स्वप्नद्रष्टामें स्वप्न पदार्थ हैंहीं

18

नहीं काहेते अधिष्ठानमें कल्पित पदार्थ प्रतीति मात्रहीहैं स्वरूपते पृथक् सत्तावाले नहीं काहेते जागे स्वप्नपदार्थोंकी प्रतीतिका अत्यंताभाव होनेते जो पदार्थ होते तो जागे दूर न होते हेमैत्रेय कल्पित पदार्थोंके त्यागमें शारीरक वा मानसिक कर्तव्य नहीं चाहिये किंतु निजात्म अधिष्ठानके जानने मात्रसेही कल्पितकी निवृत्ति होती हैं इसीते बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते शारीरक कर्तव कछु नहीं बोधरूप आत्माका जाननाही कर्तव्यहै हेमैत्रेय कल्पित पदार्थ मुझको प्रतीतिही न होवें जब कल्पित पदार्थोंका नाश होवेगा तब ज्ञानी होऊंगा ऐसे नहीं जानना किंतु कल्पित पदार्थोंकी प्रतीति होतेभी तिनको अधिष्ठानरूप जानना वा तिनको मिथ्यात्व अभाव जानना यही कल्पित पदार्थोंका नाश त्याग है यही ज्ञानीपनाहै हे मैत्रेय कोईक ऐसा मानते हैं जो खाता पीता है तथा देता लेता है सर्व व्यवहार कर्ता है भले बुरेको भला बुरा जानताहै तथा स्त्रीको स्त्री जानता है तथा पुरुषको पुरुष जानताहै सो ज्ञानी नहीं तथा जिसको शीत उष्ण होते हैं तथा जिसको षटरस प्रतीत होतेहैं तथा जिसको खान पानादिकों की इच्छा होतीहै सो ज्ञानी नहीं तथा जिनको ज्ञान हुआहै वो जंगलोंमेंही रहतेहैं उनको किसीसे बोलनेका क्या प्रयोजन है सुगंधि दुर्गंधि उनको आतीही नहीं तात्पर्य्य यह कि मन चक्षु आदि इंद्रियोंका दर्शनादि व्यवहार तिनका होताही नहीं इत्यादि अनेक विकल्प तर्क उठाते हैं परंतु वह शास्त्रके सिद्धांतको नहीं जानते काहेते ज्ञानको तिनोंने बीमारी समझाहै जैसे बीमार पुरुष चेष्टा रहित जड़सा हो जाताहै तैसेही ज्ञानरूपी बीमारीकर विवेकी जड़ होजाताहै यह शास्त्र अनुभव विरुद्ध है ताते हेमैत्रेय सर्व प्रकार करके कायिक वाचिक मानसिक सर्व देह चक्षु-रादि इंद्रियोंके दर्शनादि व्यवहार ज्ञानी अज्ञानीका समहीहै केवल दृष्टिमात्रका भेदहै अन्य भेद नहीं जैसे धर्मात्म अधर्मात्माके देह चक्षु आदि इंद्रियोंके दर्शनादि व्यवहारमे भेद नहीं किंतु दृष्टीका भेदहै जैसे धर्मात्मा दोनोंका रूपको धर्मपूर्वक चक्षु इंद्रियसे देखता है अरु अधर्मात्मा अधर्मपूर्वक देखताहै रूपका देखना तुल्य है दृष्टिका भेद है जैसे नील पीतादि रूपवान हीरेके देखनेमें जौहरी अजौहरी समही हैं परंतु अजौहरी जो हरिकी दृष्टीरूप विचारमें भेदहै देखनेमें भेद नहीं जैसे भ्रम स्थलमें सर्व पुरुषोंके चक्षुका रज्जु

आदिक पदार्थोंसे संबंध तुल्यही है परंतु सदोष चक्षुवानको रज्जुमें सर्पभान होताहै अरु निर्दोष चक्षुवानको रज्जुही भान होतीहै तैसे ज्ञानी अज्ञानीकी दृष्टी विवेकका भेदहै देह चक्षुरादि इंद्रियोंके दर्शनादि व्यवहारका भेद नहीं और कोई ज्ञानीके शिरमें शृंगादियोंकी विलक्षणता नहीं होजाना और कोई देह इंद्रियादिकोंके रोग बिना दर्शनादि व्यवहारका बाधा नहीं हो जाना हे मैत्रेय देह इंद्रियोंके दर्शनादि चक्षुरादि व्यवहारका बाधा मानोगे तो पूर्व दत्तात्रेय वामदेवादिक परमहंसोंका तथा वसिष्ठादिक ब्रह्मऋषियोंका तथा जनकादिक राजऋषियोंका देह चक्षुरादि इंद्रियोंका दर्शनादि व्यवहार वर्तमान विद्वान पुरुषोंकी न्याईंही व्यवहार सुननेमें आता है अन्यथा नहीं बल्कि ब्रह्मा, विष्णु, शिवादिकोंके देह चक्षुरादि इंद्रियोंके दर्शनादिक व्यवहार अस्मदादिक जीवोंकी न्याईंही सुननेमें आता है विलक्षण नहीं काहेते आदि ईश्वरकी नेती ऐसेही हुई है जो देह इंद्रियोंके दर्शनादि व्यवहार सर्व ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्य्यंत ज्ञानी अज्ञानी सर्व जीवोंका समही होगा इस ईश्वर संकेतको अवतक कोईभी उल्लंघन नहीं करसक्ता हे मैत्रेय आप अपने वर्णाश्रमके अनुसार सर्व जीवोंके देह चक्षुरादि इंद्रि-योंके धर्मपूर्वक दर्शनादि व्यवहारका किसी शास्त्रमें तथा किसी विद्वानने निषेध नहीं करा अरु अनुभव सिद्ध वस्तुका निषेधभी नहीं बनता किंतु अधर्मपूर्वक देह चक्षुरादि इंद्रियोंके दर्शनादि व्यवहारकाही निषेध है ताते धर्मपूर्वक अपने स्वरूप आत्माको सम्यक् जानकर देखो सुनो स्पर्शकरो रसलेवो गंध सूंघो ग्रहण त्यागकरो बोलो चालो तात्पर्य्य यहकि, कायिक मानसिक वाचिक सर्व व्यवहार करो आकाशकी नाईं तुझको बाधा न होगा हे मैत्रेय भ्रम सिद्ध जो बंध मोक्षादिक पदार्थ हैं सो तुझ प्रत्यक् आत्मामें वास्तवते हैं नहीं इसीते तुझको बंध रूप दुःखकी निवृत्तिवास्ते तथा मोक्षरूप सुखकी प्राप्तिवास्ते किंचित् मात्रभी कर्तव्य नहीं जैसे निद्रा दोषकरके प्रतीति भये जो स्वप्नेमें बंध मोक्षादिक अनेक पदार्थ तिनकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते स्वप्नद्रष्टाको किंचित् मात्र भी कर्तव्य नहीं काहेते स्वप्नद्रष्टास्वरूपतेही बंध मोक्षते रहित है परंतु स्वप्नद्रष्टा भ्रमकरके बंध मोक्षवान् आपको मानता है ताते हेमैत्रेय तू सम्यक्दर्शी हो असम्यक्दर्शी मत हो काहेते सम्यक्दर्शी जैसा पदार्थ होता है तैसाही जानता है अरु असम्यक्दर्शी औरका और जानता है

मैत्रेयने कहा धर्मपूर्वक सर्व विषयोंकी प्राप्तिहुये भी पूर्व औ अब भी महात्मा क्यों त्यागते हैं पराशरने कहा हे मैत्रेय ज्ञानके विरोधी विषयोंका पूर्व अरु अब भी महात्मा पुरुष त्याग करते हैं अरु योग भी है परंतु चक्षुरादि इंद्रियोंका दर्शनादि व्यवहार तो नहीं त्यागा जाता काहेते जहाँ इंद्रियादि धर्मी है तहां चक्षुरादि इंद्रियोंका दर्शनादि धर्म भी होगा धर्मी होते धर्मका अभाव नहीं होता अरु केवल धर्मपूर्वक चक्षुरादि इंद्रियोंका दर्शनादि व्यवहार ज्ञानका विरोधीभी नहीं अधर्मही विरोधीहै ज्ञानका धर्म पूर्वक दर्शनादि व्यवहार उलटा ज्ञानका साधकहै जो धर्मपूर्वक चक्षुआदिक इंद्रियोंके दर्शनादि व्यवहार करते अस्मदादिकोंकी दुर्गति होती है तो होने दे काहेते इसकी निवृत्तिका उपाय कोई नहीं शरीर नाश विना जैसे किसी वैश्यने कहा है दाल रोटी खानेसे घाटा पड़ता है तो पड़ने दे इससे नीचे दरजा न होने ते हेमैत्रेय गुह्यकी बातेंमैं तोपै प्रगट करोहों जो ना तूं मैत्रेय-नामैं पराशर ना कोई और एक नारायणही है यह जिसको निश्चय हैं वही अतीत है ताते तू अतीत हो मैत्रेयने कहा तुम ऐसा कुछ कहतेहो जिसमें अतीत अरु गृहस्थ दोनों नहीं बनते ॥ पुनः कहते हो अतीतहो पराशरने कहा वही अतीतहै जो आप सहित जाने सर्व गोविंद है आप सहित सर्व गोविंद जाननाभी मनका चिंतन है इसते तू अतीत नाम निर्विकल्पहै जब तैंने ऐसा जाना तो अतीत गृहस्थ कहां है गोविंदहीहै मैत्रेयने कहा जब मैंहीं नहीं तब नारायणको कौन जाने जो सर्व गोविंद निर्विकल्प ना-रायण है काहेते जानना ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, त्रिपुटी विना होता नहीं मुझके स्वरूपमें त्रिपुटी हैही नहीं जानना कैसे होवे पराशरने कहा जब सर्व तूही है तो त्रिपुटीभी तूही है जैसे स्वप्नमें ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, त्रिपुटी भानपूर्वक सर्व पदार्थोंकी प्रतीति होती है परंतु स्वप्नका द्रष्टा स्वप्नद्रष्टाही सर्व त्रिपुटीरूप निद्रा दोषकर प्रतीत होताहै वास्तवते त्रिपुटीरूप हुआ नहीं अपनी महिमामेंही स्थित है ताते हे मैत्रेय जैसे स्वप्नदृश्य पदार्थोंते स्वप्नदृष्टा अतीत नाम भिन्नहै तैसे ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय रूप त्रिपुटी इस कार्य कारण संघा-तते अतीत नाम भिन्न तू आपको साक्षीदृष्टा जान यही अतीत होना है जब तू अतीत न होगा काल तुझको दुःख देवेगा मैत्रेयने कहा

कालका भय मुझको नहीं रहा काहेते नामरूप मुझ अधिष्ठानमें कल्पित है तीन कालमें सत्त नहीं ॥ कालभी नामरूप स्वरूप है कल्पित नामरूप काल मुझ अधिष्ठानको दुःख नहीं देता उलटा अधिष्ठान करकेही नामरूप कंपायमान होतेहैं नाम अर्थात तिस नामरूप कालकी मुझ अधिष्ठानतेही सिद्धि होती है जैसे रज्जुमें कल्पित सर्पादिक रज्जुको दुःख देते नहीं कल्पित सर्पादिकोंके गुण दोष रज्जुको स्पर्श करते नहीं उलटा रज्जु करकेही सर्पादिकोंकी सिद्धि होती है तैसे कल्पित काल मुझ अधिष्ठान चैतन्यको कैसे दुःख देवेगा किंतु नहीं देवेगा वा सर्वनामरूप नारायण है तो कालभी नामरूप स्वरूप है जब कालभी नारायण हुआ तो नारायण नारायणको तो दुःख देता नहीं जैसे सर्व नाम रूप भूषण स्वर्णस्वरूप हैं स्वर्ण स्वर्णको दुःख नहीं देता पराशरने कहा अब तू ध्रुव हुआ कथा ध्रुवकी सुन मैत्रेयने कहा मैं अतीत होता हों मुझको अपना भेष कृपा करके दीजिये पराशरने कहा अतीतमें भेष अभेष नहीं मायामें भेष अभेषहै हे मैत्रेय जो माया रूप भेषते अतीतहै वही अतीतहै मैत्रेयने कहा कथा कहो पराशरने कहा तुझको निश्चय नहीं इसीते तुझको भस्म करना योग्यहै मैत्रेयने कहा मैंतो हैंही नहीं ईश्वरही है ईश्वरको भस्म कर पराशरने कहा यह परिछिन्नमय रूप सूक्ष्म अहंकार रूपी काष्ठकोही भस्म करनाथा कोई देहादिक संघातके भस्म करनेमें मेरा तात्पर्य्य नहीं भला भया तू भस्मीभूत हुआ हे मैत्रेय आपत काम अचाहि खुद मस्ती कर मस्त स्वभाविक विचरते हुये संत ध्रुवको मिलते भये कुछ राज पुत्र ध्रुवके मिलनेकी कामनावास्ते नहीं इसी निष्कामनाके ऊपर एक इतिहास सुन एक कालमें महात्मा जडभरथ देवराज इंद्रकी शास्त्रोक्त तपचर्य्या कर्त्ता भया तीन मास बीते तब इंद्रने दर्शन दिया अरु कहा जो इच्छा हो सो वरमांग जडभरथ सुनकर हँसा अरु कहा हे इंद्र जो तुम दयालु हुये हो तो कहो मुझ वर लेनेवालेका क्या स्वरूप है अरु तुम वर देनेवालेका क्या स्वरूप है अरु वर कहाँसे देवोगे अरु किसके बलसे वर देवोगे काहेते तुम्हारी हमारी आकृति तो समानही है तुम उपास्य वर देनेवाले हम उपासक वर लेनेवाले यह विलक्षणता कैसेहै इंद्रने कहा हे जडभरथ मुझनिमित्त तैंने कठिन तप किया अब तू पूछता है तू कौन है परंतु मैंने सुनाथाकि

४०

जडभरथ परमहंस है पर देखा तो परमहंस अरु भरथ छोड़कर जड़ देखा काहेते जड़ पदार्थ न आपको जानता है न परको ॥ हे जड़भरथ मैं वर लेनेवाला कौनहों तू वर देनेवाला कौन है यह स्फूर्ति अंतर जिसकर सिद्ध होती है सोई तेरा मेरा स्वरूप है सो मैं जाननेकी न्याईं जानता हूंतू नहीं जानता इसीते तू उपासक वर लेनेवाला है अरु मैं वर देनेवाला उपास्यसामर्थ्य हों हे जडभरथ तेरा पूछना ऐसा है जैसे घटाकाशसे घटाकाश पूछे जैसे समुद्रके तरंगसे तरंग पूछे जैसे अग्निका चिनगारा अग्निके चिनगारेसे पूछे सो जैसे स्वप्न नर स्वप्न नरसे पूछे सो अयोग्य है काहेते सर्वप्रकार करके पूछनेवालेका तथा जिससे आगे पूछता है तिनका एकही स्वरूप है उपाधि दृष्टिसेभी अरु उपहित नाम उपाधिवाले आत्माकी दृष्टिसेभी एकही रूप है तू कौन है मैं कौन हों ऐसा पूछना वहां होता है जहाँ विलक्षणता होती है विलक्षणता विना इस प्रश्नका पूछना मूर्खता है आपको तैंने क्या पंचभूत रूप जाना है अन्यको अपंचभूत रूप जाना है वा आपको तैंने चैतन्य रूप जाना है दृश्य वा द्रष्टा रूप सत्य वा असत्य रूप कार्य वा कारण रूप जाना है वा कल्पित वा अधिष्ठान रूप जाना तथा अन्यको तैंने पंचभूतसे बिना जाना है वा चैतन्यसे विनाजाना है वा दृश्य दृष्टासे विना वा कल्पित वा अधिष्ठानसे विना वा कार्य कारणसे विना वा सत्य असत्यसे विना देखा है जो पूछता है मैं कौनहों तथा तू कौन है हे बुद्धिखोये जान जो मैं हों सर्व रीतिसे सर्व सृष्टि मेराही स्वरूप है अन्यथा नहीं पूर्वकहे जलतरंगादिक दृष्टांतकी न्याईं ताते हे जडभरथ संतोंका संगकर जो अपने स्वरूपको जाने जड़भरथने कहा उपदेश करो इंद्रने कहा उपदेश यही है जो कल्पित नाम रूप त्यागके अपने सहित सर्व नारायण जान जैसे समुद्रके तरंगको उपदेश यहीहै जो नामरूप त्यागके आप सहित सर्व तरंगोंको जल रूप जाने जैसे चीनीके वनाये जडभरथको स्वरूपकी प्राप्तिका उपदेश यहीहै जो आप सहित सर्व खांडके खिलौनोंको चीनी रूप जाने जड़भरथ तूष्णी भया तिसकालमें ब्रह्मा विष्णु शिव देवतानसहित आवते भये ॥ ब्रह्माने कहा हे जड़भरथ कछु आत्मनिरूपण कर तूष्णी मत हो जड़भरथने कहा आत्मनिरूपण त्रिपुटी भ्रम विना होता नहीं मुझ अद्वैत आत्मामें त्रिपुटी भ्रमहै नहीं

ताते कैसे निरूपण करों ब्रह्माने कहा तुझ चैतन्य आत्मा अधिष्ठानमें यह कल्पित त्रिपुटी नहीं तो किसमें है अधिष्ठान बिना कल्पितकी प्रतीति होती नहीं ताते इस कल्पित नामरूप जगत्का तूही चैतन्य अधिष्ठान है तुझ चैतन्यते पृथक् इस कल्पितका अधिष्ठान नहीं जैसे कल्पित मनादि भूषणोंका अधिष्ठान स्वर्ण आत्माही है अन्य नहींहै हे साधू अन्य दृष्टि करके तुझ चैतन्य अधिष्ठान विषे इस कल्पित नामरूप संसारकी प्रतीति होतेभी तुझ चैतन्य अधिष्ठानका बिगाड़ कछु नहीं जैसे सदोष पुरुषने रज्जुमें सर्प कल्पना करनेसे रज्जु विष सहित नहीं भई निर्विकार ज्योंकी त्योंहै काहेते वास्तवते रज्जुमें सर्पका अभाव होनेते जैसे स्वप्न प्रपंचकी प्रतीति होतेभी स्वप्नद्रष्टाको बोझ नहीं काहेते जिस मनने नाम रूप कल्पाहै उसी मनको प्रतीति होताहै अन्यको नहीं अधिष्ठानने नाम रूप प्रपंच कल्पा नहीं तिस अधिष्ठानको नाम रूप प्रपंचकी प्रतीतिभी नहीं होती परंतु नाम रूप स्वप्नद्रष्टा पदार्थोंके कल्पनाका अधिष्ठान स्वप्नद्रष्टाही होगा अन्य नहीं ताते हे जड़ भरथ आत्मनिरूपण कर्तें तुझ चैतन्य आत्माकी टांगडी नहीं टूटती भयमत कर हे जड़ भरथ जैसे किसीने मानसिक कल्पना करके तुझके शीशपर पर्वत राखा परंतु कहो तुझको उस पर्वतका बोझ लागेगा किंतु नहीं लागेगा जो तू परकी कल्पनाके पर्वतका शीशपर बोझ माने तो तेरी बुद्धि हँसने योग्यहै तैसेही आत्म निरूपण करने वाला औरहै तिस निरूपणमें गुण दोष विचारने वाला और है श्रवण करने वाला श्रोत्रेंद्रिय है देखने वाला और है इत्यादि संघातमें सर्व इंद्रियोंके व्यवहारकी भिन्न भिन्न कल्पना होनेसे तुझ असंग निर्विकार निर्विकल्प स्वमहिमामेंस्थितको क्या पीड़ाहै उलटा आत्मनिरूपण करना न करना तुझ आगे मनादिक नटोंका नाटकहै हे जड़ भरथ तू इस मनादिक नटोंके नाटकका तमासा देखने वाला आपको जान आप नाटकमें नट रूप मतहो नाटकका कर्त्ताभी आपको मत मान तथा नाटकरूपभी आपको मतमान हे जड़ भरथ यह मनादिक आप अपने व्यवहारमें प्रवृत्त होते हैं अरु इन व्यवहारोंमें हानि लाभ भी इन हीको होती है तुझ विकार रहित साक्षी आत्माका यह मनादिक गरीब नुकसान कछु नहीं करते तू नाहक इनसे राग द्वेष मतकर तू अपने महत्वको देख इनको संताप मतकर औ तेरे लाखोंयत्नोंसे इनके व्य-

वहारकी निवृत्तिभी नहीं होगी हे मैत्रेय संतापभी लेने देनेवाला भी मनही है अरु लेनेवालाभी मनहीहै संतापके देने लेनेवालोंका साक्षीभूत जो मैं चैतन्य आत्माहों मुझका क्या अपराध है ऐसे निश्चय कर जैसे अंगरेजी सरकारने इस हिंदुस्थानके वंदोवस्तवास्ते चार हातोंका संकेत कल्पना कराहै तिन चार हातोंके मर्यादाके पालक अभिमानी चार लाट मुकर्रर करे हैं प्रजा सहित तिन चारों छोटे लाटोंके ऊपर सत्यवादी न्यायकारी निर्लोभ धर्मात्मा धर्मपालक अलौकिक बलवान् एक बड़ा लाट मुकर्रर करा है चार लाटों सहित सर्वप्रजा जिसकी आज्ञामें स्थितहै परंतु सर्वप्रजा भिन्न भिन्न आप अपने नीच ऊंच व्यवहारमें निरंतर संस्कारोंको लिये बलात्कारते स्थितहै आप अपने संस्कारके अनुसारही तिन सर्व प्रजा का हानि लाभ तथा सुख दुःख तथा अपने अपने व्यवहारमे राग द्वेष स्वभाविक पड़ा होताहे यद्यपि प्रजाके दुःखकी निवृत्ति व सुखकी प्राप्तिवास्ते कायदा शास्त्रअनुसार बना दिया है तिसपर धारणा करनेवालेको लौकिक व्यवहारमें सुखभी होता है न करनेवालेको दुःखभी होताहै परंतु बलात्कारते बड़ा लाट गवर्नमिंट सरकार प्रजाको यह नहीं कहती कि तुम यह व्यवहार करो वा न करो तथा इस व्यवहारमें राग द्वेष करो वा न करो इसमे तुमको हानि लाभ होगी वा न होगी तथा सुख दुःख इस व्यवहारमें तुमको होगा वा न होगा इत्यादि पूर्वोक्त लाट वा सर्कार अपने स्वस्थानमे सुखपूर्वक स्थित है जे कर बड़ा लाट वा सर्कार गरीब प्रजाके साथ लड़ाई भिड़ाई करेंगे तो सर्व का अधिपतिपनेका सुख आरामदारी महत्वपना जाते हुये की न्याई जाता रहेगा तथा तुच्छपना सिद्ध होगा परंतु प्रजाके भिन्न भिन्न व्यवहारके दूर करनेका तथा एकत्व करनेका यत्न कर्नेसे भी सर्व प्रजाका भिन्न भिन्न स्वस्व व्यापारमे प्रवृत्ति निवृत्तिका बाधा न होगा ईश्वरकी नेति आदि ऐसेही हुई है परंतु गवर्नमिंटकी हुकूमत तो सब प्रजापर है हुकुमको अन्यथा कोई करै नहीं फेर गरीबोंसे राग द्वेष कर निजमहत्वता रूप इज्जत क्यों अपनी खोतेहो निष्कारण क्यों सताते हो तैसे पंचभूतोंका कार्य रूप जो यह मनुष्य देह है सो हिंदुस्थानके समान है अरु जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीया अवस्था चार हातोंकी न्याई है वा समष्टी व्यष्टी स्थूल सूक्ष्म कारण

महाकारण शरीर यह चार हातोंके समान है वा सर्व जगत् रूप जो आकार उकार मकार अर्द्ध मात्रा रूप जो ओंकार हैं सो चार हाते रूप हैं पूर्वोक्त जाग्रतादि अवस्थाके अभिमानी विश्व, तैजस, प्राज्ञ, तुरीय चार छोटे लाट हैं वा जाग्रतादिक अवस्थाके व्यष्टी अभिमानी विश्वादिकोंसे अभिन्न वैराट् हिरण्यगर्भ ईश्वर अरु ईश्वर साक्षी समष्टी अभिमानी चारों छोटे लाटोंके समान हैं दश इंद्रिय पंच प्राण पंच उपप्राण चतुष्टय अंतःकरण वैखरी मध्यमा पश्यंति परा चार प्रकारकी वाणी पच्चीस वा एक सौ पच्चीस वा सत्ताईस आदि प्रकृति सत्, रज, तम गुणादि प्रजारूप जाननी माया वा अज्ञान वा प्रकृति वा प्रधान वा अविद्या इत्यादि नामवाली माया हिंदुस्थानकी पृथ्वी रूप है गर्वनर्मिटलाट स्थानी केवल चैतन्य मात्र तुम हो तुझ निर्विकल्पनिर्विकार चैतन्य लाटकी सत्ता स्फूर्ति करकेही मनादिक सर्व प्रजाका व्यवहार सिद्ध होता है यह कायदा है वा ऐसे जानना जाग्रतादिचार अवस्था चार हाते हैं तद् अभिमानी चार चीफ कमिश्नर हैं शब्दादि विषय चौकीदार हैं २५ प्रकृति प्रजा है इंद्रिय तहसीलदार हैं तद अभिमानी सूर्य्यादि देवता डिपुटी कामिश्नर हैं चतुष्टय अंतःकर्ण कमिश्नर हैं तद अभिमानी चंद्रमादि देवता सिक्रेटरी हैं प्राण डाक है शबलब्रह्म मुल्की लाट है वेद कायदा है शुद्धब्रह्म मलका विक्टोरिया है सो तुम हो परंतु सर्व चक्षु मनादिक प्रजाका तथा तिनके रूप दर्शनादिक तथा संकल्प विकल्पादिक तथा समाधि विक्षेपादिक सर्व धर्मोंका स्वमहिमा में स्थित तुझ शुद्ध चैतन्य मलकाको स्पर्श नहीं होता है जड भरथ तू चैतन्य मलका नाहक मन चक्षुआदिक प्रजाके साथ क्यों राग द्वेष करते हो मन विक्षेपवान न होवे एकाग्र होवे यह बुद्धि भला तो निश्चय करे बुरा निश्चय न करे चित्त परमेश्वर काही चिंतवन करे अन्य न करे मिथ्याहंकार न होवे सतहंकार होवे चक्षु अच्छे रूपको देखें बुरे रूपको न देखें इत्यादि अन्य इंद्रियादि प्रजाके धर्मनको भी जानलेना तुम निश्चय सत न्याय पूर्वक सोच देखो भ्रमविना तुझ चैतन्यका तो भला बुरा तथा शुभ अशुभ संकल्प विकल्पादि स्वभाव न हुआ प्रजाकाही हुआ अरु बुद्धि आदिक भले पदार्थोंका निश्चय करें वा समाधि करें बुरे पदार्थका निश्चयादिक तथा विक्षेपादिक न करें तो बुरे पदार्थोंका निश्चय

वा विक्षेपादिक निश्चय बुद्धिविना कौन करे सो कहो काहेते तुझ आत्माका भी संकल्पादि धर्म नहीं तथा अन्य इंद्रियादिकोंका भी धर्म नहीं तो मनादि विना विक्षेपादि निश्चय व्यवहार कैसे होगा किंतु नहीं होगा तैसे चक्षु आदिक भले रूपादिकोंको देखें तो बुरे रूपादिकोंको कौन देखे चक्षु आदिकों विना सो कहो काहेते दर्शनादि व्यवहार चक्षुविन अन्यका है नहीं यद्यपि हे शिष्य तुझ चैतन्य निर्विकार साक्षी आत्मानेही कल्पित मनादिक प्रजाका हर्ष शोकादिक भिन्न भिन्न यथा योग्य स्वभाव रचा है तथापि मनादिक प्रजाके होते तिनके धर्मोंका अभाव वा अन्यथा तुझ रचकसे भी नहीं होगा जैसे स्वप्नके मन चक्षु आदिक इंद्रिय भी तथा तिन मन चक्षुआदिक इंद्रियोंके धर्म रूपादिक विषय भी स्वप्नद्रष्टाने ही यथा योग्य भिन्न भिन्न कल्पना करे हैं भी परंतु स्वप्न पदार्थ रचक स्वप्नद्रष्टासेभी स्वप्न पदार्थोंका वा तिनके स्वभावोंका स्वप्न कालमें अन्यथा वा अभाव कदाचित् भी नहीं हो सक्ता जे कर अन्यथावत् अन्यथा करेगा तो एक अपने संकेतका आपही भंग दोष दूसरा सर्व पदार्थोंका व्यवस्थाका भंग दोष तथा अपनी प्रतिज्ञाका भंग दोष तथा सतवादितादिका भंग दोष प्राप्त होवेगा तथा अपनेमें भ्रम विप्रलिप्सादि दोषकीभी प्राप्ति होगी अरु यहभी नहीं कि मनादिक दृश्य स्वप्न पदार्थोंका पूर्व स्वभाव वर्तनेसे स्वप्नद्रष्टाकी हानि है अरु मनादिकोंके अन्यथा स्वभाव करनेसे स्वप्नद्रष्टाको लाभहै ताते स्वप्नद्रष्टाने अन्यथा स्वभाव कर्णेमें यत्न करना नाम अति विषयोंमे लंपट मन इंद्रियोंके स्वभावोंको उलटायके सज्जनोंवत् मनकी वृत्तिको अंतर्मुख स्वरूपाकार करना परंतु स्वप्नद्रष्टाकी सर्व प्रकार करके मनादिक दृश्य स्वप्न पदार्थ किंचित् मात्रभी हानि लाभ नहीं कर सक्के तैसेही स्वप्नद्रष्टाकी न्याईं तुझ चैतन्य साक्षी आत्मा की यह मनादिक जाग्रतादिकोंमें वर्तनेवाले पदार्थ सर्व प्रकार करके किंचित् मात्रभी हानि लाभ नहीं कर सक्के जैसे अनेक प्रकारके अंधेरी आदिक पदार्थ होने तथा मिटनेसे आकाशकी हानि लाभ नहीं करसक्के ताते बुद्धि आदिकोंने आत्मनिरूपण करनेते तुझ चैतन्य आकाशका क्या बिगड़ताहै किंतु कुछ नहीं बिगड़ता जो बिगड़तामाने तो यही भ्रमहै ताते निःसंग होकर आत्म निरूपण करो जड़भरथने कहा हे ब्रह्मा तू कौन

है अरु जगत्की उत्पत्ति कैसे करताहै ब्रह्माने कहा साक्षात् मायाका कारज भूत पंचभूतोंका कार्य्यरूप यह संघातमैं नहीं किंतु जिसकर इस संघातकी तथा संघातके व्यवहारकी सत्ता स्फूर्ति होती है सो चैतन्य आत्मा मैं हों अन्य नहीं हे जडभरथ जैसे तुम स्वप्नमें स्वप्न पदार्थोंको मट्टी, गारा, पत्थर कहींसे लेकर तथा अस्थि मांस रुधिर मेध मज्जा वीर्य्यादि सप्तधातु कहींसे लेकर तथा कहींसे पृथिवी आदि पंचभूतोंको लेकर वा स्त्री पुरुषके संयोगकर नहीं रचते तथा सूक्ष्म स्वप्न नाड़ीमें स्वप्न पदार्थोंके योग्य अन्य देश काल वस्तु कारणभी नहीं हो सक्ते तात्पर्य्य यह कि और किसी रीतिसेभी तुम स्वप्नमें स्वप्न पदार्थोंको नहीं रच सक्ते निद्रा दोष संयुक्त केवल फुरने करकेही रचते हो तैसेही मैं चैतन्य मनादिकोंका साक्षी आत्मा कोई मट्टी गारा पत्थरादिक कहींसे अन्य सामग्री लेके इस जगत्को नहीं रचता किंतु केवल मायारूप स्फुरने करकेही इस नामरूप जगत्को मैं रचता हौं फुरनेसे इसकी उत्पत्ति होने ते यह जगत् मिथ्याहै यद्यपि वर्तमान कालमें स्त्री पुरुषके संयोगसे पुत्रकी उत्पत्ति बीजसे वृक्षकी उत्पत्ति इत्यादि यथायोग्य कारणोंते कारजकी उत्पत्ति प्रतीत होतीहै केवल फुरने करके इस नामरूप जगत्की उत्पात्ति प्रतीति होती नहीं तथापि निद्राके प्राप्त होतेही स्वप्नमें झटतही एक क्षणमें पुत्र पौत्र सहित आपको देखताहै तथा बाग बगीचे पर्वत नादियां देशकाल देखताहै सो तीस वा चालीस बरसमें होनेवाले पुत्र पौत्र सो एक क्षणमें किस स्त्रीते उत्पन्न भये हैं तथा किस बीजसे वृक्ष उत्पन्न भये हैं तथा किस कारणते पर्वतादि उत्पन्न भये हैं तथा किस स्त्री पुरुषके संयोगसे पुत्र पौत्र उत्पन्न होते हैं सो कहो किंतु निद्रा रूप अविद्या स्त्री बीजादि करकेही पूर्वोक्त पदार्थ उत्पन्न भये हैं अन्य किसी कारणते नहीं उत्पन्न भये पश्चात् जागे निद्रा रूप अविद्यामें तिन पदार्थोंकी लीनता होती है ताते निद्रारूप अविद्या कर स्वप्नद्रष्टा चैतन्यही दृढ़ फुरणे करके कार्य्य कारण रूपता करके प्रतीत होवैहै वास्तवते स्वप्न पपंच आदिमें भी नहीं तथा जागे अंतमेंभी नहीं रहता मध्यमें अविद्या करके अनेक प्रकारकी प्रतीति होतेहुयेभी आदि अंतकी न्याई मध्यमें भी अत्यंत अभावही स्वप्न प्रपंचका जानना तैसेही जाग्रत प्रपंचभी जानना

बल्कि स्वप्न प्रपंचतेभी जाग्रत प्रपंच अति तुच्छहै काहेते स्वप्न प्रपंचके यद किंचित् निद्रारूप अविद्या सहित देश कालादिक कारण पाये जातेभी हैं परंतु देश कालादिक भेद रहित केवल सच्चिदानंद निजात्माके अज्ञानते इस जाग्रत जगत्की प्रतीती होवे है रज्जुके अज्ञानते सर्प प्रतीतीवत् ॥ ताते अति तुच्छ है सिद्धांत यह है कि अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते भिन्न करके जो नामरूप जगत्की प्रतीति है सोई स्वप्नहै सोई मिथ्या दृष्टी है सोई मायाहै जैसे मधुरता द्रवता शीतलता रूप जलते भिन्न करके जो फेन बुद्बुदा तरंगादिक नाम रूपकी प्रतीति है सो यथार्थ दृष्टी नहीं किंतु मिथ्यादृष्टी है जब मधुरता द्रवता शीतलता रूप जलकी दृष्टी होतीहै तब तरंगादिक नाम रूपकी अत्यंताभाव प्रतीति होता है शेष केवल जलही प्रतीति होताहै सोई यथार्थ दृष्टी है तैसेही जब अस्ति भाति प्रियरूप निजात्माकी दृष्टी होतीहै तब पृथिवी आदिक कल्पित नाम रूप जगत्का अत्यंताभाव प्रतीत होताहै शेष अस्ति भाति प्रिय निजात्माही भासता है सोई यथार्थ दृष्टी है जाग्रत स्वप्नका तथा व्यवहारक प्राति भासक पदार्थोंका भेद करना तथा कथन करना यह सिद्धांत नहीं किंतु यह कथन चिंतन पूर्वोक्त सिद्धांतके उपयोगी है हे साधो जैसे स्वप्नमेंही रज्जु आदिकों विषे सर्पादिक प्रातिभासक प्रतीत होवेहैं तथा घटादि व्यवहारक प्रतीत होवेहैं इसी प्रकार स्वप्नमेंही जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मर्ण समाधि विक्षेपादिक बुद्धिकी अवस्था भी प्रतीत होती है तथा बंध मोक्ष शास्त्र गुरू समुद्र नदियां पर्वत हस्ती घोडा घटपटादि देश कालादि कार्य कारण भावकर प्रतीत होतेहैं अनेक प्रकारके पदार्थ अनादि जाग्रतवत् प्रतीत होतेहैं परंतु स्वप्नमें स्वप्नांतरके पदार्थोंको तथा रज्जु आदिकोंमें कल्पित सर्पादिकोंको मिथ्या नाम प्राति भासक जानता है नाम प्रतीत होतेहैं अरु घटपटादिक व्यवहारक नाम सतरूप करके व्यवहारक सत् प्रतीत होतेहैं तथा देश कालादिक सर्व पदार्थोंके कारण रूप करके प्रतीत होते हैं सर्व पदार्थ कार्य रूप करके प्रतीत होते हैं तथा गुरू शास्त्र बंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्ति करनेवाले दीखते हैं तथा आपको अकृतार्थ जानता है तथा कोई पदार्थ अनादि कोई सादि प्रतीत होते हैं तथा राजा रंक ज्ञानी अज्ञानी जीव

ईश्वर जाग्रतवत् प्रतीत होते हैं परंतु अविद्याके परिणाम चैतन्यके विवर्त निद्रा दोष करके एक क्षणमात्रमें सर्वकी प्रतभा प्रतीत होने ते
तिन स्वप्न पदार्थोंमें कार्य कारण भाव तथा प्रातिभासक व्यवहारक नाम सत् असत् विभाग भेद नहीं परंतु किसी पदार्थमें सत्पना
किसीमें असत्पना किसीमें कारणपना किसीमें कार्यपना किसीमें अनादिपना किसीमें सादिपना इत्यादि प्रतीत होता है सो यह सर्व
अविद्याकी महिमा है पदार्थोंमें भेद नहीं तैसेही दार्ष्टांत जाग्रतमें भी जोड़लेना हे साधो यहां जाग्रत स्वप्नका भेद नहीं तात्पर्य्य यह कि
असम्यक् दर्शनका नाम स्वप्न है सम्यक् दर्शनका नाम जाग्रत है हे साधो स्वप्नकी अपेक्षाकर यह जाग्रत है इस जाग्रतकी अपेक्षा
कर वह स्वप्न है तुमही कहो जाग्रत कौन हुई अरु स्वप्न कौन हुआ तात्पर्य यह कि न कोई जाग्रत है न कोई स्वप्न है किन्तु आप
अपने वर्तमानमें दोनों जाग्रत हैं पर काल में दोनों स्वप्न हैं औ जो जाग्रतादिकोंका स्वरूप कहैं भी तो वहिर फुरनेका नाम
जाग्रत है औ अंतर्फुरनेका नाम स्वप्न है औ दोनोंसे रहित निजकारण में लीन वृत्तिका नाम सुषुप्ति तीनों वृत्तिके साक्षीका नाम तुरीय
है ताते हे बुद्धिमान शिष्य व्यष्टी जीवके वा समष्टी ईश्वरके फुरने मात्र करकेही इस नामरूप जगत्की उत्पत्ति है कोई मट्टीगारेसे ईश्वर
वा जीवने वनाया नहीं इसीते मिथ्या है जैसे कामधेनु तथा कल्पतरु आदिकोंके नीचे खान पान द्रव स्त्री आदिक पदार्थोंकी पुरुषको संकल्प
मात्रसेही सर्वप्रकार करके प्राप्ति होती है सो तुम विचार देखोकि अपरोक्ष कामधेनु कल्पतरुके पास खान पानादिकोंके योग्य प्रत्यक्ष
पदार्थ धरे भी नहीं अरु ना कहींसे ले आये हैं अरु अपने शरीरसे भी निकास नहीं देते तात्पर्य यहकि तिन सर्व पदार्थोंका और कोई कारण
मालूम नहीं देता ताते यह सिद्ध हुआकि सत संकल्प चैतन्य पुरुष ईश्वरने आदि यह संकल्प करा है जो पुरुष कर्म्मवशते कामधेनु वा कल्प
तरुके नीचे स्थित होकर जिस पदार्थका संकल्प करे सोई पदार्थ तिस पुरुषको अपरोक्ष प्राप्त होवे यह फुरणाही कारण है तपस्वी पुरुषोंके
वर शापकी तथा सिद्ध पुरुषोंके संकल्प सिद्ध पदार्थोंकी तथा मायावी पुरुषकीभी यही रीति जान लेनी ताते हे साधो यह
नाम रूपात्मक जगत् फुरणेमात्र करकेही प्रतीत होताहै अन्य इसका स्वरूप नहीं सारांश यह कि तू चैतन्य सूर्य वा ला-

लही अपनी महिमा में स्थितहै फुरणारूप जगत् तुझते भिन्न नहीं जैसे सूर्यकी किरणैं सूर्यते भिन्न नहीं लालकी दमका लाल ते भिन्न नहीं जो ईश्वरादि सत सामग्रीते संसार सत् मानोगे तो सत्की प्राप्तीकी इच्छा मात्रते संसारको त्यागे यह वेदका कहना निष्फल होगा दूसरा सतकी प्राप्ति वास्ते यत्न निष्फल होगा काहेते सत संसार सदा जीवोंको अपरोक्ष यत्न विना प्राप्तहै तिसकी प्राप्तिवास्ते यत्न निष्फलहै अरु सतकी निवृत्तिभी नहीं होती ब्रह्माने कहा हे जड़भरत तेरा स्वरूप क्या है जडभरथने कहा ब्रह्मा विष्णु शिवादिक नामरूप जिसकर सिद्ध होते हैं सो मेरा स्वरूपहै विष्णुने कहा मैं सर्व नामरूप जगत्में व्यापक हों जैसे सर्व नामरूप भूषणोंमें स्वर्ण व्यापक होताहै जड़भरथने कहा मुझ चैतन्य प्रकाश करकेही तुम ब्रह्मा विष्णु शिवादिक सर्व नामरूप प्रकाश राखते हो तुम केवल वृथाही अभिमान करते हो कि हम इस जगत्की उत्पत्ति पालना संहार करते हैं जैसे रज्जु अधिष्ठान-के ज्ञान अज्ञान ते ही सर्पदंड मालादिक पदार्थोंकी उत्पत्ति पालना संहार होताहै सो ज्ञान अज्ञान तम प्रकाश रूप मुझ चैतन्य सूर्य्यमें है नहीं है तो भ्रम है तैसे तुम सहित भ्रमरूप इस संसारकी मुझ चैतन्य अधिष्ठानके ज्ञान अज्ञानतेही सर्व जगत्की प्रवृत्ति निवृत्ति होती है ताते तुमको भ्रम हुआहै कि हम शरीर करके जगत्की उत्पत्ति आदि करते हैं शिवने कहा हे जड़भरत तुझको जड़-भरथ क्यों कहते हैं जड़भरथने कहा जड़वस्तु फुर्णे रहित होती है ताते फुरणे ते रहित होनेते मुझ चैतन्यको जड़ कहते हैं सर्व नाम-रूप जगत्को अपने आस्ति भाति प्रिय सच्चिदानंद रूप करके भर रहा हों याते मुझ चैतन्यको भरथ कहते हैं जैसे अपनी मधुरता शीतलता द्रवता रूप करके जल सर्व नामरूप फेन बुद्बुदे तरंगादिकों में भर रहा है जड़भरथने कहा हे ब्रह्मा विष्णु शिवादिको तुम्हारा क्या स्वरूप है शिवने कहा यह जो गंगाधर अर्धंगी गौरजा सहित तथा सर्प रुंडमाला सहित त्रिनेत्र नीलकंठ भूत पिशाच सैना सहित सगुण उपासक भगत जनोंको अतिप्रियशांति अरु मंगलके देनेवाली कोटि कामदेवतेभी अतिसुंदर दूधके फेन तुल्य गौर यह मूर्ति जगत् सहित नामरूप मायामात्र है वा पंचभूतरूप है मुझ कल्याण स्वरूप चैतन्य व्यापकका यह नामरूप मूर्ति स्वरूप संघात

वास्तव स्वरूप नहीं किंतु जैसे मैं चैतन्य इस असत जड़ दुःखरूप इस मूर्त्ति संघात विषे सच्चिदानंद सर्व इस संघातके व्यवहारका साक्षी दृष्टा प्रकाशक असंग आत्मा इस जड संघातका प्रेरक निर्विकार निर्विकल्प रूप करके स्थित हों तैसेही सर्व नामरूप संघातोंमें पूर्वोक्तमैं चैतन्यसाक्षी आत्मा एकरूप करके स्थितहों वा सर्व नामरूप कल्पित जगत् ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत विषे मे अधिष्ठानही स्वमहिमामें स्थितहों द्वैतहैं ही नहीं तात्पर्य्य यह कि निर्विकल्प निर्विकार साक्षी असंग सच्चिदानंदादिक अधिष्ठानके विशेषण तथा कल्पित नामरूपके विशेषण दृश्य मिथ्यात्वादिक तथा सत्यत्वादिक मुमुक्षुके बोधवास्ते वाचा रंभणमात्र प्रतीति होते हैं वास्तव मुझ अस्ति भाति प्रियरूप आत्मा में नहीं जैसे स्वर्ण अरु भूषणोंका भिन्न भिन्न स्वरूप कहना तथा पुनः स्वर्ण भूषणोंकी एकरूपता कहिनी सो केवल बालकोंके स्व महिमास्थित स्वर्णके बोधवास्ते वाचारंभण मात्रहै वास्तवते नहीं यह अमृतरूपी पक्षपातते रहित यथार्थ महादेवके वचनोंको सुनकर सर्व अपने स्वरूपमे स्थितहुये ब्रह्मा विष्णु आदिकभी महादेवकी गंभीरवाणीको सुनकर श्लाघा करते भये विष्णुभी यही कहते भये हे साधो शंख, चक्र, गदा, पद्म, लक्ष्मी सहित सर्व भूषणों सहित तथा मोर मुकुटवाली चतुर्भुज श्यामसुंदर मूर्ति मेरा स्वरूप नहीं किंतु मैं साक्षी चैतन्य व्यापक सर्वात्माहों तैसेही ब्रह्मानेभी कहा कि दृश्यमान मूर्तिमैं नहीं किंतु इस संघातकामैं साक्षी चैतन्य आत्माहों इसी प्रकार तिससभामें यही निश्चय भया जो देहादिक संघात हमारा स्वरूप नहीं किंतु यह देहादि संघातमें मायाका कार्य होनेते मिथ्याहै तथा दृश्यहै अरु हम इस संघातके साक्षी दृष्टा चैतन्य आत्माहैं ताते हेमैत्रेय तूभी यही निश्चय कर जो मैं यह पंचभौतिक देहादि संघात नहीं किन्तु देहादिकोंका साक्षी चैतन्य निर्विकार निर्विकल्प रूप स्वतः सिद्ध अकृतमदेव ज्ञान स्वरूप हों हे मैत्रेय वह संत जो ध्रुवकेपास गये थे सो अपना स्वरूपही जान कर गये थे मैत्रेयने कहा स्वरूप तो एकहै एक विषे आना जाना कैसे होता है पराशरने कहा आना जाना भी स्वरूप विषेही होता है पर एक इसीपर कथा सुन एक समय वामदेव स्वभाविक वन विषे एक हाथमे दंड अरु एक हाथमें कमंडलु लिये विचरता था मैं देखकर हँसा अरु पूछा हे रूप मेरे तुझका किसीसे राग द्वेष

तो है नहीं दंड क्यों हाथमें राखा है वामदेवने कहा सच्चिदानंद स्वरूप आत्माते पृथक् जाननेवाली विपरीत बुद्धिरूपी राक्षसीके दूर करनेवास्ते दंड राखाहै वा अधर्म विषे प्रवृत्त जो अशुद्ध मन है तिसको अंतर शुद्ध मन रूप दंडकर वेदरीति अनुसार अधर्मसे हटाकर धर्ममें जोडताहों जिसकर मनका उपशम होवे अंतर सोई दंड है वाहिर दंड तो तिस अंतर दंडकालखायकहै तथा तुझके नाशवास्ते राखा है काहेते है सर्व शिव परंतु राग द्वेष तथा दंडता शिवमेत् कल्पता है तुझकी विपरीत बुद्धि होनेते तुझकूं दंड देना योग्य है जैसे धर्मात्माको कोई विपरीत बुद्धिवाला कलंक लगावे तिसको दंड देना योग्यहै तैसे मन वाणी अगोचर बुद्धि आदिकोंका यह साक्षी दृष्टा आत्मामें तू द्वैत कल्पता है ताते तुझको दंडदेना योग्यहै मैंने कहा करतव विना यह आत्मा शिव कैसे होताहै वामदेवने कहा हे पराशर शिवनाम कल्याणकाहै नामरूप अकल्याणका साक्षी यह आत्मा स्वतःसिद्ध शिवरूपहै करतव कर शिवरूप नहीं जैसे घटादिकोंके व्यवहार रूपी अकल्याण ते रहित घटाकाश स्वतः सिद्ध महाकाश स्वरूपहैं जो करतव करके प्राप्त होती हैं सो अशिव होती है तथा कालांतर करके नाश होती है सत नहीं होती जैसे रसायन कर लोहा स्वर्ण होता है परंतु कालांतर करके पुनः लोहेका लोहा हो जाता है मैंने कहा करमंडलु क्यों लिया है वामदेवने कहा भ्रांति सिद्ध जो आत्मामें बंधकी निवृत्ति अरु मोक्षकी प्राप्तिवास्ते जो करतव्य तिसको तथा गोविंद वितरेक जो मनपर निश्चय है तिसको धोता हों वा कर नाम हस्तोंकाहै जैसे हस्तोंका मंडल महान मंडलकी अपेक्षासे तुच्छ है तथा अपरोक्ष है तैसे संसार रूप मंडल अपने स्वरूप ते अपरोक्ष अत्यंताभाव है तात्पर्य्य यह कि मैं चैतन्य आत्मा निष्कर्तव्य हों यही करमंडलु का अर्थ है मैंने कहा जव सर्व शिव हैं तो शिवको धोता हैं क्यों वामदेवने कहा जव सर्व शिव हैं तो धोवना अधोवनाभी शिव है जैसे हस्तीके पगमें सर्व पगसमाते हैं तैसे सर्व पदमें सर्व अर्थ समाते हैं मैंने कहा हे वामदेव तुम कहाँते आये हो अरु कहां जावोगे वामदेवने कहा न किसी दिशाते आयाहों न कहीं जावोंगा काहेते आकाशकी न्याईं पूर्ण हों पूर्णमें आनाजाना नहीं अपूर्णमेंही आनाजाना होता है मैंने कहा प्रत्यक्ष आनाजाना देखीता है कैसे कहते हो मुझमें आनाजाना नहीं

वामदेवने कहा आनाजाना तपस्याकरनी तथा खान पानादिक सर्वात्माही हैं द्वैत नहीं जैसे पंचभूतोंका कार्यरूप यह देहविषे आना, जाना, सोना, जागना, पीना, खाना, लेना, देना, सारांश यह कि सुख दुःख रूप भोगका भोगना प्रत्यक्ष दीखता भी है परंतु हे लोगो तुम विचार कर देखो जब सर्व दृश्य पदार्थ पंचभूत रूपही हैं तो आना जानादिक तिनते भिन्न कैसे होता है वा आना जानादिक भी पंचभूत रूपही हैं ताते आना जाना भी स्वरूपही है जैसे स्वप्ननरों का आना जाना स्वप्नद्रष्टाते भिन्न मिथ्या प्रतीति मात्र है नहीं तो स्वप्ननरों सहित तिनकी सर्व चेष्टा स्वप्नद्रष्टा रूप है जैसे तरंगादिकों सहित तरंगादिकोंकी सर्व चेष्टा जलरूप है हे मैत्रेय अब ध्रुवका वृत्तांत सुन तिन संतोंमें एक मैं था एक दत्तात्रेय एक वामदेव और भी अनेक संतथे तब ध्रुव संतोंको आयकर दंडवत करी मैंने कहा हे ध्रुव तैंने जो जाना है यह संत हैं सो हम संतनहीं जो हम संत होते तो तुझकी न्याई अटल पदवी मांगते हे ध्रुव ! जो देहादिक प्रपंच चल रूप है सो निश्चय अचल नहीं होता अरु जो अचल रूप आत्मा है सो चल रूप नहीं होता ताते तू सोचदेख दोनोरीतिसे अटल पदवी मांगना निष्प्रयोजन है काहेते प्रत्यक् निजस्वरूप आत्मा चल रूप देहादिक जगत्में स्थित भी सदा अ-चल रूप है अरु यह नाम रूप अटल पदवी सहित प्रपंच सदा चल रूप है यह अबाध अर्थ है ध्रुवने कहा तुम महान संतहो अवधूतने कहा हमारे स्वरूपमें महान अमहानपना तथा संत असंतपना है नहीं ध्रुवने कहा तू कौनहै अवधूतने कहा जो तू है ध्रुवने कहा मैं कौन हों अवधूतने कहा जो मैंहों ध्रुवने कहा रूप तेरा क्या है अवधूतने कहा जो रूप तेरा है ध्रुव यह वचन सुनकर आश्चर्यमान् भया अरु तूष्णी भया अवधूतने कहा तूष्णी मतहो तूष्णी अतूष्णी होना मन वाकका धर्म है ध्रुवने कहा क्या करों वचन चलता नहीं अवधूतने कहा इसी कारण ते तैंने अटलपदवी चाहीथी जो मैं बहुत काल अटल रहोंगा हे ध्रुव तू आप अटल अरु अटल पदवी चाही तुझको लज्जा न आई हे मूर्ख कभी तैंने सुना है कि आत्मा नाश होताहै किंतु नहीं होता जैसे घटाकाश घटादिकोंके नाश अचल विषे आपको अचल होनेकी इच्छा करे सो भी भ्रमहै तथा घटाकाश घटादिकोंके अचल होनेकी

इच्छा करे सोभी भ्रमहै जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्न पदार्थोंविषे आप अचल होनेकी इच्छा करे सो भ्रमहै तैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्न पदार्थोंके अचल होनेकी इच्छा करे सो भी भ्रम है जैसे वृक्ष आपने विषे होनेवाले फल फूल पत्तोंके अचल होनेकी इच्छाकरे अरु देह अटल होनेकी नहीं कल्पपर्यंत देह रहेभी अंतनाशीहै हे ध्रुव समान पुरुषभी मलीनादि स्थानको शीघ्रही त्यागा चाहते हैं काहेते बीमारीका मलीनादिस्थान कारण होनेते उलटा मलमूत्ररूप जो यह देह नरकरूप अति मलीन स्थानहै तिस विषे तैंने बहुत काल रहनेके वास्ते उलटातप कियाहै हे ध्रुव महात्मा इस दुःखरूप देह त्याग अनंतर किसीभी देहको धारण की इच्छा नहीं करतें तैंने करी है ताते तू धन्यहै ताते तेरी बुद्धि हँसने योग्य है अरु तुझको अनात्मा देहमें आत्मबुद्धि अरु अशुचि देहसे शुचि बुद्धि अरु दुःखमें सुखबुद्धि चल देह विषे अचल बुद्धि इत्यादि विपर्यय बुद्धिकी तथा मैं सर्वसे बडा हों इस अहंकारकी बीमारी तुझको होगी तिस बी- मारीसे अनंत कल्प कोटि पर्यंत तू दुःखको पावेगा हे ध्रुव मैं नहीं चाहता जो यह देह मेरा सदारहै वा न रहै काहेते मैं अविनाशी चैतन्य पुरुष हों मुझमें कर्तव्यनहीं तथा मुझका नाश नहीं मैं देहके रहनेनरहनेमें एकरस हों जैसे घटाकाश घटके रहने न रहनेमे एक रस है हे ध्रुव अपनेमे कल्पित दृश्य पदार्थोंते अधिष्ठान स्वतः सिद्ध वड़ा होताहै जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्न दृश्य पदार्थोंते यत्न विना स्वतः सिद्ध वड़ा सत अचल है तिसते अचल वड़ाई वास्ते तप करना भ्रमहै ताते तू सच्चिदानंद द्रष्टा चैतन्य सत अचल पुरुष इस नाम रूप कल्पित असत जड दुःखरूप दृश्य प्रपंचते स्वतः सिद्ध वड़ा सच्चिदानंदहै कर्तव्यसे नहीं हे ध्रुव जब ईश्वर तुझपर दयालु हुआ तो तैंने क्या मांगा विचार न किया यह अटलपदवी तो ऐसी है जैसे किसी देशमें वड़ा ऊंचा निर्जन पर्वत होवे तिसके शिखरपर एक मंदिर बना होवे तिस मंदिरमें पुरुष बैठारहै तैसे यह अटलपदवी है परंतु इसमे क्या विशेषता है हे ध्रुव तू सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा देश काल वस्तु परिच्छेद रहित पूर्ण है क्या तू अटल पदवी विषे नहीं था जो अटल पदवीकी चाहना करी जैसे आकाश किसी ऊंच पर्वत स्थित मंदिरमें बैठनेकी इच्छा करे सो भ्रमहै काहेते आकाश सभ नीची ऊंची ठौर में व्या-

पक स्वभावसेही है यत्न कर नहीं हे ध्रुव जैसे इस लोकमें अज्ञानी सर्व जीवोंको दुःख देनेवाले श्रोत्रादिक इंद्रिय अरु मन अरु शब्दादिक पंच विषय शत्रुहैं तथा षट् ऊर्मी हैं तथा षट् भाव विकारहैं तथा अध्यात्मादि तापहैं तथा कालका भयादिहैं तथा इन विषय इंद्रियके संयोग वियोग ते सुखदुःख होता है अनिष्ट विषय इंद्रियके संयोगते दुःख होताहै इष्ट विषय इंद्रियके संयोगते सुख होता है तथा न्यूनाधिकादि भाव संयुक्तपंचभूतक सृष्टिहै तैसेही सो अटल पदवी विषेभी शरीरके होते यह शत्रु तुझके संगही रहैंगे अन्यथा नहीं होवेंगे ताते अटल पदवी विषे क्या विशेपता भई सो कहो वा नाम रूप प्रपंच यहाँभी है अरु तुझकी अटलपदवीमेंभी है तो विशेषता क्या भई जो वैकुंठादिलोक अटल पदवीमें पूर्वोक्त नामरूप जगत् नहीं होता तो अटल पदवीकी इच्छा करना भी ठीक थी परंतु नाम रूप वास्ते व्यर्थ अटल पदवीकी इच्छा तैंने करी ताते हे ध्रुव सर्व दुःखोंते रहित तू चैतन्य आत्माही अटल पदवीहै तुझ चैतन्य ते भिन्न अटल पदवी नहीं किंतु सर्व चल पदवी है जैसे स्वप्नमें चल अचल पदवी प्रतीति होती है तात्पर्य्य यह कि किसी पदार्थ की बहुत काल स्थिति मालूम देती है किसी पदार्थ की अल्पकाल स्थिति मालूम होती है परंतु सर्व स्वप्नके पदार्थ क्षणमात्रमें होनेवाले होनेते तथा समान कल्पित होनेते तुच्छही हैं एक स्वप्न दृष्टाही अटल पदवी रूप है अन्य नहीं तैसे चल रूप घटपटादिकोंकी अपेक्षा कर विष्णु करके दिया स्थान अटल पदवी है तुझ अनादि अनंत चिदघनकी अपेक्षासे नहीं मायाकी अपेक्षासे भी नहीं कहते तेरी अटल पदवी मायाका कार्य है ध्रुवने कहा अब स्वरूपको कैसे पावों दत्तात्रेयने कहा जिस मार्गमें तैंने अटल पदवी पाई है उसी मार्गमें अपने स्वरूपको ढूँढो ध्रुवने कहा मार्ग बतावो वामदेवने कहा मार्ग स्वरूपके पावनेका यहीहै जो आप सहित सर्व गोविंद जान ध्रुवने कहा मुझको वैराग उपदेश करो हे मैत्रेय मैंने कहा यही वैरागहै जो जान ॥ मैं संघात रूप परिछिन्न ध्रुव नहीं जब तू नहीं तो परम वैरागका वैराग है हे ध्रुव परिछिन्न अहंकारके अभाव हुये जो शेषपद रहता है तिसमें मन वाणीकी गम नहीं जो मैं कहों ध्रुवने कहा मैं नही हों तो कौन है मैंने कहा मैं हों ध्रुवने कहा जो तू है तो मैं कैसे नहीं हों मैंने कहा खुदा एकहै दो नहीं ताते मै अहंत्वंते

रहित अद्वितीय हों ध्रुवने कहा जो तू अद्वितीय है तो मैंभी अद्वितीय हों हे ध्रुव जब तू अद्वितीय है तो अब कहो अटलपदवी कैसे है ध्रुवने कहा कहनेमात्र है मैंने कहा तब अटलपदवी की क्यों तैंने चाहना करी ध्रुवने कहा जो हुआ सो हुआ मुझको मुक्तिकी इच्छाहै उपदेश करो मैंने कहा उपदेश यही है जो आप सहित जान सर्व हरि है परंतु हे ध्रुव वासनाका त्यागकर ध्रुवने कहा वासना कैसे त्यागों पिशाचकी न्याई मनको लागी है मैंने कहा वैराग कर जो मैं नही हों जब तू नहीं तो वासना कहा है वा जान सर्व मैं ही हों जब सर्व तूही है तो वासना कहाँ है जो त्यागे वा अंतष्कर्ण सहित अंतः कर्णका धर्म रूप वासनाकाभी मैं द्रष्टा प्रकाशक आत्मा हों ऐसे जान हे ध्रुव जब तंत्रीके वजानेवाला होता है तब तंत्रीमें शब्द होता है जब तंत्रीके वजानेवाला नहीं होता तब तंत्रीमें शब्द नहीं होता तैसे जब तू मायाके गुणों साथ मिलके कछु बनता है तब वासनाभी होती है जब तुझकी बनावट छूटी तब वासना कहां हैं जैसे जो माल लादेगा सोई जगात भरेगा जो नहीं माल लादेगा सो जगातभी नहीं भरेगा माल पर जगात है विनामाल नहीं हे ध्रुव सच्चिदानंद शब्दोंका पर्याय जो अस्तिभाति प्रियरूप निजात्म तत्त्व है तिसते भिन्न जो कछु प्रतीत होता है सोही मायाका स्वरूप है तत्त्व नहीं जैसे मधुरता द्रवता शीतलता रूप जलते भिन्न जो कछु तरंगादिकोंकी प्रतीति है सो मिथ्या है जलका स्वरूप नहीं ताते अंतर बाहर जो नामरूप प्रपंच है सो तुझ चैतन्य देवतेही प्रकाश रखता है पराशरने कहा हे मैत्रेय ध्रुव देहादिकों विषे अहंमम अभिमानको त्यागके पुनः तिस त्यागका भी त्यागकरता भया परंतु तैंने कभीभी अहंकारका त्याग न किया मैत्रेयने कहा जो मुझका अहंकार होवे तो मैं त्यागों अहंकार पंचभूतोंका है मैं कैसे त्यागों पंचभूत अहंकार त्यागो ना त्यागो अरु मुझको दूसरेकी वस्तुके त्यागनेका अखत्यार भी नहीं सब जीव आप अपनी वस्तुके त्यागग्रहणमें मालिक है दूसरीकी वस्तुमें त्यागादि करनेमें दूसरा मालिक नहीं पराशरने कहा अहंकारको जब न त्यागेगा तो काल तुझको दुःख देवेगा मैत्रेयने कहा अहंकार जिसका हो उसको काल दुःख देवो वा न देवो दूसरेकी पंचायतसे मुझ चैतन्यको क्या मतलब है सूर्यमे अंधेराहो अरु सूर्य्यको अंधेरा दुःख देता हो तब सूर्य अंधेरेको त्याग

करनेका वा नाश करनेका उद्यम करे परंतु सूर्यमें अंधेरा हैही नहीं तो अंधेरेके दूर करनेका उद्यम सूर्य्यको निष्फलहै नाहक उलूकोंके साथ सूर्य पंचायतक्यों करे तुम मुझमे अंधेरा नाहक कल्पना क्यों करते हो जो तिन उलूकोंसे सूर्य लड़ाईभिड़ाई करेगा तो विद्वानों कर सूर्य हाँसीका असपद होगा तैसेही मुझ निर्विकार निर्विकल्प चैतन्य साक्षी आत्मामें अहंकारहै ही नहीं अनहुये अहंकारके त्यागनेका आरंभ मुझ चैतन्यको निष्फलहै तथा हाँसीका असपद है पराशरने कहा हे मैत्रेय अहंकारका क्या रूप है मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्यको क्या मालूम है अहंकारवालोंसे अहंकारके रूपकी मालूम होगी तिनसे पूछो जो राजासे तेल मूलीका हाल पूछना नादानी है पराशरने कहा तू कौन है मैत्रेयने कहा बड़ा आश्चर्य्य है जो है आप पूछता है तू कौन है जैसे घटाकाश घटाकाशसे पूछे तू कौन है तद्वत् न्याय तुमको प्राप्त हुवा यद्यपि घट अनेक हैं परंतु तिन घटोंमें रहनेवाला आकाश एकही है विचारदृष्टीसे घटभी अनेक नहीं मृत्तिका रूप करके एकही हैं उपाधिसे अनेक हैं पराशरने कहा अहंकारमें तू बंध है कहता है मैं चैतन्य हों तुझको लज्जा नहीं आती मैत्रेयने कहा लज्जा उसको है जो है बंधनमें अरु जानता है मैं मुक्तहों अरु जो मुक्तको मुक्त जानता है अरु बंधको बंध जानता है तिसको लज्जानहीं उलटा मुझ चैतन्य अधिष्ठान विषे कल्पित अहंकारादिकों करके अन हुई बंध तुम अरोपण करते हो यह तुमको अति लज्जाका काम है जैसे कल्पित सर्प दंडमाला आदिक अपने अधिष्ठान रज्जुको नहीं बांधसक्ते तथा परस्पर एक दूसरेको भी नहीं बाँध सक्ते परंतु सर्पादिकों करके रज्जुमें बंधका अरोप करना अतिहाँसी है जैसे स्वप्नके अहंकारादिक स्वप्नद्रष्टाको नहीं बाँधते तो आत्माको बांधेंगे नाम अहंकारादिक आत्माको दखल करेंगे किन्तु नहीं करेंगे यद्यपि जैसे व्यवहारक आकाशको महान् बलवान् वायु अग्नि जलादिकभी शोषण दाह गालना आदिक नहीं करसक्ते तथा देवता दैत्य राक्षसादिक महान् बलवान् भी इस सूक्ष्म आकाशको भी रज्जुसे वा किसी अन्यसाधन ते पूर्व तथा अब वर्तमान कालमें नहीं बांधते भये तो तुच्छजीव आकाशको बांधेंगे यामें क्या कहना है जो भूताकाशके बांधनेका उद्यम करेगा तो निष्फल होगा काहेते आकाश स्वरूप ते

निर्वंध है तैसेही यह भूताकाश भी जिस मुझ चैतन्यके पास सुमेरुपर्वतकी न्याईं अतिस्थूल है ऐसे अति महान् सूक्ष्म मुझ चैतन्य साक्षी आत्माको तुच्छ पंचभूतोंके कार्य अहंकारादिक वा पंचविषय वा पंचभूत कैसे बांध सकेंगे किंतु नहीं बांध सकेंगे जैसे देवता दैत्य राक्षस मनुष्यादिक जीवोंकाही आपसमें बांधना अरु न बांधना होता है आकाशका नहीं तैसेही अहंकारादिकोंका ही आपसमें बंध मोक्ष होता है आकाशकी न्याईं अति सूक्ष्म मुझ चैतन्य साक्षी आत्माका बंध मोक्ष नहीं होता किंतु मैं चैतन्य नित्य मुक्त हों परंतु कथा ध्रुवकी कहो पराशरने कहा कथा ध्रुवकी यही है जान आप सहित सर्व हरि है वामदेवने कहा हे ध्रुव तेरा स्वरूप क्या है ध्रुवने कहा जो जो मन वाणीके कथन चिंतनमें आता है सो मेरा रूप नहीं सो रूप जगत्का है ताते जब मनका सात्वकी वा राजसी वा तामसी कोई फुरणा नहीं फुरता पुनः अरु जिसकालमें मनका कोई राजसी वा तामसी वा सात्विकी फुरना फुरता है पुनः फुरकर नष्ट होजाता है पुनः उदय होता है पुनः उदय होकर नष्ट होजाता है मन रूप फुरनेकी तीनो अवस्थाका जो निर्विकार निर्विकल्प साक्षी चैतन्य आत्मा है सो मेरा रूप है यह नामरूप जगत् स्वप्न जगत्की न्याईं मिथ्या है वामदेवने कहा जब सर्व गोविंद है तब बीचमें कछु मिथ्या कछु सत्य यह भेद क्यों कल्पना करता है ॥ ध्रुवने कहा जब सर्व गोविंदहै तो भेद कल्पना भी गोविंदहै ताते भजनसे क्या प्रयोजन है मैंने कहा हे ध्रुव सर्व दृश्य जगत् भजन परमात्मा ईश्वरका करते हैं उसीको अल्ला खुदाभी बोलते हैं सो परमात्मा ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप है तथा, सर्वव्यापी अंतर्यामी है जो ईश्वर परमात्माको ऐसा नहीं मानोगे तो असत जड दुःख परिछिन्न अनंतर्यामी ईश्वर परमात्मा सिद्ध होगा ऐसा परमात्माका स्वरूप किसी शास्त्रको तथा विद्वानोंको मंजूर नहीं सो पूर्वोक्त सच्चिदानंद अंतर्यामी सर्वव्यापीपना इस बुद्धि आदिक सर्व नाम-रूप दृश्यका द्रष्टा साक्षी चैतन्यसेही घटै है इस साक्षी चैतन्य ते भिन्न देहसे लेकर माया पर्यंत कार्य कारणरूप सर्व नामरूप दृश्य प्रपंचमें घटे नहीं चाहे इस पिंड ब्रह्मांडमे खोज देखो पूर्वोक्त विशेषणोक्त परमात्माको इस नामरूप दृश्य ब्रह्मांडते बाहर मानोगे तो परमात्मा विषे सर्व व्यापकता तथा सर्व अंतर्याम्यता सिद्ध न होगी तथा चैतन्य परमात्माही सर्व जड़ पदार्थोंका नियमन

करताहै सोई चैतन्य परमात्माहै अन्य नहीं जब चैतन्य परमात्मा ब्रह्मांडते बाहर हुआ तो यह सर्व जड़ पदार्थ चेष्टा कैसे करैंगे किंतु नहीं करैंगे तो प्रत्यक्ष विरोध होगा चैतन्य विना जड़की चेष्टा कैसे होगी ॥ सारग्राहीको, आग्रह नहीं होता जिस वस्तुमे वेदोक्त पूर्वोक्त सच्चिदानंदादिक विशेषण घटैंगे सोई परमात्माका स्वरूप सर्वको मानना योग्यहै आत्मासे वा तथा अन्यसे भाईचारा नहीं किंतु सरल बुद्धिसे वस्तु निर्णय करनी चाहिये ताते विवादको छोड़के न्याय रीतिसे पूर्वोक्त विशेषण साक्षी चैतन्य आत्मामेंही घटैंगे अन्यमे नहीं परमात्मा चैतन्य पुरुष इस नामरूप जगत्को रचकर आपही तिसमें प्रवेश करता भया इस श्रुतिते जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्नके पदार्थोंको रचकर आपही तिनमे प्रवेश करता है जैसे महाकाशही कुलाल करके रचित घटमें घटाकाश संज्ञाको प्राप्त होताहै तैसेही जो पृथिवीके अंतर स्थित हुआ हुआ पृथिवीको नियमन करताहै पृथिवी जिसको नहीं जानती अरु पृथिवीको जो जानताहै सो तुम्हारी आत्मा अंतर्यामी अमृत स्वरूपहै तैसेही जो मनके अंतर स्थित हुआ मनको नियमन करताहै अरु मन अपने नियमन करताकोभी नहीं जानता अरु जो मनको जानताहै सो अंतर्यामी तुम्हारा आत्मा अमृत स्वरूपहै यही रीति प्राणादिकोंमेंभी जान लेनी इस प्रकार इक्कीस २१ वार पुनः पुनः अंतर्यामी ब्राह्मण वेद भागमे परमात्माको आत्मारूपही कथन कराहै तैसेही छांदोगउपनिषदके षष्ठे अध्याय विषे पुनः पुनः नववारी परमात्मा चैतन्यको आत्मारूप चैतन्यही कथन करा है तैसे सामवेदका केन उपनिषदमे भी वारंवार इस आत्माकोही ब्रह्म रूपता कथन करा है कैसे सुनो जैसे हे अधिकारी जनो जो मन बुद्धि आदिकों करके जाननेमे नहीं आता अरु जो मन बुद्धि आदिकोंको जानता है तिसीको तुम ब्रह्म जानो जिसको तुम इदं रूपता करके उपासना करते हो सो ब्रह्म नहीं इत्यादि अनेक श्रुति कथन करती हैं जो झूठ वात होती तो श्रुति वारंवार नहीं कहती झूठ वातको वारंवार कहना वावलोंका कामहै श्रुति तो सत्यवक्ता है आत्माते ब्रह्म भिन्न होगा तो ब्रह्म अनात्मा होगा घटवत् अरु पूर्ण वस्तु ब्रह्मते आत्मा पृथक् होगा तो आत्मा परिछिन्न मिथ्या घटवत् होगा ताते घटाकाश महाकाश की न्याईं ब्रह्म आत्मा नाम दो हैं वस्तु

एकही है तात्पर्य्य यह कि सच्चिदानंदस्वरूप वस्तु तेही जगत्की उत्पत्ति पालना संहार होताहै न [illegible]यंते ताते यह सिद्ध हुआ सो सच्चिदानंद वस्तुकोही परमात्मा कहो चाहे परमेश्वर कहो चाहे ईश्वर कहो चाहे अल्ला कहो चाहे खुदा कहो चाहे आत्मा कहो चाहे साक्षी चैतन्य कहो चाहे प्रत्यक् आत्मा कहो चाहे बुद्धि आदिक सर्व नामरूप दृश्य पदार्थोंका दृष्टा कहो नामांतर भेद है वस्तुका भेद नहीं वस्तु एकही है तैसे देह बुद्धि आदि माया पर्य्यंत सर्व नामरूप जगत् भी दृश्यत्व रूपता करिके एकही रूपहै हे ध्रुव जब तू बुद्धि आदिक नामरूपका आपको दृष्टा साक्षी चैतन्य जानताहै तो तुझ सच्चिदानंद स्वरूपकाही ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्य्यंत सर्व दृश्य जगत् यजन करता है अरु तुझहींके निमित्त तपस्या करते हैं तुझही की सर्व प्रार्थना करतें हैं सर्व दृश्य जड़ तुझ चैतन्यके ही गुलामहैं तू नहीं तू चैतन्य अपनी दृश्य गुलामका भजन क्यों करताहै जो पुरुष अपने गुलामके आगे प्रार्थना करता है तिसको लज्जाका कामहै नहीं तो हे ध्रुव तू आपको बुद्धि आदिकोंका दृष्टा सत चैतन्य आनंद स्वरूप मत जान जो तुझका आपको सच्चिदानंद माननेसे बिगाड़ होता है तो आपको असत जड़ दुःख रूप दृश्य जान तो ठीकहै कारण तुझ असत जड़ दुःख रूप दृश्यकी प्रार्थना तथा भजनादि व्यवहार सत् चित् आनंद परमेश्वरके आगे बनसक्ता है अन्यथा नहीं परंतु तू असत्य जड़ दुःख रूप दृश्य मनादिकोंका दृष्टा कैसे असत्य जड़ दुःख रूप दृश्यहै किंतु नहीं होताहै आगे जो तेरी इच्छा होय सो कर हे ध्रुव जो तू आपको सच्चिदानंद रूप नहीं मानेगा तो तिनते भिन्न असत जड़ दुःखरूप आपको माननाही तुझको पडेगा ध्रुवने कहा परमेश्वरमे महानता अरु अपनेमे अल्पताकी भ्रांति जीवोंको तथा मुझको होतीहै मैंने कहा हे ध्रुव महानता अल्पताकी पूर्वोक्त प्रकरणमे सिद्धिही नहीं होती किंतु एक असत जड़ दुःखरूप दृश्य पदार्थहै अरु एक सत चित आनंद रूप दृष्टा पदार्थ है दोही पदार्थकी सिद्धि होती है तीसरा पदार्थही नहीं अरु दोनों परस्पर विलक्षण हैं एक नहीं होते सच्चिदानंद दृष्टा परमेश्वर परमात्माहै अरु असत जड़ दुःख रूप दृश्य जगतहै दोनोंको विचार कर जो बुद्धिमें तुले सोई आपको मानो परंतु जिस दृश्यको तू जानताहै सो दृश्य तू नहीं

द्रष्टा है जीव ईश्वरसे यहां क्या मतलब है हे ध्रुव दाहकता उष्णता प्रकाशकता यह अग्निहीका स्वरूप है तिस अग्निते भिन्न पृथिवी जल वायु आकाशादिक पदार्थोंका तथा तिनके कार्योंका नहीं जहां दाहकता उष्णता प्रकाशकता बुद्धिमान देखते हैं तहांही अग्नि जानते हैं यह नहीं कि किंचित् चिनगारेमें जो दाहकता उष्णता प्रकाशकता है सो अग्नि नहीं किंतु सूर्यमे तथा वड़वा-नल अग्निमे तथा महान् काष्ठ अरूढ लौकिक अग्निमे दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्निहै ऐसा नहीं जानते किंतु सारग्राही सरल बुद्धिमान् विद्वान लोक ऐसा जानते हैं कि जो दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्नि किंचित् चिनगारे मैं है सोई दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्नि सूर्य्यमें है सोई दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्नि महान काष्ठ आरुढ़ लौ-किक अग्निमें है हे साधो महानता अल्पता दिपना उपाधिमे है दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्निमें नहीं परंतु किंचित् चिनगारे आरूढ अग्नि किंचित् दाहकता उष्णता प्रकाशक करै है अरु वही चिनगारे आरूढ अग्नि सूर्यरूप हुई हुई सारे ब्रह्मांडको दाह उष्ण प्रकाश करे है जहां है अग्नि तहाँ दीपक सूर्य्यादिकोंमें एक रूपही है तैसेही हे साधो जैसे इस देहविषे बुद्धि आदिकोंका साक्षीद्रष्टा चैतन्यवं धमोक्ष रहित निर्विकल्प निर्विकार स्वभाविक अपनी महिमामे स्थित है तैसेही ब्रह्मा विष्णु शिव सूर्य्यादिकोंकी देहोंमेभी तथा चींटी-की देहोंमें तथा राक्षसादिकोंकी देहोंमेंभी तथा पक्षी आदिकोंकी देहमेंभी यह साक्षी चैतन्य आत्माही निर्विकार निर्विकल्प रूप करके स्थितहै जैसे एकही दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्नि सम वत्ती आरूढ़ हुई हुई एक मंदिरको तथा मंदिर भीतर धरे पदार्थोंको प्रकाशे है सूर्य्य आरूढ हुई हुई वही अग्नि सारे ब्रह्मांडको तथा ब्रह्मांड अंतरवर्ती पदार्थोंको प्रकाशे है हे ध्रुव जिस मनादि-दृश्यको तुम जानते हो नाम साक्षी देतेहो सो दृश्य तुम कैसे होतेहो घटद्रष्टाकी न्याई ताते हे ध्रुव पृथिवी जल तेज वायु आकाश इन पंच-भूतोंकी दृष्टी करभी तुझकी ऊंची अटलपदवीकी अधिकता नहीं काहेते ऊंचा नीचारूप सर्व पंचभूतही हैं ऊंचे सुमेरु आदिक ब्रह्मलोक स्थानमे पंचभूत कछु अधिक नहीं नीचे पातालादिकों में वा मध्य मनुष्यलोकमें न्यूननहीं ताते तेरी अटलपदवीका तुझको यत्न नि-

30

ष्फलहै तैसेही माया दृष्टी करभी तेरी अटलपदवी निष्फलहै काहेते नीच ऊंच स्थान अटलपदवी सहित सर्व नामरूप प्रपंच मायाका कार्य होनेते मिथ्याही है क्या मायाका कार्य अटलपदवी नहीं किंतु मायाका कार्यही है हे ध्रुव अब पूर्व विचार रीति अनुसार यही निश्चयकर जो मैं ही सर्व चैतन्य आत्माहों अटल पदवी कहां है हे ध्रुव संत अटल पदवी ते मुक्त हैं किसकारण ते जो अपने स्वरूपमें मग्न हैं हे ध्रुव एकसमय किसीक निमित्तको पायके मुझको शिवने कहा हे पराशर तुझको राज्य त्रिलोकीका देताहों मैंने कहा राज्यसे क्या होगा शिवने कहा जो चाहेगा सो मिलेगा चाहना तेरी न रहैगी मैंने कहा जब मैं ईश्वर होवोंगा तव तुम तीनो देवतोंको मत्सर होगी कि पराशर संसारका ईश्वर हो बैठा है ताते मुझको राज्य लेनेसे क्या प्रयोजन है काहेते अप्राप्त वस्तुके प्राप्तिवास्ते इच्छा होती है ताते हे शिव मैं चैतन्य आत्मा इस नामरूप अनंतकोटि ब्रह्मांडरूप प्रपंचका स्वतः सिद्धही स्वामी हौं कोई कृत्रिम नहीं हों काहेते मुझ चैतन्य आत्मा करकेही इस बुद्धि आदिक जड़ दृश्य प्रपंचकी चेष्टा होती है अन्यथा नहीं जैसे पुतलियां सर्व प्रकार करके चैतन्य पुरुषकेही अधीन होती हैं तिन जड़ पुतलियोंका चैतन्य पुरुषही राजा है तैसे मैं अनंत कोटि ब्रह्मांड रूप पुतलियोंका एकही चैतन्य राजाहों दूसरे चैतन्यका अभाव होनेते तुम्हारी त्रिलोकी मुझके राजके अंतर्भूत होने ते स्वराज हों ध्रुवने कहा हे पराशर तुम मुझते अटल पदवी लेहु मैंने कहा मुझको क्या प्रयोजन है जो मैं एक जगहमें बंधहोंवों संत स्वतंत्र विचरते हैं पराधीन हैं नहीं हे ध्रुव लौकिक पुरुष भी बलवानने दिया संकेतक स्थानमें अति दुःखपाते हैं मैं स्वइच्छाचारीको बंधन रूप अटलपदवी तेरी कैसे न दुःख रूप होगी किंतु अवश्य होगी पुनः दत्तात्रेयको कहा तुम अटल पदवी लेहु अवधूतने कहा यह अविद्या तुझहीको है मुझको अटल पदवीकी इच्छा नहीं पुनः वामदेवको कहा तुम अटलपदवी लेहु वामदेवने कहा यह नीच बुद्धि तुझहीको है जब एक आत्माही है तो चल अचल कहां है तब ध्रुव वनविषे बालककी न्याईं पुकारे था कोई अटलपदवी ले तब पशु पक्षी वृक्षादिकोंने जवाब दिया कि अंतर बाहिर एक हम चैतन्य आत्माही हैं चल अचल कहां है जो हम स्थिरको लेवे चलको त्यागे ध्रुव मृतककी न्याईं विशुद्ध होकर पृथिवीपर

गिड़पड़ा मैंने कहा हे ध्रुव बालककी न्याई विलाप क्यों करता है तू अकाशकी न्याई व्यापक चैतन्य स्वरूप है तुझमें ग्रहण त्याग है नहीं तू एकरस निर्विकार निर्विकल्प स्वमहिमा मे समस्थित है हे ध्रुव अटलपदवीके लेने देनेवाले मनादिक हैं तिनहीको सुख दुःख होवेगा तुझको नहीं तू निर्विकार चैतन्य दूसरे मनादिकोंके व्यवहार में किन्तु क्यों करताहै जैसे मनुष्योंकर घटपटादिक पदार्थोंके लेन देन रूपी व्यवहारमें असंग आकाश किंतु नहीं करता करे तो हँसने योग्य है हे ध्रुव इस असत संसारमें आत्म विचारशील पुरुष शरीरकी प्रारब्ध करके जो कछु प्राप्त होवे सो ग्रहण त्याग बुद्धिरहित भोगते हैं आप खेद नहीं मानते काहेते भोगता भोग भोग्य द्रष्टा दर्शन दृश्य इत्यादि त्रिपुटी अनात्म धर्महैं मैं असंग निर्विकार साक्षी चैतन्य आत्माका धर्म नहीं हे ध्रुव स्वप्न पदार्थोंका क्या हर्ष शोक करना है उठो अपने स्वरूपकी गंभीरताको स्मरण करो मृगतृष्णाके तरंगोंको मत पकड़ो इस शरीरने कहीं न कहीं रहनाही है जिमि गुजरी तिमि गुजरी योंभी वाह वाह त्योंभी वाह वाह भावे जहाँ रहो तुमको अपने स्वरूपकी ही गुलजारहै कोई अनात्म पदार्थोंकी तुमको गुलजार नहीं इस संसार वगीचे में सुखपूर्वक विचरो कृतृत्व भोगतृत्व अभिमानरूपी पुष्प मततोड़ो पुष्प तोड़के सुगंधिलेनेमे मज़ा नहीं किंतु अहंकार रहित दर्शनदीदारसेही मज़ाहै नहीं तो कृतृत्व भोगतृत्वरूपी पुष्पोंके तोडनेते वगीचेवाला अहंकार रूपी मालिक तुमको दुःख देवेगा यह कायदेकी बात ठीकहीहै वे ठीक नहीं काहेते कृतृत्व भोक्तृत्व अभिमान करनेसे दुःख होताही है यह संसाररूप वगीचा तुझ चैतन्य का हक नाम धर्म नहीं यह मनका धर्म है तात्पर्य्य यह कि सर्व नामरूप प्रपंच अन्वय व्यतिरेक करके मनोमात्र है जो तुम अपने रस्तेसे चलोगे तात्पर्य्य यह कि जैसा तुम्हारा निर्विकार निर्विकल्प सर्वदृश्यके धर्मोंते रहित आपका स्वरूप है तैसेही सांगोपांग दृढ़ निश्चय कर जानोगे तो जीवनमुक्त होकर विचरोगे जो विपरीत चलोगे नाम दृश्यका धर्म अपना मानोगे तो दुःख पावोगे हे ध्रुव अब हम वांछित स्थानको जाते हैं तुम भी वांछित स्थानको जावो हे मैत्रेय! यह अमृत समान उपदेश ध्रुव सुनकर अपने

स्वरूप अमृत भावको प्राप्त होता भया स्थिर अनस्थिर पदार्थोंमें सम होता भया हे मैत्रेय जो संतोंके वचन बुद्धिके श्रवणोंसे सुनताहै सो तत्कालही स्वस्व रूपकी प्राप्तिरूप अमृत भावको प्राप्त होताहै ॥

इति श्रीअनुभवप्रकाशस्य पराशर मैत्रेय संवादे द्वितीयस्सर्गः ॥ २ ॥

मैत्रेयने कहा हे गुरो इस संसार रूप वंधन ग्रहते कैसे मुक्त होवें सो उपाय कहो पराशरने कहा हे मैत्रेय यद्यपि सर्व शास्त्र विद्वानोंके अनुभवसे अपरोक्ष वंधनकी निवृत्ति सुखकी प्राप्ति वास्ते स्वस्वरूपका सम्यक् ज्ञानही साधनहै अन्य नहीं परंतु ज्ञानका साधन लोकईक्षणा पुत्रईक्षणा धनईक्षणा तथा तिन तीन ईक्षणाके अंतर्भूत जो लोक वासना शास्त्र वासना देह वासनादिकोंका त्याग रूप वैराग विवेक शम दमादिक साधन हैं जैसे अंधकारके दूर करनेका तथा निर्भयताकी प्राप्तिका तथा अंधकारमें धरे पदार्थोंके दर्शनादि व्यवहारका साधन दीपकका चसानाहीं है अन्य नहीं तथापि दीपकके सम्यक् चसानेवास्ते अनेक सामग्री चाहिये मैत्रेयने कहा तिन ईक्षणादिकोंका त्याग कैसे होवे अरु वैरागादिकोंकी प्राप्ति कैसे होवे हे मैत्रेय तीन ईक्षणादि पदार्थ संघातका धर्महै तिनके साक्षी तुझ आत्माका नहीं यह जाननाही ईक्षणादिकोंके त्यागका उपाव है वा विचार पूर्वक सम्यक् अपरोक्ष देहादिकों में परिछिन्न अहंकारका त्यागनाही परम उपाव है वा समान ते यह उपावहै जिस कालमे सम्यक् दोष दर्शन पूर्वक जगत्के पदार्थोंकी सर्व ईक्षणा अंतर वाहरते सम्यक् त्यागता है तिसी क्षणमे शम दमादिक सर्व ज्ञानके साधनोंकी सम्यक् प्राप्ती होती है ईक्षणाके त्यागते भिन्न शमादियोंकी प्राप्तिका साधन जुदा नहीं तात्पर्य्य यह कि आसुरी संपदाके त्यागतेही वैरागादि दैवी प्राप्त होती हैं वैरागादि रूप दैवीकी प्राप्तिवास्ते भिन्न साधन नहीं जैसे रोगके जानेसेही अरोगता होती है अरोगताके प्राप्ति कर्नै वास्ते भिन्न साधन नहीं जैसे रात्रिके जानेसेही स्वभाविक दिन प्राप्त होता है मैत्रेयने कहा पदार्थोंमे दोष दर्शन कैसे करना पराशरने कहा स्त्री आदिक सर्व पदार्थोंमें दोष शास्त्रोंमे विस्तृत लिखे हैं यहाँ कछु लिखनेका

प्रयोजन नहीं परंतु संक्षेपते कहते हैं हे मैत्रेय सच्चिदा... निजस्वरूपते पृथक् सर्व नामरूप दृश्य पदार्थोंमे असत् जड़ दुःख रूपता सांगोपांग भली प्रकार जैसे है तैसेही जाननी इसका नामही दोष दर्शन है हे शिष्य देहादिक सर्व अनात्म पदार्थोंमें आत्मबुद्धिका तथा देहादिक सर्व अशुचि पदार्थोंमें शुचि बुद्धिका तथा देहादिक सर्व अनित्य पदार्थोंमे नित्य बुद्धिका तथा देहादिक सर्व दुःख रूप पदार्थोंमें सुख बुद्धिका भली प्रकार इस चार प्रकारकी अविद्याको त्याग करो जो पूर्वोक्त चार प्रकारकी अविद्याते भिन्न आत्मा नित्य शुचि सुखरूप वस्तु है सोई तुम्हारा स्वरूप है तिसीको तुम अहंरूप करके जानो देहादि संघातमे अहंमत मानो यही वैराग है जैसे कीड़ी फिरतीको मिश्री का डला मिल जावे तौ कटु पदार्थ तिससे आपही छूट जावे है यत्न विना तैसे सुखरूप आत्माको जब तैंने अपना आप जाना तो दुःखरूप प्रपंचका बलात्कार ते छूट जावेगा काहेते सुखमेही सबकी प्रवृत्ति होतीहै दुःखमें नहीं सुखरूप आत्माही है अन्य नहीं यही सर्व शास्त्रोंका सिद्धांत है हे मैत्रेय शास्त्र पढ़ता है अरु अपने स्वरूपको नहीं जानता तो पढ़ना निष्फलहै अरु जाने पीछे पढ़नाभी निष्फल है जैसे कोई पुरुष पराल (फूस) में धान नहीं निकासता पुनः पुनः पराल कूटताहै तो केवल परिश्रम है अरु धान निकासके पुनः परालको कूटताहै तो भी निष्फलहै विना निजतत्त्व जाने उभै रूपताकर निष्फलहै पराशरने कहा हे मैत्रेय तेरीभी मुक्तिहोनी कठिन है काहेते तेरी बुद्धि पुराण शास्त्रोंमें लगरही है आपको तू पंडित परमहंस सर्वते वडा मानता है औ अन्यको तू मूर्ख जानता है औ गुरु सत् शास्त्रमे तुझकी भक्ति नहीं ताते तुझको स्वरूप प्राप्त होना कठिन है मैत्रेयने कहा अब मैं गुरू शास्त्रमे श्रद्धा करोंगा तथा इंद्रियोंको वैरागसे वा अष्टांगयोगसे वा सांख्ययोगसे रोकोंगा परंतु तत्त्व उपदेश करो हे मैत्रेय इंद्रियोंको केवल हठसे रोकनेमे मुक्ति नहीं होती किंतु शास्त्ररीति अनुसार सर्व इंद्रियोंसे धर्म पूर्वक यथा योग्य व्यवहार करो अपनेको असंग निर्विकार निर्विकल्प आत्माजानो देह इंद्रियोंके व्यवहारमें कृतृत्व भोक्तृत्व बुद्धि मतकरो काहेते यह सब अनात्म धर्म है तू आत्मा चैतन्य अपने धर्ममें स्थितरहो

हे मैत्रेय जब यह देहादिक अनात्मा अपने धर्मको नहीं त्यागते तो तू आत्मा अपने असंगादि धर्मोंको क्यों त्यागता है ताते यह देहादिक अनात्मा तेरा स्वरूप नहीं यह पंचभूतोंका स्वरूप है वा मायाका है हे मैत्रेय मल मूत्र रूप देह अभिमानी पुरुष मेहतरोंके बड़े भाई हैं काहेते मेहतर चारघंटे मलका काम कर्ता है फेर नहीं कर्ता यह देह अभिमानी पुरुष तो आठ पहर चौंसठघड़ी मल मूत्र रूप देह विषेही अहंबुद्धि पूर्वक् विराज़मान रहता है मलविषे कीड़ेकी न्याई ग्लानि नहीं कर्ता ताते देह अभिमानी मेहतरसे भी अति नीच है कारण कि मेहतर आपको मलते जुदा जानता है औ यह देहाभिमानी आपको मल रूपही जानता है ताते स्पर्श करनेके योग्य नहीं जो इस देह अभिमानमें बंध है सोई पाखाने रूप देह नरकमें बंध है जो इसते मुक्त है सोई मुक्त है हे मैत्रेय इस भोगमय संसार रूप एक वृक्षके तीन फल हैं मधुर, खाटा, कटु यह पदार्थ भोग कालमें मीठे हैं वियोग कालमें खाटे हैं अरु अपने शरीर नाश कालमें यह पदार्थ कटु होते हैं जैसे मेवा आदि पदार्थ प्रथम मधुर होते हैं वोही जलमें कोई दिन रहनेसे खटाई पकड़जाते हैं पुनः वह खटाई पड़ी रहनेसे कटु होजाते हैं ताते हे मैत्रेय अभिमानको त्याग अरु पवित्रहो नहीं तो मेहतरकी तुल्यताको प्राप्त होवेगा जब तुम देहादिकोंका अभिमान त्यागेगा तब देहादिकोंके धर्म हर्ष शोकादिक भी तुझको न होवेंगे वा आपसहित सर्व जगत्को हरिरूप जान यही परमभजन है वा मैं असंग निर्विकार निर्विकल्प सच्चिदानंदसाक्षी आत्मा हों यह असत जड़ दुःख रूप संघात देहमें नहीं मैं देहादिक दृश्यका दृष्टा आत्माहों इस परम भजनते द्वैतते पवित्र होवेंगा इसीपर एक कथा तुझको कहताहों सो तुम श्रवण करो एकसमय सब संत एक पर्वत पर बैठे थे अरु ब्रह्मविचारमें मग्नथे अरु हँस्तेथे जो विचार विना अनहुआ संसार प्रतीत हो रहा है वास्तवते नहीं यह मायाकी अद्भुत लीला है ऐसी अवस्थामें किसी संतकी संगत करके भया है आत्मज्ञान जिसको तथा निवृत्त होगई है देह अध्यास पूर्वक जगत्की वासना जिसकी ऐसी एक वृद्धमाई वेश्या आन प्राप्तभयी कैसी वह वेश्या है सम्यक् अपरोक्ष वैराग्य पूर्वक ज्ञान अग्नि करके सम्यक् दग्ध होगई है सूक्ष्म स्थूल अहंकार जिसका तथा जाना है अपरोक्ष आत्मा

स्वरूप जिसने किसी निमित्तसे कुसंग करके वेश्या होती भई पुनः कोई पुण्यप्रतापते सतसंगत करके महानभावको प्राप्त होती भई तात्पर्य्य यह कि स्वरूपको जानती भई काहेते कर्मोंकी गति अद्भुतहै ऐसी ब्रह्मवित वेश्या हम हँस्ते को देखकर कहती भई हे संतो तुमने शरीर दृष्टीकर मुझको जाना है सो तो सम्यक् विचार अग्निरूप मेरी दृष्टीसे भस्म होगया है जैसे अश्वत्थामाके वाणकर कृष्णकी दृष्टिसे रथ भस्म होगया था परंतु अर्जुन तथा लोकोंकी दृष्टीमे वैसाही प्रतीत होता था जैसे भीतपर रंगकी स्त्री पुरुषादिकोंकी पुतलियां प्रतीति मात्रहैं रंगसे पृथक् स्त्री पुरुषादिक कछु वस्तु नहीं परंतु वालकोंकी दृष्टीमें भिन्न भिन्न स्त्री पुरुषादिकोंके आकार हैं रंग अरु भीतीके ज्ञाता पुरुषकूं नहीं हे साधो जैसे किसीके स्वप्नमे वा जाग्रतमे एकही गऊको स्वप्न नर वा जाग्रतनर देखकर स्वप्ननरोंकी वा जाग्रतनरोंकी भिन्न भिन्न दृष्टि होती है चमारकी दृष्टि चमड़ेपर जातीहै अरु कसाईकी दृष्टि मांसपर जातीहै गूजरादिकोंकी दूधकी दृष्टिहै कि एता दूध इस गऊमें है अरु त्रिवर्णक पुरुष गऊको पूज्य जानतेहैं अरु आत्मदर्शी गऊको आत्मा जानतेहैं परंतु पास जाग्रत पुरुषको वा सम्यक् अपरोक्ष आत्मबोध रूप जाग्रत पुरुषको पूर्वोक्त स्वप्नादि व्यवहार अत्यंता भावहै तैसेही हे संतो इस स्वप्नवत् मेरे शरीरको कोई वेश्या जानता है अरु कोई माता जानताहै कोई भगनी कोई बेटी कोई भूवा कोई मासी कोई पत्नी जानते हैं अरु कोईक विद्वान पुरुष इस मेरे रुधिर अस्थि मांस मल मूत्र शरीरको मायाके कार्य्य पंचभूत रूप मानते हैं और ब्रह्मवेत्ता मुझको आत्मरूप जानतेहैं परंतु मुझ अस्तिभाति प्रियरूप आत्माकी दृष्टिसे इस शरीर सहित सर्व नामरूप जगत्का अत्यंताभाव है केवल जीवोंके फुर्णे मात्रमेंही मेरा शरीर है स्वदृष्टीसे नहीं जैसे स्वप्न नरोंकोही स्वप्न प्रपंच प्रतीत होताहै निद्रा कर परंतु स्वप्न द्रष्टाकी दृष्टीसे स्वप्न दृश्य अत्यंता भावहै वा पास जाग्रत पुरुषको अत्यंता भाव है ताते मैं गऊ तुमको संत जानकर आई हों आगे आप शरीर दृष्टि मतकरो शरीर सबके पांच भौतिक मल मूत्रके एकही सरीखे हैं संतोंकी पवित्र दृष्टि होतीहै अरु असंतोंकी अपवित्र दृष्टि होतीहै हे संतो वेश्या संज्ञा शरीरकी है मैं तो अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जगद्धि

ध्वंस प्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंदहों नहीं जानतीथी कि आगे मांस चमडेकी संत दृष्टी करैंगे अरु संत वही हैं जो आप सहित इस सर्व नामरूप प्रपंचको हरिरूप जाने हे संतो मैं मूर्खता कर पूर्व हाड मांस चमडा मलमूत्ररूप इस शरीरको तथा शुद्ध निर्विकार निर्विकल्प असंग आत्माको एकरूप जानती भईथी इस अपराधते संसारमे सत्यत्व बुद्धि पूर्वक महान भोगोंकी वासना करके दुःखी होती भई तथा परपुरुषके संयोगकर सुखी अरु वियोगकर दुःखी होती भई अरु आपको वेश्या जानती भई थी परंतु अव मैं तुम संतोंकी कृपासे कल्पित वंध मोक्षादि सर्व संसारके धर्मोंते रहित सच्चिदानंद रूप आत्मा आपको जानती हों पूर्व अज्ञात अवस्थाको स्मर्ण कर हँस्तीहों मैं क्या जानती थी जो मैं देश काल वस्तु परिच्छेद ते रहित सर्व काल एक रस हों संत दत्तात्रेयने कहा हे वेश्या तू कहांसे आई है अरु कहां जावेगी अरु कहां रहती है वेश्याने कहा अपने आपसे आई हों अरु अपने आपमें जावोंगी अपने आपमें स्थित हों जैसे तरंग जलसे आया है अरु जलमेंही जावेगा अरु जलमेंही स्थित है वामदेवने कहा हे वेश्या मन तेरा महान चंचलहै मनको जब अफुर करे तब स्वरूपको पावे विना समाधि स्वरूपका पावना कठिन है वेश्याने कहा जिसको समाधि नाम चित्तकी एकाग्रता करनेसे सुखहो चित्तके फुरनेसे दुःख हो सो समाधि करे वा न करे मुझ चैतन्य असंग आकाशको तो वायु रूप मनके फुरणे अफुरणेमे हर्ष शोक नहीं है हे वामदेव वायुके फुरणे अफुरणमे वायुको सुख दुःखहो वा न हो परंतु सर्वथा असंग आकाशको हर्ष शोक नहीं जो आकाश वायुके फुरणे अफुरणेमे हर्ष शोक मानेगा तो आकाश विद्वानो करके हँसने योग्य होगा काहेते आकाश आप चल अचलते रहित पूर्ण हुआ हुआ चल अचल वायुके धर्मोंको अपने धर्म मानता है सो भ्रम है भ्रमी पुरुष सुखी नहीं होता तैसे मुझ निर्विकार निर्विकल्प पूर्ण चैतन्य आत्माको मनके धर्म समाधि न समाधि करनेसे सुख दुःख नहीं मनके धर्म मनकोही सुख दुःख देवेंगे मुझ निष्कर्तव्य निः अपराधको नहीं यह अनीति नहीं होसक्ती मूली जहर शराव अमृत आदि पदार्थ भोजन और करे उसका गुण दोषादि औरको होवे हे वामदेव

विद्वान् पुरुषको विपरीत बुद्धि है नहीं विना विपरीत बुद्धि विपरीत व्यवहार होता नहीं उलटा परधर्म दुःखके देनेवाला होता है स्वधर्महीं सुख देता है यह सर्व शास्त्रोंका सिद्धांत है ताते मैं अपने नित्य चिद सुखस्वरूपमेंही स्थित हों पर धर्म मनके फुरणे अफुरणेसे मुझको क्या प्रयोजन है जैसे सर्व लोकोंके प्रकाशक सूर्य्य वा दीपकको लोकोंके व्यवहार होने न होनेसे क्या प्रयोजन है पराशरने कहा हे वेश्या तेरा गुरू कौन है वेश्याने कहा गो नाम इंद्रियोंका है वा गो नाम अंधकार रूप अज्ञानका है रूनाम प्रकाशका है तात्पर्य्य यहकि अज्ञानको तथा अज्ञानके कार्य्य इंद्रियादिक सर्वको जो प्रकाशे तिसका नाम गुरु है सो ऐसा पदार्थ चैतन्य स्वरूप आत्मामैंही सर्वका गुरु हों मुझ चैतन्य दृष्टाका दृश्य गुरु नहीं बनसक्ता जैसे स्वप्नदृश्य प्रपंचका स्वप्नदृष्टाही गुरु है जैसे सर्प दंड मालादिक पदार्थोंका रज्जुही गुरु है हे पराशर मैं इस दृश्यका दृष्टा गुरु हों यहभी मैंने मुमुक्षुके समझाने वास्ते कहा है नहीं तो मैं अद्वितीय हों मुझ अवाङ् मनस गोचरमें गुरु शिष्य कल्पना नहीं जो गुरु शिष्य कल्पना माने भी तो मैं चैतन्य आत्माही सर्व नाम रूप दृश्यका गुरु हों मुझ चैतन्यका अन्य गुरु कोई नहीं काहेते स्वप्रकाश होने ते अन्यमाने तो अनवस्थादिक दोषकी प्राप्ति होवे है हे पराशर भजन गोविंदका निरूपण कर पराशरने कहा भजन यही है न तू वेश्या न मैं पराशर एक गोविंद है जैसे न घटाकाश न मठाकाश एक महाकाश है पराशरने कहा हे वेश्या तू कौन है अरु कहाँते आईहै कहाँ जावेगी वेश्याने कहा जो तूहै सोईमैं हों जहांसे तुम आये हो तथा जहां जावोगे मैंभी वहाँसे आईहूं वहांही जावोंगी जहां तुम रहते हो वहांही मैं रहिती हों जहांसे तुम जामे हो वहांहीसेही मैं जामीहों जो तुम्हारा हालहै सोई मेरा हालहै विलक्षण नहीं ताते तुम्हारा प्रश्न हाँसीका असपदहै परंतु भजन गोविंदका कहु हे वेश्या तू आपही पूर्व कहाहै मैं सर्व दृश्यका गुरु रूप हों तब तुझको भजनसे क्या कामहै वेश्याने कहा मैं कोई कर्तव्य जानकर भजन पूछती नहीं हों परंतु संत जहां इकट्ठे होतेहैं तहां स्वभाविकहीं वचनविलास होताहै जो मुझका निश्चय पूछो तो मुझको शपथ है जो आपको गुरु अरु आपते पृथक् दृश्यको शिष्य जानती हों मैं अद्वितीय नारायण हों मुझमें द्वैतका मार्ग नहीं पराशरने कहा हे वेश्या तैंने गुरु शिष्य कल्पना क्यों करा कारण तू अद्वैत है वेश्याने

९४

कहा गुरु शिष्यकी कल्पनाभी कल्पनामात्रहै कहा तो क्या घाटाहै न कहा तो क्या बाधा है हे पराशर मिथ्या अहंकारको छोड़ जो तुझको स्वरूपकी प्राप्ति होवे पराशरने कहा तैंने कहण मात्रको क्यों प्रमाण किया वेश्याने कहा जैसे तैंने कहण मात्रको प्रमाण कियाथा परंतु क्या चिंताहै मृगतृष्णाका जलहै नहीं परंतु कहने में आताहै अवधूत ने कहा तेरे कहनेसे भ्रम सिद्ध हुआ वेश्याने कहा अस्तिभाति प्रियरूप भगवानते जो भिन्न प्रतीतिहै सो भ्रमहै वास्तवमें विचारती हों तो भ्रम कहांहै भगवान्‌ही है अवधूतने कहा तेरे कहने ते जानीताहै जैसे भ्रमहै तैसेही भगवानहै इसीकारण ते तू वेश्या भईहै जो भगवान भ्रमको सम कहती है वेश्याने कहा भगवान अरु भ्रम दोनो शब्द मात्रहैं मैं अवाङ्मनसगोचर इन शब्दोंते तथा शब्दोंके अर्थते अतीत हों परंतु हे अवधूत मेरे वचनों लक्षणोंका तू द्रष्टा कैसे हुआहै जैसे स्वप्नके पुरुष स्वप्नद्रष्टाके वा जाग्रत पुरुषके वचन लक्षणोंका द्रष्टा नहीं होसक्ते वा सोया पुरुष जाग्रत पुरुषके हाल का महरम नहीं हो सक्ता तैसे मुझ जाग्रतका तू सोया कैसे द्रष्टा हुआहै तुझको लज्जा नहीं आती अवधूतने कहा लज्जादिक सर्व पदोंको धोयकर अवधूत हुआहों लज्जाकासों करों मैं अद्वितीय हों वेश्याने कहा बड़ा आश्चर्य है जो आकाश अपनेमें नीलमा मानके नीलमाके धोनेका उद्यम करताहै तो हाँसीका असपद होताहै हे अवधूत सर्वपद अहंकारमें है जब अहंकारको तैंने धोया नाम त्यागाहै तो सर्व त्यागी है नहीं तो कछु धोया नहीं जब तू कहै मैं अहंकारको त्यागाहै तो सर्व कर्मोंका धोना कथन चिंतन कौन करेगा काहेते अहंकार करही कथन चिंतन होताहै अन्यथा नहीं अवधूतने कहा क्या करों वेश्याने कहा कर्तव्य कछु न कर सम्यक् अपने स्वरूपको जान जो कर्तव्य कर प्राप्त होताहै सो मिथ्याहै संत निष्कर्तव्य पदमे स्थितहैं वास्तवते कर्तव्य अकर्तव्यके अभिमानते भी रहितहैं काहेतेकि कर्तव्य कछु नहीं बोधव्यहीहै ताते नामरूप दृष्ट मानसे दृष्टि उठाकर अदृष्टमें दृष्टि लगावे पीछे दृष्टमान अदृष्टमानको भेदनहीं रहेगा जैसे खांडके खिलौनेके नामरूप त्यागे विना बालकको सम्यक् चीनीका बोध नहीं होता सांगोपांग चीनी जानेपीछे खिलौनोंके नाम रूप त्यागने का कछु प्रयोजनभी नहीं सर्व चीनी

रूपहीहै खिलौने कहन मात्रहैं अवधूतने कहा हे वेश्या तू परमहंस दीखतीहै वेश्याने कहा परमहंस अपरमहंस मुझके स्वरूपमे दोनो नहीं जैसे स्वप्नके परमहंस अपरमहंस स्वप्नद्रष्टाके स्वरूपमे दोनों नहीं पराशरने कहा हे मैत्रेय वेश्याके वचन सुनकर अवधूतकी सुधगई पुनः जड़भरथ बोला हे वेश्या तैंने सत कहा है कि आत्मामे त्रिपुटीहै नहीं तो किसमें है जिसमे त्रिपुटीको मानकर आत्मा जुदामाने सो कहो ऐसा चैतन्य आत्मासे भिन्न त्रिपुटीका आधारहै नहीं ताते त्रिपुटी आत्मारूपहीहै परंतु आपही अपनेको देखताहै आपही अपनेको सुनताहै आपही अपनेको स्पर्श करताहै इसीप्रकार सभ इंद्रियोंमें जानलेना तात्पर्य्य यह कि त्रिपुटी रूपभी आपहीहै ताका द्रष्टा अधिष्ठान तथा आधारभी आपहीहै जैसे स्वप्नमें स्वप्नद्रष्टाही द्रष्टा दर्शन दृश्य रूप त्रिपुटीभी आपही होताहे तथा त्रिपुटीका द्रष्टा अधिष्ठान तथा आधारभी आपहीहै और कोई जाग्रतके पदार्थ स्वप्नमें हैं नहीं जिसकर त्रिपुटी होवे ताते हे वेश्या जब सर्व रूप आत्मा हीहै तब देखनाभी आत्माहीहै वेश्याने कहा हे जड भरथ तेरी बुद्धि हँसने योग्यहै जो एक आत्मामें सर्व असर्व कल्पना करता है तथा भिन्न अभिन्न जानता है कभी तैंने अपने शरीरको अपनेते भिन्न अभिन्न जानाहै जैसे घट पटादिक भिन्न भिन्न प्रतीत होतेहैं तथा वड़े छोटे शुद्ध अशुद्ध परे उरे देश काल वस्तु भेदवाले प्रतीति होतेभी पंचभूत रूपहैं ताते एक रूपहीहैं क्यों अकार्थ हँस्ता है रुदन कर तब वामदेव अरु जड भरथ दोनों रुदन करने लगे पराशरने कहा हे मैत्रेय तब मैंने कहा हे मित्रो रुदन क्यों करते हो तुम्हारे स्वरूपमें रोना हँसना समानहीहै हँसनेको त्यागना रोनेको ग्रहण करना अयोग्यहै वेश्याने कहा हे संतो स्वप्न नरोंका रोना हँसनादि व्यवहार स्वप्न द्रष्टाको समहै ताते हे पराशर जो राग द्वेष पूर्वक हँसना रोनाहै तो मूर्खताहै जेकर समताको लिये हँसना रोनाहै तो ठीकहै जैसे नाटकमे नटस्वांगके अनुसार कभी रोताहै कभी हँसताहै परंतु नटको नाटकमें हँसना रोना विलासमात्र प्रसन्नताका कारणहै तथा नट अरु नाटकके स्वरूपके विद्वान पुरुषोंकोभी नटका नाटकमें हँसना रोना विलासमात्रहै तथा निजनटको हँसना रोना आदि व्यवहार कतैंभी नटत्व निश्चयते चलायमान नहीं होता बालकोंको नटका हँसना रोना हर्ष शोकका कारणहै हे पराशर समदृष्टीको लिये

विद्वान पुरुषोंकी जो जो राग द्वेषते रहित चेष्टाहै सोई मुमुक्षुओंको उपदेशहै काहेते ऐसे मुमुक्षु विचारते हैं जो इन विद्वानपुरुषोंने ऐसा कोई समता रूप अमृतपान किया है सर्व न्यून अधिक लौकिक परलौकिक वाचिक मानसिक कायिक शुभाशुभ सुख दुःख हँसना रोनादि अवस्थामें हमेशा शांत रूप समही रहते हैं विभ्रमगतिको कदाचित् भी प्राप्त नहीं होते जिस समता रूप अमृतके प्रतापसे ब्रह्मा, विष्ण, शिव आदिकोंके सहित तिनके ऐश्वर्य्यकी इच्छा नहीं करते तो अन्य ऐश्वर्य्यकी क्या कहना है तथा अनिच्छाभी नहीं करते तथा ग्रहण त्याग बुद्धिते रहित हैं तथा स्वतंत्र हैं तथा जन्म मरण रूपी भय ते भी रहित हैं सदा जगत्के भोग पदार्थों ते रहित हैं तोभी प्रसन्न वदन रहते हैं शरदऋतुके पूर्णमासीके चंद्रमावत् ताते सर्वसे विलक्षण कोई अद्भुत पदार्थ इन विद्वानोको मिला है ताते हम लोकोंको भी इस अमृतके पान करने वास्ते इन विद्वानोंके सकाशते यत्न करने योग्य है नहीं तो हमारा जीवन व्यर्थ है इस प्रकार सम्यक् संतोष विचार निष्कामतादि आचरण विद्वानोंके देखके मुमुक्षुजनोंको भी परमपदपावनेकी इच्छा होती है ताते हँसना रोना अनात्म धर्म ब्रह्मरूप विद्वान पुरुषोंको समही है जैसे आकाश जीवोंके हँसने रोनेमें समही है हर्ष शोकरूपी न्यून अधिक नहीं होता हे मैत्रेय जड भरथादिक लज्जामान होकर तूष्णी होते भये काहेते वेश्या अवाङ्मनसगोचर पदको कहतीथी तिस पदमें वाणीका प्रवेश नहीं ताते तूष्णी होना ही भलाथा पुनः मैंने कहा हे वेश्या संसार कैसे इस जीवका छूटे वेश्याने कहा मैं शास्त्र वेद पढ़ी नहीं परंतु तुम संतोंते सुना है जब परीछिन्न अहंकार आपा छूटा तब नाम रूप संसार कहां है जैसे सुषुप्ति मूर्छामें अहंकार नहीं तो जगतभी नहीं पुनः मैंने कहा हे वेश्या अहंरूप चित्त कैसे वशहोवे वेश्याने कहा हे पराशर तू कौन है चित्तके वश करनेवाला चित्तादि जड दृश्य हैं वा दृष्टा है जो तू चित्तादि दृश्यका दृष्टा है तो तुझको चित्तके वश करनेका क्या प्रयोजनहै कातेते चित्तादि दृश्यका दृष्टा तुझको चित्तादि दृश्य लाठी नहीं मारे हैं तथा जादू मंत्र नहीं करे हैं तथा तुझ का रस्ता नहीं रोके हैं तथा तुझको ज़हर नहीं देवे हैं तथा तुझको आवर्ण नहीं करे हैं तथा अपना दृश्य स्वरूप तथा बंध मोक्षादि धर्म तुझको देवें नहीं तथा तुझ दृष्टाके

चित्तादि दृश्य नज़दीकभी नहीं तथा तुझ द्रष्टाको चित्तादि दृश्य अपना हितकारी जाने हैं अहितकारी जाने नहीं काहेते द्रष्टा चैतन्य करकेही जड़ दृश्यकी सिद्धि होती है अन्यथा नहीं यही द्रष्टाकी दृश्य उपरहित कारता है तथा तुझ द्रष्टाको चित्तादि दृश्य कोई उपालंभ भी नहीं देते जो तुम हमको ठीक नहीं प्रकाश करते जैसे सूर्य्य दीपकादि प्रकाशकोंको घट पटादि प्रकाश्य उपालंभ नहीं देते ॥ तात्पर्य्य यहकि सर्वप्रकार आकाशकी न्याई अपना विगाड नहीं होता और किसी प्रकारभी चित्तादि दृश्य पदार्थ तुमको पीड़ा नहीं देते विना प्रयोजन दूसरेका हर्जा करना नालायकोंका कामहै नाहक कसूर विना दूसरेसे शत्रुपना करना पाप होताहै जैसे विना अपराध धीवर मछलियों अरु पक्षियोंको जालमे फँसाताहै ताते धीवरकी समता मत करो तुम्हारेमें चित्तादि दृश्यहैंही नहीं वश किसको करतेहो जैसे शुद्ध स्फटिक मणि अपनेमें कल्पित लालीके दूर करनेका उपाय नहीं करती करे तो भ्रमहै अथवा जो तुम आपको चित्तादि दृश्य जानतेहो तो चित्तादि दृश्य तुमही ठहरे तौ वश किसको करतेहो जो वश करते हौ तौ अपने धर्मोंको वा अपनेको वश करो वा न करो द्रष्टाको क्या हानि लाभहै कछु नहीं ! वा तुझ चैतन्य द्रष्टाके आगेही चित्तादि जड़ दृश्य वशवर्ती हैं वशवर्तीको पुनः वशवर्तीकरना लज्जाका कामहै पीसेका पुनः पीसना हाँसीहै जैसे स्वप्नद्रष्टा चैतन्यके अधीनहीं स्वप्न पदार्थोंकी प्रतीतिहै स्वतः नहीं चित्तादि दृश्य तुम अपने धर्मोंको वा अपने आपको रोकोगे तो तुम्हारा मरण निःसंदेह होगा जैसे मल मूत्र त्यागरूपी देहके धर्मदेह त्यागेगा तो अवश्यमेव मृत्यु होवेगी आकाशकी कछु हानि लाभ नहीं होगी जैसे निज शरीरको शरीर वशकरे चेतन् विना सो न्याय तुमको होगा ताते जो तुम अधिष्ठान कल्पित चित्तको वशकरा चाहते हो तो अपने स्वरूपको सम्यक् जानो अधिष्ठानके ज्ञानते कल्पितकी निवृत्ति बलात्कारते होती है कल्पितकी निवृत्ति वास्ते जुदा साधन नहीं चाहिये जब तुमने सर्व ओरते पूर्णरूप अपना आत्मा जाना तब आपही मन भटक भटक के शांत होजावेगा जैसे मध्य समुद्र विषे जहाजते कागला उड़े सो कागला चारों ओर समुद्रको देखता है और इधर उधर

अपने बलसे भटकताहै जब अन्य आधार नहीं देखता तब थक कर जहाँसे उड़ाथा उसी जहाजपर पुनः आय बैठताहै ऐसेही हरि पूर्ण दृष्टीविना मनके वश करनेका और उपाय कोई नहीं जैसे तरंगादिकोंका निज स्वरूप जलके जाननेतेही तरंगादिकोंकी वशी कारिता होती है जैसे जड पदार्थ निजात्मामें कल्पित रज्जु रूपके सम्यक् अपरोक्ष बोधतेही मन रूप सर्व वश होता नाम निवृत्त होता है जैसे स्वप्नदृष्टाका सम्यक् जागरणही स्वप्न सृष्टि सहित स्वप्न मनका वशीकर्ण होताहै पराशरने कहा हे मैत्रेय वेश्याने सतही कहा है काहेते जैसे अंगारेमे जिस अग्निके वियोगसे अनिर्वचनीय अन्य कारणके विना कालुपता प्राप्त होतीहै सो कोलेकी कालुपता किसीभी उपायकरके दूर नहीं होती जिस अग्निके वियोगसे कोलेमें कालुषता हुईहै तिसी अग्निमें कोलेका प्रवेश होनेसे कोलेकी कालुपता दूर होतीहै पुनः यह मालूम नहीं होतीकि कोलेकी कालुषता कहां गई और कोला कौनहै तात्पर्य्य यहकि अपना नाम रूप मिटायके एक अग्निरूप होताहै तैसेही सच्चिदानंद रूप अग्निके वियोगते मनरूप कोलेमें कर्तृत्व भोक्तृत्वरूप कालुपता उत्पन्न हुयीहै सो कृर्तृत्व भोक्तृत्वरूप कालुषता यज्ञ दान तप होम व्रत तीर्थ जप ध्यान वेदाध्ययन शम दम वैराग्यादि किसीभी साधनसे दूर नहीं होती किंतु जिस सच्चिदानंदके अज्ञानसे मन वा मन उपाधिक चैतन्यमें कालुषता रूप आवर्ण हुआहै तिसीके ज्ञानसे मन रूप कालुषता दूर होवेगी अन्य उपायसे नहीं तात्पर्य्य यह कि आप सहित सर्व मनादिकोंको हरि रूप जानेते मनादिक अपना नाम रूप त्यागके हरि रूप होवेंगे पुनः यह नहीं जाना जावेगाकि मनादिक अपने धर्मों सहित कहां गये हे मैत्रेय जब नामरूप मन सहित संसारको मिथ्या जाना और अपने स्वरूपको त्रिकालाबाध्य स्वरूप सत् जाना तब मन कहां जावेगा किन्तु उलटा मिथ्या दुःख रूपते हटके सुख स्वरूप आत्मामेही बलात्कार आताहै हे मैत्रेय मृत्तिका बुद्धिही घटादि नाम रूपके अभावका कारणहै कोई पत्थर करके घटादिकोंको चूरण नहीं करना जो मृत्तिका रूप होवे बने बनाये कामदेते नामरूप प्रतीति होतेभी घटादि मृत्तिका रूपहैं यही दिव्य दृष्टिहै क्योंकि कारण दृष्टिही दिव्य दृष्टिहै अन्य नहीं हे मैत्रेय पुनः वेश्या बोली हे संतो जिस समय संसार-

की सर्व चाहनाको छोड़ कर एक भगवतकी चाहना हुई उसी समय वेश्यादि संज्ञा दूर हुई काहेते गोविंद वितरेक जो दृष्टि आता है सो मलीनताहै जो मूढहै सोई इस दृष्ट मानमें प्रीति करताहै विचारवान् नहीं करताहै हे पराशर तू इस दृष्ट मानमें दृष्टीक्यों करताहै क्या जो मैं परमहंसहों ऋषिहों तथा मैं ब्राह्मणहों तथा मैं पंडित हों तथा मैं कुलीन हों तथा मैं ज्ञानी हों इत्यादि और यह वेश्याहै तथा नीचहै तथा दुराचारिणीहै इत्यादि परंतु जान यह दृष्टिमान शरीर अतिमलीनहै तथा कृमिहै तथा भस्म होनी है पर जान गोविंद वितरेक जो प्रतीतिहै सोई मलीनताहै मैंने कहा हे वेश्या तैंनेही पूर्व कहाहै जो मैं सर्व रूप अद्वितीय आत्माहों तो मलीनता कृमि भस्मभी तूहीहै वेश्याने कहा सभ कहना मात्रहै नहीं तो मैं चैतन्य सर्व पदों ते अतीतहों पराशरने कहा जो तुझ विषे सर्व पद नहीं तो तुझ ते भिन्न कौनहै जिसमें सर्व पद होवें वेश्याने कहा तुझको सर्व असर्व पद कैसे दृष्टि आयाहै पराशरने कहा जैसे तुझको मलीनता कृमि भस्म दृष्टि आया पुनः वेश्याने कहा हे पराशर तू परमहंस है मैंने कहा ऐसे मत कहो यह कल्पना मेरे विषे नहीं यह कल्पना तेरे विषे है जो आपको तैंने वेश्या जानाहै और मुझको परमहंस जानाहै हे वेश्या जो तू मन वाणी करके कथन चिंतन करेगी सो सो अहंकारका रूप है वा मायाका रूपहै दृश्यका तहांतकही रूपहै जहांतक मन वाणी की विषयताहै परंतु मैं आत्मा मन वाणीसे अगोचर हौं जैसे तैंने सुनकर वेश्यापना दृढ़ किया स्वप्नमेंभी तू और नहीं जानती तैसे तू जब अपने स्वरूपको दृढ़ जानेगी मुक्ति की इच्छा न करती हुई भी मुक्तिको पावेगी जैसे घटाकाश सम्यक् अपने स्वरूपको जानताहै तो घटके फूटने न फूटनेमें निःसंदेह महाकाश स्वरूपहै यह नहीं कि घटाकाश घटमे पदार्थ होनेसे निर्विकार नहीं सत् नहीं और होनेसे विकारी है किंतु सदा निर्विकारहै ताते हे वेश्या इस सूक्ष्म स्थूल अहंकारको निर्अहंकार रूपी हिमालयमे जला अरु निर्अहंकार रूपी भस्मी को लगा जो पुनः पापते निर्मल होयके सोभायमान होवें वेश्याने कहा हिमालयमें अनेक जीव मरतेहैं परंतु पुनः पापते नहीं छूटते ताते हिमालयमें जलनेका कछु प्रयोजन नहीं जलना मेरा तेरे वचनोंसे होगा काहेते वेश्या नाम मन रूपी नगरते निकासो वास्तव

37

ते मैं चैतन्य आत्मा स्वभाविक शोभायमान हों यत्नते नहीं मैंने कहा मैं ऐसा अतीत हकीम नहीं हों जो इस वेश्या नामको निवर्त करों अरु सच्चिदानंद नाम राखों जैसे कोई गृहस्थ अतीतके पास अतीत होनेको आताहै तो वो अतीत पूर्व गृहस्थके नामको निकास कर दूसरा नाम घुसेड़ता है एक नाम रूप भ्रमको निकासा दूसरे नाम रूप भ्रममें उलटा दृढ़ कर डाला इसमे विशेषता क्या हुआ कछु न हुआ ताते सच्चित आनंदादिक सर्व नाम रूप कल्पित भ्रमहै प्रमाण नहीं जिस कर सच्चित आनंदादिक सर्व नाम रूप सिद्ध होतेहैं सो अवाङ्मनसगोचर तेरा स्वरूपहै हे वेश्या तू अहंपना त्याग पुनः तिस त्यागका भी त्याग कर जो स्वरूप अपना पावे पराशरने कहा हे मैत्रेय वह वेश्या यदि किंचित् काल संतोंकी संगति करके मूल अपनेको पाती भई परंतु तुझको अब तक कछु प्रवेश न भया मेरा उपदेश तुझको अकार्थ होता भया मैत्रेयने कहा तुम मेरे गुरूहो अहंकार मेरा निवृत्त करो पराशरने कहा अहंकार तेरा है मैं कैसे निवर्त करों हे मैत्रेय बांदर चणोंकी मुट्ठी अपनी मूंदताहै तो फँसताहै जो अपनी मुट्ठी खोले तो छूट जावे परंतु मुट्ठीका खोलना न खोलना बाँदरके अखत्यार है दूसरेका नहीं हे मैत्रेय मैं तेरा अहंकार निवर्त करों कि अपना तेरा अहंकार मुझको दुःख नहीं देता जिसको अहंकार दुःख देवेगा सो आपही त्यागेगा जैसे किसीने चार आने देकर मजदूरके शिरपर बोझा उठाकर चला जब मजदूरको बोझ सहन नहीं करा जाता तो लाचारहोकर नीचे पटक देताहै चाहे कोई हज़ार मोहर देवे काहेते अपने शरीरसे सहन करा जावे नहीं लाचारीहै तैसे जब अहंकार तुझको दुःख देवेगा तो तू आपही बलात्कार त्यागेगा मैत्रेयने कहा जो मुमुक्षुओंके अहंकारादिक विकार निवर्त नहीं करते तो आपको तुमने आचार्य कैसे माना है पराशरने कहा सत्व रज तमादि गुणोंके प्रकाशक आत्मामें अचार विचार नहीं किंतु संघातके धर्म हैं परंतु मेरी कृपाकी आशा राख वचन आगे मतकर अरु नित्य अनित्य मत पूछ जो कहों सो सत्यकरमान मैत्रेयने कहा जब लग संदेह मेरा निवर्त नहीं होता तथा दिलमें नहीं जचता तब लग मैं चुप होनेका नहीं अरु वेदमें लिखा भी है कि जब लग शिष्यका संशय न मिटे तब तक शिष्य चुप न होवे अरु गुरुभी क्रोधरहित उपदेश करे यह वचन मैत्रेयके सुनकर पराशर मैत्रेयके केश हाथमें

पकड़कर भली प्रकार शासना करी मैत्रेयने कहा हे पराशर बड़ा आश्चर्य है जो दैत्यादिक क्रूर (हिंसक)जीवभी अपनी देहको आप भक्षण नहीं करते तू अपनेआपको कैसे शासना देता है मैं तो मैत्रेय नाम मात्रभी नहीं आपको मतमार पराशरने कहा क्या मुझको तैंने तुच्छ समझा है अभी तुझको भस्म कर्त्ताहों मैत्रेयने कहा भस्मको भस्म क्या करोगे मैं तो है ही नहीं किसकी भस्म करते हो परंतु मैं यह नहीं जानताथाकि तुम मानको चाहते हो अब नम्रता सहित प्रश्न करोंगा मेरी रक्षाकरो पराशरने कहा इसी ते तुझको उपदेश नहीं करता जो तुझको निश्चय नहीं जिसको आत्मामें निश्चय है देहनाश होय तो भी निश्चयका त्याग नहीं करते वह दैत्यपुत्र तुझ ब्राह्मण ते शत अंश भलाथा जो पिताने उसको अनेकवार शासना करी पर निश्चयते चलायमान नहीं भया मैत्रेयने कहा हे गुरो कथा वाकी मुझपै प्रगट करो कि कैसे होता भया है पराशरने कहा हे मैत्रेय पूर्व दितिके उदरविषे दो पुत्र उत्पन्न होते भये हैं एकका नाम हिरण्याक्ष था जिसको विष्णु भगवानने वाराहका रूप धारण कर मारा है तिसके पीछे हिरण्यकशिपु त्रिलोकीका राज्य करतभया सर्व इंद्रादिक देवता तिसकी आज्ञामें थे यज्ञका भाग देवता लेतेथे सो वोह लेताभया इंद्रादि देवता तिसके भयकर स्वर्गको त्याग कर पृथिवीपर रहतेथे तिसके गृहविषे एक प्रल्हाद नाम पुत्र होता भया जब लायक पढ़नेके हुआ तो पढ़नेवास्ते गुरुके निकट पिताने भेजा पुनः कोईक दिन पीछे हिरण्यकशिपु प्रल्हादको गुरुसहित बुलायके पूछाकि हे पुत्र जो गुरुसे पढ़ाहै सो सुनाओ प्रल्हादने कहाहे पिताजी यह जो स्थूल सूक्ष्म दृष्टिमान जगत् है सो स्वप्नकी न्याई असत् भ्रम जाना है अरु एक अद्वितीय विष्णु नाम व्यापक आत्माको ही मैंने सत जाना है सर्व विष्णुही है यह वचन सुनकर हिरण्यकशिपु क्रोधवान हुआ नेत्र लाल होगये शुक्रको कहा हे ब्राह्मण! इसको क्या पढ़ाया है विष्णु जो हमारी जातका घातक है तिसका भजन करता है अरु मैं जो त्रिलोकीका राजा हों मुझको विसारता है शुक्रने कहा हे दैत्येंद्र क्रोध मतकरो वालक अवस्था है इस निश्चयते इसको फेरोंगा कि तुझहीको याद करेगा पुनः हिरण्यकशिपुने कहा हे पुत्र जो गुरु पढ़ावे सोई पढ़ो नहीं तो तेरे प्राण जाँयगे प्रल्हादने कहा हे पिताजी किसीकी शक्ति नहीं है जो मुझको मारे आकाशकी न्याईं

३८

जगत्विषे जो व्यापक विष्णुआत्मा है तिसको कौ न मारे अरु कौन दुःख देवे पुनः हिरण्यकशिपुने कहा रे नीचबालक कहो वह कौनसा विष्णु है जिसका वारंवार नामलेता है मुझको छोड़के प्रल्हादने कहा हे पिताजी विष्णुव्यापक सारे जगत् विषे मनका साक्षी है अरु इंद्रियोंसे अगोचर है तुझ विचारनेत्र रहितको कैसे दीखे योगीश्वर विष्णु आत्माको परमपद कहते हैं हे पिताजी तू अरु मैं अरु यह जगत् है ही नहीं मूल अरु सार भगवान् विष्णुआत्माही है हिरण्यकशिपुने कहा हे मूर्ख तेरे मनको पापोंने घेरा है जो उलटा मानता है नहीं तो संत कहते हैं जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनो प्रणवते उपजे हैं इसीते जड़ हैं अरु दृश्य हैं तू चैतन्य आत्मा है भगवान मायाको कहते हैं आपको त्यागके मायामें लीन क्यों होता है आज्ञाकरी जो इस पापीको मेरी दृष्टिसे दूर करो अरु गुरुके गृहमें लेजावो पुनः कोई दिन पीछे गुरुसहित प्रल्हादको बुलाया अरु पूछा क्या पढ़ा है प्रल्हादने कहा पढ़ना न पढ़ना सुनना देखना लेना देना खाना पीना सोना जागना सूंघना स्पर्शकरना सर्व विष्णुही है यह प्रल्हादके वचन सुनकर अति क्रोधवान हुआ राक्षसोंको आज्ञादीनीकि इस बालकका घात करो इसको कालने घेरा है हमारे कुलमें यह अग्नि है राक्षसोंने अनेक प्रकारकी शासना भय दिया परंतु प्रल्हादका रोमभी न विगड़ा पराशरने कहा हे मैत्रेय प्रल्हादकी न्याई तुझको जब शासना होवे तब कहेगा मैं ब्रह्म नहीं हों किंतु जीव हों परंतु दैत्य पुत्र अपने निश्चयते न फिरा मैत्रेयने कहा उसको क्या गुण हुआ सो एती शासनासही काहेते नामरूप भ्रम मात्र है वस्तु सत है क्यों ना तिस को दंड हो जो अपने स्वरूपको त्यागके दूसरेको अपने स्वरूप ऊपर स्थित करना यह भूलका काम है पर उसकी कथा कहो हे मैत्रेय पुनः हिरण्यकशिपु प्रल्हादको बुलाकर कहा हे पुत्र नीच बुद्धिको त्याग वैरीके पंथ मत जाय अभी तेरा कछुभी विगड़ा नहीं तुझको निर्भय करोंगा प्रल्हादने कहा मैंतो मूलही नहीं जोहै सो सर्व भय अभयादि विष्णुआत्माहीहै तब क्रोधवान होकर आज्ञा दई इसको सर्पादिकोंसे मरवाउ जब सर्पादि लेआये तिसकालमें प्रल्हाद सर्पादिकों सहित सर्व जगतको विष्णुआत्मा जानताथा जैसे मेरे शरीरमें अविनाशी मन आदिकोंका प्रकाशक विष्णुहै तैसे सर्पादिकोंमें है तथा ब्रह्मासे लेकर चींटीके शरीरमें वही विष्णुआत्मा है विष्णु पृथक् सर्पादिक

कहां है सर्व विष्णुआत्माही है तव सर्पादिकोंसेभी प्रह्लादको खेद कछु न हुआ पुनः अग्निमें डाला पुनः पहाड़से डाला पुनः सिंह व्याघ्रोंके आगे डाला पुनः हिमालय वायुके महान स्थानोंमें डाला इत्यादि अनेक मृत्युके कारणोंके सन्मुख किया परंतु प्रह्लादको कछु खेद न हुआ काहेते आपसहित सर्व विष्णु जानेथा खेद दूसरेसे होताहै पुनः हिरण्यकशिपुने जुदा होकर गुरुको कहाकि इसको साम दाम दंड भेद राजनीतिसे शिक्षा करो तिनोने ऐसेही किया परंतु प्रह्लादका निश्चय न डुलायमान हुआ और एक समय अध्ययन शालासे शुक्र किसी कार्यको गया तव पीछे अवकाश पायके वालकोंको अध्ययन शालामें प्रह्लाद कहता भया हे राक्षस पुत्रो सर्व रूप व्यापक विष्णु आत्माही है तुम हम हैहीं नहीं तिसी विष्णुकाही भजन करो जो पूछो भजन कौन है आपसहित सर्व जगत्को विष्णु आत्मा जानना यही परमभजनहै वालकोंने कहा हे प्रह्लाद यह समय खेलनेका है भजनका नहीं प्रह्लादने कहा हे दैत्य पुत्रो मनुष्यजन्म दुर्लभहै वारंवार नहीं प्राप्तहोता शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, विषय, अरु विषयोंके ग्रहण करनेवाले श्रोत्रादिक इंद्रिय सर्व योनियोंमें प्राप्तहैं विषय इंद्रिय संबंध जनही ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत समही वैषक सुखहैं सो सर्व योनियोंमें प्राप्तहैं किसी योनिमेंभी अप्राप्त नहीं ताते इनके वास्ते यत्न करना निष्फलहै हे दैत्यपुत्रो शतवर्ष पुरुषकी आयु होतीहै आजकल तो ६० या ७० वर्षही आयुहै तिसके मध्यमें आधी आयु तो सोनेमें जातीहै पुनः तिसके मध्यमें वारह वर्ष खेलनेमें जातीहै अरु वारह वा षोडश वर्ष वृद्ध अवस्थामें जातीहै शेष पचीस वर्षमेंही देशाटन भोग विलासभी इसीमेंही होसक्तेहैं अरु भजनभी इस पचीस वर्षमेंही होसक्ताहै अध्यात्मकादिक रोगोंकाभी इसीमेंही जोर होताहै सो क्षणभंगुर शरीरहै विजुलीके चमत्कारवत् क्षण विषे नष्ट होजाताहै कभी शरीर जन्मताहै कभी मरताहै कभी वालक कभी यौवन कभी वृद्ध अवस्था आतीहै कभी जाग्रत कभी स्वप्न कभी सुषुप्ति कभी मूर्छा कभी समाधि कभी हँसना कभी रोना कभी हर्ष कभी शोक कभी सुख कभी दुःख कभी क्षुधा कभी तृषा कभी हानि कभी लाभादिक दुःखमय अवस्था होतीहै सो हजारों सुखकी अवस्थाहैं तथा हजारों दुःखकी अवस्थाहैं परंतु शरीर रूप इस संघातकी अवस्थाहैं आत्मा विष्णुकी नहीं

पुनः बालक अवस्था अत्यंत जड़ रूपहै कछु शुभाशुभका ज्ञान नहीं इत्यादि बालक अवस्थामें अनेक दुःख शास्त्रोंमें वर्णन करेहैं तैसे यौवन अवस्थामें अनेक काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकारादिक विकार दुःखदायक शास्त्रोंमें कथन कतेहैं तैसे वृद्ध अवस्थामें अंग क्षीणतादि दोष निरूपण करेहैं इहां विस्तारके भयसे कथन नहीं करे हे दैत्यपुत्रो जो भजन दान तपादिक नहीं करता तिसको अवसर चूके मृत्युके अंतकालमें पश्चात्तापही होताहै पुनः माताके गर्भमें जठराग्नि आदि निमित्तोंसे महानदुःखोंको पाता है शिरनीचे पाँउ ऊपर गर्भमें होतेहैं मल मूत्रके कुंडमें पड़ारहताहै इत्यादि अनंत दुःखोंको पाताहै पुनः दुःखी हुआ हुआ गर्भ दुःखके छूटने वास्ते भ्रमसे अपने चैतन्य स्वरूपते भिन्न परमेश्वरकी कल्पना करके प्रार्थना करताहै कि हे सच्चिदानंद स्वरूप परमात्मा पूर्व अनेक मल मूत्र रूप देहोंमें देह अभिमानही मैं करता रहाहों तिसी देह अभिमान काही फल पुनः पुनः यह मुझको गर्भवासहै जो मैं मल मूत्र रूप देहका अभिमान नहीं करता तो दुःख रूप गर्भवासको नहीं प्राप्त होता ताते सर्व दुःखोंका कारण देहाभिमानही है अन्य नहीं देह अभिमानी मेहतरकाभी बापहै ताते हे बालको तुमने कदाचित्त भी देह अभिमान नहीं करना किंतु आपसहित इस सर्व नाम रूप जगत्को विष्णुरूप आत्मा जानो जो जन्म मरन बंधन ते छूटो देह अभिमान त्यागेबिना अन्य तपादि साधनोंसे बंधनरूप संसार बंध ते ना छूटोगे जो दुर्लभ इस मनुष्य शरीरमें शिष्णोदर परायण हुये अपने मूलस्वरूप आत्माको न जानोगे तो अनंत कूकर शूकरकी दुःखमय योनियोंको प्राप्त होवेगे मनुष्य जन्म पावना तुम्हारा निष्फल होजावेगा जैसे चिंतामणि अकस्मात् किसी पुण्य प्रताप ते किसी पुरुषको हाथ आई पुनः मूर्खता करके अपने प्रयोजनको न साधके निष्फल खोदेनी अत्यंत नालायकीका कामहै ताते मनुष्य देहको पायकर विचार करना कर्तव्यहै मैं कौन हों यह देहादिक प्रपंच क्या स्वरूपहै कहांसे मैं आया हों कहां जावोंगा इस प्रकार जब अग्रे आपको नहीं चीन्हा तो मानसदेहके पावनेते क्या लाभ भया हे बालको अत्यंत मल मूत्र रूप अपवित्र इस शरीरका अहंकार त्यागकर एक आत्मा विष्णुकोही पवित्र

जानो अंतर वाहर आत्माही है न इस आत्माका माताहै न पिताहै न भ्राताहै न पुत्रहै न इस आत्माका वर्णहै न आश्रमहै न वाल-
कादिक अवस्था है यह सब शरीरके धर्म हैं आत्माके नहीं आत्मा नित्य निर्लेप प्रकाश है उपाधिसे सर्व रूप विष्णु आत्माही है
जैसे निद्रारूप अविद्या उपाधि ते विना स्वप्नद्रष्टा निर्विकार शुद्ध है उपाधिकर सर्व स्वप्न प्रपंच रूप भी स्वप्नद्रष्टाही है शरीरादिकों
के अभिमान प्रबंधसे प्रत्यक्ष नहीं भासता जैसे शुद्ध स्फटिकमणिमें कोई रीतिकाभी रंग नहीं परंतु लालपुष्पादिकोंके संयोगसे
लाल रंगवाली प्रतीति देती है वास्तव ते शुद्ध है तैसे आत्मामें यह दृष्यमान नामरूप प्रपंच वास्तवते है नहीं बुद्धि आदिक उपाधिके
संबंधसे आत्मामें प्रतीत होता है जो इस नाम रूप भ्रम प्रपंचमें सत्यत्व प्रतीतिकर्ता है सो जन्म मरनके बंधनमें पड़ता है ताते हे
वालको तुमको योग्य है कि अवही नारायण परायण होवो अरु आशाते मनको निराश करो अस्तिभाति प्रियरूप नारायण आत्माते
जो वितरेक है सो मृगतृष्णाके जलवत जानो आत्माको सर्व अवस्था ते न्यारा साक्षी रूप जानो जब इस निश्चयको दृढ़धारोगे तव अध्यात्म
अधिभूतक अधिदैवक तीनताप रूप संसार बंधनते छूटोगे काहेते यह सर्व उपाधि शरीरकी है जब शरीर अभिमान ते छूटा तव सर्व
उपाधियों ते मुक्त होता है ताते विचार द्वैतका मनते त्यागो जो कछु देखो सुनो सूंघो स्पर्शकरो रसलेवो लेना देना गृहण त्यागादिक
व्यवहार करो सो सर्व विष्णु आत्माही जानो दूसरा कोई नहीं जैसे सर्व स्वप्नका व्यवहार स्वप्नद्रष्टा आत्मारूप है जिसने बुद्धि आदि-
कोंका अपने साक्षी स्वरूप आत्माको ब्रह्मरूप सम्यक् जाना है जैसे घटाकाश अपनेको महाकाश रूप जाने सो इसभ्रमरूप संसारमें
आवागवनको नहीं प्राप्त होगा पराशरने कहा हे मैत्रेय तिस समय शुक्र आयकर देखा तो सर्व वालक अध्ययन शालामें यह भजनकर
रहे हैं कि यह सर्व नामरूप विष्णुआत्माही है अरु हमभी सर्वव्यापी विष्णुआत्मा हैं हम विष्णुरूप आत्माते अहंत्वं रूप जगत्
भिन्न नहीं विष्णुरूप हमारे आत्माकी यह सर्व नामरूप प्रपंच दमका हैं लालकी दमकांवत हे मैत्रेय शुक्राचार्य यह अवस्था
वालकोंकी देखकर पुनः हिरण्यकशिपुको प्रह्लादका अध्ययन शालामें जो वृत्तांत था सो सब कहसुनाया अरु हिरण्यकशिपुको

खुद दिखलादिया अपनी निर्दोषताके वास्ते पुनः हिरण्यकशिपु रसोइयांको हुकुमदिया कि इस वालकको भोजनमें जहर देकर नाशकरो तव हुकुम अनुसार रसोइयोंने ऐसेही किया अरु प्रल्हादको भोजन पानेवास्ते बुलाकर भोजन दिया तव प्रल्हाद यही भजन कर्ताथाकि भोजनभी विष्णुआत्मा है अरु भोजन वनानेवाला भी सर्वव्यापी विष्णुहै अरु भोजन करने वाला भी विष्णुआत्माही है विष भी विष्णुहै अमृतभी विष्णु है मैंभी विष्णु हों तथा हिरण्यकशिपु भी विष्णु है तात्पर्य्य यहकि सर्व नामरूपात्मक प्रपंच विष्णुआत्माही है अन्य द्वैत नहीं है मैत्रेय उलटा विष प्रल्हादको अमृत रूप विष्णु होजाता भया कछु विष अपना असर नहीं करताभया काहेते सर्व जगत् मनोमात्र है जैसे दृढ़ मनमें भावना करता है तैसेही भावनाके अनुसार प्रत्यक्ष भासता है और कोई वाहर प्रपंच है नहीं मनमें स्वप्नवत् ही प्रपंच है हे मैत्रेय भृंगी चीटा अन्य विजाती कीडेकोभी निरंतर दृढ़भावनाके वशते अपना रूप करलेता है यह तो नाम रूप प्रपंच आगेही स्वरूपसेही अस्ति भाति प्रियरूप व्यापक विष्णुरूप आत्माही है केवल मनने भ्रमकरके विपर्य कल्पना करी थी जिस मनने निज स्वरूपसे विपरीत भावना करीथी वही मन जव सर्व नाम रूपको सांगोपांग निजस्वरूप विष्णु आत्माही भावना करेगा तो सर्व नामरूप प्रपंच विष्णु आत्माहीका स्वरूप क्यों ना भासेगा किंतु भासेगाही हे मैत्रेय उपासना रूप भक्तिभी इसीका नाम है जो आप सहित सर्व नाम रूप प्रपंचको उपास्य रूप जानना तवीही शांति होती है अरु राग द्वेष मिटजाते हैं अरु दुःखोंकी निवृत्ति अरु परमआनंदकी प्राप्ति होती है इसी निश्चयते हे मैत्रेय प्रल्हादको विष दुःख न देता भया काहेते विष तथा अपने सहित सर्वको प्रल्हाद विष्णु रूपही जाने था विष्णु अपने आपको तो दुःख नहीं दे सक्ता जैसे अपने शरीरको आप कोई भी परिहार नहीं करता ताते हे मैत्रेय तू भी विचारकर दृढ़ निश्चयधार जो सर्व नामरूप प्रपंच अस्ति भाति प्रियरूपमे आत्माही हों वा सर्व नाम रूप दृश्य प्रपंच ते असंग निर्विकार निर्विकल्प सच्चिदानंद साक्षी आत्मा स्वमहिमामें स्थितहों असत जड़ दुःख रूप यह देहादिक प्रपंचमें नहीं परंतु धन्य है उस दैत्य पुत्रको जो ऐसी अवस्थामें भी अपने निश्चयते चलायमान नहीं हुआ मन वच शरीरसे

अपने स्वरूपमेंहीं स्थितरहा तुझको विषदेवे तो तत्काल कहें मैं ब्रह्मनहीं जीवहौं ॥ मैत्रेयने कहा हे पराशर भूत, भविष्य वर्तमान तीनो कालोंमें सर्व नामरूप जगत् मैंहीहौं तो जीवभी मैंही हौं प्रल्हाद कहां है तेरी बुद्धिमें भेद पड़ा है जो प्रल्हादको तैंने भिन्न भिन्न समझा है पराशरने कहा हे पाखंडी तुझका प्रल्हादकी न्याई मन शुद्ध नहीं तुझ पापीका दर्शन करना योग्यनहीं पाप है मैत्रेयने कहा सत है इसते परे पाखंड क्या है जो मैं चैतन्य माया करके सर्व नामरूप प्रपंचको उत्पन्न पालना संहार करताहों स्वरूपसे कछुभी उत्पन्नादि करता नहीं सर्वका भोक्ताभी अभोक्ता हों निजस्वरूपसे मन वाणीका अविषय भी मायाकर मन वाणीका विषयभी मैंहीहों शरीर दृष्टीसे चलता भी स्वरूप दृष्टीसे अचलहों कर्ता भी अकर्ता हों सर्व मन वाणी शरीरादिक दृश्यकी चेष्टा करताभी अक्रिय असंग साक्षी हों जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्नदृश्यकी चेष्टा करता हुआ भी अक्रिय असंग है एक पाखंड मेरा और है हों मैं आप अरु अपने ते भिन्न तत्पद अरु त्वं पद अरु ब्रह्मपदको कल्पता हों अरु असत् जड़ दुःख रूप दृश्यको अपनी सत्ता स्फूर्ति करके उलटा सच्चिदानंद रूप कर दिखलाता हों जैसे लोहको पारस स्वर्ण कर दिखलाताहै जैसे इंद्रजाल सर्व मायक पदार्थोंको सतकर दिखाताहै मैं चैतन्य आत्मा देश काल वस्तु भेद ते रहितभी देश काल वस्तु भेदवान स्व माया कर भी मैंहीं हो यह मुझ चैतन्यका महान पाखंडहै मुझ चैतन्यको अवाङ्मनसगोचर स्वयंप्रकाश होने ते मन इंद्रियों करके दर्शनके अयोग्य हों सर्व दर्शन मेराही है जो पुरुष मुझ चैतन्य आत्माको सम्यक् ब्रह्म रूप नहीं जानता तिसको भ्रममात्र चौरासी लक्ष योनियोंमे जन्म मरण रूप पाप होताहै ताते हे पराशर मुझको जो तैंने पाखंडी दर्शनके अयोग्य अरु पापी कहाहै सो पूर्वोक्त रीतिसे ठीक कहा है पराशरने कहा हेमैत्रेय कथा सुन हिरण्यकशिपु शुक्रको बुलाकर कहाकि इस बालकको किसीभी उपाय करके नाश करो ढील मतकरो तब शुक्र प्रल्हदको कहा कि हे पुत्र पिता तेरा त्रिलोकीका राजा प्रगटहै औरसे तुझको क्या कामहै पिताकी शरण ले अरु पिताके शत्रुका मित्रपना त्याग

नहीं तो तेरा नाश होयगा परमगुरू पिताहै तिसकी आज्ञा भंग मत कर हे मैत्रेय तूभी मुझते भयमान हो काहेते शुक्र एक शक्ति राखताथा मैं सहस्रशक्ति राखताहों शुक्रने मेरेसे संथा लीनी थी मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्य आत्माके भयते सूर्य चंद्रमा अग्नि वायु यम समुद्र नदियां ब्रह्मा विष्णु शिवादिक सर्व दृश्य भयमान होतीहै मुझको किसकी शक्तिहै जो भय देवे मुझ चैतन्य विना सर्व नाम रूप दृश्य सिद्धही नहीं होती तो भय कैसे देवेगा चित्रकी मूर्ति चित्रलेको कैसे भय देवेगी अनेक प्रकारकी पुतलियां तंत्रीको कैसे भय देवेंगी किंतु नहीं देवेंगी वा अस्ति भाति प्रिय रूपमें सर्व नाम रूप दृश्यका द्रष्टा आत्माहों अपने आत्माको दृश्य भय कैसे देवेगी हे पराशर यह भी तैंनेही शुक्रको उपदेश दिया होगा जो प्रल्हाद कहता था पराशरने कहा हे मैत्रेय मैं शुक्रको निर्वाणपदका उपदेश करता था परंतु कामनाकेवशते तिसके हृदयमें निर्वाण उपदेश प्रवेश नहीं होता भया उलटा यह कहता कि मुझको वह विद्या सिखावो जिसकर किसी मुयेको जिवालों किसीको कालवश करों अरु मेरी संसारमें प्रतिष्ठा होवे इस प्रकारकी शुक्र विद्या पढ़ता भया है सो मुझको दोष नहीं उसकी कामनाका दोषहै हे मैत्रेय मुझ गुरूते भय राख मैत्रेयने कहा तुझ विषे मरना जीवना दोनों नहीं भय क्यों राखों परंतु कथा प्रल्हादकी कहो हे मैत्रेय प्रल्हादने कहा हे गुरू जाति हमारी सर्व सृष्टिते नीचीहै अरु तुम ऊंच कहतेहो इसवास्ते तुम्हारा उपदेश मेरे मनमें नहीं बैठता जो जो दृष्टिमानहै तथा उत्पत्ति मानहै तथा विकारमानहै तथा कारज रूपहै सो सो नष्टमानहै घटवत् अरु आत्मा विष्णु इन पदोंते रहितहै इसीते सतहै हे महाभाग्य जो गुरु उपदेश करके सत आत्माकी प्राप्ति करनेवालाहै सोई परमगुरुहै सोई पिता माता भ्राता सुहृदहै जो पिता पक्षपात रहित होकर सत वस्तुका. उपदेश कर्ता है तो परमगुरुहै जो नहीं करता सो पिता परमगुरु नहीं किंतु शास्त्र रीति अनुसार पिता मात्रहै तिसकाभी मन वाणी शरीर करके यथा योग्य पुरुषोंने पूजन करना लौकिक पिता तो अति कृपा करेगा तो शरीर इंद्रियोंकी पालना करेगा कोई परम पुरुपार्थ मोक्ष नहीं दे सक्ता ताते तुम्हारी बुद्धिमे भेद पड़ा है जो अज्ञानी पिताको परमगुरु समान कहेतेहो कहो पिता मृत्युते छुड़ा स-

क्ताहै किंतु नहीं परमविद्वान गुरु पिता मृत्युते निःसंशय छुड़ाय सक्ताहै हे शुक्र पिताका ध्यान करना निरंतर कहीं वेदमें लिखा नहीं किंतु सच्चिदानंद स्वरूप हरिकाही ध्यान करना वेदमें लिखाहै तथा योग्यहै जो परमार्थको जानताहै सोई सत उपदेश करताहै असत नहीं शुक्रने कहा गोविंदके भजन सों क्या इच्छा राखताहै है जो तुझकी इच्छाहो सो तेरा पिताभी दे सक्ताहै प्रह्लादने कहा तुमको मेरे अंतःकर्णकी सुधि नहीं ध्यान भजनका यही प्रयोजनहै जो मूल अपना पावों जब मूल पाया तब बंधनते छूटा सम पद भजन ते पाताहै अरु आप सहित सर्व नारायणहै यही भजनहै शुक्रने कहाकि त्वं पदका तथा तत् पदका लक्ष जो सच्चिदानंद मन बुद्धि आदि सर्व इस दृश्य संघातका साक्षीद्रष्टा निजात्म स्वरूपका पिता तुझको पूर्व उपदेश कर्ता भयाहै सो क्यों नहीं मानता प्रह्लादने कहा पिता देहकोही आत्मा रूप करके उपदेश कर्ताहै तात्पर्य्य यह कि अन्नमय कोशको ही श्रुतिके तात्पर्य्यको न जानकि आत्मा कहताहै काहेते श्रुति तो अरुंधतीके दृष्टांत कर अन्नमयसे आगे प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनंदमय कोशोंको आत्मरूप कथन कराहै परंतु अन्न मयादिक पंचकोश रूप आत्माहै यह श्रुतिका तात्पर्य्य नहीं जो श्रुतिका यह तात्पर्य्य होवे तो यत्नविना सर्वको प्राप्तहै तो परम पुरुषार्थवास्ते यत्न निष्फल होगा ताते सत्वादि गुणोंका कार्य रूप जो जाग्रतादि अवस्था सहित स्थूलादि ती-न शरीर रूपी जो पंचकोशहै सो संपूर्ण कारण कार्य रूप प्रपंच मन वाणीके गोचरहै इसीते मिथ्याहै ताते हे अधिकारी जनो तु-म्हारा आत्मा अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जगदांधविध्वंसक प्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंदको अ-पना स्वरूप जानो मन वाणीके गोचरको अपना स्वरूप मत जानो यह श्रुतिका रहस्यहै पुनः शुक्रने कहा हे प्रह्लाद अभीमान नहीं तो तत्कालही तुझको जलावोंगा प्रह्लादने कहा न कोई किसीको जिवाताहै न कोई मारताहै रक्षा कर्ता सर्व का एक विष्णु आत्माही है जैसे स्वप्न द्रष्टाही सर्वस्वप्न पदार्थोंकी रक्षा नाश कर्ता है अन्य जाग्रत पुरुषभी नहीं करते तथा स्वप्न पदार्थभी आपसमें रक्षक नाशक नहीं शुक्रने क्रोध होकर मुखते अग्नि निकासी प्रह्लाद भयमान होकर विष्णुकी शरण होता भया हे अनंत विष्णु इस ब्राह्मणसे मेरी रक्षाकरो पुनः

कहा मैं उलटी समझी है जब सर्व नाम रूप जगत् एक विष्णु आत्माही है तो शुक्र अरु अग्नि अरु प्रह्लाद कहांहै जिसते भय करों तब उलटा शुक्रकोही अग्नि जलाती भई शुक्र भयमान होकर मन विषे प्रह्लादकी शरणको प्राप्त होता भया हे जजमान प्रह्लादमैं तेरा पुरोहितहों यह अपराध हमारा क्षमा करो मैं तेरी शरणहों हे मैत्रेय शुक्र पहिले क्रोधवान था जब प्राणोंकी अंतनौबत पहुँची तब स्तुति प्रह्लादकी लगा करने परंतु प्रह्लाद दोनों अवस्थामें समहीरहा विषमगतिको न प्राप्तहो ताभया हे मैत्रेय तू भी सम आत्मपदमें स्थितहो जो सर्व अवस्थामें समहोवें मैत्रेयने कहा मैं मूलको कैसे पहुँचो पराशरने कहा तू आप मूलरूपहै मूलको कैसे पहुँचे पहुँचना क्रिया कर होताहै तू अक्रिय है ताते मूलसों तुझे क्या प्रयोजनहै जो नारायण वितरेक जानकर कर्म कर्ताहै सो वंधनका कारण है निष्कर्तव्य में कर्तव्य भ्रांति जब न त्यागेगा तब मूलका पाना कठिन है मैत्रेयने कहा भक्तिका स्वरूप कहो पराशरने कहा मैं पंडित नहीं हों जो तुझको कथा सुनावों मैत्रेयने कहा पंडित नहीं तो मूर्ख होयगा पराशरने कहा दोनों नहीं हों मैत्रेयने कहा दोनों नहीं तो तू कौनहै पराशरने कहा मैं वही हों पंडित अपंडितादिक शब्द अरु शब्दोंके अर्थ जिसकर सिद्ध होतेहैं मुझका सिद्ध करने वाला कोई नहीं मैं स्वतः सिद्ध हों मैत्रेयने कहा मैं तेरा आदि अंत कछु नहीं जानता हों पराशरने कहा अनंत मुझ चैतन्य आत्माकी चारोंवेद तथा ब्रह्मा विष्णु शिवादि कभी आदि अंत नहीं जानते तुझकी क्या शक्तिहै जोजाने काहेते सभसे आदि मैं चैतन्य हों मुझ चैतन्य तेही वेदादिक उत्पन्न भये हैं ताते क्या जाने पुत्र पिताके हालका महरम नहीं होसक्ता मैत्रेयने कहा मुझको संन्यासी करो पराशरने कहा हे मैत्रेय अवतो तेरेको ज्ञानका प्रतिबंधक देह अभिमान राईके तुल्य किंचित् मात्रहै जब तू संन्यासी होवेगा तब तुझको सुमेरुसेभी अधिक देह अभिमान बढ़ेगा पुनः ज्ञानहोना तुझको दुर्लभ होजावेगा पुनः संतजो निर्पक्ष हैं अरु वैराग पूर्वक आत्मदर्शी हैं अरु अदंडी संन्यासी हैं तथा मनका जिस दंडसे निग्रह होताहै तिस दंडसंयुक्त हैं तथा सर्व देवी गुणोंकर संपन्नहैं तिनका तथा ग्रहस्त आश्रममें किसी पुण्य प्रतापते धर्म पूर्वक सम्यक् आत्मज्ञानभया है जिनको

तिन सज्जन पुरुषोंके गुह्य उत्तम गुणोंको तू न प्राप्त होकेभी केवल संन्यास ग्रहण मात्रते तिनका तिरस्कार करेगा तिसके माहात्म्य तेतू परमदुःखको पावेगा देहाभिमान रूपी बिलारीके निवारण वास्ते संन्यासहै उलटा महान देहाभिमान रूपी सिंहको घुसालेना यह अत्यंत मूर्खताहै जैसे कोई मूलकी वृद्धि वास्ते कोई व्यापारकरे उलटा मूलभी खोदेवे यह अव्यचारका फलहै सम्यक् विचार वान पक्षपात ते रहित संन्यासी कोईकहोताहै केवल दंड अभिमानी होनेते सुख नहीं ताते हे मैत्रेय इस देहाऽभिमानादिकोंके निवारण वास्ते स्वस्वरूपका सम्यक् ज्ञानरूपी दंड धारणकरो उलटा अभिमान मतकरो आगे जो इच्छाहो सो करो मैत्रेयने कहा मेरेको अतीतकरो पराशरने कहा हे मैत्रेय अतीत किसते होताहै जो स्त्री पुत्रादिक वहिर कुटुंवते अतीत होताहै तोभी तिनते तू शरीर दृष्टी करकेभी अतीत नाम भिन्न है अरु जो शरीरके अंतर मन बुद्धि इंद्रियादिक कुटुंवहै तिनतेभी तू चैतन्य साक्षी आत्मा स्वतः ही अतीत नाम भिन्नहै तात्पर्य्य यह कि तू चैतन्य स्वतः ही नामरूप प्रपंचते अतीत नाम भिन्न है कोई कर्तव्यसे तुझे अतीत नहीं होना जैसे आकाश सर्व पदार्थोंमें स्थितभी सभसे निर्लेप है यही आकाशका अतीतपनाहै जो अतीतका अर्थ पूर्वोक्त अर्थते भिन्न करैंगे तो आकाशके दृष्टांतसे नहीं वन सक्ता काहेते पदार्थ आकाशसे जुदे नहीं रहसक्ते अरु आकाशभी पदार्थोंते जुदा नहीं रहिसक्ता तैसे तू चैतन्य देव सर्व आकाशादिक नामरूप दृश्य जड़ पदार्थोंका सिद्धकर्ता नियंताभी दृश्यके अंतर वाहर पूर्णभी असंग निर्विकार निर्लेप है इसीते तू चैतन्यही दृश्यते परम अतीतहै चैतनवत् आकाश अतीत नहीं जो तू आपको चैतन्य नहीं माने किंतु आपको दृश्य माने तो दृश्य दृश्यतेभी अतीत नहीं होसक्ती दृष्टाही दृश्यते अतीत होताहै मैत्रेयने कहा मुझको योग वतावो जो सिद्ध होवों अरु वहुत कालजीवों मृत्यु नहीं होवे पराशरने कहा योग वहीहै जिसमें जीवना मरना दोनो नहीं नहींतो अयोगहै हेमैत्रेय तू अतीत होनेकी इच्छा करीहै ताते तू धन्यहै काहेते मनुष्य जन्म दुर्लभहै जो मनुष्य शरीरमें भजन नहीं करेगा तो पछतावा होगा मैं यही चाहता हों सर्व देहादिकोंते अतीत नाम आपको

43

भिन्न जान मैत्रेयने कहा सर्व कर्मोंका त्याग कर अतीत होताहों परंतु कर्मसे कर्मका त्याग नहीं होता काहेते मुझ चैतन्यते भिन्न कर्ता कर्म क्रिया रूप जगत् सर्व कर्म रूपहीहैं पराशरने कहा यह जो तैंने चिंतवना करी जो मैं सर्व कर्मोंका त्याग करों तिस त्यागकाभी त्याग कर यही कर्मसे कर्मका नाशहै जैसे लोहेसे लोहा कटताहै जैसे मैलसे मैल दूर करताहै तैसेही कर्मसेही कर्म काटा जाताहै चैतन्य रूप अकर्मसे कर्मरूप प्रपंच कटता नहीं उलटा अकर्मरूप चैतन्यसे कर्म रूप जगत्की सिद्धि होती है जो मन वाणी का विषयहै सो कर्महै जो मन वाणीका अविषयहै सो अकर्महै ऐसा चैतन्य आत्माहीहै अन्य नहीं ताते गृहण त्यागादि सर्व कर्मही हैं जब सर्व चाहना मिट गई शरीर रहा तो क्या अरु नहीं रहा तो क्या शरीर तो अकर्म नहीं हो सक्ता ताते तू कर्म रूप शरीर ते आपको अकर्म रूप आत्मा जान जो ठीक ठीक अतीत होवे नहीं तो इन अतीतोंसे किसीका भेषलेके अतीत हो जावो जब अतीत हुआ तब अहंकार तुझको जलावेगा तब सुख कैसे पावेगा मैत्रेयने कहा मैं क्या करों तुम ऐसा कछु कहते हो जिसमें मनवाणीकी गम नहीं पराशरने कहा कर्तव्यको त्याग अतीत हो मैत्रेयने कहा अतीतका धर्म कहो पराशरने कहा सूक्ष्म स्थूल अहंकारते रहित होना यही अतीतका धर्महै इसते अधिक मैं पंडित नहीं हों जो कहों जब स्त्री आदिक संबंधियोंको त्यागताहै तब सूक्ष्म अहंकारमें बंध हुआ आपको त्यागी मानताहै अरु गोविंदके ऊपर उपकार अपना मानताहै अरु बर शाप मैं जिसको देवों उसको होताहै मुझको परमतपस्वी सर्वलोग जानते हैं मैं यह देह त्यागके उत्तम लोकोंको पावोंगा हे मैत्रेय ऐसा अतीत होनेकी तेरी इच्छाहै तो भली बात है परंतु मैं जानताहों कि तैंने सारी आयु इसी पांडितादि दुनियाके काममे बिताईहै हे मैत्रेय इन सर्व अतीतोंमें कोई सम्यक् अतीतहै बहुते तो अनात्माहंकारमे बंधहैं बंध मोक्षते रहित निर्विकार आत्माते दूरि पड़ेहैं ताते सर्व देह इंद्रियादि संघातकी चेष्टा होते हुये भी आपको निर्विकार निर्विकल्प आत्मा अतीत जान पुनः तिस अहंकारके त्यागभी त्याग कर जो सम्यक् अतीत होवें मैत्रेयने कहा संसारते कैसे छूटों पराशरने कहा गोविंद गोविंद कहो संसार कहा है संसारका तैंने नाम सुन राखाहै सं-

सारका स्वरूप विचारा नहीं विचारे विना संसार भासताहै जैसे विचारे विना घट भासताहै नहीं तो मृत्तिका है तैसेही अस्ति भाति प्रिय रूप आत्माही है घट पटादि संसार कहां है मैत्रेयने कहा इसका कर्तव्य क्याहै पराशरने कहा हे मैत्रेय घटके कर्तव्यसे घट मृत्तिका रूप नहीं किंतु स्वतःही मृत्तिका रूपहै परंतु न विचारेसे घट भासताहै विचारेसे मृत्तिका भासती है तैसे स्वरूपकी प्राप्तिमें अरु भ्रमकी निवृत्तिमें विचारही कर्तव्यहै अन्य यज्ञादि साधन नहीं मैत्रेयने कहा जब सर्व गोविंद मैं कहों तब तुम क्या प्रसन्न होवोगे पराशरने कहा कहनेसे कछु सिद्ध नहीं होता जबतक स्वरूप निश्चय न करें जैसे भूख विनाखाये रोटीके कहनेसे दूर नहीं होती हे मैत्रेय अपने सच्चिदानंद स्वरूप आत्मासे पृथक् भगवान परमेश्वर नारायण गोविंद अल्ला खुदा शिव विष्णु ब्रह्म ईश्वरादि असत जड़ दुःख रूप भ्रम मात्रहैं ताते अपने सच्चिदानंद स्वरूपको अहंरूप करके जान अरु भगवान रसनासे मत कहो संतभी वहीहैं जो सर्व नामरूप दृश्यसे श्रेष्ठ निजस्वरूप आत्माको जानतेहैं नहीं तो असंतहैं हे मैत्रेय अब प्रह्लाद चरित्र सुन शुक्राचार्य्य अपना जीव छुड़ायके निकस गया यह प्रसंग सुनकर हिरण्यकशिपु पुत्रको बुलायकर कहा तेरे पास क्या शक्तिहै जो किसी उपायसे भी तू मरता नहीं यह मंत्र कहांसे सीखाहै प्रह्लाद पिताके चरण चूंमकर कहाकि हे पिता मैं मंत्र यंत्रादि कछु जानता नहीं परंतु आप सहित सर्व विष्णुको सम जानताहों यही मंत्रहै हिरण्यकशिपुने कहा अपने आत्माको त्यागकर औरनको शिरपर रखताहै सो बुद्धिकी मंदताहै इससे आप सहित सर्व आपको जान जो तीन तापते छूटे प्रह्लादने कहा सर्व संसारका सार विष्णु आत्माहै जिसने सारको गृहण किया है तिसको असार झूंठ संसार क्या दुःख दे सक्ताहै यह वचन सुनकर राजा अति क्रोध कर्ताभया एक पर्वत सौ योजन पृथिवीते ऊंचा था योजन नाम चार हाथकाहै हुकुम दियाकि तिस पर्वतसे इसको गेरो राक्षसोंने ऐसाही किया प्रह्लाद जाने था सर्व व्यापक विष्णु आत्माही है इस विचारते तिसको कुछु भ्रम न भया बहुरि तिसते भी ऊंचे पर्वतसे गेरा पर केशवने हाथोंपर लेलिया यह दृढ उपासनाका फल है विष्णुने प्रह्लादको कहा जो तेरी इच्छा होय सो मांग प्रह्लादने कहा वह सेवक नहीं जो अपने स्वामीते कछु मांगे जो पिताका नाश मांगो तो मुझको लज्जाहै

काहेते स्थावर जंगम तूहीहै हिरण्यकशिपु कहां है वहाँ हिरण्यकशिपु होकर कहताहै विष्णुमत कहो यहां कहताहै सर्व विष्णुहीहै ताते यही तुझते मांगता हों कि तुझविना और कछु न जानों जो तू कहै मेरा तेरे ऊपर उपकारहै जो तेरी मैंने अनेक उपद्रवोंते रक्षा करीहै सो नहीं काहेते जब सर्व उपकारक उपकार्य तूही है तो उपकार तेरा किसपरहै विष्णुने देखाकि प्रह्लाद अचाहहै आज्ञाकरी नेत्रमूंद प्रह्लाद नेत्र मूंदकर पुनःदेखा तो पिताके पास खड़ाहै पिता देखकर आश्चर्यमान भया अरु क्रोधित होकर सामर राक्षससे कहा कि यह बालक किसी उपायसे मर्ता नहीं काहेते भजन मायाका कर्ता है तुझको चाहिये कि इसको मंत्रोंसे वा किसी अन्य उपायसे नाश कर तब सामर दैत्यने सहस्रों उपाय किये कि बालकको मारों पर नमारसका काहेते मंत्र अरु मंत्र पठन कर्त्ता अरु मंत्र कर मारने योग्य सर्व विष्णु आत्माही है विष्णु विष्णुको तो नहीं मार्ता यह दृढ़ निश्चय देखकर विष्णु सुदर्शनचक्र अभिमानी देवताको आज्ञा करी कि प्रह्लादकी सर्व प्रकार रक्षाकर अरु सामरका शीशकाट सुदर्शनचक्रने ऐसाही किया राजा यह चरित्र देखकर विस्मय भया चित्रकी मूर्तिकी न्याईं शून्यसा होगया हुकुम करा मेरे निकट ते इसको दूरकरो सारांश यह कि ऐसेही अनेक मार्नेके उपाय किये पर प्रह्लादका रोम मात्रभी न उखड़ा पुनः राजाने प्रह्लादके केश पकड़कर बहुत शासना करी पर प्रह्लाद अपनी प्रतीत ते न चलायमान भया राजाके हाथमे एक गदाथी सो प्रह्लादको मारी सो गदा सहस्र खंड होगई गुरूने कहा हे राजन् एती शासना तैंने करी पर कछु इसको विघ्न न भया जैसे का तैसेही रहा इसने आप सहित कोई पूर्ण वस्तु जानी है इसकी रक्षा करे है ताते इसकी शासनाका त्याग करो राजाने कहा जबलग शत्रुके निश्चयका त्याग न करे तबतक इसके नाशके उद्यमका त्याग न करोंगा काहेते त्रिलोकीका स्वामी मैं हों मुझ आत्मा विना इसने किसको देखाहै जो विष्णु कहताहै जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तथा स्थूल सूक्ष्म कारण समष्टी व्यष्टी सहित सर्व जगत् तुझ आत्माते भयाहै मुझ आत्माते भिन्न कौन अनात्म घटवत् विष्णु है जिसका यह नाम लेता है अपरोक्ष अपने आत्माको त्यागकर परोक्षको जानाहै ताते हेप्रह्लाद माया रूप परोक्षका विष्णुका त्यागकर अपने

आत्माको जान अरु गुरूका उपदेश कहो प्रह्लादने कहा जितना गुरूने उपदेश कियाहै धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सर्व रूप अरूपते परे उरे जनार्दन विष्णुहै यह परमार्थ मैंने जानाहै जो सर्व वही है तो चार पदार्थों सों क्या प्रयोजनहै हे पिताजी आपभी निश्चय यही करो जो न मैं हों न तू है न यह जगत् है एक विष्णु अद्वितीय आत्माही है विष्णु भिन्न अविद्याहै तिसको त्याग आपसहित सर्व विष्णु है इस विद्या में लीन हो पंचभूतक शरीरको मिथ्याजान राजाने कहा हे मूर्ख जब सर्व आत्माहै तो विद्या अविद्या शरीर अशरीर त्याग ग्रहण परमार्थ अपरमार्थ विष्णु अविष्णु प्रह्लाद हिरण्यकशिपु कहां है परंतु राज्य त्रिलोकी काले आप भिन्न निश्चयका त्याग कर आपको जान प्रह्लादने कहा राज्य लोभते उस निश्चयको त्यागों तो लज्जाका कामहै काहेते राज्य सहित सर्व संसार अनित्य है अरु मैंने नित्यको जा- नाहै हे पिता स्थावर जंगम सर्व विष्णु आत्माहै सम निर्वाण चैतन्य अनंतहै यह सर्व तिसते भयाहै तिसी में लीन होताहै मध्यमें भी वही रूप जलतरंगवत् है जिसने ऐसा जाना है सो भगवत रूपहै पराशरने कहा हे मैत्रेये तैंने मुझ पै कभीभी न कहाकि आपसहित सर्व भगवान है मैत्रे यने कहा प्रह्लाद रसनासों कहताथा मुख नहीं राखताथा काहेते पिताको भिन्न जानना अरु कहना सर्व भगवान है यह संतोंका मार्ग नहीं है हे गुरो जो कहो मैंही सर्वरूपहों तो क्या कहेनेते आगे नथा जो अब कहों जैसे जल जाने जो सर्व तरंगादिक मैंही हों वा तरंगादिक जाने मैं जल हों सो कहन मात्रहै काहेते तरंगहैं नहीं जलहीहै तैसे यह नाम रूप अस्ति भाति प्रिय रूप आत्माही है तिसते भिन्न अत्यंताभावहै यह बात स्वतः सिद्धहै कहनेते नहीं पराशरने कहा हे मैत्रेय तू परमहंस दृष्टि आता है मैत्रेयने कहा दृष्ट अदृष्टसे अगो- चर मुझ चैतन्य अरूपका कोई दृष्टानहीं तुमको मैं कैसे परमहंस दृष्टि आया पर कथा कहो प्रह्लादने कहा हे पिता जो कछु दृष्ट मान है सो एक अनंत विष्णु जान इस निश्चयते वही रूप होवेगा राजा यह वचन सुनकर चौकीते उठा चाहा प्रह्लादको अबहीं नाश करों जैसे रुद्रको महाप्रलय विषे संसारके नाशकी इच्छाहोती है राक्षसोंसे कहा प्रह्लादके हाथ पांउ बांधके समुद्रमें डालो यह अभागा माया विषे लीन है मैंने इसके नाश विषे बहुत ढील करीथी जो इस चाहको त्यागे परंतु इसको मृत्युने घेराहै राक्षसोंने

ऐसेही किया पराशरने कहा हे मैत्रेय तुमको यह अवस्था प्राप्तहोवे तो क्याकहैं अरु क्या करें मैत्रेयने कहा गोविंदके भजनमें दुःखहोय तो मैं तिसका नामभी रसनापर नल्यावों पराशरने कहा हे मूर्ख चाहे मैं मित्रको पावों अरु आपा वीच राखेंअरु दुःखते भयमाने तो मित्रका मिलना कठिन है जो आपको नाशकर्त्ता है वही निश्चय मित्रको पाताहै विष्णु प्रह्लादकी परीक्षा करेथा चल है वा अचलहै हे मैत्रेय इसी पर एक इतिहास सुन एक ऋषिकी स्त्रीसे मेरी प्रीतिथी मैत्रेयने कहा पूर्व तुमने आपही कहाहै जो पराई स्त्रीसों प्रीतिकर्त्ताहै सो नरकको जाताहै अब कहते हो ऋषिकी स्त्रीसों मेरी प्रीतिथी पूर्व तुम्हारे कथन उत्तर का विरोधभया पराशरने कहा साँचहै हे मैत्रेय ब्रह्माकार वृत्ति रूप स्वस्त्रीते भिन्न दृष्टि पर स्त्रीके समान है वा स्व स्वरूपदृष्टिते भिन्न दृष्टि पर स्त्री स्वरूप है परन्तु इस वह्माकार वृत्तिसे नवीन ज्ञानी अत्यंत प्रीति रखताहै तिस वृत्तिके निरोध कर्नेवाले काम क्रोधादिक अनेक पदार्थ हैं तिनको तथा त्रिपुटी रूप सर्व जगत्को अंतःकर्णकी ज्ञानमात्र वृत्ति रूपही नवीन ज्ञानी जानताहै काहेते जवलग पदार्थोंका वृत्ति रूप ज्ञानहै तवलगही पदार्थ हैं अन्यकाल में नहीं इसीते ब्रह्माकर वृत्तिसे ही नवीन ज्ञानी सुखमानके प्रीति कर्ताहै मुझ अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठा न जगत् विध्वंसक दृश्यप्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्षसाक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंदको ब्रह्माकार वृत्ति अब्रह्माकार वृत्ति तुल्य है ताते पर अपर मेरी दृष्टी में नहीं काहेते शरीर अभिमान मुझको नहीं आपसों आपहों जो जीवहै तिनको कालते तथा ईश्वरते तथा धर्मरायते तथा शास्त्रते भयहोताहै मन चंद्रमा बुद्धि ब्रह्मा चित्त विष्णु अहंकार रूद्र तात्पर्य्य यह चक्षु मनादिक अध्यात्म इंद्रिय अरु मन चक्षु आदिक इंद्रियोंके सूर्य्य चंद्रमादिक देवता अरु मन चक्षु आदिक इंद्रियोंके अधिभूतरूप संकल्पादिक विषय इन त्रिपुटियोंको मैंने उत्पन्न कियाहै मुझ चैतन्यको किसीने नहीं किया ताते मुझको किसीका कंप नहीं काहेते मुझ चैतन्यते कोई विशेष नहीं हे मैत्रेय तिस स्त्री के दर्शन वास्ते सदा जाताथा एक दिन तिसके देखनेको अर्द्धरात्रिमें मुझको इच्छा हुई स्वस्थान ते चला रात्रि अंधेरीथी अरु वर्षा वरसेथी पर प्रेमका मित्र मेरे साथ अगवानी हुआ मार्गके मध्य सर्पने मेरे पगको लिपटा मैंने जाना कि मुझे मित्रने घेराहै उस सर्पको

मैंने कंठ लगाया जाना कि प्रीतमहै मैंने उससे कहा ऐसी निशिकारी विषे तेरे निमित्त चलाहों मुझको अपने गृहमें लेचल पर हे मैत्रेय गृह प्रीतमका गंगाके पारले तीर परथा गंगा चातुर मासमें समुद्रकी न्याईं तरंग मारेथी प्रीतमकी प्रीति विषे गंगा गोपदकी न्याईं प्रतीतहुई तिस सर्पकी नावका करि पारगया जब तीरपर पहुँचा तो देखा ऋषीश्वर मुनीश्वर बैठे तपस्या कर्त्ते हैं तिनोने पूछा तू कौनहै मैंने कहा अमुकऋषिकी स्त्री हों तिनोने कहा अर्द्धरात्रिमें तू कहांगईथी अरु कैसे यहां आई मैंने कहा ऋषिकी स्त्रीके पास गईथी अरु तिसी के पासते उठकर आई हों उन्होंने आपस में कहा यह स्त्री नहीं कोई जादूगरहै पुनः तिन्होने कहा अब तेरी इच्छा कहाँ जाने कीहै मैंने कहा ऋषिकी स्त्रीके पास जाती हों सब विक्षेपमें आये मुझको लातों मुष्टी से भली प्रकारमारा पर मुझको वह शासना पुष्प समानथी काहेते तिस समय मैं पराशर न था जब तिन्होंने भलीप्रकार शोध करा तो जाना कि वशिष्ठका पुत्र पराशर है कहने लगे ऐसे पिताका पुत्रहोके ऐसे कैसे भया मैंने कहा न कोऊ मेरा पिता अरु न मैं किसीकापुत्र हों मैं स्वयंरूप हों जो हों तो मैं चैतन्य सर्व दृश्यका पिता नाम कारण अधिष्ठान स्वप्नदृष्टावत् हों वस्तुते कारण कार्यते रहित हों कार्य कारण भाव भी मैंही हौं मैं चैतन्य दृश्यते अतीत हों तिन्होंने जाना पराशर नहीं कोई चलित्र है पुनः तिन्होंने और शासना करी शरीरमें जखम हुये पर मैंने कछु न जाना तिस समय प्रीतम भी आन पहुँचा अरु मैंने उसको देखा पूर्व शासनाकी अग्निते शांतभया तथा वियोगकी अग्निते भी शांत भया स्त्रीने कहा तेरी क्या अवस्था है मैंने कहा मूलते मैं कछु नहीं जो है सो तूहीहै शरीरका त्याग करोंगा पर तेरी प्रीति त्याग न करोंगा उसने कहा जब शरीर न होयगा तो मुझको क्या करेगा मैंने कहा तेरे मन विषे निवास करोंगा उसने कहा अबभी तू मेरे मनविषे साक्षी रूपकर बसरहा है फेर क्या बसेगा हे मैत्रेय तिसकी मेरी मूर्ति दोथी पर मन एकही था पर तैंने ऐसे कभी प्रीतिरूप निश्चय न करा मैत्रेयने कहा प्रीति अप्रीति करना मुझ चैतन्यका धर्म नहीं मैं समहों यह धर्म मनका है जहां द्वेष है तहां प्रीतिभी होगी मैं चैतन्य एक रसहों पर कथा प्रह्लादकी कहो पराशरने कहा जब प्रह्लादको बांध समुद्रमें डाला तो समुद्र कंपायमानभया प्रह्लादको हरिभक्त जानके किंचित् भी दुःख न होने

दिया कमल पत्रवत् रहा राक्षसोंने यह अवस्था देखकर राजा पै जाकर साराहाल कहा राजाने कहा तिसको शिलाका प्रहार करो जो डू-
बजाय तिन मूर्खोंने वैसेही किया पर तिस समय प्रह्लाद गोविंदकी स्तुति करेथा हे व्यापक चैतन्य आत्मा ब्रह्मा विष्णु रुद्ररूप होकर
जगत्की उत्पत्ति पालना संहार तूही कर्ता है अरु सर्व रूपभी तूही है सर्वते अतीतभी तूही है जिसने तुझको ज्ञान नेत्रते नहीं देखा
सो पूजा अवतारोंकी कर्ते हैं इसीते परमार्थको नहीं पहुँचते सारांश यहकि विष्णु होकर विष्णुकी पूजा करके आपसहित सर्व विष्णु
सम्यक् जाने काहेते जो सर्व विष्णु है तो मैंभी विष्णुही हों गुप्त प्रगट सर्व मैंहो हों अरु आत्मा परमात्मा मुझहीको कहते हैं मैं चै-
तन्य विष्णु आत्मा पूर्ण सर्वमें समहों हे मैत्रेय इस प्रकार प्रह्लाद विष्णुकी स्तुतिसे विष्णुसों मिलगया मैत्रेयने कहा जिसने विष्णुकी
स्तुति करी तो विष्णुसों मिला जिसने नहीं करी सो नहीं मिला तो मिलना न मिलना खुशामद रूप स्तुतिके अधीन है स्वतः नहीं
ताते मैं इस मिलनेकी इच्छा नहीं राखता काहेते जब स्तुति नहीं करोंगा तो विष्णु चैतन्य ते विछोहा होगा पुनः स्तुति
करोंगा पुनः मिलोंगा इस पंचायत सों मुझको क्या लाभ है हे पराशर जो जुदा मिलापवाले पदार्थ हैं सो सर्व अनित्य हैं जैसे
घटाकाश सदैव महाकाश रूप है तैसे मैं प्रत्यक् चैतन्य आत्मा सदैव ब्रह्मरूप हों कभीभी जुदा मिलतानहीं पराशरने कहा
हे मूर्ख मिलना यहीहै जो गोविंदको अपना आत्मा जानना मैत्रेयने कहा जाना तो मिला नहीं तो भिन्न हुआ; क्यों कहते हो जो
सर्वआत्मा निर्विकल्प है तो जानना अरु न जानना क्या पराशरने कहा मैं नहीं जानता कि कौनहों पर ज्ञानशक्ति ईश्वरकी
है अज्ञानशक्ति जीवकी है दोनो कहन मात्र हैं कहां ज्ञान अरु कहां अज्ञान है जोहै सो निजरूप है जब तत्त्वप्रतीतभया तब ज्ञान
अज्ञान दोनो नाश भये जैसे प्रज्वलित अग्नि गीले सूखे काष्ठ दोनोको जलावती है ताते प्रह्लाद जीव ईश्वर जगत्ते उल्लंघकर
मूल अपनेको पहुँचाथा जहांकहाँ देखताथा विष्णु रूप अपने आत्माको ही देखता था हे मैत्रेय कहो तू स्तुति गोविंदकी कैसे कर्ता
है मैत्रेयने कहा स्तुति तब होतीहै जब निंदा होय मैं चैतन्य द्वैत नहीं देखता स्तुति निंदा क्या कहों जब प्रह्लादकी न्याईं मुझकोभी

दुःख होयगा तब स्तुति करोंगा पराशरने कहा तेरी क्या शक्ति है जो दुःखविषे एक सरीखा रहे तू आपदाकालमें क्लेश काही भजन करै अब मैं तेरा नाशकर्ताहों संसारमें ऐसा कोई दृष्टि नहीं आता जो तुझको मुझते छुड़ावे अरु हिरण्यकशिपु भगवानकी निंदाकर्ता था अरु प्रह्लाद स्तुति कर्ताथा तब भगवान हिरण्यकशिपुको मारा प्रह्लादको छुड़ाया अरु मैं निंदा स्तुति किसीकी नहीं कर्ता जो तुझको छुड़ावेगा अरु मुझको मारेगा ताते तुमको अवही भस्म करोंहों मैत्रेयने कहा मैं मैत्रेय कहा हों तूहींहै आपको आप भस्मकर अरु खाउ पराशरने कहा मैं राक्षस नहीं जो तुमको खावों परंतु अस्ति भाति प्रिय रूप निजात्मा ते पृथक् नामरूप असत जड़ दुःख दृश्यको मैंने खायाहै जो तूभी सच्चिदानंद आत्माते भिन्न भ्रममात्र दृश्य वनेगा तो तुझको मैं विवेक रूप राक्षस खाऊंगा पर गोविंदको चिंतन कर हे मैत्रेय जब प्रह्लादने ऐसी स्तुति करी तब विष्णु गरुडपर आरूढ़ आवत भया प्रह्लाद दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार कर स्तुति करने लगा हे पूर्ण आत्मा तुम्हारा दर्शन मुझको अमृत समान है जेता नेत्रोंसे देखता हों तेता अघावतानहीं विष्णुने कहा जो तेरी इच्छा हो सो वरमांग प्रह्लादने कहा वर यहीहै आप सहित सर्व तुझहीको देखों जैसे विषयी विषयोंसों प्रीति कर्ता है तैसे तुझमें मुझकी प्रीति वनी रहै हे प्रभो पिता मेरे जो द्वैत दृढ कियाहै तिसकी निवृत्ति करो अरु तुझहीको सर्व रूप जाने विष्णुने कहा प्रतिवंध अज्ञानका उसके हृदयते उठाहै तिसको अपने विषे शीघ्रही लीन करोंगा अरु तुझको निर्वाणपददिया प्रह्लादने कहा जो मेरेपर कृपा आपनेकीहै तो पिता मेरा मत मारियो उलटा तुझ साथ प्रेमकरे आप सहित सर्व तुझहीको जाने न अन्यको जो पूछो तू कौनहै तोमैं ब्रह्मात्मा स्वरूपहों विष्णुने कहा अंतर वाहर ते एक मन होकर कहो प्रह्लादने कहा तुम्हारे हमारे अरु सर्व जगत् विषे अंतर वाहर विभाग रहित एक आत्मा पूर्णहै विष्णुने कहा तुझको जो यह दृढ निश्चय भयाहै तो पिताने जो तुझको एता दुःख दियाहै तिसका उपाय क्यों नहीं कर सक्ता प्रह्लादने कहा सत्व, रज, तम रूप मायाको आश्रयकरके जगत्की उत्पत्ति पालना संहार धर्म तेराहै मैं चैतन्य मात्र निर्गुण अवाच पदहों विष्णुने कहा जब मेरे पास आताहै तो कहताहै मैं ब्रह्मात्मा रूपहों जब पिताके निकट जाताहै अरु तुझको दुः

ख देताहै तव कहताहै सर्व विष्णुहै यह क्या वातहै प्रह्लादने कहा सहन दुःखकी तुझकोही योग्यहै कि कष्टके समय तुमको चिंतन करना विष्णुने कहा तू मेरा भक्त भलाहै जो शासनाके समय मुझको आगे राखताहै हे प्रह्लाद पिता तेराभी तुझको आत्म उपदेश कर्त्ता है तू क्यो नहीं मानता प्रह्लादने कहा तेरे अरु शास्त्रोंकी मर्यादा रखने वास्ते तथा उपासनाकी वड़ाई तथा भक्तिके निश्चय दृढकी रीतिदिखलाने वास्ते तथा भक्त जनोंका तुझमें निश्चय प्रेमकी रीति तथा भक्त जनोपर तुझकी सहायता निःसंदेहताकी इत्यादिरीति दिखलाने वास्ते पूर्वोक्त वातहै विष्णुने कहा कछुमांग प्रह्लादने कहा देना धर्मईश्वरकाहै लेना धर्म जीवकाहै मैं चैतन्य इन दोनोंपदोंते मुक्तहों ताते तुझते क्या मांगों अरु तू क्या देवे विष्णु देखा जो अचाहहै निरतिशय स्वरूपको प्राप्त भयाहै हे प्रह्लाद अग्नि जल भूमि आदिक देवतोंको मैं आज्ञाकारी हे जो तुम प्रह्लादकी रक्षाकरो प्रह्लादने कहा मुझ चैतन्यकी रक्षा कौन करे उलटा मैं चैतन्य सर्व कल्पित पदार्थोंको सत्ता स्फूर्ति देकर रक्षानाम स्फुर्ण कर्त्ताहों विष्णुने कहा अंतर्ध्यानहोताहों अपने वांछितस्थानको जाताहों प्रह्लादने कहा इस निमित्त भजन अवतारोंका नहींकर्ताहों काहेते कभी दृष्ट कभी अदृष्ट होतेहैं इसते आगे आत्माते भिन्न जो सदा अपरोक्षहै निश्चय न करोंगा पर आये हो तो कछुतो आत्मनिरूपण करो विष्णुने कहा तुझको आत्मधर्मसों क्या प्रयोजनहै प्रह्लादने कहा आत्मा मैंहों मुझको प्रयोजन नहींतो किसकोहै विष्णु अपने स्थानको गया प्रह्लाद जलते निकसकर पितापै आया तव राजा आश्चर्य मान भया जो यह जलतेभी जीवता निकसा तव क्रोधकर दोनों हाथवांधे अरु मुखपर ऐसी चपेट लगाई कि प्रह्लाद विशुद्ध भया कहा हे अभाग तू आप आत्मस्वरूपहै विष्णुको अपने ऊपर राखताहै विष्णु आदि जगत् तुझते प्रगट भयाहै जैसे स्वप्नके ब्रह्मा, विष्णु महेश आदि जगत् स्वप्नद्रष्टा ते प्रगट होतहैं अपने अमायक स्वरूपको त्याग कर माया विषे क्यों लीनहोताहै तुमको विपर्यय जानने विषे लज्जा नहीं आती प्रह्लादने कहा हे पिता आचिंत आत्मा विष्णुको कहतेहैं न औरको राजाने कहा जलविषे तू विष्णुको कहताथाकि मैंही सच्चिदानंद रूप आत्माहों अव विष्णु कहताहै आपते भिन्न द्वैतको स्थापन करना क्या योग्यहै हे

पुत्र जो सर्वविष्णु होता तो सर्व चतुर्भुज मूर्त्ति जन्मते ऐसे नहीं दीखता जो कहें सर्व पंचभूत रूप जगत् है तो भी ठीकहै
काहेते विचारें तब सर्व पदार्थ मायाका कार्य पंचभूतरूपहैं यह दृष्टी मायकहै हे पुत्र तू अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते पृथक्
विष्णु सहित सर्व नाम रूप जगत् है ही नहीं अरु नाम रूप जगत्भी तूही आत्माहै तिसते रहित भी तू ही आत्मा है हेपुत्र मन वाणीके
वाचते तू चैतन्य आत्मा अगोचरहै ऐसा होकर आपको मायारूप मानताहै सो लज्जाका कारणहै है प्रह्लादने कहा हे पिता जब मैं
विष्णु सों संवाद कर्ताथा तब तू कहांथा हिरण्यकशिपुने कहा तू अरु विष्णु अरु संवाद तीनो मैं चैतन्य आत्माहीथा काहेते मुझको
पूर्ण होने ते हे प्रह्लाद आत्मा विना ध्यान मतकर न सुन न कहो जो तूही आत्माहै तो विष्णुको क्यों अरोपताहै प्रह्लादने कहा
ऐसे न करों तो भगवान अरु संतको कौनजाने प्रयोजन मेरे कहनेका यही है जो इस पदका नाश नहोय हे पिता तू मैं जगत् सर्व परमा
त्माहै हिरण्यकशिपुने कहा हे पुत्र आत्मा परमात्मा तैंने सुनकर मनमें कल्पित सिद्ध किये हैं जब तू मेटेगा तब मिट जावेंगे जो तू नहीं
प्रथम होवे तो आत्मा परमात्माको कैसे जानाजावे ताते जो कछु भावाभाव है वा सोतूही है तुझ अस्तित्व करके ही जीव ईशादिक पदार्थ
सिद्ध होतेहैं प्रह्लादने कहा हे पिता जो सर्व आत्माही है तो विष्णुभी अपना आत्माहै तो तू क्योंनहीं कहता मैं विष्णुहों राजाने कहा
मुझ सच्चिदानंद रूप आत्म दृष्टाते भिन्न सर्व विष्णु चतुर्भुज मूर्ति अमूर्ति आदि दृश्य वर्ग हैं मैं दृष्टा होकर दृश्य रूप कैसे होवों
कभीभी दृष्टा दृश्य रूप नहीं होता राजाने क्रोधकर कहा तेरा नाशकर्ता हों कहो तेरा नारायण कहां है प्रह्लादने कहा अब तक आपने
नहीं जाना जो एती शासना आपने मुझको करी है जिसने मेरी रक्षाकरी है सो नारायण है सो प्रगट है जहां प्रतीत करें तहांही प्रगट
है हिरण्यकशिपुने प्रह्लादके दोनों हाथ बांधके थंभसों लटकाया और खड्गनग्रकर कहा अब तेरी रक्षा करनेवाला नारायण कहांहै बता प्रह्लाद
ने कहा तुझमें मुझमें खड्गमें थंभमें वही है हिरण्यकशिपुने कहा जो प्रगट है तो क्यों नहीं निकसता ताते भ्रमरूप है प्रह्लादने कहा जो
सर्व वहीहै तो तू मैं थंभ भ्रममेंभी वही है जब यह वचन प्रह्लादने कहा तब थंभेते गंभीर शब्द होताभया हिरण्यकशिपुभी शब्द सुनकर

शब्द कर्ता भया प्रह्लादको कहा आज तेरा परमेश्वर प्रगटभया है देखों क्या होता है शरीरविनाशी है मुझ आकाशकी न्याई चैतन्य आत्माका नाश कोऊ कर नहीं सक्ता काहेते नाश अनाश ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि सर्व जगत् अपना स्वरूप होने ते अपने आत्म स्वरूपको कोईभी नाश नहीं करसक्ता यह आत्मविचार कर महातेजस्वी निर्भय होताभया प्रह्लादने कहा अभी कछु विगड़ा नहीं कहो सर्व विष्णु है राजाने कहा कामना मेरी पूर्ण भई जो दृष्ट आया है अब पीठ देनी काम शूरमें का नहीं प्रातःकाल में पूर्व दिशाते जैसे सूर्य उदय होता है तैसे नरसिंह भगवान थंभेसे प्रगट होतेभये अरु परस्पर वहुतकाल महान युद्ध किया दोनोंमें हारे कोई नहीं परंतु हिरण्यकशिपुके शरीरके भोग देनेवाला प्रारब्ध कर्म होचुकाथा इसते अंतमें विष्णुकी प्रबलता होती भई सूर्यके अंतरवाहर संध्यासमय पौरके वीच अपने पटोंपर तिसका शरीर रखके अपने नखोंसे तिसका उदर विदीर्ण किया देवतोंने पुष्पोंकी वर्षाकरी अरु स्तुति करी अरु प्रह्लादको प्रेराकि भगवान्का क्रोध शांत कराओ प्रह्लादने कहा हे बाजीगर यह कौतुक तैंने क्या किया हे नरसिंह भगवान प्रह्लादकों दोनो भुजामे लेकर रुधिरसे मुख भरे हुये ही प्रह्लादका माथा चूमनाकिया और आज्ञाकरी राज्यकर प्रह्लादने कहा इस राज्यसों मेरी चाहना नहीं मैं कैसे राज्यकरों विष्णुने कहा तथास्तु ऐसे कहते विष्णु अंतर्ध्यान भये पराशरने कहा हे मैत्रेय मैंने तुझको एता आत्मनिरूपण किया है तुझको क्या लाभ भया है तैंने एक कानसे सुनी दूसरे कानसे निकासडारी कहना मेरा अकार्थ भया मैत्रेयने कहा इस कथा श्रवणते जाना जो परमात्मा विना और कछु नहीं पराशरने कहा भयमान हो माया विष्णुकी बली है मैत्रेयने कहा जब सर्व गोविंद है तो माया तथा विष्णु तथा तू मैं बल छल जगत् गोविंद है पराशरने कहा मायाकी तथा कुसंगकी आश्चर्य रूपता सुन जब प्रह्लाद पिताकी ठौर राज्यपर बैठा तब शुक्राचार्यने कहा हे प्रह्लाद साँच कहो पिताके नाशवास्ते विष्णुको तैंने कहा था वा विष्णुने आपही मारा है प्रह्लादने कहा मैंने नहीं कहा उसने जो कछु किया है सो आपकिया है पिताके नाशकी मुझको इच्छा नहीं थी शुक्राचार्यने कहा तेरा जीवना मृत्युते भी बुरा है जब लग पिताका बदला वैरी सों न लेवे जो कछु खावे पीवे तुझको अ-

भक्ष है प्रह्लादने कहा किसकी शक्तिहै जो गोविंदसे समता करै शुक्राचार्यने कहा गोविंद कहां हैं तेरे निश्चय विषे प्रकाश कियाहै नहीं तो गोविंद चतुर्भुजविष्णु आत्माते क्या न्याराहै जो न्यारा होवेगा तो अनात्मा होगा धर्मशास्त्रमें लिखाहै पिताका बदला पुत्र लिये विना जो कछु कर्ताहै सो अयोग्यहै प्रह्लादने कहा प्रथम तुम कहते थे गोविंदका भजन कर अब कहते हो गोविंदको मार जब हिरण्य कशिपुको मारनेकी शक्ति नहीं भई तो मैं कैसे मारोंगा शुक्राचार्यने कहा वह अहंकार करता था तू आत्म शक्ति राखताहै हे मैत्रेय प्रह्लादको पिताने केती शासना करी पर निश्चयते न चलायमान भया अरु किंचित् मात्रको संग शुक्रका हुआ तो प्रह्लाद कहने लगा हे गुरो आज्ञा करो तो शक्तिराखो हों सभ राक्षसोंको आज्ञा करी कि विष्णुके मारनेवास्ते शस्त्र अस्त्र लेकरडेरा मैदान में करो पंच योजन नगरते बाहर उतरा विष्णु अंतर्यामीने विचारा कि प्रह्लाद सतबुद्धिको त्याग कर कुबुद्धि भयाहै पर क्या करे कु-संग ऐसाही है पर भक्तकी कुमति दूर करनी चाहिये नहीं तो विरदलजायमान होगा ऐसा विचार कर विष्णु वृद्ध ब्राह्मण कृशरूप होकर लकडी हाथमें लेकर कांपता कांपता आया लोगोंसे कहा यह धूम धाम किसकी है लोगोंने कहा प्रह्लादको विष्णुके साथ युद्ध करनेकी इच्छाहै आगे मत जाउ काहेते ब्राह्मण आगे मिले तो अशुभहै ब्राह्मणने कहा प्रह्लाद ब्राह्मणों पर दयालुहै लो-गोंने कहा आगेथा अब नहीं ब्राह्मणने कहा मुझको क्या भयहै बूढा हों शरीर आज काल नाश होनाही है उनोने कछु न कहा प्रह्लादके निकट ब्राह्मण गया प्रह्लादने कहा तू कौनहै किस कामको आयाहै ब्राह्मणने कहा तेरी शरण आयाहों ईश्वरके अन्यायते अति दुःखीहों जो सर्व कुल मेरा उसने नाश कियाहै मैंने सुना है कि तैंने भी ईश्वरके नाशकी इच्छा करीहै ताते तू धन्यहै पर यह बुद्धि तैंने गुरूते पाई है पर कहो उसकी ठौर कौनसी विचारी है जो मैंभी तुम्हारे संग जाय कर पिता माताका बदला लेवों प्रह्लादने कहा ठौर उसकी मैं नहीं जानता तब ब्राह्मण सुनकर हँसा अरु कहा जैसा मैं मूर्ख था तैसे तुझको देखा पर मैं तेरे बलकी प्रथम परीक्षा कर्ता हों यह लकड़ी मैं पृथिवीपर डालताहों इसको उठाकर मेरे हाथमें देवे तो मैं जानोंगा कि यहभी काम इससे होगा प्र-

ह्लादने कहा नीकी बात है ब्राह्मण लकड़ी पृथिवीपर डाली प्रह्लाद जेता आपमें बल था सो सभी लगाया पर उठाय न सका जाना जो विष्णुहै ब्राह्मणके चरणोंपर शीश राखा विनती करी मैं तुम्हारी शरण हों मेरा अपराध क्षमा करो विष्णुने कहा उलटा तू मुझपर क्षमा कर जो मेरे मारनेकी तैंने इच्छा करीहै प्रह्लाद कहा यह अपराध मेरा नहीं यह उपदेश शुक्र काहै विष्णुने कहा इसी ते गुरू देखकर करिये गुरु वही है जो ज्ञान विज्ञानसों पूर्ण होय प्रह्लादने कहा ऐसा गुरू कहाँ पाइये विष्णुने कहा एक संत आपते आप तेरे निकट आवेगा पर चाहना उसके चरणोंके धूरकी मनमें राखनी पराशरने कहा हे मैत्रेय ऐसे बुद्धिवान प्रह्लादको मायाने भ्रमाया था तू क्यों न भ्रमेगा मैत्रेयनेकहा हे गुरो भ्रमणा न भ्रमणा येभी मायाहै मैं अमाया रूप भ्रमण अभ्रमणरूप मायाका साक्षी हों मायाका कार्य भ्रमण अभ्रमण मनका धर्महै मुझ चैतन्यका नहीं मैं एक रस हों भ्रम अभ्रमकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते मुझ चैतन्यको यत्न नहीं ताते निष्क- र्तव्य हों पराशरने कहा हे मैत्रेय निष्कर्तव्य अरु सकर्तव्य कथन चिंतनभी मनका मननहै वास्तवते तू अवाच पदहै मैत्रेयने कहा प्रह्लादने भजन विषे क्या भेद किया था जो उसको माया लागी पराशरने कहा हेमैत्रेय प्रह्लाद आपको बड़ा मानता था यही मायाहै जहां मैं तू उठी तहां माया कहांहै मैत्रेयने कहा प्रह्लादको कौन संत मिले पराशरने कहा दत्त भगवान् आये नगर समीप एक स्वच्छस्था नमें सोरहा राक्षस तिसको देखकर कहा तू कौनहै दत्तने कहा मैं राक्षस हों तिनमें एक राक्षस प्रह्लादके निकट आया कहा एक प- रमहंस आया है तिसके वर्णाश्रमको हम नहीं जानते तुमको दर्शन करना योग्यहै प्रह्लाद सुनकर दत्तके निकट आया अरु दंडवत करी मनमें संका उपजी कि वर्णाश्रम इसका नहीं जानता पूजा कैसे करों तव पूँछा हे संत रूप तुम्हारा क्या है अरु तुम कौ नहो कहांसे आये हो कहां जावोगे संतने उत्तर न दिया बहुरि प्रश्नकिया तो भी उत्तर न दिया पुनः तीसरी वेर बोला कि मैंने सुनाथा कि प्रह्लाद परमहंस है पर देखा तो अभी माया मेंही पड़ाहै काहेते वर्णाश्रमका विचार करें तो स्थूल शरीरकेभी नहीं निकस सक्ते शरीर अतीत आत्माके कहांसे आवैंगे जो वर्णाश्रमकी कल्पना माने भी तो स्थूल शरीरके ही वर्णाश्रमहै शरीर ही मायाहै ताते शरीर

अभिमानी तू मायामें ही पड़ाहै प्रह्लादने कहा मैं मायाते अतीतहों संतने कहा मैं मायाते अतीतहों यह भी जानना मायारूप है पुनः संतने कहा यह भी माया है जो पूछता है तू कौनहै कहांसे आयाहै कहां जावोगे जब सर्वगोविंद है तो गोविंद कहाँसे आवे अरु कहां से जावे आकाशकी न्याई व्यापकहै आना जाना परिछिन्नमें होताहै हेप्रह्लाद देह अभिमान राक्षस स्वभावको त्याग अरु देहादि संघात ते भिन्न साक्षी आत्मामैं हों इस दैवी बुद्धिको धारण करो जो देव भावको प्राप्तहोवों प्रह्लादने कहा अब मैं क्याकरों संतने कहा वही कर जाते कर्ना कछु न पड़े प्रह्लादने कहा वह क्या वस्तु है संतने कहा सो तूही देह से भिन्न चैतन्य अक्रिय आत्माहै तुझमें कर्तव्यनहीं जैसे घटते भिन्न आकाश अक्रिय है हे प्रह्लाद जब सर्व गोविंद है तू मैं नहीं तब आना जाना कहां है परंतु पर अपरका वृथा अहंकार तैंने कियाहै सोई संगल अपने पगको पायाहै यह अहंकार ही बीज आवागवनका है जिसने इस संगल (जंजीर)को ज्ञानखड्ग सों काटा सो संसारते पार भया है हेप्रह्लाद नाम जो तैंने पूछेहै सो नामरूपतो भ्रम अहंकार है सर्व मन बुद्धि आदिकों का ज्ञाता प्रकाशक एकही मैं चैतन्य साक्षी आत्माहों मुझका ज्ञाता और कोई नहीं जो मुझको आने जानेको जाने ताते मैं स्वयंप्रकाशहों तैंने जो आपको शरीर माना है जब गिरेगा तब तीन प्रकार होवेंगे जले तो भस्म, खायतो विष्ठा, पडा रहेतो कृमि, ऐसी मलीन वस्तुको आपमानके अहंकार मानै है कि मैं राजा हों जैसे भंगी पाखानों का आपको राजामाने यही मायाहै यह अत्यंत मल मूत्र नरक रूप दृश्य रूप देह कहां तू शुद्ध चैतन्य द्रष्टा साक्षी आत्मा तुझको लज्जा नहींआती जो मल मूत्रको अपना स्वरूप मानताहै हे मूर्ख भंगी भी विष्ठाको अपना रूप नहीं मानते तूतो पंडित है देहाभिमानही सर्व दुःखोंका मूल है जब अहं-कार न रहा तब सर्व दुःख भी रुखसत होजाते हैं हे प्रह्लाद बाहरते कहै मैं शरीर नहीं भीतरसे शरीर भी मान राखे तो भलानहीं न वह ज्ञानीहै न वह योगीहै केवल दुःखका भागीहै ताते निश्चय जान शरीर कालका ग्रास है मैं इसकाल काभी कालरूप हूं ताते इसके सुख दुःखसे क्यों चिंतातुर होताहै अरु क्यों मोहकर्ता है हे प्रह्लाद तू पंचभूतों ते तथा शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध पंचविषय रूपतन्मात्रा

50

तथा दश इंद्रिय चतुष्टय अंतःकर्ण पंचप्राण तथा सात्विकी राजसी तामसी तीनगुण तथा इन सबोंका कारण माया सारांश यहकि कार्य कारण रूप प्रपंचते तू परेहै अरु शारीरक वाचिक मानसिक कर्मोंते तू चैतन्य मुक्तहै अरु तेरास्वरूप सच्चिदानंद रूपहै बुद्धि आदिक असत जड़ तेरा स्वरूप नहीं प्रह्लादने कहा तुम्हारे वास्ते शय्या ले आवों तो शयन करोगे अवधूतने कहा जो स्वभाविक प्रारब्ध करके प्राप्तहोवे तो हर्ष नहीं अरु कांटों पर शयन होय तो सोकनहीं हे प्रह्लाद छत्तीस प्रकारके भोजन मिलें तो खाता हूं नहींतो सूखे पत्तोंसे निर्वाह कर्ता हों अरु संतुष्टहों हर्ष सोक नहीं प्रह्लादने कहा राज्य करो अवधूतने कहा राजा प्रजा देश मेरी दृष्टिमें हैनहीं किंतु आपसहित यह सर्व वासुदेव जानताहूं इसीते स्वराजहों यह सर्वकल्पित नामरूप मेरी प्रजाहै जैसे स्वप्नमें सर्वनाम रूप स्वप्नद्रष्टाकी प्रजाहै स्वप्नद्रष्टा स्वराजहै हे प्रह्लाद यह कार्य्य कारण रूप जगत् मुझ चैतन्यकी प्रजाहै सत,रज,तम रूपमाया युक्त मुझ सच्चिदानंदते त्रिगुणात्मक शब्दगुण सहित आकाश उत्पत्ति होताभया आकाश संयुक्त मुझचैतन्य ते वायु वायु विशिष्ट मुझ चैतन्यते अग्नि अग्नि विशिष्ट मुझ चैतन्यते जल जल विशिष्ट मुझ चैतन्यते पृथिवी पृथिवी विशिष्ट मुझ चैतन्यते औषधी औषधी विशिष्ट मुझ चैतन्यते अन्न अन्न विशिष्ट मुझ चैतन्यते वीर्य वीर्य विशिष्ट मुझ चैतन्यते शरीर होतेभये सो शरीर समष्टि व्यष्टि भेदते दोप्रकारकाहै पुनः आकाशादिक पांचभूतोंके एक एक आकाशादिओंकी सात्विकी अंशते श्रोत्रादिक पंचज्ञानेंद्रिय उत्पन्न होती भई पुनः पंचभूतोंके सात्विक साँझी अंशते चतुष्टय अंतःकर्ण होताभया पुनः पंचभूतोंके राजसी अंशते वाक्यादिक पंचकर्मेंद्रिय उत्पन्न होतेभये पुनः पंचभूतोंके साझी राजसी अंशते प्राण पानादि पंचप्राण उत्पन्न होतेभये पुनःपंचभूतोंके तामसी अंशते काम क्रोधादिक पच्चीस प्रकृति उत्पन्न होती भई हे प्रह्लाद यह सब मेरी प्रजाहै मैं चैतन्य राजा एकही अपनी सत्तास्फूर्ति देकर पूर्वोक्त सर्वनाम रूप प्रजाकी पालना करताहों मुझको कोईभी पूर्वोक्त प्रजा पालनानहीं करसक्ती इसीते स्वराजहों जो तूभी स्वराज मेरी मुवाफिक हुआ चाहताहै तो देह अभिमानका त्यागकर आपको सच्चिदानंद जान आपको त्यागके भजन किसका करताहै तुझको लज्जानहीं आती खुद बादसाहहोकर भ्रमसे आपको भंगी मानताहै

तुझ चैतन्य विषे द्वैतका मार्गनहीं चाहे मैंभी वनारहों अरु रस भजन का पावों सो कठिनहै सच्चित आनंद स्वरूप तू गोविंदहै गोविंदके मिलनेकी चाहना कर्ताहै यही तेरेमें बंधनहै अपने आत्मस्वरूप में मिलना विछुडना नहीं ताते कैसे मिलेगा किंतु नहीं मिलेगा जैसे लड़का वगलमें ढंढोरा सहरमें सो यह भ्रमका काम है हे प्रह्लाद तू वर्ण आश्रमकी तलाशमें फिरता है तुझको वर्णाश्रमही मिलेगा निजस्वरूपको कैसे जानेगा गोविंदमें वर्णाश्रम है नहीं हे प्रह्लाद तेरी न्याई जो वर्णाश्रम राखता हो तिसको तू संत जानकर मिल में वर्णाश्रम नहीं राखता हौं हेप्रह्लाद तुझने तो मेरे चरणोंपर शीशराखा है सो शीशभी मांस चर्म है अरु मेरे चरणभी मांस चर्म हैं तेरे नमस्कारसे मुझको क्या लाभ है क्षुधा तृषादिक तथा हर्ष शोकादिक तथा शीतोष्णादिक कोई भी क्लेश दूर नहीं करता तथा न कोई सुख करता है ताते मुझको तेरी नमस्कारकी इच्छा नहीं परंतु तू निजस्वरूपको जान जो कर्तव्यते छूटे हे प्रह्लाद जो श्रोत्रादिक पंचज्ञानेंद्रियोंकर शब्द,स्पर्श, रूप, रस, गंध, जाने जातेहैं तथा जो मनकरके चिंतनमें आता है तथा वाणीकर जो कथनमें आता है तथा जो प्रत्यक्षादि षट् प्रमाणोंकर सिद्ध होता है सो तुम्हारा स्वरूप नहीं किंतु जिसकर यह सर्व सिद्ध होते हैं सो तुम्हारा स्वरूप है वेदोंके पढ़नेंसे भी स्वरूपकी प्राप्तिहोनी दुर्लभ है अरु बुद्धिकी चतुराईसे भी दुर्लभ है अरु वहुते श्रवणसे भी दुर्लभ है कृच्छ्र चांद्रायण व्रतों करकेभी तथा तीर्थाटनसे भी तथा जपादिक उपासनासेभी तथा अग्निहोत्रादि कर्मोंसेभी स्वरूपकी प्राप्ति दुर्लभहै अत्यंत आत्म स्वरूपके जाननेकी इच्छा पूर्वक श्रद्धा सहित सतसंगतसेही स्वरूपकी प्राप्ति होती है जब तुझको स्वरूप दर्शन होगा तब अंतर वाहरपना त्यागके आपही होवेगा हे प्रह्लाद यह तैंने अकार्थ माना है जो मैं वहुतकाल गोविंदका भजन किया है पर तुमको शांति न आई परंतु तेरे मनविषे कपट है गोविंदको कैसे पावे जिह्वासों नारायण कहना मनमें कामना संसारके सुखोंकी होनी यही कपट है हे सर्व नारायण अरु आपावीच राखना इस कपटको त्याग जो आपते आपहोवे संसार मार्गमें भी जो किसीसे प्रीति करता है जब लग भेद नहीं किया तबलगही प्रीति है जब आपसमें वीच भेद पड़ा प्रीति नहीं कपट है ताते अंतर वाहर सर्वका अंतर्यामी प्रका-

शक एकही सच्चिदानंद स्वरूप आत्मासेही प्रीतिकर बहुरि आपा भ्रमके अरोपणा भगवान कैसे प्रसन्न होगा किंतु पूछे आपा क्या है मैं प्रह्लाद जीवदास हौं नारायण हमारा स्वामी ईश्वर है परंतु विचार कर देख दास स्वामी कहां है एक रस चिद्घन देवही है निमकके डले वत् प्रह्लाद कहा है रूप सत्ताको कौन सिद्धकर्ता है संत कहा नहीं को हैने सिद्ध करा है है को कोई नहीं सिद्ध कर्ता है ही सर्वको सिद्ध कर्ता है इसीते है स्वयंप्रकाश है प्रह्लादने कहा यह पद कैसे जाननेमें आवे संतने कहा है शब्द अरुहै नही इन शब्दोंको और इन शब्दोंके अर्थको जिस अवाङ्मनसगोचर पदकर सिद्ध होतेहैं सो तू है तुझ अवाङ्मनसगोचर करकेही सर्व नामरूप प्रपंचकी सिद्धि होती है तू स्वयंप्रकाश है तुझको जाननेवाला कोई नहीं जैसे सूर्य्य करही अंधकार प्रकाश दोनों सिद्ध होतेहैं हे प्रह्लाद योग दोस्तीका है एक चीटीका मार्ग है दूसरा विहंगममार्ग है हठ योग चीटीमार्ग है विचारयोग विहंगम मार्ग है सो विचार योग पूर्व तुझको कहा है हठ योग हठियोंसे सीखले जैसे नटसे नट शरीरकी कसरतसीखे इसपर एक कथा सुन एक समय मैं हिमाचल पर्वतपर स्वभाविक विचरेथा अरु यह चिंतन करताथाकि सर्व शिव है शिवसे भिन्न कोई वस्तु है नहीं जब पर्वतकी शिखर(शरीर)पर पहुंचा तब देखा अनेक योगीश्वर बैठे योगाभ्यास कर्ते हैं जो पूछे योगीश्वर कौनथे सो सुन पंच महाभूत पचीस प्रकृति तथा तीनगुण अरु पंचज्ञानेंद्रिय पंचकर्मेन्द्रिय पं-चप्राण चतुष्टय अंतःकर्ण सारांश यहकि मन बुद्धि चित्त अहंकार अरु समष्टि स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति शब्द स्पर्श रूप रस गंधादि विषय तथा चक्षुआदि इंद्रियोंके सूर्य्यादि देवता तथा पूर्वोक्त इन सर्वका उपादान कारण माया अविद्या रूप अज्ञान है इत्यादि मनुष्य आकृतिको धारके योगाभ्यास करते थे तिन योगेश्वरोंके मध्यमें पंचज्ञानेंद्रिय अरु मन बुद्धि चित्त अहंकार किसी रीतिसे यह नवयोगीश्वर ज्ञानवान भी थे यद्यपि मुख्य ज्ञानरूप आत्माही है तथापि ज्ञानरूप आत्माकी प्रधान उपाधि होने ते ज्ञानी कथन करे हैं वा ज्ञानका साधन होनेते ज्ञानीकहे हैं वा सत्वगुणका कार्य्य होने ते ज्ञानी कहेहैं अन्य प्रकार नहीं दूसरे सर्व अज्ञानी थे तात्पर्य्य यहकि कर्मेंद्रियादि ज्ञानके असाधन सर्वको प्रसिद्ध है ताते अज्ञानीकहेहैं मैने पूछा हे योगेश्वरो किस पदमें यो-

ग करतेहो उन्होंने कहा अकार विषे मैंने कहा अकारका क्या स्वरूप है उन्होंने कहा ईश्वर अकार स्वर हैं जैसे सर्व क, ख, ग, घ, ङ, आदिक वर्णोंविषे व्यापकहैं अरु सर्व वर्णोंके उच्चारणका निर्वाहकहै अरु सतरूपहै और सर्व वर्णोंका अकारमे अभाव है तथा परस्पर में भी अभाव है परंतु अकारका सर्वमे अनुसूतताहै हेपराशर तैसेही जो शब्द,स्पर्श,रूप,रस,गंध गुणोंते रहित है सर्व गुणरूप भी वही है तैसेही समष्टि व्यष्टि स्थूल प्रपंच विषे तथा समष्टि व्यष्टि सूक्ष्म प्रपंच विषे तथा समष्टि व्यष्टि कारण प्रपंच जिसकर सिद्ध होताहै तथा पूर्वोक्त सर्व प्रपंच विषे जो व्यापक है तथा पूर्वोक्त सर्व दृश्यका स्वरूप भूत हुआ हुआ अपनी सत्ता स्फूर्ति करके सर्वका निर्वाहक है तथा सर्व दृश्यरूप भी वही है तथा सर्व दृश्यते अम्बरकी न्याई असंग भी वही है अरु सर्वका दृश्यका द्रष्टा साक्षीभी वही है तुरीय वा तुरीयातीत संज्ञाकर भी वाच्य वही है अकार उपलक्षित् सत् चित् आनंद नामो करके भी वही कथन करता है तिसपद विषे हम योग करते हैं मैं सुनकर हँसा अरु कहा हे मित्रो पूर्वोक्त सो पद तुम्हारा स्वरूप है योग किस्से करते हो सर्व दृश्य तुम्हारा ध्यान करती है तुमको योगनाम संवंध किसी दृश्य पदार्थसे क्रिया करके करना नहीं पडता किंतु तुम अधिष्ठान ते विना कल्पित प्रतीतिका अभाव होने ते स्वतः ही तुम अधिष्ठान का कल्पित दृश्यके साथ योग है कर्त्तव्यसे नहीं जैसे स्वतःही चीनीका खिलौनोंके साथ योगनाम संवंध है तथा जैसे आकाशका स्वतःही सर्व पदार्थोंके साथ योग है करना नहीं पडता अरु जो अवाङ मनस गोचर पद है अरु है हाजिर हुजूर बल्कि सर्वका सिद्ध करता है सोई तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का स्वरूप है अन्य मनादिक दृश्य नहीं हे प्रह्लाद पूर्वोक्त अनेक योगियोंके मध्य विषे पंच ज्ञानेंद्रिय चतुष्टय अंतःकर्ण यह नव योगी ज्ञानीथे अन्य अज्ञानी प्रसिद्धहीहैं तिन ज्ञानी योगेश्वरोंके मध्यमें मैंने पूछाकिहे श्रोत्रेंद्रिययोगेश्वर महानशब्द अरु मध्यमशब्द अरु निकृष्टशब्द वा धुनिरूप शब्द वा वर्णात्मक रूप शब्दों काही तुम ध्यान करसक्ते हो शब्द रहित जो आत्मा हरिहै तिसका तुम हजारयत्नसे भी ध्यान नहीं करसक्ते जो परमेश्वर आत्मा तुम्हारे ध्यानमें आवेगा हरि आत्माको शब्द रूप होनेते अनित्य हो जावेगा तातेश्रोत्र इंद्रिय योगेश्वरका नारायण आत्मा का ध्या

52

न करना निष्फलहै वा दंभहै किंतु श्रोत्रयोगेश्वरको शब्द का ध्यान करना सफलहै तैसेही हे प्रह्लाद मैंने त्वचा इन्द्रिय योगेश्वरसे पूछा तुम किसका ध्यान कर्तेहो शीतोष्ण कोमल अरु कठिनादि स्पर्शवान पदार्थों काही ध्यान तुम करसक्तेहो स्पर्श रहित पूर्वोक्त पदका योग नाम संबंध तुम कदाचित्तभी नहीं करसक्ते ताते तुम्हारा कहनमात्रही है हम स्पर्श वर्जित पद विषे योगकर्ते हैं किंतु स्पर्शका तुम योग कर्ते हो अन्य नहीं हे प्रह्लाद पुनः मैंने चक्षु इंद्रिय योगेश्वरसे पूछाकि हे देव तुम सतवक्ताहो यथार्थ कहो तुम किसका ध्यान कर्तेहो उसने कहा हरि आदि स्थूल मूर्तिके तथा पृथिवी जल अग्नि तीन भूतोंके तथा तिनके कार्य आदिके षट्प्रकारके रूपका ध्यान नाम मैं जान सक्ताहों इससे अधिक अंतरी व अरूप पदविषे मुझसे योग नहीं होसक्ता मैंने कहा जब तू षट् प्रकारके रूप रहित वस्तुविषे योग नहीं करसक्ता तो नाम रूप रहित अंतर पदविषे हम योग कर्तेहैं सो तुम्हारा कहना निष्फलहै किंतु बहिरही तुम षट् प्रकार के रूपकाही योग करसक्ते हो पुनः मैंने कहा हेप्रह्लाद पुनः मैं रसना योगेश्वरसे पूछा कि हेरसज्ञ विद्वान पक्षपातते रहित तुम षट् प्रकारके रस विषेही योग करसक्तेहो षट् रसरहित आत्म पदविषे तुम योग नाम संबंध नहीं करसक्ते ताते षट् रसके सिद्धकरता आत्मपद विषे तुम्हारे ध्यान का यत्न अफलहै तथा हे प्रह्लाद मैं घ्राणयोगेश्वरसे पूछता भया कि हे घ्राणयोगेश्वर सुगंधी दुर्गंधीवान पदार्थते पृथक् वस्तुका तुझका योग नाम संबंध कदाचित् भी नहीं होसक्ता तो तेराभी कहना वृथाहे जो हम व्यापक गंधरहित अखंड रूप विषे योग कर्ते हैं तात्पर्य्य यह कि तुम श्रोत्रादिक पांचो योगेश्वरतो बहिर शब्दादिक पांचगुणों विषेही योग नाम ध्यान करसक्तेहो शब्दादिक पांचगुणों ते वर्जित जो अंतर प्रत्यक् आत्मा विष्णुहै तिस विषे योगनाम संबंध तुम नहीं करसक्ते सारांश यहकि शब्दादिक गुणों विषे श्रोत्रादिक तुम पांचो योगेश्वरोंका स्वतःही देश काल वस्तुके अनुसार योगनाम ध्यान संबंधहोता रहताहै शब्दादिक गुणों विषेभी योग नाम ध्यान करना तुम्हारा निष्फलहै अरु शब्दादिक गुणों रहित अवाङ्मनसगोचर आत्म पद विषे भी तुम्हारा भ्रम है योग कथन अफल है दोनो प्रकार से तुम्हारा यत्न निष्फल है किसवास्ते अपनी भ्रमसे आरामदारी भी खोते

हो हे प्रह्लाद पुनः मैं मन बुद्धि चित्त अहंकार चारों योगेश्वरोंसे पूछता भया किहे मन बुद्धि अहंकार योगेश्वरो जाति गुण क्रियादि संबंध वान पदार्थों काही तुम चारो योग नाम संकल्प विकल्प निश्चय चिंतन अहंपना करसक्ते हो अरु जो जाति गुण क्रियादि संबंध रहित आत्मवस्तुमें कैसे योग तुम करसक्तेहो किंतु नहीं कर सक्तेहो लाखोंयत्नसेभी तुम योग नाम संबंध आत्मासे अणुमात्रभीनहीं करसक्ते ताते हम सत् चितानंद स्वरूप आत्मा विषे योग करते हैं सो यह तुम्हारा कहना व्यर्थ है तात्पर्य्य यहकि तुम सर्व ज्ञानी अज्ञानी योगीश्वर एक आत्मा करके ही प्रकाशत हो तुम्हारे करके आत्मा प्रकाशत नहीं सोई तुम्हारा स्वरूपहै योग किस्से कर्तें हो उन्होंने कहा तेरे कहेते हमने जानाहै अकार उकार मकार वाचक स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर वाच्य इस सर्व वाच्य वाचक संसारके हमही निराकार स्वप्रकाश अक्रियएक अविनाशी सर्वके सिद्धकरने वाले हैं हमारे में आना जाना योग कर्ना नहीं वनसक्ता हे प्रह्लाद वोह योगेश्वर किंचित् मात्र उपदेश सेही स्वस्वरूपको जानते भये ताते हे प्रह्लाद सुखपूर्वक अपने स्वरूपका विचारही विहंगममार्ग है प्रह्लादने कहा एकको ऊंचा अरु एकको नीचा कहना तुमको योगता नहीं अवधूतने कहा जव सर्व तूही है ऊंच नीच कहां है ऊंच नीच भी तूही है परंतु मैं तुमको ऐसा कहताहों जामें ऊंच नीच विहंगम चीटी मार्ग दोनो नहीं प्रह्लादने कहा तुम्हारे उपदेशते मैं कृतकृत्य भयाहों मुझ चैतन्य स्वरूपमें न आना न जानाहै न लेनाहै न देनाहै न कहना न सुनना न जीवनाहै न मरनाहै न ग्रहणहै न त्याग है न विहंगम न चीटी मार्गहै न बंध है न मोक्षहै न कोई शत्रुहै न मित्रहै न सुखहै न दुःखहै न प्रह्लाद है न अवधूत है न देवता है न राक्षस है न स्थूल सूक्ष्म कारण है न राग है न द्वेषहै न पर न अपर है न जीव है न ईश्वर है मन वाणीते रहित एक अद्वितीय आत्माहै इस चिंतन सेभी गूंगा मूकसा भया हों अरु सर्व रूपभी मैंही हों मेरी मुझको नमस्कार है आपही वचन करो हों आपही सुनो हों ताते क्या कहों द्वैत है ही नहीं आज सतसंग सफल भयाहै उपमा तुम्हारी कौनसी रसनासे करों जो तुझ विषे मन वाणीका मार्ग नहीं परंतु उपमा तेरी यही है सर्व असर्व रूप तूही है सर्व नाम रूप तेरे विषेही कल्पित भीहैं परंतु कछु हुआ नहीं हे संतो

मैं तुझको आपा अहंकार दिया अरु आप स्वयं प्रकाश हुआहों अवधूतने कहा झूंठमतकहो जब सर्व तूहींहै तो देन लेना कहांहै दत्तात्रेयने कहा अब हम जाते हैं प्रह्लादने कहा तेरे विना मेरा जीवन न होगा विषपानकरना कबूलकर्ता हों परसंग संतों का त्यागना कबूल नहीं कर्ता काहेते अनेक कोटि जन्मोंकी भटकना संतसंगकर दूर होती है पारसके संगकर लोहा स्वर्ण होताहै परंतु पारस लोहा नहीं होता संतके संगकर संतही होताहै ताते संत मेरे प्राण हैं प्राणभी कहां हैं संत आपही हैं तुम इहांही रहो जावो नहीं संत दत्तात्रेयने कहा मैं पूर्णहों मुझ चैतन्यमें आना जाना नहीं पुनः दत्तात्रेय प्रह्लादको दृढ बोध वास्ते उपदेश कर्ते हैं हे प्रह्लाद परमार्थ रूप शिव आपहै शिवको बाहर देखा चाहताहै कैसे पावें प्रह्लादने कहा मैं आपको नहीं जानता कि मैं कौन हों काहेते आप अहंकार नहीं अरु सर्व आपही हुआ हों अवधूतने कहा रसनासों कहताहै मनमें द्वैत राखताहै प्रह्लादने कहा द्वैत अद्वैत मुझ चैतन्यमें नहीं तुझके मनमेंहै गुप्त प्रगट सर्व जब मैंहीहों तो रसना वाणी मन कहां हैं अवधूतने कहा मेरा प्रयोजन यही है कि आपविना न देखें न सुनें न गुनें न सूचन स्पर्श करें काहेते जो तुझ बिना और कोई नहीं दृष्टिमानको झूठ जानकर त्याग कर नाम मिथ्या जान अरु आपकोही सत जान तेरा कल्याण होगा ताते आपा शरीरका त्याग कर आपको सच्चिदानंद रूप जान यही शिवकी पूजा है जो आप सहित सर्व नाम रूपको शिव जानना वा समष्टी व्यष्टी नाम रूप प्रपंच रूप मंदिर विषेमेंही प्रत्यक् आत्माही स्वतः ही ज्योतिर्लिंग स्थित हों सर्व नाम रूप प्रपंच मुझ सच्चिदानंद शिवके पुजारी हैं जैसे स्वर्णके तथा मधुरता द्रवता शीतलता रूप जलके भूषण तरंग पुजारी हैं इत्यादि दृष्टांत अनेकहैं ताते मैंहीं चैतन्य सर्व दृश्यका पूज्यहों मैंहीं सूक्ष्मसे सूक्ष्महों अरु स्थूलसे स्थूलहों यह नाम रूप प्रपंच मुझ सच्चिदानंद सूर्यकी किरणाहैं मुझ चैतन्यकेही नारायण गोविंद अच्युत हरि परमेश्वरादि नाम वेदने कल्पे हैं परंतु मैं नाम रूपसे वर्जित हों अरु मैंहीं चैतन्य सर्व नाम रूप प्रपंचके कर्मोंके फलका प्रदाताहों वास्तवते सर्व मैंही अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वात्माहों अरु सर्वते अतीत भी मैंही हों इस निश्चय रूप पुष्पोंकर आत्मदेवकी पूजा करो जो कछु प्रारब्ध कर शास्त्र अनुसार यत्न रहित प्राप्त होवे तिसको

कृतृत्व भोक्तृत्व अभिमान रहित निःसंशय भोग लगाना अरु सम्यक् अपने स्वरूपको जानना यही आत्मदेवके आगे पुष्पहैं अंडज-जरायुज स्वेदज उद्भिज इन चार प्रकारकी वाणीमें जितनेकि चौरासी लक्ष देहहैं सोई मंदिरहैं तिनमें मैं एकही सच्चिदानंद विष्णु शिवरूप आत्मा विराजमान हों जैसे सर्व उपाधिमे एकही आकाश विराजमान् है हे प्रह्लाद पंचज्ञानेंद्रिय पंच कर्मइंद्रिय पंचप्राण चतुष्टय अंतः-कर्ण मुझ सच्चिदानंद शिवके पुजारी हैं पूर्वोक्त पुजारी शब्दादिक निज निज विषय रूपी पुष्पोंको गृहण कर मुझ चैतन्य देवकी निरंतर पूजा करते रहते हैं मुझ चैतन्यकी सत्ता स्फूर्तिरूपी प्रसन्नता करही इन पुजारियोंका उपजीवन नाम शब्दादिकोंके गृहण करनेकी सामर्थ्य होती है अन्यथा नहीं यह निश्चयही आत्मदेवकी पूजाहै मुझ सच्चिदानंद स्वरूपकी ही चारों वेद भाटोंकी न्याई स्तुति करते हैं मुझ चैतन्य देव का ब्रह्मा विष्णु शिवादिक सर्व ध्यान कर्ते हैं अरु मैंहीं ब्रह्मा विष्णु शिवादिकहों मर्ना जीवना जागना सोना खाना पीना लेना देना हर्ष शोक मान अपमान सुख दुःखादिक सारांश यहकि कायिक वाचिक मानसिक कर्म सर्व मुझ चैतन्य देवकी पूजा है सर्व नाम रूप दृश्य-का मैं चैतन्य ही मालिकहों अरु दृश्य रूप भी मैंहीहों वा कार्य कारण रूप ब्रह्मांड जलहरीमें मैं चैतन्यही शिवलिंग स्थितहों सूर्य चंद्रमा मुझ चैतन्यदेवके मंदिरमें आगे दीपक जगरहेहैं तारामंडल आकाश रूप थालमें मुझ चैतन्यके आगे छोटे आरतीके दीपकहैं अठारा भार वनस्पति मुझ चैतन्यके कंठमें पुष्पोंकी मालाहैं पृथिवी मुझ चैतन्य देवका सिंहासनहै दशों दिशा मुझ चैतन्यदेवकी पूजाहैं सुमेरु आदिक पर्वत मुझ चैतन्यके भूषणहैं काल मुझ चैतन्यके खेलनेका गेंदहै सातो समुद्र मुझ चैतन्यके आगे जलके पात्रहैं यावत् मात्र शब्दहैं सो मुझ चैतन्य देवकी नौवत वाजरहीहै वायु मुझ चैतन्य देवका पंखा खैंचरहे हैं माया मेरी शक्तिहै पार्वती लक्ष्मी सरस्वती आदि देवियां जिस शक्तिके अवतारहैं विषय इंद्रिय संबंधजन्य सुख दुःखका अनुभव मुझ चैतन्य देवके आगे भोगहै जीव ईश मुझ चैतन्यदेवके मुख्य पुजारी हैं जगत्की उत्पत्ति पालन संहार मुझ चैतन्य देवकी क्रीडाहैं सत्व रज तम तीनो गुण मुझ चैतन्य देवके पहरेदारहैं जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मुझ चैतन्य देवके खेलनेके स्थानहैं तात्पर्य्य यहकि

पूजक पूज्य पूज त्रिपुटी रूप सामग्री कर सर्व जगत् मुझ चैतन्य देवकी पूजा कर्ताहै वास्तव ते त्रिपुटी रूपभी मैंहीहों अत्रिपुटी रूपभी मैंहीहों हे प्रह्लाद जैसे स्वप्नमें पूज्य पूजक पूज सर्व त्रिपुटी रूप प्रपंच एक स्वप्नद्रष्टाका ही पूजा कर्तेहैं काहेते स्वप्नमें अन्यदेवका अभाव होनेते वास्तवते स्वप्नद्रष्टाही सर्व स्वप्न प्रपंच रूप होनेते पूज्य पूजक पूज भाव भी तिससे भिन्ननहीं तैसेही ईश माया मात्र दृश्य जाग्रत प्रपंचमें भी एक सच्चिदानंद स्वरूप द्रष्टा देव मैंही हों जहां पूजा होर्तीहै तहाँ चैतन्य देवकी ही पूजा होर्तीहै अन्यकी नहीं वास्तवते जव सर्व सच्चिदानंद तुमही हो तव पूज्य पूजकभाव कहाँहैं जैसे पंचभूत रूप का कार्य रूप कोई तृणादि एक वस्तु जाने जो सर्व भूत भौतिक दृश्य प्रपंच मैंहीहों इस यथार्थ चिंतनमें शास्त्र गुरु संस्कारसहित बुद्धिमान कोईभी विवादनहीं कर्ता अन्य कर्तेहैं काहेते सर्व पंचभूत रूपहीहैं तैसे जिसने सम्यक् अपनेको अस्ति भाति प्रिय रूप जानाहै जो वह यह चिंतन करे कि सर्व अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वात्मा मैंहीहों तो ठीकहीहै काहेते अस्ति भाति प्रियते पृथक् कोईभी दृश्यमान वस्तु नहोनेते ताते तुम आपको सर्वात्मा रूप जानो ध्यान किसका कर्तेहो वा ध्याता ध्यान धेयरूप भी तुमहीहो तथा तिसते रहित भी तुमहीहो तो पुनः ध्यान किसका कर्तेहो हेप्रह्लाद विश्वके देखनेकी इच्छा मत कर अपने स्वरूप को जान जव तू अपने स्वरूपको जानेगा तव सर्व दर्शन तेराहीहोगा जैसे घटने सर्व घटों के दर्शनवास्ते वाहर नहीं जाना किंतु घटनें अपने मृत्तिका स्वरूपको जानना तव सर्व घटोंका यत्न विनाही तिसको दर्शन होताहै वा स्वप्नद्रष्टाने सर्व स्वप्न पदार्थोंको देखने नहीं जाना किंतु अपना स्वरूप सम्यक् जाने ते सर्व स्वप्न पदार्थ जाने जातेहैं काहेते स्वप्नद्रष्टामेंही कल्पितहोने ते रज्जु सर्पवत् हे प्रह्लाद न तू है न मैं हों सर्व मैंही हों आपा अहंकारका त्याग जो आप होवें प्रह्लादने कहा आपे का त्याग करों तो आप क्योंकर होंवों दत्तने कहा आपा परिच्छिन्न अहंकार गया जव तव शेष जो रहा सो अवाङ्मनसगोचरहै ताते सर्व साधन कर्त्तव्य वही है जो आप सहित जाने सर्व सच्चिदानंद स्वरूप हरिहै जिसको तुम खोजते हो सो तुमहीं हो मैं ऐसा अतीत नहीं हों जो तुम्हारे राज्य संपदाकी इच्छा राखौं मेरा प्रयोजन यही है जो आप विना न देखे न सुने काहेते जो तुझ

सच्चिदानंद स्वरूप विना और कछु नहीं अरु दृष्टमानको असार झूंठ जान प्रत्यक्ष जो अदृष्टमानहै सोई ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्य्यंत सर्व विषे एक रस शिव पूर्ण है हे प्रह्लाद इसी प्रसंगपर एक कथा सुन एकसमय शिव कैलासमें स्वामिकार्तिक अरु गणेश अरु अनेक गणों सहित बैठे थे शिवके जटाते जो गंगा चलती थी सो शिव शिव करती चली जाती थी अरु तहाँसर्व पक्षीभी शिव शिवही बोलते थे तिस समयमें कुवेर आवत भया महादेवको विधि पूर्वक दंडवत करी अरु प्रश्न किया हे महादेव यह दृश्य मान मूर्ति अमूर्त सर्व असत जड दुःख रूप प्रपंचही ज्ञानेंद्रियों करके देखने सुनने सूंघने स्पर्श रस लेनेमें आताहै तथा कर्मेंद्रियों करकेभी शब्द उच्चारण ग्रहण त्याग गमनागमन मल मूत्र त्याग रूप प्रपंचही ग्रहण होताहै अरु प्रत्यक्षादि प्रमाणों करकेभी नाम रूप दृश्य प्रपंचकीही सिद्धि होतीहै अरु मन बुद्धि चित्त अहंकार करके भी माया अरु मायाके कार्य भूत भौतिक पदार्थोंकाही मनन चिंतन निश्चय अहंपना होताहै इन सर्वते रहित वस्तुको मैं कैसे जानो क्योंकर प्राप्त होवों सो कहिये शिवने कहा हे कुवेर यह प्रमाता प्रमाण प्रमेय रूप त्रिपुटी तुझ निर्विकार निर्विकल्प सत् चित् आनंद स्वरूप करकेही सिद्ध होवे है कोई त्रिपुटी करके तू चैतन्य सिद्ध नहीं होता और त्रिपुटीकरभी त्रिपुटी सिद्ध नहीं होती काहेते तू चैतन्य स्वयंप्रकाश रूपहै यद्यपि चक्षु सूर्य आदिक प्रमाण प्रकाशक अरु घट पटादिक प्रकाशय आपसमें प्रतीत होतेहैं तथापि सर्व नाम रूप त्रिपुटीको कल्पित दृश्य होनेते त्रिपुटीमें प्रकाश प्रकाशक भाव नहीं बनसक्ता जैसे स्वप्नेकी कल्पित त्रिपुटी स्वयंप्रकाश स्वप्नदृष्टा करकेही सिद्धहै मिथ्या स्वप्न पदार्थों कर स्वप्नदृष्टा सिद्ध नहीं होता तथा आपसमेंभी स्वप्न पदार्थ प्रकाश प्रकाशक भाव नहीं बनसक्ते तैसे तुझ चैतन्य विना जाग्रतके पदार्थ आपसमें कल्पित क-ल्पितको सिद्ध नहीं करसक्ते जैसे रज्जुमें कल्पित सर्प दंडको दंड सर्पको अरु सर्प दंडमालाको माला सर्प दंडादिकोंको सिद्ध नहीं कर सक्ते हे कुवेर पूर्वोक्त सर्व नाम रूप दृश्य पदार्थोंको तू चैतन्य जानताहै तुझ चैतन्यको कौन जाने तू स्वयं प्रकाश सर्व नाम रूप दृश्यका अस्ति भाति प्रियरूप प्रकाशक आत्माहै तुझ सर्वात्माको अपनी प्राप्तिकी इच्छा लज्जाका कामहै जैसे फेन तरंग बुद्बुदादिक सर्व नाम रूप

का मधुरता द्रवता शीतलता रूप जलही आत्माहै तिन तरंगादिक मध्ये किसी तरंगको अपने स्वरूप जलकी प्राप्तिकी चिंता करनी मूर्ख
ताहै कुवेरने कहा बंध मुक्त क्याहै शिवने कहा दोनो अहंकार तेराहै नहींतो बंध मुक्त दोनो रूप नहीं राखते जो तुम को बताय देवों कुवेरने
कहा योग उपदेश करो शिवने कहा योग यहीहै जोजान आप सहित सर्वशिवहै हेकुवेर बुद्धिमानको एक क्षैनही वहुतहै निर्बुद्धिको परमार्थ
पाना कठिनहै कुवेरने कहा धारणा कहो शिवने कहा धारणा नाम निश्चय काहै निश्चय धर्म बुद्धिकाहै बुद्धिका मुझ चैतन्य आत्मामे अ-
त्यंताभावहै कहे कौन परंतु आपको तू अवाङ्मनसगोचर सम्यक्ज्ञान यही धारणाहै कुवेरने कहा हे शिव हर्ष शोकते कैसेछूटों शिवने क-
हा हर्ष शोकके द्रष्टा तुझ साक्षीको हर्ष शोक कहांहै हर्ष शोक मनके धर्महैं आपको मनरूप मतमान कुवेरने कहा मनका रोकना कहो शिव
ने कहा तुझ चैतन्यरूप आकाशका वायु रूप मन क्या विगाड़ कर्ताहै किंतु कछुनहीं कर्ता मन पंचभूतोंकी सांझी सात्विकी अंशकाकार्य है
तू पंचभूतोंते रहितहै जो मन कर कछु विगाड़ होताहै सो पंचभूतोंका विगाड़ हो वा नहो तुझको मनके रोकनेका क्या मतलवहै दूसरेकी
शुभ अशुभ क्रिया देखके अपनेमें अरोप कर संतापहोना यही अज्ञानहै वा जव सर्व सच्चिदानंद स्वरूप शिवहै तव मन अरु कुवेर कहांहै
शिवहीहैं कुवेरने कहा जवमैं नहीं तव तुम कहां हो काहेते अहं पूर्वकही त्वं होताहै जव अहं नहीं तव त्वं कहांहै स्वर्ग नरक बंध मोक्ष हर्ष
शोकादि कहांहै किंतु नहीं जोहै तो सच्चिदानंद रूप सर्व शिवहै महादेवने कहा हे कुवेर तू कौन है कुवेरने कहा मैं सच्चिदानंद रूप शिवहों
काहेते अग्निकी संगतते लकड़ीका रूपनहीं रहता किंतु अग्निही होताहै तैसे तुम अग्नि अरु मैं लकड़ी जव मैंने आपा तुझको दिया तू
भया शिवने कहा जवतक लकड़ीहै तवतक अग्नि है तैसेही जव तूहै तव मैंहों जव तू नहीं तव मैं कहां हों हे कुवेर जहां अहंकार मैं नहीं
तहां तू कौन है सो कहो कुवेर तूष्णी भया काहेते आगे वचन की ठौर नथी पराशरने कहा हे मैत्रेय जव इसप्रकार दत्त प्रह्लादको शिव कुवेरकी
कथाकी मिसपाकर उपदेश किया तव प्रह्लादने कहा हेदत्त मैंने जानाथा कि तेरे संगतते कछु पाया है सो यह भ्रम मेरामिटगया है काहे
ते आदि अंत मध्य सर्व गुप्त प्रगट मैंहीहों मेरी मुझको वंदनाहै दत्तने कहा अव मैं जाताहों प्रह्लादने कहा जहां जावे वहां सर्व मैंहीहों दत्त ने

कहा अब मैं नहीं जाता काहेते तुझको परमहंस देखताहों प्रह्लादने कहा जो काग नहीं तो हंस कहांहै हे मैत्रेय प्रह्लाद यह वचन कहकर स्वरूप विषे लीनभया दत्त जैसे आयाथा तैसेहीचला गया ॥

इति पक्षपातरहित श्रीअनुभव प्रकाशस्य तृतीयःसर्गः ॥ ३ ॥

पराशरने कहा हे मैत्रेय तूभी ऐसे मत जान जो संग संतों का मुझको हमेशह बना रहेगा जो काल संतोंके संगमे व्यतीत होता है सोई दुर्लभजान मैत्रेयने कहा तुम्हारे उपदेशते मोमकी न्याई गलगया हों जानताथा कि मैं ब्राह्मण हों अब जेता ढूँढताहों सो नहीं पाता अरु यह भी नहीं जानता कि मैं कौनहों ताते इस शरीरको जलायकर नाशकर्ता हों जो सर्व कर्तव्योंते छूटोंगा अरु स्वरूपको प्राप्त होवोंगा पराशरने कहा हे मैत्रेय शरीरके होतेही तू चैतन्य शरीरके कर्तव्यों अकर्तव्यों ते रहित स्वतः हीहै जैसे आकाश घटके होतेही घटकी क्रियाते स्वतः ही रहित है ताते शरीरके होतेही आत्मा नात्माके विचार रूपी अग्निकर शरीर सहित शरीरके कर्त्तव्योंको जलाय जो कर्तव्यों ते छूटे अन्यथा नहीं पराशरने कहा हे मैत्रेय सर्व जीवोंके अंतःकर्ण में मल विक्षेप आवर्ण तीन दोष रहते हैं मल नाम पापका है विक्षेप नाम चित्तकी चंचलताका है अवर्ण नाम अपने स्वरूपको न जानना सो तिन तिन दोषोंके दूरकरने वास्ते तीनही उपाय हिंदू मुसल्मान अंग्रेज फारसी आदिकोंके सर्व शास्त्रोंविषें लिखे हैं मलदोषके दूर करने वास्ते सर्व शास्त्रोंमें सत संभाषण आदि वाक्यादि इन्द्रियोंका कर्त्तव्य रूप कर्मकांड लिखाहै मनकी चंचलताके दूर करने वास्ते अनेक प्रकारकी सगुण वा निर्गुण सच्चिदानंद रूप परमेश्वरकी प्राप्ति वास्ते सर्वशास्त्रोंमें उपासना लिखीहै वा चित्तका किसी सूक्ष्म वा स्थूल वा त्रिपुटीमें वा हृदय विषे ज्योति इत्यादि वस्तु में बाहर वा अंतर जोडना रूपी ध्यान लिखाहै अज्ञानकी निवृत्ति वास्ते सर्व शास्त्रों विषे ज्ञानकांडही लिखाहै जिस अंतःकर्णमें पूर्व जन्मके प्रयत्न ते वा इस जन्मके प्रयत्न ते पूर्वोक्त दोष नहीं तिसपर शास्त्रका उपदेशभी नहीं अरु जिसमें मल विक्षेप दो दोषनहीं केवल अपने स्वरूपका न जानना रूपी अवर्णही दोषहै तिसको केवल ज्ञानकांडकाही अधिकारहै यज्ञ दान तीर्थ व्रत तप होम जप त-

डाग वनाने संध्या तर्पणादिक यावत् मात्र शारीरिक शुभ क्रिया हैं सो सर्व कर्म कांड कोटिमें हैं ध्यान योगादि यावत्मात्र मानसी क्रिया हैं सो उपासना कांड कोटि मेंहैं केवल आत्माको ब्रह्मरूप कथन करनेवाले शास्त्र ज्ञानकांडहैं हे मैत्रेय अनेकप्रकारके शास्त्रोंमें वाक्य लिखेहैं किसी जगहमें ज्ञान कांड पहले लिखाहै कर्म उपासना पीछे लिखीहैं किसी जगहमें उपासना पहले लिखी है कर्म ज्ञान पीछे लिखाहै किसी जगहमें कर्म पहले लिखे हैं उपासना ज्ञान पीछे लिखे हैं तात्पर्य्य यहकि किसी जगहमें पहले कर्म पुनः उपासना पुनः ज्ञानक्रम लिखेहैं किसी जगहमे अक्रमभी लिखाहै पुनः कर्मकांड शास्त्रमें भी अशुभ कर्मोंकी निवृत्ति करवानें वास्ते भयानकवा-क्यभी लिखेहैं अरु शुभ कर्मकी प्रवृत्ति निमित रोचक वाक्य भी लिखे हैं अरु यथार्थ भी लिखे हैं तैसे उपासना कांड शास्त्रमेंभी अपनी रुचि अनुसार अशास्त्री अनात्म उपासनाके निषेध अर्थ भयानक वाक्यभी लिखे हैं शास्त्रोक्त उपासना की प्रवृत्ति अर्थ श्लाघनीय रोचक वाक्यभी लिखेहैं अरु यथार्थ भी लिखेहैं तथा ज्ञानकांड शास्त्रमें भी ज्ञानके माहात्म्यसे शास्त्र निषिद्ध प्रवृत्तिके निषेधक भयानकवाक्य भी लिखेहैं अरु ज्ञान विषे प्रवृत्ति निमित्त जीवताही मुक्त होताहै इत्यादि रोचक वाक्यभी लि-खेहैं निर्विकार निर्विकल्प स्वतःही यह आत्मा ब्रह्म स्वरूपहै इत्यादि यथार्थ वाक्य भी लिखेहैं सारांश यहकि सर्व शास्त्रोंका तात्पर्य्य परंपरा वा साक्षात् करके असत जड दुःखरूप प्रपंच भ्रमकी निवृत्तिद्वारा स्वभाव सेही निर्विकार निर्विकल्प कल्पित वंध मोक्षरहित मैं सच्चिदानंद स्वरूपहों इस निश्चयके वोधन करनेमें हैं हे मैत्रेय ऐसा न होय पूर्वोक्त शास्त्रोंके वाक्योंकी व्यवस्था न जानके शास्त्र श्रवण करकें गुरुदत्त निज निश्चय का त्याग करें वही धीर वुद्धिमान वलीहैं जो शरीर पातहोय तो होय परंतु निश्चयका त्याग न करे काहेते अनित्य शरीरकोतो गिरनाहीहै हे मैत्रेय आप सहित सर्वको सच्चिदानंद जानना यही मुक्तहै अरु आपको सच्चिदानंद न जानना अपनेते मन आदि नामरूप जगत् भिन्नजानना अरु तिसमें अहंकार करना यही वंधहै निर्भय होना तिसको कठिनहै हे मैत्रेय यह जगत् स्वप्नकी न्याईं मिथ्याहै अरु तू सत स्वरूपहै जिसने आपको शरीर मानाहै तिसको नरकते निकसना

कठिनहै काहेते रुधिर मांस अस्थि मज्जा मल मूत्र रूप इस शरीर अभिमानको ही नरक कहतेहैं सर्व मलीन वस्तुका यह शरीर मंदिर
नरकहै जिस कायासों हेतहै वही नरकहै हे मैत्रेय तू अपनी चाहना सों मलीन देह अभिमान रूपी महान अंधकूपमें पड़ाहै किसकी
शक्तिहै जो तेरी रक्षा करे ताते इस असार शरीरकी प्रीतिका त्याग कर जो शरीर अभिमानहीं बीज आवागवनकाहै अरु अपने स्व-
रूपको सांगोपांगजान जो बंध मोक्षते भ्रमते छूटे नहीं तो दुःख होगा हे मैत्रेय इस मलीन शरीर ते वैराग्य करना तुझको योग्यहै मैत्रेय
ने कहा वैराग्य राग दोनो कहो पराशरने कहा वैरागयहीहै जो अपने सच्चित आनंद स्वरूपते पृथक् जगत्को अत्यंता भाव
जानना अरु राग यहीहै जो आप सहित सर्व नामरूपको सत् चित् आनंद स्वरूप जानना वा असत जड़ दुःख मय नामरूप
जगत्की भावना त्यागके निज आत्मामें भावना कर्ना यही रागहै मैत्रेयने कहा हे पराशर तुम करके पूर्वोक्त वैराग अरु
रागादिकों का जानना न जानना मनका धर्महै मुझ निर्विकल्प निर्विकार चैतन्यका नहीं काहेते जब गाढनिद्रा नाम सुषुप्ति
अवस्था होतीहै वा समाधि मूर्च्छा होतीहै तव मन अपने अज्ञान उपादान कारण में लीन होताहै तिसकालमें न राग वैरागकी
कल्पनाहै न ज्ञानी न अज्ञानी न बंध न मोक्ष न हर्ष शोक न ग्रहण त्याग न सुख दुःख न पुण्य पाप न जीव ईश्वर न जड चैतन्य न सत
असत न सूक्ष्म स्थूल न माता पितादिक न अपने शरीरकी न वर्णाश्रमकी न दैवी आसुरी गुणोंकी न धर्म अधर्मकी न ऊंच नीचकी न
निर्विकल्प सविकल्पकी न स्त्री पुरुषकी न शत्रु मित्रकी न जातपातकी न लेने देनेकी न जप तपकी न संसार असंसारकी न साक्षी असा-
क्षीकी न द्रष्टा दृश्यकी न फुरने अफुरनेकी न माया रहित अरहितकी न आत्मा नात्माकी न शुचि अशुचिकी न हिंदू मुसल्मान की न भ्रम
अभ्रमकी तात्पर्य्य यहकि सर्व नामरूप त्रिपुटी संसारकी कल्पना नहीं होती मैं चैतन्य तो तिसकालमे भी हों जो मुझका पूर्वोक्त
संसार धर्म होता तो मुझके साथ सुषुप्तिकाल मेंभी होता ताते अन्वय व्यतिरेक करके जहां मन है तहांही पूर्वोक्त संसार धर्म है जहां
चित्त नहीं तहां पूर्वोक्त संसार धर्मभी नहीं हे गुरो यह नहीं कि जो मैं चैतन्य सुषुप्ति अवस्थामें तो निर्विकल्प निर्विकार बंध मोक्षादि

अनात्म धर्मरहित हों तथा अव जाग्रत स्वप्न अवस्थामें सविकल्प सविकार बंध मोक्षादि सहित हुआ हों ऐसे नहीं किंतु जो मैं चैतन्य सुषुप्ति अवस्थामें निर्विकल्प निर्विकार बंध मोक्षादि रहित तथा अव वर्तमान जाग्रत अवस्थामें वा स्वप्न में भी सोई निर्विकार निर्विकल्प बंध मोक्षादि रहित चैतन्य मात्रहों ताते यह मायारूप मनके धर्म हैं माया रूप चित्तरहित मुझके धर्म नहीं जैसे राजाके निवासके चार स्थान होते हैं एक वाहर कचहरीका स्थान होता है एक मध्यमे अपने माता पिता भ्रातादिक नजदीकी संबंधियों सहित खान पानादिक सहित वैठनेका स्थान होता है अरु तीसरा एकही अपनी स्त्रीके साथ हास्य विलास करनेका अंतःपुर एकांत स्थान होता है तथा पूर्वोक्त स्थानोंते रहित सात्विकी एक भजनका स्थान होता है तिसमें अन्य कोई पुरुष भी नहीं होता एक राजाही होता है तैसेही कचहरी स्थानापन्न जाग्रत है काहेते तहां इन्द्रिय मनादि स्वस्वकार्यमें सम्यक् हाजिर हैं शब्दादि प्रजासहित तिन सबके मध्यमें सर्व ऊपर आज्ञा कर्ता आत्मा राजावत है, मध्यस्थान स्वप्न है अरु अंतःपुर स्थानापन्न सुषुप्ति है काहेते तहां अविद्या रूप स्त्रीही अपने कार्य्य रहित निजपति आत्माके पास होती है तैसेही भजन स्थानापन्न तुरीय अवस्था है काहेते तुरीयमें माया तथा मायाका कार्य्य प्रपंचते रहित अपने स्वरूपका विद्वानको निश्चय होता है परंतु जो तीसरे एकांत स्थानमें वा भजनके स्थानमें जो राजा है अरु जो तिस राजाका निश्चय है कि मैं क्षत्रिय राजा हों यह स्त्रीभी मैं नहीं किंतु मैं राजा हौं जब वही राजा कदाचित् मध्यस्थानमें वा वाहर कचहरीके स्थानमें आता है वही राजा होता है वही तिसका निश्चय होता है अन्यथा नहीं होता यह नहीं कि सात्विकी भजन स्थानमें और होगया है मध्यमें और होगया है अंतःपुरमे और था कचहरीमें और होगया है किंतु एक रस राजाही है स्थानका भेद है पुरुष राजाका भेद नहीं तैसेही यह नहीं कि तुरीय अवस्थामें तथा सुषुप्ति अवस्थामे आत्मा निर्विकार निर्विकल्प सर्व संसार धर्मोंते रहित है अरु स्वप्न जाग्रतमें आत्मारूप राजाविकारी है तथा सविकल्पहै राजाकी न्याई आत्मा सर्व अवस्थामें स्वभावसेही निर्विकार निर्विकल्प एकरस एकही है विकारी सविकल्प नहीं होता मनादिकोंकी न्याई काहेते मनादिक स्वभावसेही वि-

कारी हैं ताते यत्नविना मुमुक्षुयोंने अपने स्वरूपको सर्व अवस्थामें निर्विकल्प निर्विकार जानना ताते मैं चैतन्य निर्विकल्प निर्विकार संसारधर्मोंते रहित सर्वावस्थामें एकरस हों वैरागादिक मनकी कल्पना है मुझकी नहीं हे मैत्रेय सर्व नाम रूप संसार तुझ सच्चिदानंद स्वरूपकर पूर्ण है तू चैतन्य देव सदा संसारते मुक्त है सर्वकी चेष्टा तुझ चैतन्य करही है परंतु सदानिर्लेप है आपसहित सर्व सच्चिदानंद स्वरूपमैं हों इस दृढ़बुद्धिके निश्चयका नामही भक्ति है तथा ज्ञान है तिसते पृथक् निश्चयका नाम अभक्ति अज्ञान है हे मैत्रेय इसी पर एक कथा सुन पूर्व जन्म विषे एक वन विषे भरथ राजा चित्तकी एकाग्रता रूप तप करे था अरु आत्मअनुसंधानमें मग्न था परंतु अपने स्वरूपका अपरोक्ष बोध तिसको नहीं हुआ था इसीते तीनजन्म पाये एकदिन तिसी वन विषे सिंह आया अरु सिंहके भयते मृग भागे भागे एक हरिणीके उदरसे बच्चाभयसेती भरथके आश्रमके निकट गिरपड़ा कैसा बच्चा है जो माता पिता ते रहितहै अरु कोई तिसका रक्षक भी नहीं अतीव सुंदरहै अति कृपालु जो राजा भरथहै तिस बच्चेकी यह अवस्था देखकर करुणा करके अपनी गोदमें उठालिया अरु तिस बच्चेके साथ ऐसा स्नेह कियाकि अपना जो ध्यान था वोभी भूल गया तिस हरिनीके बच्चे कीही लालन पालन करता भया इसी हालतमें कई दिन बीते बच्चा बड़ा हुवा एक दिन विषे भरथ फल फूलके वास्ते वनको गया पीछे बच्चा दूसरे मृगोंके साथ पशु स्वभावते चला गया भरथने आय देखा तो बच्चा नहीं मिला तिसके निमित्त विलाप कर्नेलगा अरु तिस विना व्याकुल हुआ तात्पर्य्य यह कि तिसकी कोमलताको याद कर्ता हुआ तिसके गुण गाता हुआ तिसकी पालन पोषणकी चिंताकर्ता हुआ मृगके आकारही अंतःकर्णकी वृत्ति होजाती भई हे मैत्रेय प्रीतिका यही लक्षणहै जो तद्रूप होना इसी वासना विषे शरीरका त्याग किया पुनः हिरनका जन्म पाया परंतु बीज आत्मज्ञानका उसके मनते नहीं गया था पुनः ज्ञान पूर्वकही एक जन्म और पाया पुनः ज्ञान पूर्वकू तीसरा जन्म ब्राह्मणके गृहमे लिया अरु माता पितानेभी जन्म नक्षत्र अनुसार भरथ नाम राखा हे मैत्रेय पूर्व अभ्यासके बलते तथा ज्ञानके प्रतिबंधकके अभावते अपने सच्चिदानंद स्वरूपको संशय विपर्ययते रहित गुरु उपदेश विनाही

जानता भया कि मैं निर्विकल्प निर्विकार स्वतः ही बंध मोक्षादि संसार धर्म तथा संसारते रहित सच्चिदानंद स्वरूप हों मैत्रेयने कहा हे गुरो ज्ञानका प्रतिबंधक क्या कहिये पराशरने कहा हे मैत्रेय ज्ञानके प्रतिबंधक तीन प्रकारके भूत, भविष्य, वर्तमान होतेहैं वर्तमान कालमें पूर्व सुख दुःख रूप भोग भोगे नाम जो अनुभव करेहैं तथा तिन भोगोंके साधनोका जो अनुभव कराहै तिनोकाही श्रवण मनन निदिध्यासन कालमें स्त्री आदिक पदार्थोंका स्मरण होना अर्थकी तर्फ चित्त न लगना इसका नाम भूत प्रतिबंधहै तिस भूत प्रतिबंधते ज्ञान नहीं होता काहेते मन एकहै जब मन भूत अनुभव करे पदार्थोंका स्मरण करेगा तब गुरू उपदिष्ट महावाक्योंका अर्थ निर्विकार निर्विकल्प निज स्वरूप आत्मा कैसे अनुभव होगा किंतु नहीं होगा मैत्रेयने कहा भूत प्रतिबंधके दूर करनेका उपायकहो पराशरने कहा हे मैत्रेय विचार करके भूत प्रतिबंधक पदार्थोंके साथ अपना अभेद चिंतन करना सो पदार्थ मैंही हों वा पूर्व अनुभूत पदार्थोंमें सम्यक् दोष दृष्टि करनी अब भावी प्रतिबंध सुन हे मैत्रेय देह अभिमान संयुक्त करे कर्मोंके फलकी महान विचित्रता है सो कर्म तीन तरहके हैं अनेक पूर्व मनुष्य शरीरमें अहंकार सहित करे जो शुभाशुभ कर्म सो संस्कार रूप करके सूक्ष्म शरीरमें स्थित रहते हैं जिन कर्मोंने अनेक ऊंच नीच जन्मोमें सुख दुःख रूप फल आगे देनाहै तिन कर्मोंका नाम संचित कर्महै सो कैसे कर्महैं अनेक कर्मोंका फल एक शरीर पाय करभी सुख दुःख भोग सक्ताहै अरु एक कर्मका फल अनेक शरीर पायकर सुख दुःख भोगसक्ताहै कर्मोंकी विचित्र शक्तिहै तिन संचित कर्मोंके मध्यमें जो इस वर्तमान शरीरके एक वा अनेक आरंभक कर्महैं तिन कर्मों का नाम प्रारब्ध कर्म है वर्तमान शरीरमें ज्ञानी वा अज्ञानी से जो कर्म होतेहैं सो क्रीयमान कर्म कहातेहैं ज्ञानके देनेवाले कर्मभी प्रारब्ध कोटिमें हीहैं जिसके वर्तमान शरीरके उत्तर अनेक शरीर पानेके वा एक शरीर पानेके प्रारब्ध कर्महैं वह वर्तमान शरीरमें ज्ञानके साधन हज़ार श्रवण मनन निदिध्यासन करो वा सतसंगकरो तिसको ज्ञान नहीं होता काहेते जिसको वर्तमान शरीरमें अपने स्वरूपका सम्यक् अपरोक्ष ज्ञान हुआ है तिसने आगे जन्म नहीं पाना यह ज्ञानका नियम ठहरा अरु प्रारब्ध कर्मने वर्तमान शरीरसे उत्तर अनेक वा

एक अवश्यमेव ऊंच नीच जन्मदेने हैं तिन कर्मोंनें वर्तमान शरीर में ज्ञान नहीं होने देना तिनका भी यह नियम ठहरा तथा तिन प्रारब्ध कर्मोंके मध्य में भी ज्ञान पूर्वक प्रारब्ध क्षय अंत जन्ममें गुरु शास्त्र सामग्री संपादन करके वा विना सामग्री इस जीवको ज्ञान होना अवांतर जन्मोंमें न होना यहभी तिन प्रारब्ध कर्मों काही नियमहै ताते वर्तमान भरथ शरीर गुरु शास्त्र श्रवण मनन निदिध्यासन ज्ञानके साधन हुयेभी प्रारब्ध रूपी प्रतिबंधके वश्यते तीसरे जन्ममे प्रारब्ध रूपी प्रतिबंधके क्षयते गुरु शास्त्र सामग्री विनाही भरथको ज्ञान होता भया ताते हे मैत्रेय प्रवल भावी प्रतिबंधके दूर कर्नें का कोई उपाय नहीं भोगनेसेही नष्ट होता है वर्तमान शरीरमें ज्ञानके प्रतिबंधक दोष चार प्रकारके होतेहैं एक कुतर्क १ एक दुराग्रे २ एक विषया शक्ति ३ एक मंदबुद्धि ४ ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्म श्रोत्री गुरु में श्रद्धा सम्यक् कर तिनके वाक पुनः पुनः सर्व श्रवण करने ते पुनः मनन पुनः निदिध्यासन कर्नें ते वर्तमान जन्म मेंही उपक्रम उपसंहारादि श्रवणके षट्लिंगोंसहित प्रतिबंधक दूर होके अपने स्वरूपका सम्यक् अपरोक्ष ज्ञान होताहै हे मैत्रेय सर्व प्रतिबंधकोंते रहित विद्वान भरथ मनमें विचारा कि वाणी द्वारा ही राग द्वेष होताहै मौन होनेसे किसीसे राग द्वेष नहीं होता तथा संबंधी भी इसको निकंमा जानकर गृहस्थ में जोडते नहीं अरु मुझको ग्रहस्थ ग्रहण करने की इच्छा भी नहीं बंधन रहित होकर देशाटन करनेकी इच्छाहै अरु प्रारब्धके अधीन भवतव्यभी इस शरीरकी ऐसेही होनीहै यह ईश्वरकी नीतिहै ताते जडवत मौन करना ही ठीकहै जो गृहस्थ का बंधन निर्यत्नही टूटेगा कोई मैं जन्म मरनके तथा राग द्वेपके भयते मौन ग्रहण नहीं कर्ता काहेते सम्यक् आत्मा अपरोक्षवानको हजार तरहके राग द्वेष करने सेभी जन्मको नहीं पाता एक रागकी क्या गनतीहै परंतु विद्वान सर्वात्मा होनेते किससे राग द्वेष करे पूर्व मैं अज्ञानीथा इसीते तीन जन्म पाये अब मैं जानने योग्य पदको जानाहै राग द्वेषादिक सर्व इस मनके धर्महैं मुझ चैतन्यके नहीं हे मैत्रेय इस प्रकार वह ब्राह्मण विचार करके जान बूझके जडवत मूक होजाताभया तिसदिन से लेकर लोक तथा ग्रहके संबंधी तिसको जड़भरथ कहने लगे तथा उपनयन गृहस्थका न ग्रहण कराते भये तथा विशेष प्रीतिका निकंमा जानकर त्याग कर्तें भये जड

59

भरथको यह बात अनुकूल होतीभयी भरथ स्वतंत्र वन विषे तथा नगरों विषे तथा पर्वतों विषे तथा कुंजों नदियोंके तटों विषे वि चरने लगा जो कछु प्रारब्धके अनुसार प्राप्तहोवे तिसको भोगे पर राग द्वेषको न प्राप्त होवे काहेते आप सहित सर्वको अपना सच्चिदा नंद स्वरूप जाने था हे मैत्रेय कोई राजा किसी तीव्र कामना वाला अरु अज्ञानी पंडितोंकर बोधन करा हुआ देवीकी भेट वास्ते कोई निकंमा मनुष्य वन में तलाश करते हुये तिनको जड भरथ मिलगया अरु निर्णय कर जाना कि यह निकंमाहै तिसको देवीके सन्मुख ले जाकर खड्गसे राजा जड भरथ का शिर काटने लगा आगे जड भरथ हँसेथा किंचित्मात्र भी भयको न प्राप्त होता भया अरु मंदिरमें आकाशवाणीहुई हे मूर्ख राजा यह ब्रह्मनिष्ठ विद्वान चाहे तो तुझ मुझ सहित सर्व जगत्को भस्म कर सक्ता है काहेते ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मरूप होने ते परंतु यह समदर्शी स्वरूप है इसीते एक रस है तू ज्ञाननेत्रोंते रहित अंध इसको क्या जाने ताते तू मूर्ख है परंतु अपना अपराध क्षमा करा नहीं तो मैं तुमको दंड देवोंगी यह सुनकर पुनः हर्ष शोक रहित एकरस खंगवत तिस की अवस्था राजा देखकर आश्चर्य मानभया जाना कि यह कोई महानपुरुषहै अपना महान अपराध जानकर शरणागत हुआ अरु पूछता भया हे भगवन तुम कौन हो मेरा कसूर माफ करो तुम कोई अलौकिक वस्तुको पाये हो जो शरीर नाश अवस्थामें तुम निर्भय अरु प्रसन्नहो हेकृपालु समदर्शी महापुरुष कालके भयते रहित वस्तुका मुझदीन नवीनको भी उपदेश करो इस प्रकार राजाकी सरल वाणी सुन करुणाके समुद्र जड भरथजी कहते भये हे राजन् अंतर जो बुद्धि आदिकोंका परिमाण करने वाला है तथा। जग्रत स्वप्न सुषुप्तिको तथा भूत भविष्यत वर्तमान कालको तथा सत रज तमको तथा ज्ञान अज्ञानको जो सिद्ध प्रकाश करने वाला साक्षी आत्माहै सोई कालके भयते रहित सच्चिदानंद स्वरूप वस्तु है हे राजन् यह सर्व बुद्धि आदिक दृश्य पदार्थ जाग्रत स्वप्नमें होतेहैं सुषुप्तिमें पुनः मिट जातेहैं तिन बुद्धिको आदिकोंके भावाभावके अनुभव कर्नेवाला दृष्टावस्तु एक रसहै इसीते इस दृष्टाको सत कहते हैं तैसेही यह सर्व बुद्धिसे आदि लेकर माया पर्यंत सर्व कार्य कारण रूप संघात दृश्य जड रूप है स्व पर काभी इस दृश्यको ज्ञान नहीं जिस

सत वस्तु करके इस जड़ संघातकी चेष्टा होतीहै तथा सर्व बुद्धि आदिकोंके व्यवहारका ज्ञान होताहै तिसी सत वस्तुका चैतन्य नाम राखाहै मन वाणीका गोचर दुःख रूप दृश्यते पूर्वोक्त सत् चित् वस्तु भिन्न होने ते तिस सत् चित् वस्तुका आनंद नाम धराहै सर्व नाम रूप दृश्यमें आकाशकी न्याई व्यापक होने ते इन बुद्धि आदिकोंके सत् चित् आनंद दृष्टाका नाम विष्णु वेदने राखाहै अमंगल अकल्याण स्वरूप दृश्यते सत् चित् आनंद विष्णु साक्षी दृष्टाको अतीत होनेतें शिवनाम वेदने कल्पाहै सर्व नाम रूप दृश्यजातका सच्चिदानंद दृष्टाही स्वामी प्रेरकहै इसवास्ते तिसीका नाम वेदने गणेश रखदियाहै हेराजन् विष्णु सहस्रनाम शिवसहस्रनाम इत्यादि नामों का अर्थ सत् चित् आनंद दृष्टावस्तु विषेही घटसक्ताहै तिसते पृथक् असत् जड़ दुःख परिछिन्न अमंगल रूप दृश्य वस्तुविषे नहीं घटसक्ता अरु सच्चिदानंद व्यापक वस्तुतेही मन वाणीके गोचर दृश्यवेद सहित जगत्की उत्पत्ति पालना तथा संहार होताहै सत् चित् आनंद व्यापक वस्तुही मोक्ष स्वरूपहै इसते भिन्न मोक्ष अंगीकार करेते असत् जड दुःख रूप मोक्ष होवेगी हर्ष शोकादिकोंके दृष्टा सत् चित् आनंद वस्तुको दृश्यरूप पृथिवीका कार्य शस्त्र भी छेदन नहीं करसक्ते तथा जल नहीं गाल सक्ते तथा अग्निनहीं दाह कर सक्ते तथा वायु शोषण नहीं करसक्ता सारांश यहकि सर्व दृश्यके भीतर भी दृश्य स्पर्शते रहित अहंत्वंबंध मोक्षादि रहित स्वरूप सेही जो निर्विकल्प निर्विकारहै सोई तेरा स्वरूपहै हेराजन् जो वस्तु मनादिकोंके फुरणे अफुरणेको तथा सविकल्प निर्विकल्पको तथा मनादिकोंके विकार निर्विकारका ज्ञाता है तात्पर्य्य यहकि ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयादिक सर्व त्रिपुटीयोंका जो प्रकाशक सत् चित् आनंद व्यापक वस्तुहै सोई तुम्हारा स्वरूपहै वही मेरा स्वरूपहै तथा ब्रह्मा, विष्णु, शिवादिकों काभी वही स्वरूपहै तथा चींटीका तथा चंडालका तथा स्त्रीका वही स्वरूपहै तथा सर्व जगत्का वही स्वरूपहै हेराजन् मायारूप पंचभूतोंका विकार रूप यह संघात तेरा स्वरूप नहीं किंतु पूर्वोक्त सत् चित् आनंद स्वरूप तेरा आत्माहै अरु देह असत संसारको असार स्वप्नवत् जानकर इस देहमे अहंबुद्धि त्याग पुनः तिस त्याग काभी त्यागकर पीछे जो शेषरहेगा सो अवाङ्मनसगोचर पदहै सो तूहींहै हे राजन् मैंने आपको सच्चिदानंद रूपजानाहै इसीते असत जड

60

दुःखरूप संसारते मुझको भयनहीं और कोई मैंने अमल नहीं खाया और न कोई मुझको जादू मंत्र आताहै न कोई मैं कला विद्या सीखाहों अरु न कोई मुझमें सिद्धाईहै अरु न कोई मैं रसायन जानता जाते काल ईश्वर शास्त्रके भयते रहितहों किंतु मैं केवल सच्चिदानंद स्वभाव सेही कालादिक दृश्यते असंग निर्विकार निर्विकल्प आपको जानताहों इसीते निर्भयहों हे राजन् यह अनात्मक दृश्यमान देहतो ब्रह्मा विष्णु शिवादिकोंकेभी अनित्य कालका ग्रासहै इन देहोंकी क्या कहना है ताते तूही सत् चित् आनंद स्वरूप कालका काल चिरंजीवीहै अरु तूही काल सहित सर्व दृश्यकी उत्पत्ति सिद्ध करनेवालाहै तूही चैतन्य स्वयंप्रकाश स्वतः सिद्धहै किससों भयकर्ताहै देहविषे अहंकार रूप दीनताको त्याग अरु मैं सच्चिदानंद स्वरूप अवाङ्मनसगोचरही सर्वात्मा हों इस उदार निश्चयको धारण करो हे राजन् जब तू इस पूर्वोक्त उदार निश्चयको नहीं धारण करेगा तो इससे पृथक् किसी असत जड़ दुःख रूप वस्तुमेंही निश्चय धारण करना पड़ेगा काहेते कि मनको कोई न कोई निश्चय करनाही है बिना किसीके निश्चय करे ठहरे भी नहीं बिना एक निश्चय करे अरामभी नहीं होता है हे राजन् असत जड दुःख रूप वस्तुमें अहं निश्चय करनेवाला असत जड दुःख रूपही होता है अरु मैं सच्चिदानंद व्यापक स्वरूप हों इस निश्चयवाला सत् चित् आनंद स्वरूपही होता है काहेते जो मनका दृढ़ निश्चय होता है वही तिसकी गति होती है ताते कायिक वाचिक मानसिक इस संघातमें सर्व व्यवहार शुभाशुभ होते न होते आपको सर्व व्यवहारोंका अकर्ता अभोक्ता द्रष्टा साक्षी असंग निर्विकार निर्विकल्प सच्चिदानंद स्वरूपजान यह भी निश्चय बुद्धिका है इसको भी अपनी दृश्यरूप जानके अवाङ्मनसगोचर हो रहो साक्ष साक्षी भावभी उपाधि है फुरे कछु नहीं असत जड दुःख रूप अपनी दृश्य विषे अहंनिश्चय भूलकर भी मतकर दुःख होगा आगे जो तुम्हारी इच्छा है सो करो पराशरने कहा हे मैत्रेय इस प्रकार जड भरथ कहकर तूष्णी हुये अपनी इच्छा अनुसार जाते भये अरु राजा अपने स्वरूपमें स्थित भया अरु जीवनमुक्त होकर अपने राज व्यवहारको कर्ता भोक्ता बुद्धि रहित कर्ता भया पराशरने कहा हे मैत्रेय तू भी इसी निश्चयको धारण करो अरु देह अभिमानको

त्यागो मैत्रेयने कहा मुझ में ग्रहण त्याग ये दोनो नहीं मुझ अस्ति भाति प्रियते आगेही नाम रूप पृथक् नहीं था अब धारण किसका करों अरु ग्रहण त्याग किसका करों निश्चय करना बुद्धिका धर्म है सो नामरूपका निश्चय बुद्धि कर सक्ती है नाम रूप ते रहितका नहीं जो जो निश्चय करोंगा सो नाम रूपकाही करोंगा अंतमें नाम रूप की ही प्राप्ति मिलेगी सो अबही यत्न विना नाम रूपकी प्राप्ति है फल क्या हुआ सो कहो अरु मैं चैतन्य बुद्धिसे परे हों कौन निश्चय धारण करे असली पूछो तो मैंही चैतन्य बुद्धि आदिकदृश्यते अवाङ्मनसगोचर हुआ हुआ भी बुद्धि आदिक ध्याता ध्यान ध्येय सर्व दृश्यको धारण कर रहा हों पीसे हुयेका पुनः क्या पीसना है पर कथा उस संतकी कहो हे मैत्रेय कोईक सामान राजाथा सो सुखपालकी सवारी कर्नेका व्यसनीथा रहू गण तिसका नामथा एक महान शीतल चारु सर्व ऋतुके पुष्पों कर तथा शीतल सुगंध वायुकर तथा अनेक पक्षियोंके शब्दों कर संयुक्त पर्वत था तिस पर्वतपर राजा गर्मीके दिनोमें अपने गृहसे पालकी पर सवार होकर हमेशः हवाखाने वास्ते तथा संतपै आया कर्ताथा एक दिन ग्रीष्मऋतुमें पालकी में सवार होकर तिस पर्वतमें हवा लेने वास्ते चला मध्यमें सुखपालके उठाने वाले कहारोंको बीमारी होगई राजा सभ हाल जानके हलकारों को हुक्मदियाकि जलदी कहारोंको लावो सो प्रमादी हलकारे कहारोंकी तलाश करते हुये दोमनुष्य मोटे ताजे तिसी जंगलमें विचरते हुये मिले कैसे हैं न हिंदू न मुसल्मान जाने जाते हैं न नग्न हैं न सम्यक् वस्त्र भगवे पहरे हुये हैं न केवल मुंडितहैं न केवल जटाधारीहैं न पंडित न मूर्ख जाने जातेहैं न पूज्य न अपूज्य जाने जातेहैं न अमीर न फ़क़ीर जाने जातेहैं न शुद्ध न मलीन न संत न असंत न त्यागी न गृही जाने जातेहैं अव्यक्तही तिनका निश्चयहै अव्यक्तही तिनका चिह्नहै न इच्छावान् न अनिच्छित प्रतीत होतेहैं न संशक्तीवान् न असंशक्तीवान् प्रतीत होतेहैं न सर्वज्ञ न अल्पज्ञ प्रतीत होतेहैं न मौनी न अमौनी प्रतीत होतेहैं न रागवान न विरागवान मालूम होतेहैं न श्रेष्ठ आचारवान न अश्रेष्ठाचारवान जाने जाते हैं न भयवान न अभयमान प्रतीत होतेहैं न क्रोधी न शांतिवान् न गुरु न शिष्यकर प्रतीत होतेहैं न विवेकी न अविवेकी न धूर्त न अधूर्त जाने जातेहैं न धर्मी न अधर्मी

न उदार न कृपण जाने जातेहैं न कर्मकांडी न अकर्मकांडी न उपासक न अनुपासक जाने जातेहैं न कवी न अकवी न कामी न अकामी न जीव न ईश्वर जाने जातेहैं न भक्त न अभक्त न लोभी न अलोभी न संमोही न अमोही जाने जातेहैं न ज्ञानी न अज्ञानी प्रतीत होतेहैं नसम्यक् कर्ता न अकर्ता न भोक्ता न अभोक्ता प्रतीत होतेहैं न मानी न अमानी प्रतीत होतेहैं तात्पर्य यह कि वाहिर किसीभी असाधारण लक्षण करके जाने जाते नहीं किंतु तिनका सुसंवेद लक्षणहै जांगली पुरुषोंकी न्याई वामदेव जड़ भरथ दोनो थे तिनको पकड़ कर राजाकी सुखपालमें तिन दोनोंको जोड़ दिया अरु कहा जलदी चलो सो कभी जलदी चलें कभी खड़े हो जावें कभी हँसे कभी मौन होवें कभी पालकी कांधेसे गिरपड़े कभी टेढ़े चलें कभी सूधेही चले जावें राजा अरु अहलकार बहुत तिरस्कारके वाक्य कहते भये बल्कि मूर्ख जो राजाके खिदमतगार थे सो हाथोंकर तथा लकड़ियों कर मारते भी भये परंतु वह जैसे थे तैसेही प्रसन्न मुख रहे किंचित्भी हर्ष शोक न कर्ते भये तव राजा यह अवस्था देखकर तत्काल सुखपालसे उतरा अरु दर्शन कर्तेही प्रमादका त्याग किया इसीते शुद्ध अंतःकर्ण हुआ विनती करी हे स्वामिन् आप संतोंको निष्प्रयोजन मैं असंतने दुःख दियाहै क्षमाकरो अरु मुझको सत उपदेश करो प्रथमै जड भरथ बोला हे राजन् हमारे कांधेपर सुखपाल देने ते तैंने पाप मानाहै सो सुखपालका बोझ कांधोंपरहै अरु कांधोंका बोझ कमरपरहै अरु कमरका बोझ गोडपरहै अरु गोडुओंका बोझ चरणोंपरहै अरु चरणोंका बोझ पृथिवीपर है ताते पृथिवीसे क्षमा कराय वा पृथिवीका बोझा जलपरहै काहेते कार्य अपने उपादान कारणमेंही रहताहै जैसे घटादिक पृथिवीमेंही रहतेहैं तैसे जलका बोझ अग्निपरहै अरु अग्निका भार वायुमें है अरु वायुका भार आकाशमेंहै आकाश समष्टी सूक्ष्म अहंकार महत्तत्त्वरूपहै अरु महत्तत्त्व माया रूपहै अरु कल्पित मायाका तथा मायाके कार्य बुद्धि आदिकोंका सर्व नाम रूप दृश्यका अधिष्ठान आधार तूही सच्चिदानंद साक्षीहै ताते तू चैतन्यही अपने ऊपर आप क्षमा कर वा न कर हम क्षमा क्या करें अथवा हे राजन् सुखपाल भी पृथिवी आदिक पंचभूत रूपहै अरु शरीर भी पृथिवी आदिक पंचभूत रूपहै पंचभूतही पंच-

भूतोंसे क्षमा करावे वा न करावे पंचभूतही पंचभूतों पर क्षमा वा न करे अरु पंचभूत रूप देहही पंचभूत रूप पालकी पर सवारहै अरु पंचभूत रूपही पालकीके उठाने वाले हमारे शरीरभीपंचभूतरूपहैं तुझ असंग निर्विकार निर्विकल्प संघात रूप त्रिपुटी के द्रष्टा चैतन्यको लोगोंके झगडेसे क्या पंचायतहै हेराजन् वृथा अहंकार तैंने कियाहै जो मैं सुखपाल पर चढ़ाहौं विचारे सुखपाल कहांहै काष्ठहीहै काष्ठ पृथिवी रूपहै पृथिवी जल रूपहै जल अग्नि रूपहै अग्नि वायु रूपहै वायु आकाशरूपहै आकाश अहंकाररूपहै अहंकार महत्तत्त्वरूपहै महत्तत्त्वमाया रूपहै सो माया तुझ चैतन्यमे रज्जुसर्पवत् कल्पितहै तुझ चैतन्य ते पृथक् नहीं तूहीहै कहो सुखपाल कहांहै सुखपालके स्वरूप विचारे बिना अभिमान मतकर ताते तुझको लज्जा नहीं आती जो अपने ऊपर आप सवारी करताहै हे राजन् तुझ चैतन्य प्रकाश तेही यह देह रूप सुखपाल वा ब्रह्मांड रूप सुखपाल उत्पन्न भयाहै जैसे स्वप्नद्रष्टा तेही निद्रा दोष कर स्वप्न सृष्टी उत्पन्न होतीहै प्रथम तुझ निर्विकार सत् चित् आनंदते माया रूपी दोष कर शब्द गुणवाला आकाश उत्पन्न होता भया पुनः तुझ चैतन्य आकाशते स्पर्श गुणवाला वायु होता भया पुनः तुझ चैतन्य रूप वायुते रूपगुणवाला अग्नि होता भया पुनः तुझ तेज रूप चैतन्य ते रस गुणवाला जल उत्पन्न होता भया पुनः जलरूप तुझ चैतन्य ते गंध गुणवाली पृथिवी होती भई पृथिवीते औषधी औषधीते अन्न अन्नते वीर्य वीर्यते शरीर रूपी सुखपाल होता भयाहै वा स्वप्नकी न्याई क्रम से विनाही "एक कालावछेदेन" यह कारणकारज रूप संघात रूप वा ब्रह्मांडरूप सुखपाल तुझ चैतन्य ते उत्पन्न होता भयाहै क्रम सेभी तुझ चैतन्य ते इसी की उत्पत्तिहै अरु अक्रम्य सेभी तुझ तेही उत्पत्तिहै हे राजन् जैसे लोक विषे लौकिक पिता अपने पुत्रको उत्पन्न कर्ता है अरु आपको पुत्र ते जुदा जानताहै अरु अपने पुत्रादिक ऊपर चढ़ता हुआ लज्जामानहोताहै तैसे तू चैतन्य इस देह रूप सुखपाल का वा ब्रह्मांड रूप सुखपाल रूप पुत्रादिकका अलौकिक पिता अपने देहादिसंघात रूप पुत्रको अपना रूप जानताहै अरु अपने पुत्र ऊपर चढ़ताहै अरु प्रसन्नता मानताहै तुझको लज्जा नहीं आती इस प्रकरण में देहादि संघात अपनेते अत्यंत भिन्न तिनको अपना स्वरूप मानना यही चढ़नाहै ताते इस सं-

62

घातरूप सुखपालको आपते भिन्न मानकर अहंकार त्याग यद्यपि वास्तवते देहका त्याग तेरे आगेही सिद्धहै जैसे घटाकाशका घटसे संबंध आगेही नहीं तथापि भ्रमसिद्ध संबंधके त्यागका त्यागहै यह असत् जड़ दुःख रूप शरीर मेराहै वा शरीर मैंहों यही इस शरीर रूप सुखपालमें सवारीहै राजाने कहा मैं शरीरके अहंकारते कैसे छूटों जड भरथ तूष्णी भया वामदेवने कहा हे शार्दूल राजन् जैसे तू इसका ष्ठकी सुखपालमें बैठाहुआ अरु सुखपालके सुख दुःखभोगता हुआ भी आपको सुखपालते जुदा जानताहै पालकीरूप तू आपको कदाचित् भी नहीं जानता तथा सुखपालके उठाने वाले कहारोंते तथा चोपदारोंतें तथा अन्य संबंधियोंते आपको जुदा जानता है जो कोई पूछे यह सुखपाल किसकी है तब तुम कहते हो हमारी है यह नहीं कहते कि मैं सुखपाल रूपहों तैसेही यह शरीर सुखपालहै मन बुद्धि चित्त अहंकार अरु सत रज तम गुण तथा प्राणदेह रूप सुखपालके उठाने वाले कहारहैं दशइंद्रिय आगे जानेवाले चोपदारहैं अरु पंचभूत रूप काष्ठों कर रची हुई यह संघात रूप वा ब्रह्मांड रूप सुखपालहै शब्दादि पंचविषय रूप रस्तोंमें इंद्रियरूप कहार सुखपालको लिये चलतेहैं मायारूप पृथिवी इंद्रियरूप चोपदार तथा मनादि कहारों का तथा संघातवा ब्रह्मांडरूप सुखपालका तथा अन्य सामग्रीका तू आधारहै हे राजन् पूर्वोक्त कहार चोपदार सहित असत जड दुःख रूप यह देहरूप सुखपाल तुझ सत् चित् आनंद स्वरूपते अत्यंत भिन्न है एक नहीं तू चैतन्य पुरुष इस शरीर रूपी सुखपालमें वा ब्रह्मांड रूप सुखपालमें स्थित हुआ हुआभी तथा इस संघातके सुख दुःखको अनुभव कर्ता हुआभी असंग निर्विकारहै हेराजन् जब तू इस संघातको सुखपालकी न्याईं आपते जुदा अपनी दृश्य जानके देह अभि मान त्यागेगा अरु अपनेको प्रत्यक् चैतन्य स्वरूप जानेगा तब हमारी न्याईं जीवनमुक्तहोकर विचरेगा काष्ठकी सुखपाल अरु पंच भूतोंका विकार यह देह रूप सुखपाल जडादि गुणों करके तुल्यही है अरु वास्तवते दोनों तुझ चैतन्यते भिन्नहैं अरु तू प्रत्यक् चैतन्य दोनोंते जुदाहै परंतु काष्ठकी सुखपालते निश्चयकर आपको जुदा मानताहै अरु देहरूप सुखपालको अपना स्वरूप जानताहै यह ब- ड़ा आश्चर्यहै हेराजन् या दोनों सुखपालोंते आपको जुदा जान या दोनों सुखपालोंको अपना स्वरूप जान एकको अपना स्वरूप जा-

नना एकको न जानना यह विचार रहितका कामहै विचारेते दोनों समानहीहैं यह ऐसेहै जैसे कोई कहै एकही मुर्गी आधी मुईहै आधी जीवती है यह न्याय मूर्खताका तुझको प्राप्तहोगा अथवा हेराजन् यह कार्य कारण रूप सर्व ब्रह्मांड ही तुझ एकही सच्चिदानंद पुरुषकी सुखपालहै देह अभिमानी अज्ञानी जीव सुखपालके उठाने वाले तुझके कहारहैं काल तुझका चोपदारहै चांद सूर्य दोनो मसाल चसाकर आगे चलने वालेहैं तारागण तुझ चैतन्यके खेलनेके पुष्पहैं आकाश तुझका चंदोवाहै वायु तुझको पंखा करने वालीहै सात समुद्र सहित मेघमाला तुझ चैतन्य पुरुषको पानी पिलाने वाले हैं माया तुझकी शक्ति है तीन गुण रूप ब्रह्मा विष्णु शिव तुझ चैतन्य पुरुषके कारिंदा हैं दिन अरु रात सुखपालके उठानेका लंबाकाष्ठ है जिसको कहार पकड़ते हैं अग्नि तुझकी चिरागदानी करनेवाला है यावत् वनस्पति तुझके सैल करनेका वगीचा है सुमेरु आदिक पर्वत तुझ चैतन्य पुरुषके ब्रह्मांडरूप सुखपालके सिराने हैं पंच शब्दादि विषय सुखपालकी कील लगरहे हैं पृथिवी तुझकी सुखपालमें बैठनेकी जगह है तात्पर्य यहकि हे राजन् जैसे तू इस जड काष्ठमय सुखपालमें स्थित हुआ सुखपालके सर्व हालका ज्ञाता द्रष्टा सर्व प्रकार करके भिन्न है काष्ठमय सुखपालके नाशते तू नाश नहीं होता तैसे तू चैतन्य पुरुष एकही इस देह सहित ब्रह्मांड रूप असत् जड दुःखमय सुखपालमें स्थित हुआ हुआ अपनी सत्ता स्फूर्त्ति करके इस कार्य कारण ब्रह्मांड रूपी सुखपालकी पालन पोषण तू चैतन्य करता हुआ इसके सर्व हालका ज्ञाता द्रष्टा सर्व रूप करके जुदा है राजाने कहा जो मैं शरीरते भिन्न हों तो कौन हों वामदेवने कहा मैं कौन हों इस बुद्धिके चिंतनको वाणीकें कथनको अंतर जिसने जाना वही तू निर्विकल्प निर्विकार है वही मैंहों ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका स्वरूप वही है हे राजन् इसीपर एक कथा है सो तू सुन एक समय ऋषभदेव निदाख राजाके आश्रम पर स्वभाविक ही विचरता हुआ आया देखकर आगे निदाख उठ खड़ा हुआ अरु शास्त्रविधि पूर्वक पूजन किया विनती करी हे महाराज भोजन कीजिये ऋषभदेवने कहा बहुत अच्छा तब अनेक प्रकारके भोजन कराये जब जमिचुके तब निदाखने कहा

हे स्वामिन् अघाये हो ऋषभदेवने कहा हे राजन् प्राणोंको क्षुधाथी तिनोंने भोजन पाये ताते प्राणोंसे पूछ जो अघाये हैं तो प्राण अ-घाये हैं मुझ चैतन्यको द्दष्टा होने ते मुझमें क्षुधा अघावना दोनों नहीं निदाखने कहा तुम कहां रहते हो अरु कहां जावोगे अरु आये कहांसे हो ऋषभदेवने कहा मैं चैतन्य आकाशकी न्याईं सर्वमें पूर्ण हों मुझमें आवना जाना नहीं देश काल वस्तुभेद ते मुक्त हों नि-दाखने कहा नगरमें चलिये अरु आरामदारी करिये ऋषभदेवने कहा इस नामरूप ब्रह्मांड नगरविषे आगेही मैं स्थित होरहा हों मुझ चैतन्य बिन कोईभी जगह खाली नहीं जैसे घटाकाशको कहिये तुम नगर चलो जो लज्जाका काम है हे राजन् मैं चैतन्य आनंद स्वरूप हों अरु अक्रिय हों मुझमें बे आरामदारी दुःख हैं नहीं जो नगर में जायकर आराम पावों यह सर्व जगत् नेत्रोंके खोलनेसे उ-त्पन्न होता है फुरणामात्र जगत् नहीं होता तो सुषुप्तिमें भी प्रतीति होना चाहिये नेत्र मूंदनेसे मिट जाता है ताते मिथ्या है अरु मि-थ्याके सिद्ध करनेवाला तू चैतन्य सत है निदाखने कहा मुझके हर्ष शोक कैसे दूर होवें ऋषभदेवने कहा हर्ष शोक मनके हैं हर्ष सोकके द्दष्टा तुझ चैतन्यके नहीं निदाखने कहा जन्म मरन क्यों कर मिटे ऋषभदेवने कहा जन्म मरनादिक षट् विकार इस संघातके हैं तुझ नि र्विकार साक्षी चैतन्यके नहीं मिटे कैसे जैसे घटाकाश कहे जन्म मर्नादिक मुझके कैसे छूटें यह विना विचारेकी बातहै विचारे षट् विकारघटके हैं निर्विकार घटाकाशके नहीं निदाखने कहा बंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्ति कैसे होवे ऋषभदेवने कहा हे राजन् प्रथमे तू बंध मोक्षका स्वरूप कहो पीछे मैं उपाय कहोंगा निदाखने कहा और तो कोई बंध मोक्षका स्वरूप विचार करेसे मालूम होता नहीं केवल दुःख सुखही बंध मोक्षका स्वरूप प्रतीति होता है काहेते दुःखते पृथक् बंधका अर्थ करें तो सुख आजाताहै सुखसे पृथक् मोक्षका अर्थ करें तोदुःखकी प्राप्तिहोतीहै ताते बंधमोक्ष सुख दुःख स्वरूपहैं तिसते भिन्न नहीं ऋषभदेवने कहासो सुख दुःखरूप बंध मोक्षतो दूरनहींकिंतु अपरोक्षहीहै काहेते जो देशांतर में प्रोक्ष होवे स्वर्गवत तो हमको तुमको अरु सर्व जगत्को प्रत्यक्ष दुःख सुख रूप बंध मोक्षका अ-नुभव नहीं होना चाहिये हम लोकोंको बंध मोक्षरूप सुख दुःखका अनुभव प्रत्यक्ष होताहै ताते अपरोक्षहैं परोक्षनहीं जब अत्र वर्त-

मान शरीरमें ही सुख दुःख रूप वंध मोक्षका प्रत्यक्ष अनुभव होता है सारांश यहकि सुख दुःख रूप वंध मोक्षके अनुभव करने वाले हम प्रत्यक् आत्मा वंध मोक्षते भिन्नहैं तो मरके वाकव कैसे हमारी मोक्ष होगी किन्तु सुख दुःख रूप वंध मोक्ष अव हमारी होगी यह वात हमको कहनी वा अपने मनमें निश्चय करनी सो भूलका कामहै काहेते नित्य मुक्त मुझ प्रत्यक् आत्मा की न पूर्व वंध मोक्ष हुआ है न अव है न आगे होगा हे निदाख सुख दुःख रूप वंध मोक्षके अनुभव करनेवाला नाम सिद्ध करने वाला तिन सुख दुःख ते न्याराहै यह वात सामान्य पुरुष भी जानते हैं ताते हे निदाख इस संघातमे दुःख सुख रूप वंध मोक्षको अनुभव नाम सिद्ध करने वाला कौनहै तथा वंध मोक्ष किसको है यह विचार करा चाहिये वाकादिक पंचकर्मेन्द्रिय तथा प्राण यह तो केवल शब्दादिक क्रियाके करने वाले हैं ज्ञानशक्ति इनमें नहीं केवल क्रियाशक्तिहै काहेते जड आकाशादिक पंचभूतोंके एक एक राजसी अंश ते उत्पत्तिवाले होनेते इसीते पंचकर्मेंद्रिय तथा प्राण सुख दुःख रूप वंध मोक्षके ज्ञाता भी नहीं तथा वंध मोक्ष रूप भी नहीं तथा वंध मोक्ष इनका धर्म भी नहीं घटवत तैसेही पंच ज्ञानेंद्रिय मन बुद्धि चित्त अहंकार चतुष्टय अंतःकर्ण जड पंचभूतोंका कारजहोने ते जड हीहै काहेते जैसा कारण होताहै तैसाहीकारज होताहै यह नेमहै ताते ज्ञानेंद्रिय तथा अंतःकर्ण कर्मेंद्रियों के तथा प्राणोंके वड़े भाई हैं किसी रीतिसे ज्ञानेंद्रियोंमें तथा चतुष्टय अंतःकर्णमें ज्ञान शक्ति माने भी तौभी वृत्तिरूप ज्ञानके उत्पत्तिके साधनहैं ज्ञान स्वरूप नहीं ताते श्रोत्रादिक ज्ञानेंद्रियों करके तो केवल शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधकाही ज्ञान होताहै तिनोते भिन्न सुख दुःख रूप वंध मोक्षको तो स्वप्नेमेंभी नहीं जान सके काहेते जो वंध, मोक्ष, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधरूप होवे तो श्रोत्रादिक ज्ञानेंद्रियों कर जाने जावें सो तो वंध मोक्ष शब्दादिरूपहैं नहीं ताते ज्ञानेंद्रियोंका धर्म वंध मोक्ष नहीं तथा वंध मोक्ष ज्ञानेंद्रिय रूपभी नहीं यद्यपि सर्व इंद्रियादि नाम रूप दृश्यको वंध मोक्ष रूपही आगे कहनाहै तथापि इस प्रकरणमें वंध मोक्षको दृश्य इंद्रियादियोंते भिन्न कहनेका तात्पर्य्य है तैसे मन बुद्धि चित्त अहंकार रूप चतुष्टय अंतःकर्णका धर्मभी दुःख सुख रूप वंध मोक्ष नहीं संकल्प विकल्प निश्चय चिंतन अहंपनाहीं इनका धर्म है अन्य नहीं जो वंध मोक्ष

64

अंतःकर्णकाही धर्म मानोगे तो संकल्प विकल्प निश्चय चिंतन अहंपणा रूपही दुःख सुख रूप बंध मोक्ष होवेंगे इसते भिन्न बंध मोक्षका स्वरूप कथन करना केवल शास्त्र संस्कार रहित अविचारका कामहै ताते अंतःकर्णका धर्म संकल्पादि मात्रही बंध मोक्षका स्वरूपहै कोई पृथक् पदार्थ नहीं यह सिद्ध हुआ काहेते आभास सहित अंतःकर्ण वा अविद्या विशिष्ट चेतन औ अधिष्ठान कूटस्थ सहितका नाम जीवहै अंतःकर्ण ते चैतन्यको भिन्न करे वा नहीं करे परंतु सर्व प्रकारसे है चैतन्य असंग निर्विकार सच्चिदानंद जीवका लक्ष स्वरूपहै तिसमे बंध मोक्षका उपयोग नहीं उलटा बंध मोक्षके सिद्ध करनेवाला वही तुम्हारा स्वरूपहै विचारे अंतःकर्णमें आभासकेभी सुख दुःख रूप बंध मोक्ष धर्म नहीं काहेते वास्तव ते तिसको भी कूटस्थ होनेते प्रतिबिंब जैसे बिंब होताहै ताते केवल आभासकेभी सुख दुःख रूप बंध मोक्ष धर्म नहीं तथा केवल अविद्याकेभी सुख दुःख रूप बंध मोक्ष धर्म नहीं काहेते जो अविद्याके होते तो सुषुप्तिमें अविद्या तो है अरु दुःख सुख रूप बंध मोक्ष नहीं इस अन्वय व्यतिरेक्यसे अविद्याकेभी बंध मोक्ष धर्म नहीं ताते आभास सहित अंतःकर्ण ते भिन्न जीवका वाच स्वरूप नहीं तिस जीवके वाच स्वरूपमेही बंध मोक्षकी कल्पनाहो वा नहो जीवके लक्ष स्वरूप चैतन्य तुम्हारे स्वरूपमें नहीं हे निदाख तात्पर्य यह कि अंतःकर्णके संकल्प मात्र दुःख सुखरूप बंध मोक्ष सहज धर्म हैं धर्मोंके उपादान कारण अंतःकर्ण धर्मीके नाशविना संकल्प रूप बंध मोक्ष धर्मोंका नाश नहीं होता ताते बंध मोक्ष संकल्प रूप धर्म अंतःकर्ण रूप हैं अरु अंतःकर्णके उपादान कारण आकाशादि पंचभूतहैं ताते अंतःकर्ण पंचभूत रूपहैं पंचभूतोंके नाश विना अंतःकर्णका आभाव नहीं होता पंचभूतोंका कारण मायारूप अज्ञान है मायाके नाश विना पंचभूतोंका नाश नहीं होता ताते पंचभूत माया रूपहैं अरु माया रूप अज्ञानका सत् चित्त आनंद स्वरूप आत्मज्ञान विना नाश नहीं होता सो सच्चित् आनंद स्वरूप मायासे आदि लेकर देह पर्य्यंत सर्वके जाननेवाला तूही आत्माहै सो अपने स्वरूपका न जाननाही मायारूप अज्ञानहै ताते अपने सत् चित् आनंद निज स्वरूपका ज्ञानही अपेक्षत सुख दुःख संकल्प रूप बंध मोक्षकी निवृत्तिका उपायहै वा पूर्वोक्त बंधकी निवृत्ति रूप आत्मा अधिष्ठानही मोक्ष रूप सुखकी

प्रातिका उपाय है हे निदाख जो पूर्वोक्त अपेक्षित वंध मोक्षकी निवृत्तिका वा बंधकी निवृत्ति मोक्ष सुख रूप आत्माकी प्रातिरूप निज स्वरूप का सम्यक् अपरोक्ष ज्ञान उपाय त्यागके अन्य उपायमें प्रवृत्ति करे है सो दीपकको त्याग कर अंधेरेके दूरकरनेका उपाय निष्प्रयोजनहै तथा केवल फूसका कूटना है हे निदाख जो तू वंध मोक्षको पूर्वोक्त रीतिसे माया रूप नहीं माने तो कहो बंध मोक्षका क्या स्वरूपहै द्रष्टा रूप है वा दृश्यरूपहै दोनोंमें वंध मोक्षको एक रूपतो कहना पडेहीगा काहेते द्रष्टा दृश्यते कोई पृथक् तीसरा पदार्थ तोहैनहीं दोहीहैं जब वंध मोक्षको सत् चित् आनंद स्वरूप द्रष्टा मानोगे तो सत् चित् आनंद स्वरूपही वंध मोक्ष हुये पृथक् न हुये सो सच्चिदानंद स्वरूप तूहीहै तुझको वंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्ति वास्ते कर्तव्य करना निष्फलहै काहेते तुझ चैतन्यते पृथक् वंध मोक्षका अभाव होने ते तैसेही हे राजन् जब वंध मोक्षको दृश्य रूप मानोगे तौभी अंतःकर्ण सहित वंध मोक्षके द्रष्टा तुझ सत् चित् आनंद स्वरूपको वंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्ति वास्ते यत्नकरना योग्य नहीं तात्पर्य यहकि दोनो प्रकारसे तुझको वंध मोक्ष वास्ते कर्तव्य नहीं काहेते अपना स्वरूप स्वतःसिद्धही वंध मोक्षते रहित निष्कर्तव्य है तिसमे कर्तव्य बुद्धिही भ्रांतिहै सो भ्रांति रूपही वंध मोक्षका रूपहै निष्कर्तव्य में कर्तव्य भ्रांतिके दूर करने मेंहो गुरु शास्त्र वैरागादि साधनोकी सफलताहै कोई स्वरूपकी प्राप्ति में सफलता नहीं काहेते अपना स्वरूप आगेही प्राप्तहै गुरु शास्त्रने नवीन प्राप्ति नहीं करना ताते तू आपको अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वात्मा जान जो सर्व रूप होवें पुनः वामदेवने कहा हे रघुराजा इस प्रकार सर्वका सारभूत आत्माका निदाखको उपदेश कर ऋषभदेव चलते भये तब निदाख अस्ति भाति प्रिय सर्व रूप आपको जाननेवत जानता भया तैसेही हे रघुराजा तूभी आप सहित सर्वको अस्ति भाति प्रिय रूप जान वा माया से ले कर देह पर्यंत सर्व नाम रूप दृश्यका आपको साक्षीद्रष्टा जान जिसको यह निश्चयहै प्रगट अनेक प्रकारके नाम रूप संसार तिसको भासताभीहै परंतु एक आत्माही जानताहै जैसे अनेक घटपटादिक अज्ञानीको प्रतीत होतेभी पर विचारवान एक पृथिवी ही जानताहै जैसे स्वप्नपदार्थ अनेकरूप प्रतीत होतेभी स्वप्नद्रष्टाके ज्ञाताको सर्व स्वप्नद्रष्टा रूपहै तैसे नामरूप भिन्न भिन्न भासतेहैं पर मूल सर्वका आत्मा

एकहीहै ताते अज्ञानियोंकी दृष्टित्याग विद्वानोंकी दिव्यदृष्टिको ग्रहणकर ब्रह्मासे लेकर चींटीपर्यंत सर्वप्रकाश आपना जान जो सर्व अस्ति-भाति प्रियरूप मैंही हों मुझतेंभिन्न कछुनहीं पराशरने कहा हे मैत्रेय इस प्रकार वामदेवके अमृतरूप वचन सुनकर रघुराजा कृत्यकृत्य होकर वामदेवकी न्याई स्वतंत्र मन वांछित स्थानोंमें विचरने लगा अरु वामदेव जड भरथ भी चलते रहे हे मैत्रेय पुनः जड भरथ विचरता हुआ अपने जन्मस्थानको आताभया आये जड भरथको देखकर माता पिताने मोहकर कंठ लगाया अरु भाइयोंने भी प्रीति करी जड है तो भी हमारा भाई है जड भरथको मीठा भोजन दिया पीछे पिता हाथ पकड़कर एकांत स्थानमें लेगया प्रीतिपूर्वक पूछता भया हे पुत्र वचन क्यों नहीं कर्ता तुझको किसीका भय है वा जानके नहीं कर्ता साँच कहो तू मुझको योगी भासता है काहेते जिसको सुख दुःख हर्ष शोक मान अपमान एक समान है वही योगी है कहो इस संसार समुद्रते पार कैसे होवों हे मैत्रेय जड भरथने विचारा अब वचन करना योग्य है पिताका वचन सुनकर हँसा पुनः रुदन करने लगा पुनः पिताने कहा हे पुत्र हँसना रोना क्योंकर है जड़ भरथने कहा हे पिता मेरे हँसने रोने सों तुझको क्या प्रयोजन है पर हँसना सुखसे होता है रोना दुःखसे होता है सुख दुःख दोनो पुण्य पापरूप कर्मसे होते हैं पुण्य पापरूप कर्म इस देहसे होता है अरु देह उपलक्षत सर्व जगत् जानलेना अरु देहरूप जगत् अपने सत् चित् आनंद स्वरूपके अज्ञानसे होता है सो अज्ञान अपने सच्चिदानंद स्वरूप ज्ञानसे दूर होता है ताते हे पिता स्वतःही उरारपारसे रहित अपने स्वरूपको जान जो हँसना रोना रूप संसार समुद्रते पारहोवे अन्यथा न होवेगा जैसे घटाकाश स्वतः ही घटरूप समुद्रके उरार पारते रहित है घट दृष्टीते नहीं हे पिता सो आत्मज्ञानके वास्ते दो उपाय हैं एक हठ योग है दूसरा आत्मविचार योग है आत्मविचार बिना आसन प्राणायाम धारणा ध्यान समाधि आदि मन वाणीं कायके हठसे जो योग करना है सो हठ योग है पर शरीर अरु शरीरके कर्तव्य सर्व मिथ्या हैं अनात्मा मिथ्या ते जो उत्पन्न होता है सो साँच नहीं होता मिथ्याही होता है समाधिसे आदिलेके मल त्याग पर्यंत सर्व कायिक वाचिक मानसिक क्रियाकों अनात्म धर्म जानने अरु मन वाणीके गोचर सर्व द्रश्य वर्गको असत जड दुःख

रूप जानना अरु सर्व कर्तव्यों ते रहित आपको स्वतः ही सत् चित् आनंदरूप जानना कोई कर्तव्य कर आपको निष्कर्तव्य नहीं जानना यही आत्मयोग है जैसे स्वतःही जगत्के सर्व कर्तव्यों ते रहित सूर्यके स्वरूप दाहकता उष्णता प्रकाशता असंगता जानना पिताने कहा हे पुत्र मैं पापी कैसे आत्मयोगी होवों जड भरथने कहा तू चैतन्य तीनो कालों विषे पापरूप मलते स्वतःही रहित है पापी क्यों होता है तुझ चैतन्यकी आदि अंत मध्य कोई नहीं जानता काहेते सर्व दृश्यके ज्ञाता तुझ सत् चैतन्य आनंदका और ज्ञाता नहीं जो तुझका और ज्ञाता माने सो तुझ सत् चित् आनंदते भिन्न असत जडदुःख रूप होवेगा सो ज्ञाता नहींहोता ताते हे-पिता तुझ चैतन्य विषे पाप किसने देखा पुण्य पापके जानने वाले तुझ चैतन्य में पापनहीं दुःखके कारणका नाम पापहै सो सर्व दुःख अहंकारते होतेहैं ताते पापरूप अहंकारको त्याग जो निष्पापहोवें ब्राह्मणने कहा मैं जीवहों जड़ भरथने कहा तैंने सत्य कहा जो सर्व दृश्यके जिवाने वाले तुझ चैतन्य मे मृत्युनहीं भला जो तू जीवहीहै तो तेरा वर्णाश्रम क्याहै ब्राह्मणने कहा जीवविषे वर्णाश्रम नहीं जड़भरथने कहा हे पिता जो जीवमे वर्णाश्रम नहीं तो पाप पुण्य जीवविषे कहाँ है जब तू आपको वर्णाश्रमी मानताहै तबही पाप पुण्यहै जब वर्णाश्रम मिथ्याहै तब धर्म अधर्म कहांहै जब धर्म अधर्म नहीं तो धर्माधर्मका कार्य शरीर कहांहै जब शरीर नहीं तब जीव कहाँ जब जीव नहीं तब ईश कहाँहै ताते जीव ईशादि सर्व जगत् स्वप्नवतहै एक तूही चैतन्य स्वप्नद्रष्टावत सत्यहै ब्राह्मणने कहा जब सर्व मिथ्याहै तो शरीर मे शुभाशुभकर्म होताहै तिसका फल सुख दुःख कौन भोगताहै शरीरतो इहाँही भस्मीभूतहुआ जड़भरथने कहा हेपिता जैसे स्वप्नमे शरीरादिक कर्म करतेहैं तथा कालपायकर स्वप्नमेही शरीरादिक भोग भोगते हैं तथा जन्मतेहैं मरते हैं अनेक क्रीड़ा करतेहैं परंतु स्वप्नद्रष्टा चैतन्य असंग निर्विकारहै हेपिता जो तू चैतन्य स्वप्नका द्रष्टाथा सोई तू चैतन्य इस स्वप्नवत जागृतका द्रष्टाहै सोई तू सुषुप्ति मूर्छाका द्रष्टाहै द्रष्टाका भेद नहीं ताते तू आत्मा शुभाशुभते न्याराहै तुझे क्या भयहै सदा प्रसन्न हँस्ता रहो पिताने कहा सदा यज्ञादिकर्म करताथा तुम कहते हो कर कछुनहीं जडभरथने कहा यज्ञ नाम विष्णु व्यापक वस्तुका है

सो व्यापक चैतन्य तूहींहै यह जाननाही यज्ञहै ताते अपने आपको कैसे यज्ञ कर्ता है तू स्वयंप्रकाश स्वरूपहै असली पूछेतो तूहीं सत् चित् आनंद जीव रूप होकर ब्रह्मासे लेकर चीटी पर्यंत सर्व शरीरोंमे कर्ता है अरु सर्व शरीरोंमें तूही सर्वका भोगताहै असत जड़ दुःख रूप दृश्य करता भोक्ता वने नहीं हे पिता जब तू शरीरनहीं तब कर्मोंसों क्या मतलबहै पिताने कहा कर्मोंका लोप मतकर मैं प्रेत होवोंगा भरथ कहा हेपिता शरीरते भिन्न होनेका नाम प्रेतहै ताते इस संघातते जो आपको भिन्न जानताहै वही प्रेतहै पिताने कहा आपभ्रष्टहै मुझकोभी भ्रष्ट कर्ताहै जड़भरथने कहा जो नामरूप दृश्यते आपको न्यारा जानताहै वही भ्रष्टहै ताते मुझकी न्याई तू भी-भ्रष्टहो हे पिता मुझको पिता पुत्रकी भावना नहीं किंतु तू मैं अरु सर्व जगत्को मैं सत् चित् आनंद अपना स्वरूप जानताहों पिताने कहा जिस उपायते भय कालका दूरहोय सो कहो काल महाबलीहै तिसते मेरी रक्षाकर जड़भरथने कहा शरीरहोते कालका भय दूर होय वही कालते रक्षाहै जब काल आया तिस समय काल ते रक्षाकी चाहना करनी वा मरे पीछे रक्षाकी चाहना करनी निष्फलहै हे पिता तू अपने अकाल स्वरूपको जान जो काल सहित सर्व जगत्को भ्रम रूप जानो हे पिता अपने स्वरूपके अज्ञान कर इस वर्तमान शरीरसे पूर्व भ्रम रूप तैंने ब्रह्मासे लेकर चीटी पर्यंत अनेक शरीर पायेहैं पुनः त्याग कियेहैं पुनः धारण करैगा परंतु शरीरोंकोही काल नाशकर्ता आयाहै परंतु तुझ एक रस चैतन्यको कालने अब तक नाश नहीं किया अब कैसे नाश करैगा जो तू पूर्वथा सोई तू अबहै वैसाही आगे रहेगा बदला नहीं जैसे तेरे शरीरने अनेक बार नवीन वस्त्र ग्रहण कियेहैं अनेक बार जीर्ण हुये त्यागता भयाहै परंतु शरीर वही है बदला नहीं जैसे फल फूल पत्र बदलते रहतेहैं वृक्ष नहीं बदलता हे पिता जो चैतन्य शरीरकी न्याई नाशवाला होता तो तुझ चैतन्यकोभी काल नाश करदेता कालका किसीसे वा तुझसे वा आत्मासे भाई चारा नहीं तैसेही अनेक जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति होगई पर तिनका अनुभव करनेवाला तू एक रस वही चैतन्यहै तू बदला नहीं हे पिता देश काल वस्तु भेद-वाले देहादिक असत जड दुःख रूप दृश्य पदार्थोंकोही काल नाशकर्ता है तू सच्चिदानंद काल सहित दृश्यका द्रष्टा देश काल वस्तु

भेद ते रहितहै तुझको कालका क्या भयहै उलटा तुझ चैतन्यते कालादिक भय रखते हैं मैं तू यह जगत् तथा काल कछु नहीं केवल अहंकार तेराहै जबलग मायाका कार्य देहादिक किसीभी वस्तुको आपा माननेवाला अहंकारहै वही कालहै काहेते कालकी न्याई अहंकार अति दुःखदायकहै परिछिन्न अहंकार करकेही कालके वशीकार होतेहैं स्वतः नहीं वा अपने अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते जो पूर्वोक्त अपने स्वरूपके अज्ञान करके पृथक् प्रतीति सोई कालहै वा शब्दादि विषयोंमें जो अति स्नेह है सोई कालहै काहेते अज्ञानही जन्म मरन आदि दुःखोंका कारणहै जब आपा माननेवाला अहंकार न रहा तो काल कहां है जैसे सुषुप्तिमें अहंकार नहीं तो कालका भयभी नहीं जहां अहंकारहै तहांही कालहै ताते हे पिता देहादिकों विषे अहंकारको त्याग जो कालके भय ते रहित होवें अन्य प्रकार कालकी निवृत्ति नहीं होगी हे जड भरथ काल करकेही सर्व जगत्‌की उत्पत्ति पालन संहार होताहै कालको कैसे अनित्यताहै हे पिता काल करकेही सर्व जगत्‌की उत्पत्ति पालन संहार होताहै यह अर्थ शब्द जिसकर सिद्ध हुआ सो तू कालके सिद्ध करनेवाला कालते न्याराहै अरु काल तेरा आत्मा ऋषीकेशहै जैसे स्वप्नमें काल करकेंही स्वप्न जगत्‌की उत्पत्ति पालना संहार प्रतीति होताहै परंतु काल सहित सर्व स्वप्न पदार्थ कल्पितहैं कल्पित पदार्थोंकी कल्पित पदार्थ तो उत्पत्ति पालन संहार नहीं करसक्ता स्वप्नदृष्टाही सतहै हे पिता अपने आत्माको कोईभी भय वा नाश नहीं करसक्ता अरु होता भी नहीं जैसे अग्निकी दाह शक्ति अपने ते भिन्न काष्ठादि सर्वको दाह कर सक्ताहै पर अपने आत्मा अग्निको दाह नहीं कर सक्ता वा अग्निके अंतर्बाहर मध्य स्थित आकाशको भी दाह नहीं करसक्ती तैसे कालके अंतर्बाहर मध्य पूर्ण कालका तू आत्मा अरु कालके सिद्धकर्ता तुझ प्रकाश स्वरूप आत्माको काल कैसे नाश करताहै किंतु भयमान हुआ नाम भी नाशका नहीं लेसक्ता हे पिता जैसे तैंने कालका निश्चयकरा है तैसे सर्व इंद्रियोंके प्रकाशक अपने आत्मां ऋषीकेशमें निश्चय कर जो भ्रमकालका तुझका नाश होइ ताते जान मैं ऋषीकेश हों सर्व नामरूप जगत् ऋषीकेश है हे पिता .जैसे जिस पुरुषने आकाशादि पंचभूतोंके कार्य इस

शरीरको वा किसी तृणादिको एक पदार्थको विचारकर संशय रहित सम्यक् पंचभूत रूप जाना है सो पुरुष इस एक शरीरमें स्थित हुआ भी ब्रह्मांड अरु ब्रह्मांड अंतरवर्ती सर्व भूरादि पदार्थोंको अपरोक्ष हस्तामलकत देखता है काहेते ब्रह्मांड अरु ब्रह्मांड अंतरवर्ती भूरादि सर्व पदार्थ पंचभूतोंका कार्य होनेते पंचभूत रूपही हैं ताते तिस पुरुषको कोईभी भूत भौतिक अज्ञात पदार्थ नहीं रहता सर्वका तिसको प्रत्यक्ष ज्ञान होता है कारणकि ज्ञानते कार्य अवश्य जाना जाता है तैसेही जिसने गुरु शास्त्रद्वारा अस्ति-भाति प्रियरूप सम्यक् अपरोक्ष अपना आत्मा जाना है सो सर्व नामरूप जगत्को अपरोक्ष अपना आत्माहीं जानता है कारण कि निजस्वरूप चैतन्यही इस जगत्का विवर्त उपादान कारण है ताते अपने सच्चिदानंद स्वरूपको सम्यक् जान जो सर्व तूही होवे जान-नाही है शरीरसे करना कछु नहीं है पिता तैंने वृथाही आपको ब्राह्मण माना है इस अहंकारको त्याग पीछे ऋषकेिश आत्माही है पिताने कहा हे जड भरथ अब तुझकी कृपाते मैंने समझा है जो न मैं हों न तू है न जन्म है न मरन न वर्ण न आश्रम न लोक न परलोक न ग्रहण न त्याग न वंध न मोक्ष न जीव न ईश्वर एक ऋषीकेश आत्माही है तिसी समय में वामदेव आवत भया अरु कहा वड़ा आश्चर्य है आप ऋषीकेश आत्मा हैं अरु ऋषीकेश आत्माके देखनेकी इच्छा कर्ता है ऋषीक नाम इंद्रियोंका है तिन इंद्रियोंको जो प्रेरे तथा प्रकाशे तिसका नाम ऋषीकेश है सो सच्चिदानंद वस्तु आत्माकाही ऋषीकेशादि अनेक नाम हैं ब्राह्मणने कहा हे वामदेव जब मैं सर्व समहीं ऋषीकेश हों तो एक सों मित्रता एक सों शत्रुता कभी क्रोध कभी दीनता क्योंकर है वामदेवने कहा जो तू चैतन्य सम न होता तो मित्रता करता शत्रुता न कर्ता दीनता कर्ता क्रोध न कर्ता ताते तू चैतन्य शत्रुता मित्रतामें पूर्ण है तथा क्रोध दीनतामें भी पूर्ण है अरु तुझ चैतन्यकरही क्रोध मित्रादिक सिद्ध होते हैं ब्राह्मणने कहा जो ऐसे है तो संत क्रोधादिकोंका त्याग क्यों कर्ते हैं वामदेवने कहा संतत्यागका त्याग कर्ते हैं नहीं तो त्याग ग्रहण करना किसीका योग नहीं काहेते अनर्थक क्रोधादिक संत त्यागते हैं शरीरका रक्षक क्रोधादिक त्यागते नहीं जो त्यागें तो शरीरका अभाव होगा ताते परिछिन्न ब्राह्मणादि वर्णाश्रमका अहंकार त्याग आपको

सर्वमें पूर्ण ऋषिकेश जान ब्राह्मणने कहा मुझमें जानना न जानना ग्रहण त्याग दोनों नहीं मैं मन वाणीते अतीत हों वामदेव तूष्णी भया काहेते वाणीकी आगे ठौर नहीं जड़ भरथने कहा हे पिता यही उपाय कालके नाशका है यही योग है यही भक्तिहै मैं तेरा ऐसा पुत्र नहीं हों जो तुझके मुये हुये पिंडकरावों तुझे जीवतेहीं मुक्त किया ब्राह्मणने कहा झूठ मत कहो मैं तीनों कालोंमें मुक्त हों मुक्तको मुक्तक्या हे परंतु तू पुत्र किसकाहै मैं पिता किसका हों न तू पुत्र न मैं पिता पुत्र पिताका अहंकार जाग्रत तकहै सोये तब नाश भया हे जड भरथ कुटुंब सहित सर्व रस्तेकी सराय है वा नदी नाव अरु गंधर्व पुरकी न्याई है जब सर्व वासुदेव हैं तब मैं कहाँ आवों क्या करों क्या सुनों किसका गृहण किसका त्याग करों कहां जड अरु चैतन्य कहां फुरना अफुरना कहां विकार सविकारादि कहां यह सब मनके मनन फुरने हैं मैं निर्विकल्प ऋषीकेशहों वामदेवने कहा हे जडभरथ तैंने पिताका नाश ऐसा किया है जो वह पुनः नाश नहीं होवेगा जडभरथने कहा इसके पुण्योंने फल दिये हैं मैंने कछुनहीं किया पुनः वामदेवने कहा हे ब्राह्मण तू कौन है ब्राह्मणने कहा हे ऋषीकेश ऋषिकेश सों क्या पूछे है वामदेवने कहा मैं ऋषीकेश नहीं अरु ऋपिकेशहों ब्राह्मणने कहा अनंत नाम रूप मुझ ऋपीकेश आत्माके हैं ऋषिकेशभी मैं ही हों तिस समय दत्त आवत भये अरु कहा एक ब्रह्म आत्माको ही देखना योग है न द्वैत ब्राह्मणने कहा जो सर्वात्मामैंहीं हौं तो देखे कौन दत्तने कहा मुझका कहना तैंने कैसे सुना ब्राह्मणने कहा जिसने कहा तिसीने सुना काहेते वक्ता श्रोता एकहीहै जिह्वासों कहता है कानोसे सुनता है नाशिकासे सुगंध लेता है त्वचासे स्पर्श कर्ताहै परन्तु सबका अनुभव कर्ता एक है जैसे बारादरीके अन्तर एक पुरुषही बारादरीके द्वारोंको तथा द्वारोंके अग्र पदार्थोंको अनुभव करता है हे दत्त तू परमहंसहै मुझपर कृपा कर दत्तने कहा कृपा यही है जो निश्चय कर मैं ही जीवसीव शरीरते परे हों जड़ भरथने कहा यह कृपा तैंने आपपर करी है कृपा वह है जो और पर कीजै दत्तने कहा पर अपर तेरी दृष्टीमेंहै मुझ आस्ति भाति प्रियरूप आत्माकी दृष्टीमें नहीं तथापि कार्य कारण रूप असत जड दुःख रूप परदृश्य प्रपंच मुझ सच्चिदानंदको कृपासे सच्चिदानंद हो रहा है

यही मेरी पर ऊपर कृपाहै पुनः दत्तने कहा हे ब्राह्मण तेरे देखनेको आयाथा पर देखातो सर्व तूहींहै यही तेरा देखना था ब्राह्मणने कहा न जड भरथ न दत्त न अहं न त्वं न यह जगत् एक मैं ही चैतन्य हों दत्तने कहा मैं नहीं तहां तू कौन है अहं पूर्वकही त्वं होता है ताते जहां अहंनहीं तहां त्वं कदाचित्त नहीं पर गोविंदकी भक्तिते परअपरते छूटता है हे ब्राह्मण कहो भजन कौनसा है ब्राह्मणने कहा कथन चिंतन करनेवाले अहंकारादिकोंसे पूछो मुझ चैतन्यमें अहंकारादिक हैं नहीं कैसे कहों अहंकार रूप तागे करकेही भिन्न२ इंद्रियों कामेल न है अन्यथा नहीं परंतु भजन यही है आपसहित इस सर्व नाम रूपको ऋषिकेश आत्मा जाननी वा आपको मनसहित दृश्यसे अवाङ्मनसगोचर जानना येही भजनहैं पराशरने कहा है मैत्रेय तू कहो कि भक्ति क्याहै मैत्रेयने कहा जब मैं भक्ति भगवानके कल्पने वाला नहीं तो भक्ति कहांहै अरु भगवान् कहाँ है तेरी कल्पना है पर इतिहास कहो पराशरने कहा इतिहास यही है निश्चयकर जो सर्व ऋषीकेश आत्मा है मैत्रेयने कहा जब मैंही नहीं तो निश्चय कौन करे पराशरने कहा हे मैत्रेय जहां तू मैं नहीं तहां हीं ऋषीकेश गोविंदहैं इसीपर एक कथा सुन एकसमय हम सर्व संत मिलके मार्गमें चलेजातेथे कि एक तपस्वी पंचाग्नि तापताथा हमभी देखकर तिसकेपास स्वभाविकही चलेगये तपस्वीने पूँछा हेसंतों तुम कौनहो कहांसे आयेहो कहां जावोगे जडभरथने कहा जैसे तुमहो तैसेही वनेरहो अरु सदा अग्निमें जल तुझे हमारी वृथा पूछनेसे क्या प्रयोजनहै पर विनाभक्ति गोविंदकी जो कर्म होतेहैं सो वृथा असारहैं ताते भजन गोविंदकाकर जो निर्मल होवे द्वैतकी मलीनता ते छूटे भजन विना जो श्वास आताहै सो अकार्थहै अरु पवन है ऐसे जान जिह्वा मांसका टुकडा भजनविना मुखमें राखनी योग्यनहीं वृथा वकवादके वास्ते जिह्वानहीं भजन वाणीसों कर्ताहै मन पाप पुण्यमें फिरताहै कैसे भलाहो भजन नाम अपनी कल्याणमें प्रारब्ध थापताहै अरु धन कमानेमें पुरुषार्थ मानताहै यह नहीं जानता कि शरीर कालके मुखमें पड़ाहै चाहना जीनेकी करताहै अपनी कल्याण शरीरके गिड़ेपहलेही होसक्तीहै काल समीप पहुँचे कछुनहीं होता हे तपस्वी चैतन्यरूपी समुद्रमें बुद्‌बुदे तरंगरूपी हमारा न कहीं आनाहै न जानाहै अगर आना जाना मानेभी तो

चैतन्यरूपी जलमें आनाजाना कहांहै जलहीहै जलकी न्याई सार गोविंद आत्माहै आना जाना बुद्बुदे तरंगकी न्याईहै तैंने व्यर्थ मानाहै जोमैं तपस्वी हों इस अहंकारका त्यागकर तपस्वीने कहा जब तुमसों मिलापभया उसीसमय अहंकार मिटगयाहै काहेते अग्निके संगते लकड़ीका अपना रूप नहीं रहता अग्निरूपही होताहै जड भरथने कहा तपस्वी वहींहै जिसने सर्व पदोंको जलायाहै अरु निष्कर्मतारूपी भस्म मलीहै कहो तैंने किस वस्तुको भस्म कराहै तपस्वीने कहा बुद्धि नहींरही जो कहों पर मैं नहीं जानताहों कि क्या त्यागने गृहण करने योग्यहै जडभरथने कहा हे तपस्वी दुःखदेनेवाले पदार्थोंको पुरुष त्यागताहै सुखदेनेवाले पदार्थोंको ग्रहण कर-ताहै सो विषय इंद्रियोंके संबंध वियोगमें दुःखसुख माननेवाला मन रूप अहंकारही सर्व अज्ञानी जीवोंको दुःख देताहै सोई दुःख देनेवाला पूर्वोक्त अहंकार तैंने अबतक त्यागानहीं उलटा तैंने सर्वसे अधिक अहंकार मानाहै कि दुनिया लंडी क्या भजनजाने अरु क्या तपजाने हम गुरुका दिया भजन करनेवाले महातपस्वी पंचधूनीके तापनेवालेहैं हमारे चाचा गुरू चौरासीधूनी तापतेहैं तथा बडे पंडितहैं तथा सिद्धहैं तथा वैदक विद्यामें कुशलरहे हमारे भतीजा चेला कांटो ऊपर शयन करतेहैं तथा चारवक्त चारोधाम करेहैं सारादिन पाठही करते रहतेहैं हम तूंबेका तथा आसनका तथा मालाका तथा मल मूत्रके त्यागका मंत्र जानतेहैं हमारे गुरूतो राजोंकरके पूज्य होरहेहैं अरु हम सेरभर गांजा एक प्रहरमें उड़ादेतेहैं तथा हम सिमल धतूरा खाजातेहैं हमको कछु दखल नहीं करसक्ता यह साधु निगु-राहै पूजा पाठ कछु नहीं जानता जो कोई साधू गरीब होवे तिससे पूछा कि तुम्हारा कौन धाम कौन द्वारा कौन संप्रदाय असुकी पूजाका क्या मंत्रहै धाम पुरीयोंको पर्शाहै वा नही परसाहै तो छाप दिखला तूंबेका मंत्र आताहै झोलीका मंत्र आताहै तेरे काका गुरूका क्या नामहै जो वो सांगोपांग सबहाल कह सुनावे तो चाहे हीन जाति भी हो परंतु वह साधु पंक्तिका अधिकारीहै जो बिलकुल नहीं कहे वा कोईक बात कहे कोईक नकहे तो यह साधु नहीं निगुराहै यह पंक्तिका अधिकारी नहीं इसका दंडा झोली तूंबा खोसलेवो काहेते तूंबे झोलीका मंत्र भी नहीं जानता अथवा दूसरे भेषका कोई विद्वान भी हो कदाचित् अन्नके वक्त आजावे

69

प्रथमे तो प्रीति नहीं करें अन्नमें भी संशयहै कदाचित् देवे तो यह साधु पंथाईहै पंक्ति बाहिर इसको अन्नदेना अरु जो कोई गृहस्थ
छोड़कर अपनी कल्याण वास्ते शरणागत होवे तिसको बंधका हेतु सर्व अनात्म धर्मकाही उपदेश करें वा गैयोंकी वा भंडारकी
सेवामे ही लगादेवे वहुत उत्तम अधिकारी होतो पूजामे लगादेवें परंपरा गुरू शिष्यादि संप्रदायका सीखना परमधर्म मानके सिखावें
मुखसे भक्तिही सारहै ऐसा कहे अरु भक्तिका सम्यक् स्वरूप निश्चय करे नहीं अरु जो प्रातःकाल स्नानकरे अरु अखंड विभूति
लगावे चाहे धन राखे परमहान तपस्वी होताहै अरु निर्अहंकार होकर सतसंगके प्रतापते अपने स्वरूपको भी कोईक जानतेहैं
ताते हे तपस्वी इस मिथ्या देहाभिमानको त्याग अरु आप सहित सर्व गोविंद जान पुनः इस जाननेको भी त्याग पीछे जो शेषरहै
सो अवाचपदहै सोई तेरा स्वरूपहै ॥ यही परमभक्तिहै चाहे स्यानोंसे पूछ देख चाहे वेदमें ढूंढदेख तथा निज अनुभवसे विचार-
देख आगे जो तेरी इच्छाहै सो कर यह कह कर जड भरथ तूष्णी भया पराशरने कहा हे मैत्रेय मैंने कहा हे तपस्वी यह पंच अग्नितुझ
अज्ञानीको दुःखका हेतुहैं अरु ज्ञानीको सुखका हेतुभीहैं काहेतें इनका स्वरूप तथा अपना स्वरूप जाननेतें सुखहै न जाननेतें
दुःखहै ताते हे तपस्वी जैसे तू पंचअग्निकर तथा चौरासी धूनियोंकर बाहर तपायमानहै तथा मैं पंचअग्नि वा चौरासीअग्निको ताप-
ताहों इस आभिमानते भी तू तपायमानहैं तैसे तू अंतर देह अभिमानी अविद्या अस्मता राग द्वेष अभिनिवेश इन पाँच अग्नियोंकर
निरंतर जलता रहताहै तुझको शांति कैसे होवेगी हे तपस्वी देहादिक अनात्मामे आत्मबुद्धि देहादिक अनित्यमें नितबुद्धि देहा-
दिक अशुचिमें शुचि बुद्धि देहादिक दुःखोंमें सुखबुद्धि इसका नाम अविद्या है सूक्ष्म अहंकारका वा मरनेका भय अस्म-
ताहै राग द्वेष प्रसिद्धहीहै परंपरा संप्रदायकी वा सुनी वातका सम्यक् विचारे विना ग्रहण कारि रखना हठछोड़ना नहीं चाहे
झूठ भी हो इसका नाम अभिनिवेशहै तैसेही मन करके शरीर करके तथा वाणी करके चौरासी प्रकारकी अहिंसा नाम पर-
पीडा नाम दुःख नाम पाप देहाभिमानी पुरुषको निरंतर होता रहताहै तिसका आत्मज्ञान विना बाधा होना वहुत कठिन है यह

योगशास्त्रमें लिखाहै ताते तुझ देह अभिमानीको चौरासी प्रकारकी आग्नि अंतर तथा वाहर जलातीहै तुझको शांति कैसे होगी
हे तपस्वी ज्ञानीको यह तपायमान नहीं करे हैं काहेते देहादिक संघातमें अहंबुद्धिका अभाव होनेते वा शरीर रूपी पृथिवीपर
श्रोत्रादिक पंचज्ञानेंद्रियही पंचअग्निहै शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधरूपी काष्ठ गोवरी कर जल रहीहै देह अभिमानी अहंकार रूपी
जीव तू तपस्वी पूर्वोक्त पांच अग्निको तापताहै जैसे तू वाहर अग्निके जलानेके साधन गोवरी काष्ठ आदिक मिलने न मिलनेसे सुख
दुःख मानताहै तैसे विषय इंद्रियके संयोग वियोगमें सुख दुःख तू मानताहै ताते तू देह अभिमानी अंतर बाहर निरंतर जलता
रहताहै सारांश यह कि मैं सुनताहों मैं स्पर्श करता हौं मैं देखता हौं मैं रस लेता सूंघताहों वा नहीं यही तुझका तापनाहै अरु ज्ञानी
इन पंचाग्नियों कर तपायमान नहीं होता काहेते निर अभिमान होने ते उलटा तिनको सत्ता स्फूर्ति देता हुआ आकाशवत् असंगहै
शांतरूपहै वा पंच कर्मेन्द्रिय पंच अग्निहैं अरु वाक् उच्चारण गृहण त्यागें गमनागमन मल मूत्रका त्याग करना यह लाकडी गोवरीहैं शरीर
रूपी पृथिवी पर तू देह अभिमानी जीवं तपस्वी तिन पांच अग्नियोको तापताहै क्योंकि मैं बोलताहों मैं गृहण त्याग कर्ताहों मैं गमना
गमन कर्ताहों मैं मल मूत्र त्यागताहों वा नहीं यही तुझका तापनाहै नाम जलनाहै ज्ञानी नहीं जलता ज्ञानी उलटा तमासा देखताहै
वा पंचप्राण पंचाग्निहैं पंचप्राणोंकी वृत्तियाँ गोवरी काष्ठादिसे शरीर रूपी पृथिवीमें जलेहैं तू देह अभिमानी तपस्वी जीव तिनको तापतां
है मैं क्षुधा तृषावालाहों वा नहीं यही अहंकार तुझका तापना जलनाहै ज्ञानीका नहीं वा काम क्रोध लोभ मोह अहंकार यह पंचाग्निहैं
काम क्रोधादिकोंके कार्य काष्ठ गोवरी हैं शरीर रूपी पृथिवीपर वलेहैं तू देह अभिमानी मन रूपी जीव तपस्वी तिनको तापताहै
तात्पर्य यहकि मैं कामीहों क्रोधीहों मैं लोभी हों मैं मोहीहों मैं अहंकारीहों वा नहीं यही तुझका तापना नाम जलनाहै अरु अ-
ध्यास करके दुःख तू पाता है देहाभिमान रहित आत्मवेत्ताको दुःख नहीं तैसेही जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, मरण समाधि यह पंचाग्निहैं
शुद्ध सत्व अरु मलिन सत्व शुद्ध रज,अरु मलिनरज अरु तम यह गोवरी काष्ठ हैं शरीर रूपी पृथिवी पर जले हैं तू इनका अभिमानी

तपस्वी तापता है कि मैं जागता सोता हों जन्मता मरता हों समाधि कर्ता हों वा नहीं यही तुझको तापना नाम जलना है ज्ञानी नहीं जलता काहेते ज्ञानी इन सर्व समाधि आदि अवस्थाके होने न होनेमें केवल मनका धर्म जानता है अरु अपने स्वरूपको समाधि आदि होने न होने में निर्विकार जानता है वा माया रूपी पृथिवीपर यह पंचभूत रूपी पंचअग्नि है स्थावर जंगम रूप सर्व शरीर इन पंचाग्नियोंकी गोबरी लाकडी हैं तू ही मायाविशिष्ट ईश्वर समष्टी अभिमानी हुआ शबलब्रह्म इन पंचाग्नियोंके तापनेवाला तपस्वी है मैं उत्पत्ति पालन संहार इस जगत्की कर्ता हों यही तापना है परंतु हे तपस्वी अंतर बाहर पूर्वोक्त सर्वाग्नियोंके आकाश अंतर बाहर मध्यमें स्थित हुआ हुआ भी तिन सर्व अग्नियोंको अवकाश देता हुआ भी तिन पूर्वोक्त अग्नियोंके होने मिटने में असंग निर्विकार अभिमान रहित निर्विकल्प स्थित है हे तपस्वी तैसेही जब तू आपको सत् चित् आनंद आत्मा स्वरूप जानेगा तथा पूर्वोक्त सर्वाग्नियोंके सिद्ध करनेवाला असंग निर्विकार निर्विकल्प आकाशकी न्याई व्यापक जानेगा तब तू इनाग्नियोंके तापने न तापने में हर्ष शोक न मानेगा तथा पूर्वोक्त इन अग्नियोंके होने मिटनेमें समही रहेगा ताते देहाभिमानके त्यागका त्यागकर जो निर्भय होवे ऐसे कहकर मैं तूष्णी भया वामदेव विलास कर्नेवास्ते बोलता भया हे तपस्वी एक समय चारो सनकादि ब्रह्माके पुत्र तथा इजय विजय विष्णुके द्वारपाल बैठेथे और आपसमें आत्मविचार कररहेथे तिसी समय अवसर पायकर नारदभी आये सनंदनने कहा हे नारद कहाँसे आये हो कहाँ जावोगे अब तक कहाँ रहे नारदने कहा बुद्धि आदिकोंके साक्षी व्यापक आत्मा विष्णुते आयाहों अरु विष्णु विषे जावोंगा अरु विष्णु विषेही रहता हों अरु आपभी विष्णुहों जैसे जलतेही बुद्बुदा प्रगटा है जलते ही आया है जलमेंही जावेगा जलमेंही स्थित है जलमेंही लीन होवेगा अरु जलरूपीही है तात्पर्य यहकि पूर्वोक्त सर्व बात वाणीका बिलासमात्र है नहीं तो जलही जल है तैसेही चैतन्यरूपी समुद्रमें आना जाना तरंगोंकी न्याई जान सनतकुमारने कहा रूप तेरा क्या है अरु नाम तेरा क्या है नारदने कहा जो विष्णुको भ्रम होवे कि मैं कौन हों तो तिसका भ्रम कौन निवृत्त करे काहेते माया सहित भूत भौ

तिक सर्व जगत् पुरुषते प्रगट भया है ताते जड है पुरुषको कौन कहे तू यह है कि वह है असली पूछे तो सर्व नाम रूप मेरेही हैं जैसे स्वप्नमें सर्व नाम रूप यद्यपि भिन्न भिन्न प्रतीति होतेहैं तथापि सर्व स्वप्नद्रष्टा रूपहीं हैं जिसकर नेत्र रूपको देखतेहैं जिसकर त्वचा स्पर्शको कर्त्तीहै नासिका जिसकर गंधको लेतीहै रसना जिस चैतन्य कर रसको लेतीहै कान सुनते हैं मन जिस कर मननकरताहै तात्पर्य यहकि जिस चैतन्य कर यह सर्व संघात चेष्टा कर्ता है सो मैहीं हों इजय विजयनें कहा हे नारद ऐसे मतकहो तेरे प्रभुके आगे जाय कहोंकि नारद कहताहै मैं विष्णुहों नारदने कहा तू किसको कहताहै तू आप विष्णु चैतन्यहै वक्ता श्रोता सर्व विष्णु आत्माही है तू मैं कहाहै इजय विजयने कहा हे नारद जब विष्णु पास जाताहै तो दंडवत कर्ता है अब कहताहै मैं विष्णु हों नारदने कहा दंडवत अरु अदंडवत करने वाला जिसको दंडवत कियाहै सो सर्व विष्णु आत्माही है ऐसे कहकर नारद चलते भये वामदेवने कहा हे तपस्वी तूभी इस अनात्म तपको त्यागकर अरु सर्व शुभाशुभ संघातकी चेष्टा अरु सर्व शुभाशुभ चेष्टाके करने वाला यह संघात अरु जिस प्रयोजन वास्ते चेष्टा करतीहै यह सर्व त्रिपुटियां अस्ति भाति प्रिय रूप मैं आत्मा हीहों वा इनते रहित अवाचपदहों इस दृढ निश्चय रूप आत्म तपको कर पराशरने कहा हे मैत्रेय जैसे हम संत इच्छा पूर्वक आयेथे तैसे चले गये अरु तपस्वी अपने स्वरूपमे स्थित भया हे मैत्रेय तूभी इस अपवित्र शरीरका तथा शरीरके व्यवहारोंका अभिमान त्याग अरु पवित्र हो मैत्रेयने कहा जिसने अहंकार करा है सोई त्यागेगा मैं चैतन्यने अहंकार करा नहीं त्यागों कैसे जैसे घटाकाशने घटका अभिमान करानहीं त्यागे कैसे पर कहो कालते कैसे मुक्त होवे पराशरने कहा हे मैत्रेय एक कथा सुन एक ब्राह्मण था तिसकी स्त्रीने प्रश्न कियाकि हे प्रभो मुक्त कैसे होवें काहेते शरीर कालके वश है क्या जाने जो अबही नाश होय अरु अपने स्वरूपते अप्राप्त होवों ब्राह्मणने कहा जब काल आवेगा तब आपही शरीरते मुक्त करेगा चिंतासे क्या प्रयोजन है मुक्ति वास्ते कर्तव्य करनेसे क्या मतलब है काहेते मुक्तिनाम शरीरते छूटनेका है सो यह विचारे ते आपते आप होगा काहेते तू चैतन्य आत्मा

शरीरते स्वभाविकही मुक्त नाम जुदा है होना नहीं घटाकाशकी न्याईं स्त्रीने कहा परलोकके रस्तेमें वैतरणी नदी सुनी है सो कैसे तरोंगी ताते गऊदान करनी चाहिये ब्राह्मणने कहा चिंता मतकर जो तुझको परलोकमें लेजावेंगे जिसरीतिसे वह वैतरणी नदीसे पारहोंवेंगे उसी रीतिसे तेरेको भी लेजावेंगे जो उस नदीमें छोड़ जावेंगे तो धर्मरायके प्रश्न उत्तरते छूटेगी पर हे स्त्री अनात्म देहादिकों विषे अहंबुद्धि रूपी गौ पंचभूत रूप ब्राह्मणोंको जब तू ठीक ठीक दानकर देवेगी तब वैतरणी नदी सहित संसार रूपी समुद्रते सहज ही तर जावेगी सारांश यहकि यह देहादिक संधानमें नहीं न यह संघात मेराहै किन्तु यह पंचभूतोंकाहै मैं इस संघातका साक्षी चैतन्य आत्मा हों यही दान देनाहै अन्यथा अनेक गौके दानदेनेसेभी नहीं तरेगी वा इस लोक परलोकके सुखोंके भोगनेकी कामनारूप तृष्णाही वैतरणी नदीहै जिसने इसका त्याग कियाहै तिसको वैतरणीसों क्या कामहै स्त्रीने कहा परलोकके मार्गमें शूल अरु तप्तबालू होताहै ऐसा सुनाहै जो पगरखी अश्वादिक दान करताहै तिसको दुःख नहीं होता ब्राह्मणने कहा जो दुःखयम किंकरोंको होगा सो हमकोभी होगा स्त्रीने कहा किंकरोंके शरीर सूक्ष्महैं उनको दुःख नहीं होता ब्राह्मणने कहा यह स्थूल शरीर तो इहां अग्निमें भस्मीभूत हुआ ताते हमारेभी सूक्ष्म शरीरहै पर हे स्त्री जब तू आपको सर्व नाम रूप जगत् विषे सम शांत परिपूर्ण आत्मामैं ही हों इस निश्चयरूप पगरखीको पावेगी तो सर्व दुःखरूप कांटे मिटजावेंगे अन्यथा नहीं स्त्रीने कहा जो जलदान इहां करताहै उसीको परलोकके मार्गमें जल मिलताहै अन्यको नहीं ब्राह्मणने कहा यमकिंकरोंको जब प्यास लगेगी जहांसे वह जलपान करेंगे वहांसे हमभी पान करेंगे स्त्रीने कहा वह यमकिंकर हमको जलनहीं पान करने देवेंगे ब्राह्मणने कहा किसी शास्त्रमें नहीं कहाकि जल यम किंकरकाहै उत्पत्ति पालना संहार जगत्की सच्चिदानंद ईश्वरतेहै यमकिंकरकी क्या शक्तिहै जो जलपान न करने देवे हे प्रिये जो जलपान करने नहीं देवेंगे तोभी प्रसन्नरहो काहेते पंचभूतोंका शरीरहै जब जल न मिला तो शरीरनाश होवेगा तौभी यमके प्रश्न उत्तर ते छूटेंगे पर हे स्त्री जब तू यह निश्चय कर कि मैं यह देहादिक संघातनहीं किंतु मैं देहादिकोंका तथा देहादिकोंके सर्व व्यवहारको जान

नेवालाहूं इस ज्ञानरूप अमृतको पान करेगी तो उलटा यमकिंकरभी तुझका पूजन करेंगे स्त्रीने कहा जब हमको धर्मराय पै लेजावेंगे अरु पुण्य पापका हिसाब पूछेंगे तो क्या कहोंगी ब्राह्मणने कहा जैसे जाग्रतमे जो अभ्यास कर्ताहै वही विशेषकर स्वप्न आताहै तैसे तैंनेभी जीवते हुये इस संघातकी चेष्टारूप पुण्य पाप अपना धर्म मानाहै तथा निश्चय मृत्युलोक मानाहै यह कर्म मैं कर्ताहों इसका फल भोगोंगी जैसा तू निरंतर दृढ़ संकल्प करेगी तैसे तुमको परलोकमें भासेगा आपही कर्मकर्ता है आपही उसका फल चाहताहै ताते उसकी प्राप्ति क्यों न होय मैं पापी हों मैं पुण्यात्मा हों मैं वर्णीहों मैं आश्रमीहों यमकिंकर लेखा मांगेंगे इत्यादि जैसा तू संकल्पका अभ्यास जीवत अवस्थामे करेगी तैसेही तुमको भासेगा जब मूल अपनेको विचारे तो न पुण्यहै न पापहै न धर्मराय किंकरहै न जीव ईश्वरहै न परलोकहै यह सर्व भ्रम तेराहै जो तैंने मनमें विचाराहै सोई प्रगटेगा ताते हे स्त्री तू आपको सत् चित् आनंदरूप जान भूलकरभी संघातके धर्मोंको अपने धर्म मत मान काहेते मैं पापी पुण्यजी वहों अरु मैं सच्चिदानंद व्यापक स्वरूपहों यह मानना मनका तुल्य ही है ताते आपको चिद्रूप मानना ही श्रेष्ठहै अन्य न मान हे प्रिये अहंकारको त्याग जो कालके भयते निर्भय होवे जब कल्पना करनेवाले अहंकारही नहीं तब तू कहां अरु मैं कहां काल कहां संसार कहां इह लोक परलोक कहां शेष जो निर्विकल्पहै सोई तू है हे स्त्री अब कहो तू कौन है स्त्रीने कहा यह सर्व नाम रूप प्रपंच मनोमात्रहै काहेते सुषुप्तिमे मन नहीं होता तो पुण्य पाप रूप जगत् भी नहीं होता जब मन जाग्रत स्वप्नमें फुरताहै तो अनेक प्रकारका अहं त्वं रूप प्रपंच भासताहै पर मैं दोनों अवस्थामें निर्विकल्प निर्विकार हों यह संसार मेरा धर्म नहीं किंतु मैं असंसारी हों ब्राह्मणने कहा जब तू ऐसीहै तब मैं भोग कासों भोगोंगा स्त्रीने कहा सुख दुःखका प्रत्यक्ष अनुभव करना इसका नाम भोग है सो तेरे भोगका साधन जैसे आगे यह शरीर था सो अबभीहै मैं चैतन्य तो तेरे भोगका साधन नपूर्वथी न अबहों मैं चैतन्य तो तेरा आत्म स्वरूपहों मैंतो भोगता भोग भोग्य इस त्रिपुटीका पूर्वभी नाम अज्ञात अवस्थामे भी प्रकाशक साक्षी आत्माथी अब ज्ञा

72

त अवस्थामें भी वही मैं चैतन्य त्रिपुटीके जानने वालीहों तू भी वहीहै अरु यह जगत् भी वहीहै ब्राह्मणने कहा मैं अतीत होताहों स्त्रीने कहा मुझ चैतन्यके आगे तुझ दृश्य जड़के साथ कब मिलापथा जो अब अतीत होताहै हेब्राह्मण जो तू दृश्य रूप प्रजाहो कर चैतन्य राजा रूप आकाशते अतीत हुआ चाहे तो सो नहोगा काहेते यह दृश्य रूप प्रजा मेरे एकदेशमें होनेते वा सर्वदेश काल वस्तुमे मुझ चैतन्यको पूर्ण होनेते जैसे पृथिवी जल तेज वायु चारभूत तथा तिनके कार्य भौतिक पदार्थ आकाशते अतीत नहीं हो सक्ते पर तू चैतन्य इस दृश्यते आपसे आप अतीतहै आकाशकी न्याई बहुरि अतीत क्या होताहै ऐसा अतीत हो यामें गृहण त्याग दोनो नहोवें ब्राह्मणने कहा मेरा रूप क्याहै ब्राह्मणीने कहा रूप तेरा यहीहै जो तूहीहै इतना कहकर ब्राह्मणी स्वरूपमें लीनभई पराशरने कहा हे मैत्रेय ऐसेही एक कथा और हुई है सो तू सुन एक मान्धाता राजाथा सो अर्द्धरात्रिमे अपनी सेज- पर जागकर रानीसे कहा कछु भोजन लेआओ रानीने कहा रात्रि दिन खाने सोवनेमेंही गया परमार्थ कछु न भया राजा सुन कर आश्चर्य मानभया अरु कहा कौन कर्महै जिससे परमार्थ पावों रानीने कहा संग संतोंका कर जो चाहनाते मुक्तहोवे अरु प्रे- मकर राजाने कहा परम संत विष्णु हैं सोई परमार्थका उपदेश करैंगे ऐसे विचार कर राजा विष्णुके प्रेममें मग्न भया जैसे नदी समुद्र में मग्न होजातीहै तात्पर्य यहकि आपा अहंकारका त्याग किया अरु विष्णु रूपभया ऐसी जिगरकी हायमारी मानो पुण्य पाप धोडाला अरु बेसुध भया किंचित्काल पीछे होसआया अरु कहा हे रानी इसवक्त विष्णु आवे तो क्या भेट राखिये रानीने कहा मन तन धन राजाने कहा मल मूत्र रुधिर मांस रूपशरीरहै और सना भी मांस का टुकडाहै अरु मन संकल्प विकल्प रूपहै ताते कछु लायक भेट नहीं रानीने कहा लाल मोती हीरे जवाहर भेटकरो राजाने कहा तुझकी मुझकी दृष्टिमें माणिक मोतीहैं ॥ नहीं तो पाथरोंके टुकडे हैं रानीने कहा हैंसी मतकर बहुत काल तप करनेसे भी विष्णु नहीं मिलता तत्कालही विष्णु कैसे मिले पराशरने कहा हे मैत्रेय विष्णु यद्यपि अपना आत्माहै तथापि भ्रमकर आपने विष्णु

आत्माके पानेकी इच्छा करताहै जैसे स्वप्न नरोंका स्वप्नद्रष्टा विष्णु आत्माहै परंतु भ्रमसे स्वप्न द्रष्टाके मिलनेकी इच्छा करताहै रा-
जाने कहा संत कहते हैं जिस समय इसने चाहना त्यागी उसी समय विष्णु मिला राजा यह वचन कहा अरु प्रेम उसके मनमें उ
मड़ा गुण याद कर रुदन करने लगा अरु विशुद्ध भया पुनः नेत्र खोले जिधर तिधर विष्णुही देखने लगा हे मैत्रेय विष्णु
राजाकी शय्या पर सोया हुआ नथा पर उसके निश्चय प्रेमसे उसीका संकल्प विष्णुरूप होकर दर्शन देता भया राजाने कहा
हे विष्णु मैंने अविद्या कर माना था जो मैं राजाहों परंतु मैं पूर्वभी नहीं था अब भी मैं नहीं हों तूही आदि अंत मध्यहै मैं कहां था
तूही है विष्णुने कहा हे राजन्! जो भेट मेरी अहंकार तैंने चिंतन करी थी सो ले आउ राजाने कहा अहंकार करही तेरे चरण
कमलोंकी मेरे मनमें प्रीतिहै ताते अहंकार ले अरु आपभी जाइये काहेते तू तबतकही था जब अहंकार था
जब अहंकार नाश भया तब तूमैं कहाँ है अवाच पदहै राजा यह वचन कहकर अपने स्वरूपमें लीन भया विष्णुभी अंतर्ध्यान भये
पराशरने कहा हे मैत्रेय अहंकारको त्याग जो पवित्र होवे मैत्रेयने कहा अहंकार अरु अन अहंकार पवित्र अपवित्र दोनों मुझ
चैतन्यमें नहीं परंतु कालका भय जिसते छूटे सो कहो पराशरने कहा हे मैत्रेय एक इसीपर कथा सुन एक समय यमकिंकर
धर्मरायपै प्रश्न किया कि हे धर्मराय! तुम्हारा भय प्राणीको कैसे दूर होवे धर्मरायने कहा भय मेरा अविद्या तकहै
जब अपने स्वरूपको सम्यक् जाना तब भय मेरा नहीं रहता काहेते देह अभिमानी कोही मेरा भयहै जिसने सम्यक् देह अभिमान
त्यागाहै नित चिद सुख रूप आपको आत्मा जानाहै तिसको मेरा भय नहीं किंकर ने कहा हे यमराज जब तुम्हारी आज्ञासे प्राणीको
शरीरते निकास कर हम ले आते हैं परंतु रूप इसका कछु दिखाई नहीं देता ताते लेखा पाप पुण्यका तुम किससे पूछते हो अरु सुखदुःख
किसको देते हो यमराजने कहा इन बातोंके पूछनेसे तुझे क्या प्रयोजनहै यम किंकरने कहा बड़ा आश्चर्यहै जिसपर तुम अरु हम आज्ञा
चलावतेहैं तिसका स्वरूप जानतेही नहीं तुम्हारी आज्ञा कर प्राणीको स्वर्ग नरकमें डालतेहैं अरु उसके रोनेका तथा हाय हायका शब्द

सुनतेहैं पर उसके स्वरूपमे भेद कछु नहीं पडता सुख दुःखमें एकसाहै ताते जानीता है जो देहते निर्लेपहै जो देहके अहंकारते रहि तहै तिसको कालके फाँसते क्या दुःखहै इसते जानीता है जो यह धूम धाम तेरी भ्रममात्र है धर्मरायने कहा ईश्वर के कर्तव्यों को कौन जाने यमकिंकरने कहा जो उसके कर्तव्यों को नहीं जानते तो पाप पुण्य क्यों कर विचारते हो धर्मरायने कहा यह बात प्रगट करनेसे सर्व धर्म तथा आज्ञा मेरी का नाश होयगा यमकिंकरने कहा धिक है मुझको अरु मेरे दण्ड अरु फांसीके देनेको जो जानों नहीं यह कौन है अरु आपको किंकर मानो धर्मरायने कहा इन बातों से क्या निकासेगा भजन गोविंदका कर जो दुःख संसारके से बचे मलीनता अहं कारकी जो तेरे मन रूपी दर्पणको लागी है सो नाश होयगी मूल तेरा आपसे आप प्रगट होयगा यमकिंकरने कहा आपको जाना नहीं तो भजन सों क्या प्रयोजन है हे यमराज जो मेरे प्रश्नका उत्तर देवो तो भला नहीं तो प्राणोंका त्याग करोंगा हे किंकर प्रथमै सर्व चाहना ते मनको अचाह कर जो अपने मूलको पावे किंकरने कहा मैं कौन हों जो मन को चाहनाते निवृत्तकरों अरु मन क्या स्वरूपहै जो चाहना ते छूटे धर्मरायने कहा तू नित सुख ज्ञान स्वरूपहै अरु मन संकल्प विकल्प पंचभूतोंका विकार रूप है किंकरने कहा जब मैं स्वतःही यथार्थ अचाह रूपहों तो मनकी चाहना अचाहना से मुझ चैतन्य को क्या हर्ष शोकहै जो मुझ ज्ञान स्वरूप में चाहना होतो त्यागभी बनता है ताते दूसरेके घरकी बात मत कहो मुझे अपने घरकी कहो मन चाहे अचाह हो वा नहो आपमुये जग प्रलय है जब आपही नहीं तो जगत् कहां है सुषुप्ति मूर्छावत हे यमराज सर्व जीव ज्ञानी अज्ञानी आपसमानही शुभाशुभ सर्व चेष्टा करते हैं परंतु जिसके देह अभिमान है अरु अपने स्वरूपको नहीं जानता अरु आपको पुण्य पापी मानता है वोही तेरी यमपुरीमें आता है दूसरा आत्मज्ञानी आता नहीं ताते देह अभिमान ही दुःखका मूल है धर्मरायने कहा हे किंकर एक राजाथा सो शिकारको वनमें गया अरु कछु न मिला तब गीदडको वाण मारने लगा तब गीदडने कहा मेरेको मत मार कि त्रिलोकी नरहैगी राजाने कहा तुझ जैसे मैंने अनेक मारे पर त्रिलोकी नष्ट न हुई गीदडने कहा हे राजन् जब मैं नहीं तो त्रिलोकी कहां है राजाने सांच जानाकि आपमुये जग प्रलय है

गीदडको न मारा अरु वैराग राजाको उत्पन्न भया अरु घरमे आया अरु रानीको एकांत देशमें बुलाया अरु वैरागका वृत्तांत सब कह सुनाया राजाने कहा हे रानी मैं अतीत होताहों रानीने कहा वहुत भला है पर हे राजन् अतीत किसते होता है राज्यते अतीत होता है तो जब तुम नहीं उत्पन्न भयेथे तो भी राज्यथा जब तुम यहांसे चले जावोगे वा मरजाउगे तो भी राज्य वना रहेगा और कोई न कोई राज्य का अभिमानी वना ही रहेगा तांते तुम्हारा राज्य नहीं जो तुम्हारा राज्य होता तुम्हारे संगआता अरु तुम्हारे संग जाता सोतो ऐसे देखनेमें नहीं आता वा हेराजन् यह राज्य पुण्योंकाहै तेरा नहीं राजाने कहा पुण्य मैं करेहैं ताते राज्य मेराहै रानीने कहा हे राजन् पुण्योंके कर्ताको जीव मन बुद्धि चित्त अहंकार अविद्या इत्यादि नामोकर कथन करीताहै यही कर्मोंके कर्ता हैं अरु यही कर्मोंका फल भोगताहै तू तो जब जीव पुण्य पापरूप कर्म कर्ताहै वा नहीं करता तथा जब तिनका फल भोक्ताहै वा नहीं भोगता तिन दोनों अवस्थाका साक्षी चैतन्य नित्य मुक्त आत्माहै ताते तू पुण्योंका कर्ता नहीं अरु तिन कर्मोंके फल सुख दुःखका भोक्ताभी नहीं इसी ते तुझ में कर्तव्य नहीं राजाने कहा मनादि जडहैं घटवत् कर्मोंका कर्ता भोक्ता कैसे बनसक्तेहैं रानीने कहा हे राजन् मनादि घटकी न्याई अति जडभी नहीं अरु निर्विकार आत्माकी न्याई चैतन्यभी नहीं किंतु मध्य भावीहै काहेते तुम नित्य सुखरूप आत्माके आभासके ग्रहण कर्नेकी मनादिकोंको योग्यता होने ते अरु घटादिकोंको योग्यता न होने ते ताते हे राजन् जो तुमको दुःख देताहै तिस ते अतीत हो जो राज्यमें दुःख देनेकी शक्तिहो तो राज्यमें स्थित सर्व पुरुषोंको दुःख होना चाहिये ताते पदार्थोंमें सुख दुःख नहीं इसकी कल्पना का बनाया सुख दुःखहै हे राजन् जो तू कहे इस गृहते अतीत होता हों सोभी नहीं बनसक्ता काहे ते यह हवेली या मंदिर तुम्हारे संग आई नहीं अरु न तेरेसंग जावेगी जो तेरी होती तो तेरे संग रहती हे राजन् इन हवेलियोंमें अनेक तेरे पिता पितामह रहरहकर चले गये अरु अनेक रहकर चलेजावेंगे अरु तूभी कोईदिन रहकर चलाजावेगा रस्तेके मुशाफर खानेकी न्याई ताते यह हवेलियां मुशाफिरखानाहैं तेरी नहीं जो मुशाफिर मुशाफिर खानेमें मूर्खता करके अप्रादावा कर्ताहै तो दुःख पाताहै अरु अपनी इज्जत खोताहै अरु जो

अपना ममत्व नहीं बांधता सो सुख पाताहै अरु गुजरानभी अच्छीतरहसे कर्ताहै हे राजन् पृथिवीका विकार रूप इस गृहके अनेक चीटी म कोडी मूसा सर्पादिक जीव तथा तेरे संबंधी अभिमानीहैं केवल तेराही गृहनहीं किंतु पूर्वोक्त सर्वोंकाहै जो गृह दुःखदायक होतो पूर्वोक्त सर्व जीवोंको दुःख होनाचाहिये ताते गृह दुःखदायक नहीं जो तुमको दुःख देवे वा तेरा होवे तिसका त्याग कर दूसरा गृह तो जड़है जड़ पदार्थको सुख दुःख देनेकी सामर्थ्यभी नहीं परंतु यह आप सुख दुःख मानलेताहै तो होताहै नहीं माने तो नहीं होता हे राजन् इस संघातरूप गृहते अतीतहो नामदेह अभिमान त्याग अभिमानही त्यागे पूरापडेगा अन्य प्रकार नहीं राजाने कहा इन संबंधीयोंते अतीत होताहों रानीने कहा हे राजन् तू चैतन्य इन संबंधियों ते स्वतःही अतीत नाम भिन्नहै एक रूप नहीं अरु आपभी तू स्त्री पुत्रादिक संबंधियों ते अपनेको अतीत नाम भिन्नही मानताहै ऐसा न होयकि इन संबंधीयों को त्यागे अरु दूसरे किसी भेषके संबंधियोंको ग्रहण करै यहां तो राजा गृहस्थी नाम कहाताहै अरु फेर मैं अमुक भेषका अतीतहों अभिमान समही हुया यहां तू मुकुट मोतियोंकी माला पहरताहै फेर तिलक अरु तुलसीकी माला वा रुद्राक्षकी माला धारण करे गा ताते जैसे नाम रूप तेरा इहां है तैसाही अतीत हुये होगा जैसे मठ तेरा यहां है तैसेही कोई गुरूका मठ तेरा फेर होगा ताते कहो हेराजन् किसते अतीत होताहै रानीने कहा हे राजन् असली विचार करे तो भ्रमसिद्ध शब्द स्पर्श रूप रस गंध पंच विषय अरु काम क्रोधादिक पंचज्ञानेंद्रिय पंचकर्मेंद्रिय पंचप्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार अरु इनके कारण भूत पंच महाभूत य हतेरे संबंधी हैं वा कार्य कारण नाम रूप प्रपंच यह तेरे संबंधीहैं यही तेरे पीछले जन्मांतरोंकेभी संगथे जबलग तुझको निजस्व रूपका ज्ञान नहीं भया तब लग आगे भी रहैंगे यही संबंधीही तेरेको भ्रमकर दुःखके देनेवालेहैं इनते तू अतीत होतानहीं अरु यह पुत्रादिक संबंधी जो तेरे सुखका साधन हैं तिनते अतीत होताहै ताते तेरी बुद्धि हँसनेयोग्यहै हे राजन् जिनको पुत्रादिक संबंधि योंको तू त्यागता है सो तेरेको आपही यह काल पायकर त्याग जावेंगे वा तू आप संबंधियोंको स्वभाविक त्यागेगा परंतु मनादि सं-

बंधी तुझको ज्ञानसे पूर्व काल कदाचित् भी नहीं त्यागेंगे जो तू मनादि संबंधियोंते अतीत नाम आपको सम्यक् भिन्न मानेगा पुनः
कालकी फाँसीमे न आवेगा हे राजन् अनेक वार तैंने स्त्री पुत्रादिक संबंधी त्यागे अरु ग्रहण करेहैं तथा ज्ञान विना आगे त्यागे
गा तथा ग्रहण करेगा परंतु दुःख दूर न हुये ताते अहंकारको त्याग जो सर्व त्यागी होवे एकवस्तु त्यागेगा एकको ग्रहण करेगा तो
सर्वत्यागी नहोगा पुनः तिसत्याग काभी त्यागकर पीछे अवाच्यपदहै सोई तेरा स्वरूपहै यह नहीं कि अहंकार किसीयत्न से त्यागा
जाताहै किन्तु विचारकी महिमासे त्यागा जाताहै अन्य साधन से नहीं राजाने कहा हे रानी अब मैं सर्वकामनाते निराश भयाहों
जो तू कहे सोई कर्ताहों रानीने कहा प्रथम आपा अहंकारको भस्मकर पीछे जो तेरी इच्छा होय सो करियो राजाने कहा मैं क्या करों
अरु किसकी शरण जावों जो उपदेश करे रानीने कहा मैं उपदेश तुझको करोहों पर मुझको तैंने निजस्त्री मानाहै तिस बुद्धीका त्याग
कर राजाने कहा मेरे मनमें ऐसी अग्नि उपजीहै जो स्त्री पुरुषका भाव भस्महोगयाहै जो सतको नहीं चाहता सोई मल मूत्ररूप स्त्री-
आदि शरीरकी इच्छा कर्ताहै अरु मुझको तो इंद्रकी अप्सराकीभी इच्छा नहीं तो तुझकी क्या वांछाहै रानीने कहा अहंकारको
त्याग कर देख तू कौनहै अरु तेरा कौनहै अरु तू किसकाहै यह जो दृश्यमान जगत् है सो नेत्रके खोलनेसे जगत् प्रकट होताहै जब नेत्र
मूंदे न तू न कोई तेरा अरु न तू किसीका न यह नाम रूप इच्छा अनिच्छादि मन रूप जगत् रहताहै नेत्रके खोलने मूदने से मनका
फुरणा अफुरणा जान लेना जब तू नहीं तब क्या गृहण कर्ताहै अरु काको त्याग करताहै राजा यह वचन सुनकर सर्वकामनाते निष्काम
हुआ अरु अपने अंतःपुरमें गया तब जैसे आगे हमेशा वस्त्र भूषण पहर कर राजाकी सेवामे स्त्रियां आतीथीं वैसेहीआई राजाने देख
कर कहा हे स्त्रीजनो जब मैं नहीं तब तुमसों क्या प्रयोजनहै ऐसे कहकर राजा विशुद्ध भया सभने जानाकि राजा बावरासा भयाहै
रानीने कहा चिंता मत करो राजाको कुशलहै जब किताककाल बीता तो राजा जाग्रत भया अरु नेत्रभर ऐसा रोया जो होमे अहंका-
रको धोयडाला अरु कहने लगा जो हस्ती अश्व अनुचर पुत्र स्त्री मेरेनहीं तथा यह शरीरभी मेरा नहीं तो शरीरके संबंधी मेरे कहांसे होवेंगे

ताते यह सब मिथ्या भ्रममात्र है परंतु मैं आपको नहीं जानताकि मैं कौनहों किसकारण पक्षीकी न्याई इस शरीरमें बंध भयाहों यह मनुष्य शरीर चिंतामणि है हाथ आया अरु व्यर्थ विषय रूप कीचड़में डालदिया अरु अपनी पृथा(निजहाल)न समझनी यह अत्यंत मूर्खताहै हे रानी मुझको वह अवस्था भईहै कि एक अतीत नदीके किनारे पर बैठाथा अरु नदीमे बुद्बुदे उठेथे तब अतीत बुद्बुदेको देखकर कहा हे बुद्बुदे तू मुझसे ऐसा स्नेहकर जो तेरा मेरा श्वास एकहोजावे अतीतके कहते२ही बुद्बुदा लीन भया अरु अतीत रुदन करने लगा कि हाय हाय मेरा बुद्बुदा नष्ट भयाहै इसके विना मैं कैसे जीवोंगा यह अतीतकी अवस्था देखकर विद्वानने कहा हे मूर्ख बुद्बुदेको तू क्यों रोताहै आपको रोय जो तूभी उसकी न्याई एक श्वास मात्रका महमान है रानीने कहा जब ऐसे जानाहै तब क्यों शरीरादिकोंके साथस्नेहकर्ता है राजाने कहा चाहना पिशाच की न्याई मनको लगीहै इसते कौनहै जो मेरी रक्षाकरे रानीने कहा चाहना आप कर्ता है रक्षा औरसे चाहता है ताते कौनहै जो तेरी रक्षा करै एक श्वास चाहना ते अचाहहो आपते आप मुक्तहै पीछे सर्व दर्शन तेराहीहोगा काहेते अहंकार रूप चाहनाही भगवानके मिलनेमें प्रतिबंध है जब चाहना करनेवाला अहंकार मिटा तब आपही आपहै हे राजन् असली विचार करें तो चाहना मनको लगीहै इस व्यवहारके सिद्ध करता तुझ चैतन्यको तो चाहना नहीं लगी काहेते चाहना अरु मनके जानने वाला तू चैतन्य साक्षी आत्मा होने ते ताते चाहना मनको लगी है तुझको नहीं मन चाहनाकी निवृत्ति करो वा न करो चाहे मनको छोड़ो वा न छोड़ो तुझको दूसरेके व्यवहारमें क्या फिक्र है जो इस मनका फिक्र कर्ता है दूसरोंका फिक्र क्यों नहीं कर्ता काहेते जैसे तुझ चैतन्य ते इस संघात सहित मन चाहना जुदी हैं तैसे सर्व लोक जुदे हैं जो दया कर्ता है तो सर्व परकर नहीं तो तूषी होरहो हे राजन् मनको पिशाचकी न्याई चाहना लगीहै इस चाहना तेभी अचाह हो सारांश यहकि आपको स्वतःही सर्व स्वस्वधर्म सहित मन वाणीके फुरने ते रहित अफुर जान अरु माया अरु मायाका कार्य नामरूप प्रपंचको फुरना रूप जान वा चाहना अहंकार रूप जान रानीने कहा हे राजन् अतीत हो राजाने कहा अतीत गृही होने वालाही नहीं रहा किंतु भस्म भयाहै अब अतीतको

न होवे जो मुझसे पूंछे तो मैं स्वरूपसेही वंध मोक्षते अतीत हों अव अतीत होनेवास्ते मुझ चैतन्यको यत्न नहीं काहेते बंध मोक्ष रूप प्रपंच भ्रम रूपहै भ्रमकी निवृत्तिवास्ते अपने स्वरूप अधिष्ठानका जाननेवत् जाननाही कर्त्तव्यहै अन्य नहीं ताते हेरानी मैंने अपने स्वरूपको सम्यक् अवाङ्मनसगोचर कर जानाहै ताते स्वतःही अतीतहों रानीने कहा हे राजन् जव तू चैतन्य मन वाणीका अविषय है तो मन वाणीके विषय कौनहैं हे रानी अस्ति भाति प्रिय रूप मैं आत्माही मन वाणीका विषयहों अरु मन वाणी रूपभी मैंहीं हों अरु अविषयभी हों तात्पपर्य यह कि माया अरु मायाका कार्य सर्व नाम रूप प्रपंचभी मैंहीहों अरु तिसते रहित भी मैही हों इसके आगे क्या कहों यह कह कर राजा तूष्णी भया अरु विष्णुका ध्यानभी करत भया काहेते पूर्व राजा विष्णुका उपासक था धर्मरायने कहा हे यमकिंकर जिनके मनते द्वैत मलीनता दूर होतीहै तिनकी यह अवस्थाहै यमकिंकरने कहा मुझ प्यासेको अमृतरूप कथा उस राजाकी कहो ढील मत कर काहेते गोविंद विना सब मिथ्या है काहेते जब मैं प्राणीको लेने जाताहों तव धन, पुत्र, स्त्री, ग्रह, माता, पिता, संबंधी शरीर सर्व वहांही रह जातेहैं अपना कर्तव्य साथ लिये एकलाही आताहै अरु एकलाही जाता है ताते सब मिथ्याहै धर्म रायने कहा हे यमकिंकर कोई व्यापक विष्णु आत्मा राजाके अंतःकर्ण विषेही था परंतु राजाका दृढ़ संकल्पही विष्णुरूप हो कर दर्शन देत भया विष्णुने कहा हे रूप मेरे वचन क्यों नहीं कर्ता राजाने कहा हे विष्णु आप वाणीसे पूछो वचन क्यों नहीं कर्ती जो वाणी वचन करे वा न करे मुझ चैतन्यकी हानि लाभ नहीं जैसे वायुका छिद्र द्वारा शब्द हो वा नहो परंतु आकाश दोनों अवस्थामें समहै हे विष्णु जब सर्व तूही था तव मुझको क्यों न उपदेश कराकि सर्वमैंही हों विष्णुने कहा तब तेरे कपाय परपक्व नहीं हुये थे जैसे मलीन दर्पणसे अपना मुख स्पष्ट नहीं दीखता तैसे तुझ कामना रूपी दर्पण मलीन था आप सहित सर्व विष्णुहै इस भावना रूपी भक्ति रूप छाई (रोली) करके अब शुद्ध भयाहै इसीते तू आपको अस्ति भाति प्रिय सर्व आत्मा रूप जानता भयाहै ताते तू विष्णु भया हे राजन् विष्णु नाम व्यापक वस्तुकाहै अरु जो व्यापक वस्तुहै सोई सत्यहै परिछिन्न

वस्तु सत नहीं होती घटकी न्याई जो सत वस्तुहै सोई चैतन्य ज्ञान स्वरूप वस्तु होतीहै असत् वस्तु ज्ञान स्वरूप नहीं होती जो ज्ञान स्वरूप वस्तुहै सोई सुख स्वरूप वस्तु होतीहै जड़ वस्तु आनंद स्वरूप नहीं होती ताते व्यापक सच्चिदानंद वस्तुका नाम विष्णुहै सोई मेरा स्वरूपहै सोई तेरा स्वरूपहै सोई चींटीका तथा श्वानका तथा स्त्रीका तथा सर्व जगत्का स्वरूपहै जिसने अपने स्वरूपको सम्यक् जानाहै सो विष्णुहै हेराजन् शंख, चक्र, गदा, मोर, मुकुटादिक लक्ष्मी सहित चतुर्भुज दृश्यमान यह मूर्ति तो मायामात्रहै अरु परिछिन्न वैकुंठ निवासीहै यह व्यापक सच्चिदानंद स्वरूप नहीं होसक्ती जैसे अन्य दृश्यमान मूर्त्ति माया मात्रहै तैसे यह चतुर्भुज मूर्त्तिभीहै विशेषता नहीं हेराजन् यह वात पक्षपातते रहित मैंने तुझको कहाहै इस सम्यक् विचारमें बड़ाई छुटाई किसीकी नहींहोती जहां पक्षपातहै तहां सम्यक् आतम निरूपण नहीं ताते तू अब विष्णु भयाहै राजाने कहा हे विष्णु जगत्की उत्पत्ति ब्रह्माते होतीहै जगत्की पालन विष्णु कर्त्ताहै अरु संहार शिव करताहै ऐसे शास्त्रलोक कहतेहैं तुम सत्य-वक्ता जैसे यह वातहै तैसे कहो विष्णुने कहा हेराजन् जिस सच्चिदानंद व्यापक अधिष्ठान वस्तुते ब्रह्मा विष्णु शिवकी यह दृश्यमान मूर्त्तिभी उत्पन्न होकर प्रतीति होतीहै पुनः जिसमें लीन होतीहै तिसी वस्तुते जगत्की उत्पत्ति पालना संहार होताहै अन्यते नहीं काहेते व्यापक सच्चिदानंद आत्म वस्तुते भिन्न सर्व परिछिन्न असत जड दुःखरूप अनात्म वस्तुहैं असत जड दुःखरूप अनात्म वस्तुते असत जड दुःखरूप अनात्म वस्तुकी उत्पत्ति पालना संहार नहीं होसक्ती जैसे इंद्रजालीही सर्व पदार्थोंकी मिथ्या भ्रम मात्र प्रतीतिकरा सक्ताहै इंद्रजालीकर माया मात्र रचे पदार्थ किसी दूसरे पदार्थको नहीं रचसक्ते इंद्रजालीही रच सक्ताहै जैसे स्वप्न जगत्की स्वप्न द्रष्टाही उत्पत्ति पालन संहार कर सक्ताहै स्वप्न पदार्थ किसी पदार्थकाभी उत्पत्ति पालन संहार नहीं करसक्ते काहेते स्वप्नद्रष्टा भिन्न सर्व स्वप्न पदार्थोंको तुल्य भ्रम मात्र होनेते ताते हेराजन् जो तैंने सम्यक् अपने सच्चिदानंद व्यापक स्वरूपको जानाहै तो निःसंग होकर चिंतनकर जो मुझ चैतन्य तेही सर्व जगत्की मर्यादाहै इस नामरूप प्रपंचका मैंही चैतन्य मालिक अधिष्ठानहों मुझ चैत-

न्यकरही इस जगत्की उत्पत्ति पालना संहारहै अन्यते नहीं यही वेदांत शास्त्रका डिमडिमाहै तथा अपना अनुभवहै जिसको अपने स्वरूपका अनुभव हुआहै वह शास्त्रका आश्रय नहींकर्त्ता काहेते अनुभव तेही सर्व शास्त्र होतेहैं अयिक ुभव नाम सत् चित् आनंद आत्माकाहै शास्त्र तो केवल परमाण मात्रही होतेहैं ताते हेराजन् और शास्त्र तो कर्मकांड अरु ‑हा ‑नाके प्रतिपादकहैं अरु वेदांत शास्त्र ज्ञान कांडका प्रतिपादकहै जो कर्म उपासनाके प्रतिपादक शास्त्र सतहैं तो ‑दांत शास्त्रभी सत्यहै जो वह असतहैं तो यह भी असतहै काहेते सर्व शास्त्रोंको सत अंगीकार कराचाहिये या असत अंगीकार कराचाहिये एकको सत अरु एकको असत् मानना यह हिसाव बाहिर बातहै वस्तुते विचारें तो कर्मकांड उपासनाकांड अन्तष्कर्णकी मलीनता औ चंचलाके दूर करनेके लिये ज्ञानके उपयोगी हैं ताते हेराजन् तू कौनहै राजाने कहा हे विष्णु तैंने जो कहा तू कौनहै इस में त्रिपुटी सिद्ध होती है एक वचन कर्त्ता अरु दूसरा वचन अरु तीसरा जिस प्रयोजन्के लिये वचन करा यह त्रिपुटी जिस प्रकाश कर सिद्धहुई है सोई मैं हों पुनः राजाने कहा हे विष्णु तुम्हारा स्वरूप क्या है विष्णुने कहा जो तेरा स्वरूप है सोई मेराहै शंख चक्र गदादिकों सहित यह दृश्यमान मूर्ति तथा सर्व जगत् माया मात्र है मैं चैतन्य अमायक स्वरूपहों परन्तु हे राजन् मुझअतिथि का तुम आतिथ्यकरो राजाने कहा हे प्रभो स्वराज अपना तुझको दिया मैं नहींहों जो कुछ है सो तूही है विष्णुने कहा अहंकार तैंने मुझको दिया क्या दिया परंतु अहंकारतेही सर्व जगत्की उत्पत्ति पालना संहार है तथा अहंकार करही जी व ईश ब्रह्म है तथा सर्व संसार है जब तू नहीं संसार कहां है अहंकारके देनेसे सर्वस्थ दानहै राजाने कहा क्या अहंकार तुझते भिन्न है मैंने जाना है जो तुझ ते भिन्न कछु नहीं विष्णुने कहा जो भिन्न नहीं तो अहंकारका देना कहां है राजा यह वचन सुनकर अपने स्वरूप में लीन भया जैसे घटाकाश महाकाश में लीन होवे रानीने कहा हे विष्णु राजाको तैंने मारा है विष्णुने कहा हे रानी राजा मरानहीं अमर हुआ है रानीने कहा हे विष्णु तू कौन है विष्णुने कहा मैं सत् चित् आनंद व्यापक द्वितीयहों रानीने कहा इनपदोंका अर्थ कहो काहे

ते मैं वेद शास्त्र पढ़ीनही हौं अरु सतसंगभी मुझको स्त्री होने ते किंचित् मात्रही है विष्णुने कहा सत उसको कहते हैं जो असत ते जुदा होवे अरु चित उसको कहते हैं जो जड ते भिन्न होवे अरू आनंद उसको कहते हैं जो दुःखसे न्यारा होवे अरु व्यापक उसको कहते हैं जो परिछिन्न न होवे अरु अद्वितीय उसे कहते हैं जो द्वैतते रहित होवे रानीने कहा मैं जानतीथी जो तू निर्वैर निर्विकारहै परंतु तेरे कहनेते जाना जो सर्व विकार तेरे विषेही है काहेते अवाङ्मनसगोचर विषे बुद्धिरूपी वाणियोंके हिसावका खाता नक्की हो चुका है अब इन हिसावोंसे कछु मतलब नहीं हे विष्णु जब सर्व अस्ति भाति प्रिय रूप तूहींहै तो किसते तू न्याराहै अरु किसते तूअभिन्न है तुझ विषे द्वैत अद्वैत भिन्न अभिन्नका मार्ग नहीं नहींतो अपने अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते जुदा असत जड दुःख रूप प्रपंचको दिखला जिसते तू न्याराहै जैसे स्वर्णते भिन्न भूषणोंको दिखला इत्यादि जल तरंगादि दृष्टांत अनेक हैं ताते हे विष्णु सर्व मैंही हौं तू है ही नहीं विष्णुहँसा अरु कहा मुझे ब्रह्मकहते हैं रानीने कहा जीवईश ब्रह्म सच्चिदानंद इत्यादि नामरूप मुझ अवाच पदसेही सिद्ध होतेहैं मैं चैतन्य किसी करभी सिद्ध नहीं होसक्ता ताते मेरी नमस्कार मुझको है मुझ विषे जानने अरु न जानने का मार्गनहीं अरु जानना न जानना भी मेरे विषेहीहै अरु सर्व दृश्य मुझका चमत्कार है लालकी दमकावत् विष्णुने कहा हे रानी तू कौनहै रानीने कहा मैं आपको नहीं जानती कि कौन हौं काहेते जो जानने में आताहै सो दृश्य मिथ्याहै बुद्धिका धर्म है अरु मैं चैतन्य सर्वका जानने वाला हौं मुझको कौन जाने कि तू कौन है इसीते स्वयं प्रकाशहौं विष्णुने कहा तुझते सर्व जगत् प्रगट भया है तू क्यों नहीं आपको जानती क्या तू जड है रानी ने कहा जड घटादि तमोगुणका कार्यहै अरु बुद्धिभूतोंके सत्व गुण का कार्यहै इसी ते घटादिकों की अपेक्षासे बुद्धि चैतन्यहै मैं अवाङ्मनसगोचर जड़ चैतन्यते रहित चैतन्य स्वरूपहौं जिस मुझकर जड चैतन्य सत असत ज्ञान अज्ञान गृहण [illegible] धर्म अधर्म मन वाणीका कथन चिंतन सिद्ध होताहै जिस मुझकर नामरूप जगत् सिद्ध होताहै सो मैं स्वयं प्रकाश स्वरूप आत्मा व्यापक [illegible] सम्यक् जाननाहै बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते शारीरक वा मानसिक वा वाणीकरभी कर्तव्य करना कछुनहीं काहेते बंध मोक्ष अपने स्वरूपके अज्ञानसे भ्रममात्र

सिद्धहै तात्पर्य यहकि अपने स्वरूपको सम्यक् न जानना बंधहै अरु अपने स्वरूपको सम्यक् जाननाही मोक्षहै और कोई बंध मोक्ष
वस्तु नहीं जिसके ग्रहण त्यागते पुरुषको बंध मोक्ष होवे अरु न कोई बंध मोक्षका स्थानहै जहां जायकर बंधकी निवृत्ति अरु मोक्षकी
प्राप्ति होनीहै विष्णुने कहा हे रानी बंध मोक्षका प्रतिपादक शास्त्र निष्फल होजावेगा रानीने कहा बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते
शास्त्रयत्न नहीं कहता किंतु जैसे अंधकारके दूरकरने वास्ते तथा अंधकारमें धरी मणिकी प्राप्तीवास्ते दीपकका चसानाहीं कर्तव्यहै
अन्य नहीं परंतु दीपकके चसानेवास्ते अनेक साधनहैं कोई अंधकारके दूर करनेवास्ते तथा अंधकारमें धरी मणिकी प्राप्तीवास्ते
अनेक साधन नहीं तथा जैसे अपने मुखके देखनेवास्ते केवल शुद्ध दर्पणका सन्मुख करनाही कर्तव्यहै परंतु जिस दर्पणमें मलीनता
होवे तिस दर्पणकी मलीनताके दूर करनेवास्ते अनेक साधनहैं कोई मुख देखनेके अनेक साधन नहीं तैसे बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति
वास्ते केवल अपने स्वरूपका सम्यक् जाननाही कर्तव्यहै अन्य नहीं परंतु जानना सम्यक् बुद्धिसे होताहै जिस बुद्धिरूपी दर्पणमें मल
विक्षेपादि दोषरूप मलीनताहै तिनके दूर करनेवास्ते अनेक जप तप भजन यज्ञ दान पूजा तीर्थ यात्रा व्रत शम दम वैराग्य विवेकादि साध-
नहैं कोई बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते साधन नहीं इसी अंशमेंगुरुशास्त्र पुरुपार्थ सफलहै वा अस्तित्व स्फुरणत्व प्रियत्व निजस्वरूपते
जो भिन्न प्रतीति होतीहै सोई भ्रमहै तिस भ्रमकी निवृत्तिवास्तेही गुरु शास्त्रकी सफलताहै कोई मोक्षरूप ब्रह्मात्माकी प्राप्तिवास्ते गुरु-
शास्त्र नहीं हे विष्णु अपने स्वरूपमें मन वाणी वेदकी गमनहीं क्या कहों कि मैं ऐसे हों कि वैसेहों जो मैं हों सोईहों मुझसे कछु कहा
नहीं जाता बड़ा आश्चर्यहै जो सतसंगतिसे पहलेभी स्वतःही बंध मोक्षसे रहित शुद्ध चैतन्य निर्विकार निर्विकल्प देश काल वस्तु भेदते
रहितथी परंतु अपने स्वरूपके न जाननेसे मैं आपको यह मल मूत्ररूप संघातही जानती भई जैसे कोई तृणोंमें हस्तीको छिपाया
चाहे सो मूर्खहै तैसे मैं पंचभूतोंका विकाररूप जो यह पंचज्ञानेंद्रिय पंचकर्मेन्द्रिय पंचप्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार यह
संघातहै सोई भये तृण इन तृणों विषे तथा इन तृणोंके उत्पत्ति नाश तथा इनके भावाभावके जाननेवाला तथा शब्द

स्पर्शादिक विषयोंके सिद्ध करनेवाले साक्षी चैतन्य आत्मारूप हस्तीको गुह्य भावसे रहितभी मैं छिपावती भयी तात्पर्य यहकि मैं प्रकट सूर्यकी न्याई द्रष्टा रूप हुई हुई भी आपको दृश्य रूप जानती भई इसी अपराधते भ्रमसे भ्रम रूप जन्म मरनको प्राप्त होती भई परंतु अब मैं अपने स्वरूपको सम्यक् जाना है भ्रम रूप चोरको निकासाहै जो दुःख देताथा अब मुझके भ्रम निवृत्त भयेहैं विष्णुने कहा हे रानी यह भी तुझको भ्रम है जो पूर्व मैं अज्ञानीथी अब मैं मोक्षको प्राप्त भई हों आत्मामे तीनो कालोंमे बंध मोक्षहै नहीं जिस मनने आपको बंध मानाथा उसी मनने अब मोक्षमानाहै ताते जानीताहै कि बंध मोक्ष मनन मात्र है तू आत्मा दोनों मनकी अवस्थाका साक्षीहै हे रानी तू सभते ऊंच पदको प्राप्त भई है रानीने कहा मेरे विषे ऊंच नीच दोनों नहीं एक रस आत्मा हों विष्णुने कहा हे रूप मेरे एते वचन गौरवताके मत कहो जिसने अपना स्वरूप पाया है वांकी भली चुंपही है जैसे संसारमे जो धनराखतहै तिससे कोई पूछे कि तुम्हारे पास कछु धनहै तो कहताहै कछु नहीं रानीने कहा हे विष्णु जो खाताहै उसीकी डकार आतीहै जिसको चिंतामणि प्राप्त भयी है सो हजार छिपावे तो छिपती नहीं हे विष्णु निर्बल पुरुषही किसीके भयते धनको छिपाताहै जो निर्भय सर्व ते बलीहै उसका धन छिपाया छिपतानहीं जैसे सूर्यका प्रकाश रूप धन ब्रह्मांडसे छिपाया छिपता नहीं अरु-सूर्यसे भी अपना स्वयंप्रकाश रूप धन छिपानेकी ताक़त नहीं तैसे मुझ चैतन्यका स्वयं प्रकाशता कर सर्व दृश्यको प्रकाशना तथा स्वरूपसेही बंध मोक्षते रहितता नित्य मुक्तता तथा परिपूर्णता एक रस्यता तथा सतरूपता तथा आनंद रूपता तथा अवाङ्मनस गोचरतादि धन इस असत जड़ दुःख रूप दृश्यसे छिपाया छिपता नहीं उलटा मुझ चैतन्य की सत्ता स्फूर्ति रूप धन करके असत जड दुःख रूप दृश्य भी सत् चित् सुख रूप धनी प्रतीती होरही है तथा भयमान हो रहीहै जैसे गुड करके कटुपदार्थ भी मधुर होतेहैं जैसे रज्जुकी सत रूपता कल्पित सर्प दंडमालादिकोंसे छिपाये छिपती नहीं उलटा रज्जु करकेही तिनकी सिद्धी होतीहै ताते हे विष्णु कहो मैं सत कहती हों कि असत जो असत कहती हो तो तुम मुझको दंड देवो विष्णु तूष्णी भया काहेते आगे वचनकी

गमं नहीं रानीने कहा हे विष्णु तूष्णी मत हो विना वचन विलास कहे सुने संशय दूर नहीं होते विष्णुने कहा हे राजन् अब तू क्या क
राचाहताहै कौन ठौर तैंने पकडी है राजाने कहा चाहना अचाहना पकडना छोडना बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते कर्तव्य मानना
अरु ज्ञानपीछे आपको निष्कर्तव्य मानना इत्यादि सर्व अंतःकर्णके स्वभावहैं मुझ चैतन्यका पूर्वोक्त स्वभाव नहीं ताते मुझको कछु
इच्छा नहीं जैसे आप फरमाइये तैसेही मैं करताहों विष्णुने कहा हे राजन् तू अब विष्णु भयाहै यथा प्राप्त विषे हर्ष शोकते रहि
त तथा ग्रहण त्यागते रहित हुआ हुआ धर्मपूर्वक जीवनमुक्त होकर विचर यह सर्व दृश्यपदार्थ तुझ चैतन्यकी लीलामात्रहैं तुझको
कोई दुःखका हेतु नहीं उलटा सुखका हेतुहैं तुम चैतन्य महाराजाकी प्रसन्नतावास्ते अहंकाररूप मालीने तुझ चैतन्यकी सत्तापायकर
यह संसाररूप बगीचा रचाहै अंडज जरायुज स्वेदज उद्भिज इन चार खानियोंमें होनेवाले जीव इस संसाररूप बगीचे में जीवरूप पुष्प
खिलरहेहैं सात समुद्र इसमें बावलियां हैं सूर्य चंद्रमा लालटेन लगरहेहैं ज्योतिषचक्र छोटी बत्तियोंकी रोशनाई होरही है मेघमाला रूप
फुहारे चलरहेहैं देखो हे राजन् कोई मनुष्य रूपी पुष्प शुद्ध शुक्लरूपहै कोई लालरूप है कोई कृष्ण वर्णवाला पुष्पहै कोई शुक्ल लाल मिश्रि
तहै कोई कृष्ण लाल मिश्रितहै किंचित् रज तम सहित शुद्ध सत्वगुण प्रधान स्वभाव वाले विष्णु आदि शुद्ध शुक्ल रूप पुष्पहैं रजोगुण
स्वभाववाले लाल जीवरूप पुष्पवत् जानने तमोगुण स्वभाव वाले नीले पुष्पवत् जीव जानने सत्वगुण स्वभाव वाले जीव केवल
धवल पुष्प जानने किंचित् सत्व रज सहित केवल तमोगुण प्रधान नारकी वृक्ष राक्षस दैत्य सर्पादिक जीवरूप पुष्पहैं किंचित तम
सत्वगुण सहित रजोगुण प्रधान मनुष्यादि हैं इत्यादि अनेक भेदहैं परंतु चार प्रकारके जीव तीनो गुणोके स्वभाव वाले हैं पृथक्
नहीं देखो कोई जीवरूप पुष्प देखते देखते अदृश्य हो जाताहै कोई नविन प्रगट हो आताहै कोई कुम्हला जाताहै कभी हैजा वी
मारी रूप वायुकर वा अनेक जीवोंकी प्रारब्ध कर्म क्षयरूप वायु करकभी इकट्ठे ही जीवरूप पुष्प गिड पडतेहैं अनेक प्रकारके कौ-
तुक अहंकार रूप मालीने संसाररूप बगीचेमे कर रक्खेहैं देखो मनरूप नट तुझ चैतन्य महाराजाकी प्रसन्नता वास्ते अनेक स्वांग

धारण कररहाहै कभी आपको वंधमानताहै कभी आपको मोक्ष मानताहै यहभी मनका स्वांगहै कभी निर्विकल्प होताहै तव हर्ष मानताहै कभी विषयके संवंधसें चंचल होताहै तो आपको धिःकार मानताहै यहभी हे राजन् मनरूप नटका स्वांगही जानो कभी आपको वैरागवान मानके उत्कर्ष होताहै दूसरेको अवैरागवान मानके तरक कर्ता है अरु कभी आपको पंडित मानताहै कभी मूर्ख मानताहै कभी ज्ञानी होकर निजका कृत्य कृत्य मानताहै अज्ञानी हुया अकृत्य अकृत्य मानताहै देखो यह भी विचित्र मनकेंही स्वांगहैं कभी आपको पुण्यवान मानताहै कभी आपको पापवान मानताहै कभी आपको जीव मानताहै कभी वेदांतीके संवंधसे आपको ईश्वर मानताहै कभी जीव ईश्वर का भेद मानना रूप स्वांग कर्ताहै कभी जीव ईश्वरका अभेद मानना रूप स्वांग कर्ताहै कभी संशयवानहोताहै कभी निर्संशय होताहै यहभी मनरूप नटका स्वांगही जानो कभी समाधि करताहै कभी योग कर्ता है कभी शांतिवान् होताहै कभी अशांतिवान होना कभी मौनी होना कभी अमौनी होना कभी आपको वर्णी मानना कभी आपको आश्रमी मानना कभी इनते रहित आपको मानना यह सब मन रूप नटकी तुम्हारे आगे नृत्य है कभी आपको दृष्टासाक्षी सत् चित् आनंद रूप मानना कभी आपको असत जड़ दुःख रूप दृश्य मानना यहभी मनरूप नटका स्वांगहै कभी कर्मकांड कर अन्तष्कर्णकी शुद्धी माननी अरु उपासनाते मनकी निश्चलता माननी ज्ञानते आवरणकी निवृत्ति माननी कभी तीर्थादिकोंके स्नानसे पुण्य मानना कभी न मानना वेदाध्ययन करना परस्पर शास्त्रोंका विवाद कर खंडन मंडन करना औ कभी ज्ञानते मुक्ति माननी कभी कर्म उपासना ते माननी कभी वंध मोक्ष न मानना इत्यादि मन वाणी सहित मन वाणीका कथन चिंतनरूप मनरूप नटका नाटकहै कभी राजसी संकल्प होना कभी सात्विकी संकल्प होना कभी तामसी संकल्प होना देखो यहभी मनरूप नटके स्वांगहैं हजारों वार जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मूर्छा मरण समाधि यह बुद्धिरूपी वेश्याकी तुम्हारे आगे नृत्यहै कभी वालक होना कभी युवा होना कभी वृद्ध होना कभी उत्पत्ति होना कभी नाश होना यह शरीर रूप नटका तुम्हारी प्रसन्नताके वास्ते नाटक है कभी क्षुधा होनी

कभी तृषा होनी यह प्राण रूपी नटका तुम्हारे आगे नाटक है कभी चिंतन निर्गुण वा सगुण परमेश्वरका ध्यान करना अरु करनेते प्रसन्न होना कभी न करनेते अप्रसन्न होना यह चित्त रूपी नटका तुम्हारे आगे नाटक है कभी देहाभिमान करना कभी आत्मा में अहं प्रत्यय करनी यह अहंकार रूपी नटका तुम्हारे आगे नाटक है किसी पदार्थका निश्चय करना किसीका न करना यह बुद्धि रूपी वेश्याकी तुम्हारे आगे नृत्य है हेराजन् और नाटक देखो श्रोत्रादिक इंद्रिय तुझ चैतन्यके गुलाम हैं तुझ चैतन्य साक्षीकी प्रसन्नता वास्ते शब्दादिक विषयोंको ग्रहण करके तुम्हारे आगे भेट राखें हैं जैसे पालित बाज पक्षीको मार करके स्व पालकके आगे आन राखे है सोई बाजका पालक यह तमासा देखकर प्रसन्न होवे है तैसे श्रोत्रादिक इंद्रिय रूपी बाज शब्दादिक विषय रूप पक्षीको ग्रहण करके तुझ चैतन्यके आगे आन राखे है इस नाटकको देखकर तू खुश हो तैसेही वाकादिक कर्मेंद्रिय रूप नटभी शब्द उच्चार्णादिक नाटक कर रहे हैं तुम्हारे आनंदके वास्ते तात्पर्य यह कि कायिक वाचिक मानसिक जितनीक इस संघातकी चेष्टा है सो सभ तुम चैतन्य साक्षीके आगे नाटक है हेराजन् तू साक्षी चैतन्य मनादिक नटोंके साथ एक रूप होकर नाटक मत करना काहेते इस विपर्यय बुद्धिते विद्वानोंमे तुम्हारी इस तुच्छ व्यवहार करनेसे हाँसी होगी जैसे कोई भला मनुष्य नटोंके साथ मिलकर नाटक कर्त्ता है तो तिसकी सब लोक निंदा करते हैं ताते तू मनादिक नटोंके नाटकका द्रष्टा साक्षी भलामनुष्य चैतन्य निर्विकार निर्विकल्प स्वतः सिद्ध है यत्न करनहीं हेराजन् असली विचार करे तो तुझ चैतन्यको द्रष्टापनाभी दृश्यसे भिन्न करने वास्ते उपदेश करा है काहेते प्रथमै निषेध मुखही उपदेश मुमुक्षुको कर्तव्यहै जब अपने स्वरूपको दृश्यते भिन्न करके जाना पीछे सर्वरूप विधिका उपदेश करा चाहिये जैसे प्रथमै स्वप्न पदार्थोंते स्वप्नद्रष्टाको भिन्न बोधन करके पीछे सर्वरूप स्वप्नद्रष्टाको ही उपदेश करा चाहिये ताते हेराजन् अस्ति भाति प्रियरूप तूही सर्वात्मा है द्रष्टा दर्शन दृश्य त्रिपुटी रूपभी तू ही है त्रिपुटीके प्रकाश कर्नेवाला भी तूही है उठो जब लग शरीर है तब लग कोई न कोई चेष्टा कर्नी है अरु सर्व चेष्टा स्वप्नके तुल्य मिथ्या हैं ताते यथा प्राप्त मेंही क्यों न विचरो

ऐसे कहकर विष्णु चलते भये रानी राजा विद्यत वेद होकर अपने राज्य कार्यको कर्तेभये परंतु जल कमलवत् सर्व व्यवहार करतेभी अलिप्तरहे धर्मरायने कहा हे यमकिंकर जो देह अभिमानते रहित सम्यक् अपने स्वरूपको जानताहै सारांश यहकि यह पंचभूतोंका विकार रूप संघात मैं नही किंतु मैं चैतन्य साक्षी आत्मा हों इस निश्चयवान पुरुषके ऊपर तुम्हारा हमारा जोर नहीं चलता जो धर्मात्मा है तथा जो धर्म पूर्वक धन उपार्जन करके अपने बालबच्चोंकी पालना भी करता है अरु यथायोग्य अपनी सामर्थ्यके अनुसार अतिथि सेवन भी कर्ताहै अरु पाप आचरण नहींकर्ता तिस ऊपर भी तुम्हारा हमारा जोर नहीं चलता तथा जो पुरुष हरिको अपने आत्मासे भेद करके वा अभेदकरके सगुण वा निर्गुण परमात्मा का स्मरण ध्यान कर्ताहै औ सत संभाषणादि गुणों युक्त सज्जन रीतिसे रहताहै तिस ऊपर भी तुम्हारा हमारा बल नहीं चलता तथा जो प्रणवादिक हरिके नामश्रृद्धा पूर्वक हरवक्त उच्चारण कर्ता है तथा पर उपकारीहै अरु पाप आचरण कर्ता नहीं तिस ऊपरभी तुम्हारा हमारा बल चलता नहीं हे यमकिंकर जो पापाचारीहै तथा अन्यायकारीहै तथा विश्वासघाती है तथा दुराचारी है तथा जो माता पिताका मन वाणी शरीर करके तिरस्कार कर्ता है जो कृतघ्न है तथा जो चोरी कर परधन हरता है तथा जो गुरु विद्वानोंको तिर-स्कार कर्ता है तथा देह अभिमानी है तथा जो परमेश्वरका नाम भी स्मरण नहीं कर्ता तिस ऊपर तुम्हारा हमारा बल चलताहै तिसको तुम दुःख दे सक्ते हो जैसे लोक विषे राजा अरु राजाके सिपाही अन्यायकारी(जुल्मी)को ही दुःखदे सक्ते हैं अरु जो भलामनुष्य सराफ अपने रस्ते में ही आता जाता है तिसको राजा वा राज सिपाही कोईभी दुःख नहीं दे सक्ते उलटा जहां धर्मका कामपड़े तहां तिनकी गवाही मन्जूर करी जाती है ताते हे यमकिंकर तू अरु मैं किसीको भी दुःख सुख नहीं दे सक्ते अपने शुभाशुभ कर्तव्य करके ही जीव सुख दुःख पाते हैं ताते अभिमान मत कर जो मैं दुःख देता हौं हे यमकिंकर तैंने जो कहाथा कि मैं प्राणीको लेने जाता हों ले भी आता हों परंतु उसका रूप नहीं जानता कि क्या वस्तु है हे यमकिंकर जिस प्राणिके स्वरूपको तू देखा चाहता है सो तेरा अपना आत्मा

है अपने आत्माको तू कैसे देखे जैसे चक्षु अन्यको तो देखते हैं परंतु चक्षु चक्षुओंको तो नहीं देख सक्ते देखना दूसरे में होता है दृश्य करके तो दृष्टाका जानना नहीं होता दृष्टा करकेही दृश्यका जानना होता है मन करके वा चक्षु आदिक इंद्रियों करके हे किंकर तू प्राणीके स्वरूपके देखनेकी इच्छाकर्ता है सो तो मन इंद्रियादिक दृश्यका स्वदृष्टा अपने स्वयं प्रकाशको कैसे देखेंगे किंतु नहीं देखेंगे जैसे चक्षु सर्वको देखते हैं चक्षुओंको कोई देखता नहीं चक्षुओं करके प्रकाशत पदार्थ कहें कि हम चक्षुओंको देखें वा जाने सो तिनका कहना निष्फल है तैसे ही तू अपने आत्माको मन करके वा चक्षुओं करके देखा चाहता है ताते तेरी बुद्धि हँसने योग्यहै हे यमकिंकर तू देह अभिमानको त्याग अरु आपको चिदूघन नित्य सुख रूप जान जो कालके भयते निवृत्त होवें जिसको अपने सहित यह सर्व नामरूप प्रपंच वासुदेव निश्चय है तिसका यमसों क्या प्रयोजनहै अरु जिसने देह अभिमान त्यागानहीं अरु पापाचारी है सोई मेरे पास आताहै ताते हे किंकर भजन गोविंदका कर जो मलीनताते निर्मल होवे अरु भजन यहीहै जाने आप सहित सर्व हरिहै और क्या पूछताहै किंकर ने कहा जैसे मछलीको जलके समुद्रसे निकास कर सुगंधीके समुद्रमें डाले तो मछलीको नामनूजरहै किंतु सुगंधी उसको विषकी न्याई है तैसे मुझको और कछु मतलब नहीं यही प्रयोजन है जो अपने स्वरूपको जानौं पर मैंने जानाहै जो अज्ञानी पुरुषोंके ठगने वास्ते तुम्हारी हमारी धूमधामहै विचारे ते सर्व भ्रम मात्रहै धर्मरायने कहा ऐसे मतकहो मेरी शासनाते भयकर प्रभु सों किंकरको समता करनी नहीं चाहिये किंकरने कहा न तू प्रभु न मैं किंकर एक गोविंद आत्माही है पर कथा उस राजाकी कहो धर्मरायने कहा किंचित् वात कहनेसे कहताहै धर्मराययम किंकर सर्वभ्रम मात्रहैं जब भिन्न भिन्न सम्यक्क होगा तब निश्चयकरेगा जो त्रिलोकीही नहीं अनुचरसे वात वेमर्याद करनी दुःखका मूलहै हे किंकर चौरासी लक्ष योनि नरकहैं सो देहाभिमानी नारकी तिन नरकों को भाक्ताहै अरुएक ही आत्मारूप स्वर्गहैचा हेस्वर्गमें वा नरकमें वासलेवो यमकिंकरने कहा स्वर्ग नरक रूप अहंकारहै नहीं सर्व गोविंदहैपर कथा राजाकी कहो धर्मरायनेकहा जब तू उस जैसा आपनहीं होता तो उसकी कथा पूछनेंसे क्या प्रयोजनहै ताते नारायणको अपने आत्मासे अभेद जान जो

तेरा हृदय शुद्धहोय शुद्ध हृदयविना मेरा वचन तुझको प्रवेश न करेगा हे किंकर जव तू आप न विचारेगा तव ब्रह्मा विष्णु शिवभी तुझको उपदेश करें तोभी कछु गुण न होगा ताते देहाभिमानको त्याग अरु सत प्रतीति कर जो विना आत्मा और कछुनहीं है हे किंकर गोविंद तो जगत्की उत्पत्ति पालना संहार विकार स्वभाव वाला है अरु तेरा स्वरूप आत्मा निर्विकार शुद्ध है किंकरने कहा तुम शुद्ध अशुद्ध कहते हो मैं दोनोते न्याराहों पर कथा कहो धर्मरायने कहा सुन कालपाय कर पुनः राजाके अंतष्कर्णमें विष्णुके दर्शनकी अतिप्रीति हुई सो भक्तवत्सल ईश्वर तत्काल राजाके अंतःपुर विषे विष्णु प्रगट होता भया राजा देखकर प्रेममे मग्न भया अरु स्तुति करने लगा हे विष्णु मैं कछु नहीं जो कछुहै सो तूही है मध्यमे भी तूहीहै अंतमेंभी तूहीहै विष्णुने कहा जव सर्व मैंही हों तू नहीं तव तैंने कैसे जाना जो सर्व विष्णु तूही है आपा अहंकार ते विना यह जानना नहीं होता राजाने कहा जों कहों हों सो अविद्याते कहों हों तेरे मिलापते आपा अहंकार नहीं रहा जैसे अग्निके संगते काष्ठका आकार नहीं रहता ताते क्याकहों जो कछु है सो तूहीहै आपही आपको कहता है आपही आपको जानता सुनता सूंघता स्पर्शकर्ता लेता देता दाता मँगता सर्व त्रिपुटी रूप आपही है जैसे स्वप्नदृष्टा सर्वरूप है विष्णुने कहा कुछ मांग राजाने कहा मैं तो हैहीनहीं मांगों क्या यही कृपाकीजिये जो आपविना नदेखों नसुनो विष्णुने कहा अभेद दृष्टि तव प्राप्त होती है जव सर्व पदोंकी चाहना नरहै चाहनाही अपने स्वरूपके दर्शन विषे पडदा है जव चाहना नाश भई तव आपते आपहै चाहनाके दूर करने काही शास्त्र कर्तव्य कहता है कोई अपना स्वरूप दर्शन में कर्तव्य नहीं कहता जैसे बादलके दूर करनेका ही कर्तव्यहै सूर्य दर्शन में कोई कर्तव्य नहीं राजाने कहा चाहनाके दूरकरनेका उपाय कहो विष्णुने कहा जव मायाके गुणोंसाथ मिलके आप कछु बनता है तव चाहनाभी होती है जव आपाअहंकार गया तो चाहनाभी संगही जाती है ताते आपको वीच उठादे बाकी शेष जो है सो अवाचपद है अरुजो परमात्माका भक्त कहाता है अरु आपा वीच रखता है तिसको धिक् है हे राजन् जैसे सर्व पदार्थोंके अंतर वाहर आकाश

पूर्ण है तैसे तू आपको पूर्ण जान यह सर्व नामरूप जगत् मैंहींहों मुझ चैतन्य विना नकोऊ हुवा है नहोगा मुझ चैतन्य कीही सर्व उपासना तथा प्रार्थना तथा पूजा कर्ते हैं मैंही चैतन्य सर्वको आप अपने कर्मके अनुसार फल देता हों मुझ चैतन्य की सर्वदाजय है अरु मैंही वेदसे वेद्य सर्वको प्राप्तहोने योग्य हों इस दृढभावना को धारण करो जो वही रूप होवेंगे हे राजन् प्रगट है जबलग लकडी अग्निका संग नहीं पाती तबलग लकडी का रूप है जब अपना आप अग्निको सौंपा तब अपना रूपत्यागके अग्निरूप होती है तैसे जबतक तू आपा अहंकाररूप लकड़ीको ब्रह्मअग्निमें नहीं जलाता तब तकहीं तुझको आवागवनहै जब तैंने जानाकि एक आत्मा चैतन्य मैं हों द्वैतहै ही नहीं तब निर्संशय तद्रूप होवेगा हे राजा मरनेका भयकर अरु जीनेकी आशकर एक घरी भजन कर्त्ताहै तो सभसे कहताहै मैंने तो एता भजन किया पर रात दिन इंद्रियोंकी पालना में वितावताहै किसीसों वातभी नहीं कर्त्ता ताते सर्व चाहनाते अचाह हो अरु आपको परिपूर्ण जान जो सर्व मैंहीं हों दुःख सुख कहांहै राजाने कहा जब सर्व अस्ति भाति प्रियरूप मैंही हों तो चाहना अचाहना ग्रहण त्यागभी मैंही हों किसते अचाह होवों विष्णुने कहा जो तू चिंतन कर्त्ता है तथा जिसका चिंतन होताहै तथा चिंतन यंह त्रिपुटी सो तूतो हैही नहीं क्यों भ्रम कर्त्ता है राजाने कहा जब मैं नहीं सर्व अंतर बाहर तूही है तो चाहना अचाहना भी तूही है तू चाहनाते अचाह हो यह तुम्हारा कहना वेहिसावकी बात है चाहना हो वा नहो मुझको क्या फिक्रहै किंतु कछु नहीं जिसको फिक्रहै सोई त्यागेगा मुझको फिक्र नहीं है ताते त्यागों क्या विष्णुने कहा हेराजा आशाते निराश हो अरु मेरी शरण आउ मुझविना न जान न देख अरु जो दृष्टमात्र जगत् है सो स्वप्नसमान है राजाने कहा जब मैं नहीं तूही है तो मुझको इन बातोंसे क्या मतलब है विष्णुने कहा भक्तिकर राजाने कहा जहां अहंकार है वहांही भक्ति है जहां अहंकार नहीं वहां भक्ति कौन करे विष्णुने कहा भक्ति तीन प्रकारकी है उत्तम मध्यम निकृष्ट पाषाणादिक मूर्तियोंकी पूजा निकृष्ट भक्ति है अपने आत्मा ते जुदा परमात्माको मानके ध्यान स्मरण करना सो मध्यम भक्ति है अपने आत्मासे अभेद परमे-

श्वरको जानना घटाकाशको महाकाश रूपवत् यह उत्तम भक्ति है काहेते सत् चित् सुखरूप आत्माते भिन्न घटादिक अनात्मा हैं परमात्माको आत्माते भिन्न माने तो असत जड दुःखरूप अनात्मा होवेगा जो असत जड़ दुःखरूप अनात्मा होता है सो जड़ मिथ्या दृश्य होता है ताते अपने आत्मा ते परमेश्वरको भिन्न मानना भक्ति नहीं अभक्ति है ताते मुझ व्यापक चैतन्य विष्णुको अपने आत्मासे अभेद जान यही परमभक्ति है राजाने कहा मुझके स्वरूपमे भेद अभेद दोनो नहीं जिसमें भेद अभेदका मार्ग है वही तीन प्रकारकी भक्ति करो वा न करो जव सर्व मैंहीं हो तो उत्तम क्या अरु मध्यम क्या अरु निकृष्ट क्या उत्तम मध्यम निकृष्टभी मैंही हों विष्णुने कहा जो भक्ति करता है सो पर अपर ते छूटता है राजाने कहा जिसमें पर अपर हो अरु जिसको पर अपर दुःख देता है सो पर अपर ते छूटनेका साधन करै मुझके स्वरूपमें देश काल वस्तुका भेद नहीं एक रस पूर्णहों पर अपर कहां है पर अपरभी मैं चैतन्य ही हों जैसे स्वप्नमें पर अपर है नहीं स्वप्नद्रष्टाही सर्वरूप है ऐसा न हो जो भक्ति करे आपा अहंकार वीच राखे भक्ति नहीं कपट है विष्णुने कहा हे राजा भक्तिकर जो मूल अपना पावे राजाने कहा हे विष्णु तैंने आपही कहा है सर्व मैं हीहों जव सर्व तूही है तो मैं जो भक्ति करों सो मैं कौन हों विष्णुने कहा मैं हों अरु भक्तिभी मैंही करोहों राजाने कहा जव सभ तूही है मुझकी भक्ति करनेसे अरु न करनेसे तुझको क्या हानि लाभ है विष्णुने कहा भक्तिविना सुख नहीं राजाने कहा भक्ति करनेसे सुख होगा न करेसे दुःख होगा तो ऐसी भक्ति करनेकी मुझको इच्छा नहीं जव सव तूहीहै तो सुख दुःख किसपरहै आप अपनी भक्ति-कर चाहे न कर मुझसे पूछे तो भक्ति करना अरु न करना वंध मोक्ष जीव ईशादि संसार माननेवाला अहंकार था सो मिथ्या अहं-कार मेरा नष्ट भया है अव भक्ति ज्ञान ध्यान भजन कौन करै मुझके स्वरूपमें तो संसार आगेही नहींथा भ्रम करके अहंका-रने कल्पा था सो अहंके जानेसे संसार भी गया अव भक्ति कौन करे अरु भक्ति सेवक स्वामी भाव विना होवे नहीं अरु मैंने आप सहित सर्व जगत्को हरिरूप जाना है विष्णुने कहा यही परमभक्ति है जो अपने आत्मासे मुझको अभेद

जानना नहीं तो कपट है इतनी वात कहके विष्णु अंतर्ध्यान होते भये धर्मरायने कहा हे किंकर जव तुझको भी यह अवस्था होवे तव स्वरूपको पावे किंकरने कहा अपनी स्थिति विना स्वरूप पावना कठिन देखताहों काहेते रसनाते वारंवार नारायण नारायण कहो हों अरु मन पाप पुण्यमें वंधहै ताते भजन नहीं कपटहै जव कर्म कर्तें आपको निष्कर्म जानो जव सर्व आशा ते निराश होवों तव पूर्णकाम होवों हे धर्मराय मैं कौनहों अरु मूल मेरा क्या है धर्मरायने कहा तुझको केतिकवार कहाहै यह वात मुझ ते मत पूछे काहेते मुझको परमात्माकी जीवोंके भले बुरे कर्मों के पक्षपात रहित धर्म पूर्वक न्याय करने की आज्ञाहै कोई जीव ईशके स्वरूपका उपदेश करनेकी आज्ञा नही किंकरनें कहा वड़ा आश्चर्य है अपने स्वरूपको जाने विन सुख वास्ते कर्म करने प्रकाश विना अंधेरेको दूरकरना है उससमयमे वशिष्ठ आवत भये "सर्वमिदम् रूप वासुदेव" यह कहते आये आप सहित सर्व वासुदेव है वशिष्ठने कहा हे धर्मराय तुमने जो कहा है जिस का मन अविद्यामें लीन है तिसको स्वरूप पावना कठिन है जिसका मन शुद्धहै तिसको सुगम है कहो मली नता शुद्धता दोनो किससे प्रकाश राखे है अरु किसमें है धर्मरायने कहा प्रकाश दोनोंका आत्माते है अरु अंतःकर्णमें दोनो रहै हैं जैसे दर्पणके मकानमें शुद्धता अशुद्धता अमृत विष दोनोका प्रकाश नेत्रों सें होवे है अरु शुद्धता अशुद्धता अमृत विष दोनो दर्पणके मका नमें होवे हैं ताते शुद्ध दर्पणसे मुख देखाजाता है अशुद्ध सें नहीं देखा जाता तैसेही शुद्ध अंतष्कर्ण रूपी दर्पणसे आत्मरूपी मुख देखा जाता है अशुद्ध सें नहीं अंतष्कर्णके शुद्धकरनेका उपाय कौनहै सो जप,तप,दान,भजनादि अनेक उपाय हैं परंतु आपसहित सर्व जग-त्को सत् चित् आनंद रूप निरंतर दीर्घ काल सत्कार पूर्वक श्रृद्धासे ध्यान करनेते अंतःकर्ण शीघ्रही शुद्धहोता है यही निश्चय बुद्धिमें सम्य क् जवजाना ज्ञानहै नहीं तो निर्गुण अहं ग्रह उपासनाहै वशिष्ठने कहा आत्मास्त्रीहै कि पुरूष है कि नपुंसकहै धर्मरायने कहा आत्मा न स्त्री न पुरुष न नपुंसक अरु स्त्री पुरुष नपुंसक भी आत्मा हीहै जैसे स्वप्न स्वप्नके स्त्री पुरुष नपुंसक द्रष्टा नहीं अरु सर्व वेहीहैं इसीते आत्मा आप ते आपहै वशिष्ठने कहा जव आपहै तव और भी होयगा जो और नहा तो आप कहाँ है धर्मरायने कहा नित्य सुख ज्ञान स्वरूप आत्मा

तेही सर्व दृश्य पदार्थ उत्पन्न होते हैं रज्जु सर्पवत् आत्मा करकेही जाने जाते हैं आत्मा किसी दृश्य पदार्थसे जानानहीं जाता स्वयंप्रकाशहो
नेते ताते आत्मा पर अपर द्वैत अद्वैत दृश्य ते परे नामभिन्नहैं वशिष्ठने कहा जो आत्मा दृश्य ते परेहै तो उरेभी होगा नहीं तो कहो
दृश्य ते उरे कौनहै दृश्य अरु दृश्यसे उरला देश आत्मा विना खाली होगा हेधर्मराय पूर्ण आत्मामें उरे परे नहीं जैसे पंचभूतोंमें
उरे परे नहीं सर्व रूप पंच भूतही हैं धर्मराय तूष्णी भया तिसी समय गौतम अरु याज्ञवल्क्य दोनों आवतभये गौतमने कहा हे व
शिष्ठ कहो रूप मेरा क्याहै कृष्ण वा श्वेत वा लालादि वशिष्ठने कहा मैं नहीं जानता जो कोई मेरे वचनोंका श्रोताहै मुझविषे द्वैतका
मार्गनहीं क्या कहों अरु किसको कहों पर कहताहों श्वेत सत्वगुण कृष्ण तमोगुण अरु लाल रजोगुण रूप माया तथा मायाका कार्य
जेताकमन वाणीका गोचर है तेरा स्वरूप नहीं यह मिथ्या मायाका स्वरूपहै तेरा स्वरूपतो अवाङ्मनस गोचर सर्वाधिष्ठान जगदांध
प्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाधन विशुद्धानंदहै गौतमने कहा जब तुझविषे द्वैतनहीं तो तुझको श्रोता वक्ता कैसे भान
हुआ जो आपही आपहै वशिष्ठने कहा जो दोनों नहीं तो तैंने कैसे सुनाहै गौतम तूष्णी भया तब याज्ञवल्क्यने कहा मैं एक सत्व ज्ञान
अनंत स्वरूप सर्व आत्मा हों मुझ आत्माते पृथक् जो दृष्ट आता है सो भ्रममात्रहै जैसे स्वर्णसे पृथक् जिसको भूषणोंकी प्रतीति होती
है सो भ्रमी है वशिष्ठने कहा हे याज्ञवल्क्य जलको अपने ते पृथक् फेन बुद्बुदा तरंगभान कदाचित् भी नहीं होते तुझ चैतन्य अधि-
ष्ठान आत्माको आत्माते पृथक् दृश्य भ्रम मात्रहै यह कैसे भास्या याज्ञवल्क्यने कहा जल जडहै अरु मैं आत्मा सूर्यवत स्वयंप्रकाश
स्वरूप हों मुझ सत्‌रूप आत्मा करके ही भ्रम अभ्रमकी सिद्धी होती है, नहीं तो कहो आत्मा विना भ्रम अभ्रमको किसने जाना
भ्रमको भ्रमतो सिद्ध नहीं कर सक्ता यमकिंकरने कहा हे याज्ञवल्क्य सत मैंने अबतक नहीं देखा भिन्न भिन्न कर कहो याज्ञवल्क्य
ने कहा सत तूहै सतको देखे कैसे जो सत देखने जानने में आवेगा तो असत दृश्य पर प्रकाश होगा अध्या रोपकर तिसका स्वरूप
कहता हों साक्षात् नहीं जिसते इस दृश्य संसारकी उत्पत्ति पालन संहार होताहै तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति हजारों वार हो होकर

मिट जातेहैं तथा हजारों वार क्रमसे सत्व रज तम गुण हो होकर मिट जातेहैं तथा जो हजारों वार भूत भविष्यत वर्तमान काल हो होकर मिट जाताहै जो आप तीनों कालों में एक रस रहताहै सो कदाचित्त विकारी अन्यथा भावको नहीं प्राप्त होता तिस आत्माको सत कहते हैं अंतर जो अपने स्वयं प्रकाश करके सूर्यवत् सर्व मनादिक दृश्यको परिमाण करताहै कांटेवत् (तराजू) तात्पर्य यहकि जिसकर अंतर सर्व मनादिकोंका वृत्तान्त जाना जाताहै तिस आत्माको ज्ञान स्वरूप कहते हैं जिसकी इयता परिमाण करा जावे नहीं इसवास्ते आत्माको अनंत कहते हैं इस आत्मासे भिन्न सर्व दृश्य पदार्थ असत जड दुःख रूप जाने जातेहैं इसते भिन्न आत्माको सत् चित् आनंदरूप कहतेहैं यमकिंकरने कहा जलते बुद्बुदा उत्पन्न भयाहै प्रकट जल रूपही है तैसे सत आत्मा ते जगत् उत्पन्न भयाहै ताते सत रूपही है असत् क्यों कहते हो याज्ञवल्क्यने कहा यह नेमनहीं जिससे जो चीज उत्पन्न होवे सो वैसेही होवे उपादान कारणके समान तो निः संदेहकार्य होता है जैसे मृत्तिकाके समान सत्तावालेही घटादिक होते हैं परंतु विवर्त कारणके समान कार्यकी सत्ता नहीं होती जैसे स्वप्नदृष्टाते निद्रा दोषकर स्वप्न प्रपंच उत्पन्न होताहै परंतु स्वप्नदृष्टा सत रूप है स्वप्न प्रपंच असत रूपहै तथा जैसे इंद्रजाली अपनी माया करके अनेक पदार्थ उत्पन्न करताहै परंतु इंद्रजाली सतहै तिसके करे हुये पदार्थ असतहैं तथा रज्जुके अज्ञान ते सर्पादिक उत्पन्न होतेहैं परंतु रज्जुसतरूप है सर्पादिक असतरूप हैं तैसेही आत्माके अज्ञानते जगत् उत्पन्न होता है परंतु आत्मा सतरूप है तिसते उत्पन्न हुआ जगत् असतरूप है हे किंकर तू अवतक अविद्यामें वंध है ज्ञान तुझको प्राप्त नहीं भया इसी ते अपने मूलको अप्राप्त है यमकिंकरने कहा पूर्व तुमने आपही कहा है कि मैंही सर्वात्माहों तो ज्ञानी अज्ञानीभी तूही है द्वैत हैही नहीं अन हुई द्वैतको क्यों आरोपण करते हो याज्ञवल्क्यने कहा मैं कौन हों यमकिंकरने कहा जो मैंहों याज्ञवल्क्यने कहा तू कौन है यमकिंकरने कहा मुझमें जानने न जाननेका मार्ग नहीं आपते आपहों याज्ञवल्क्यने कहा जब तुझमें जाननेका मार्ग नहीं तो मेरे विषे ज्ञान अज्ञान क्यों आरोपता है किंकर तूष्णी भया तिस समय व्यास आवत भया अरु कहा जो कोऊ मुक्त हुआ चाहे भक्ति गोविंदकी करे याज्ञव-

84

लक्यने कहा भक्तिका स्वरूप क्या है व्यासने कहा आप सहित सर्व जगत्को हरिरूप जानना यही परमभक्ति है याज्ञवल्क्यने कहा आप सहित सर्व हरिरूप जानना रूप भक्ति जीव रूप मनने करनी है मन दृश्य मिथ्या संकल्प विकल्प रूप कल्पित है तिस मनकी मुक्ति नहीं हो सकती और जीवका लक्ष स्वरूप हरिसाक्षी आत्मा चैतन्य आप सहित सर्व हरि है इस जानने न जाननेसे पहलेही स्वतः सिद्धही बंध मोक्षते रहित स्थित है तिसकी मुक्तिभी नहीं बनसक्ती अरु जीवभी मनके अंतर्भूतही जानना जैसे जलके अंतर्भूतही सूर्यका वा आकाशका प्रतिबिंब है जलके ग्रहणसे प्रतिबिंबकाभी ग्रहण होता है तैसे मनरूप जलके ग्रहणते साक्षी आत्माका मन विषे प्रतिबिंबरूप जीवकाभी ग्रहण होता है अपने स्वरूपका जाननाही मुक्ति है न जानना बंध है और मुक्ति बंधकी कल्पना करना भ्रममात्र है कोई मुक्ति वस्तु नहीं जिसके ग्रहणते मुक्ति होवे ताते हे व्यास योगकर जो तुझका मन शांति होवे व्यासने कहा मुझ चैतन्य आत्मामे योग वियोग दोनो नहीं स्वतःही शांति स्वरूप है योगके करनेसे नहीं योग नाम है चित्तकी एकाग्रताका जब मैं चैतन्य चित्तते परे नाम जुदा होके चित्तका साक्षीदृष्टा हों तो मुझको चित्तकी एकाग्रता न एकाग्रतासे क्या मतलब है यह चित्त तो एक रस रहताही नहीं कभी स्वतःही एकाग्र होजाता है सुषुप्ति आदि स्थानोंमें कभी चंचल होजाता है मुझ चैतन्यको इस चित्तकी चंचलता और एकाग्रता दुःख सुख नहीं देती विना प्रयोजन नाहक किसीसे छेडाछेडी करना भले मानसोंका काम नहीं उलटा अपना लुच्चोंसे छेडा छेडीकर वडप्पन खोना है ताते मैं चैतन्य योग वियोग दोनोंते मुक्त हों याज्ञवल्क्यने कहा आत्मा एक है कि दो व्यासने कहा आत्मा एक अद्वितीय है याज्ञवल्क्यने कहा जो आत्मा एक होता तो कोऊ योगमें कोऊ भोगमें कोऊ धर्ममें कोऊ कर्ममें कोऊ मोक्षके साधनों में कोऊ संसारके व्यापारों में रति कररहा है कोऊ सुखी है कोऊ दुःखी है कोऊ सर्वज्ञ है कोऊ अल्पज्ञ है एकसानहीं ताते आत्मा अनेक हैं एक नहीं वशिष्ठने कहा जैसे अनेक मृत्तिकाके घट एक स्थान में धरेहोंय किसी घटमें घृत है किसीमें तेलहै किसीमें अमृत है किसी में विष है किसी में मल मूत्र है किसी में शुद्ध गंगाजल है

तिस जलमें सूर्यका वा आकाशका आभासभी पडता है किसीमें शराब है किसीमें उतम उत्तम औषधी हैं अनेक घटोंमें शुद्ध जल भर रहा है तिनमें सूर्यका वा आकाशका सम ही प्रतिबिंब पडता है अनेक घट मलीन जलके भरे हैं तिन में आभासभी स्पष्ट है कोई घट बड़े हैं अनेक छोटे हैं कोई मध्यभावी हैं परंतु आकाश सर्व घटोंमें एकही निर्विकार असंगसत रूप पूर्ण है नाना आकाश नहीं अरु मृत्तिका रूप घटभी एकही सरीखे हैं तिन में जलभी एकही सरीखा है अरु सूर्यका वा आकाशका प्रतिबिं-बभी सर्व घटोंमें एकही सरीखा है परंतु एक घटके हलानेसे सर्व घट हलते नहीं एक घटके फूटनेसे सर्व घट फूटते नहीं काहेतें भिन्न भिन्न होनेते परंतु आकाश आभास सर्व में एकसा है जो आकाशका धर्म फूटना हलना होता तो एकके फूटने हलनेसे सब फूटते हलते परंतु आकाश आभासका धर्म फूटना हलना नहीं तैसेही पंचभूत रूप मृत्तिकाके यह अंडज जरायुज उद्भिज स्वेदज देह रूप घट हैं तिनमें अंतःकर्ण रूप जलभी एकही सरीखा है अरु तिस अंतःकर्ण रूप जल में चैतन्यका आभासभी एकसरीखा है कोई अंतःकर्ण सात्विकीहै कोई राजसी है कोई तामसी है कोई मिश्रित है कोई क्रोधी है कोई लोभी है कोई अंतःकर्ण भोगी है कोई वैरागी है कोई अंतःकर्ण शांतिवान है कोई धन कमानेमें (रती) प्रीतिवान है कोई फकीरीमें रहतेहैं कोईका अंतःकर्ण सुखी है अरु कोईका अंतःकर्ण दुःखी है कोईका अंतःकर्ण सर्वज्ञ है कोईका अल्पज्ञ है इत्यादि अनेक स्वभावोंवाले अंतःकर्णही हैं परंतु सर्व देहोंमें आत्मा भगवान एकही निर्विकार नि-ष्क्रिय सर्वका साक्षी रूपता करके स्थित है जो सुख दुःखादि आत्माके धर्म होवें तो एकके सुखसे वा दुःखसे सर्व सुखी और दुःखी होने चाहिये परंतु आत्माके धर्म नहीं किंतु अंतःकर्णके धर्महैं सो अंतःकर्ण विशिष्ट चैतन्यके देह अनेकहैं ताते एकके दुःख सुखसे सर्व सुखी दुःखी नहीं होते जैसे वृक्ष रूप औषधियोंके स्वभाव जुदे जुदेहैं परंतु तिनको प्रापत जल एकहै हे याज्ञवल्क्य असली विचार करे तो जब अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वात्माहीहै तो भोगता भोग भोग्यकर्ता कर्म,क्रिया,द्रष्टा,दर्शन,दृश्य,ध्याता,ध्यान,ध्येय,प्रमाता,प्रमाण,प्रमेय पूजक पूजा पूज्य इत्यादि त्रिपुटी रूपभी आपहै अरु त्रिपुटीका प्रकाशकभी आपही है जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्नके पदार्थ रूपभी आपही है अरु

तिनका प्रकाशक भी आपहीहै याज्ञवल्क्यने कहा जब प्राणायाम कर प्राणको दशवें द्वार चढातांहै तब भगवान मिलताहै अरु आनंद प्राप्त होता है यमराजने कहा प्राणायामते दशवें द्वार में परमेश्वर मिलता है यह व्यवहार जिसकर सिद्ध हुआ सोई भगवान है सो पूर्ण है क्या भगवान् दशवेंद्वार मेंही बैठाहै और जगह नहीं सो नहीं अरु जिसका मिलाप होगा उसका विछोहा भी होगा जो मिलाप विछोहवाले भगवानकी योगसे प्राप्ति होती है तो ऐसे योगकी हमको इच्छा नहीं अरु न मिलाप विछोहेवाले भगवानकी इच्छाहै काहेते व्यापक चैतन्य सुख नित्य मुझ बुद्धि आदिकोंके साक्षी आत्माते पृथक् असत जड दुःख रूप परिछिन्न अनात्मा बंध्याका पुत्र भगवानको होनेते जैसे मधुरता द्रवता शीतलतारूप जलते समुद्रको अत्यंत असत होनेते ताते ऐसे भगवानको मिलकर क्या कार्य सिद्ध होगा किंतु कछु नहीं होगा जिसकी योगते प्राप्ति होवेगी तिसकी अयोगते अप्राप्ति भी होगी ताते अपने सच्चिदानंद स्वरूप आत्माको सम्यक् जानना रूप योग करो जो खाने सोने बैठने चलने भोगने अभोगने ध्यान अध्यान योग रोग ग्रहण त्याग शांति अशांति ज्ञान अज्ञानमें तात्पर्य यहकि कायिक वाचिक मानसिक सर्व व्यवहार में एकसाहै न्यूनाधिक भावको नहीं प्राप्तहोता बालकों की लीलाके पीछे क्यों फिरते हो तुझ चैतन्यते पृथक् भगवान् स्वप्न तुल्य शश शृंगवत है ताते आपको त्याग कर क्यों भटकते हो इस अनात्मयोगको त्यागो याज्ञवल्क्यने कहा इस नामरूप जगत्का उपादान कारण अज्ञान है जब ज्ञानकर अज्ञानका नाश भया तो ज्ञानीको अपने शरीरसहित जगत् कार्य की प्रतीति क्यों होती है नहोनी चाहिये काहेते उपादान कारणके नाशते कार्य नहीं रहता यह नेमहै जैसे मृत्तिका स्वर्णके नाशते घट भूषण नहीं रहते धर्मरायने कहा अन्य शास्त्रोंमें यह प्रकरण विस्तृत कर लिखा है यह केवल सिद्धांत ग्रंथ है परंतु संक्षेपसे सुनो भ्रम दोप्रकारका होता है एक निरुपाधिक भ्रम होता है एक साउपाधिक भ्रमहोताहै जैसे रज्जु में सर्पादिक भ्रम तथा स्वप्न भ्रम निरुपाधिक भ्रम है काहेते रज्जु ज्ञान ते तथा निद्रारूप कारण निद्रारूप अविद्याके नाशते सर्पादिकार्य तथा स्वप्नकार्य की तिसीकालमें अत्यंत अप्रतीति होतीहै बाकी शेष कार्यकी प्रतीति होती नहीं इत्यादि स्थानोंमें निरुपाधिक भ्रम है तथा जैसे शुद्ध स्फटिकमणि किसी जगहमें पडीहै तिस

के पास लाल पुष्प भी धरा है तिस लाल पुष्पकी शुद्ध स्फटिकमणिमें लालीकी दमक पडतीहै स्फटिकमणिके अज्ञात पुरुषको शुद्ध स्फटिकमणि लाल प्रतीति होती है कदाचित् उपदेशते वा अपनी बुद्धिके विचारसे किसी पुरुषको शुद्ध स्फटिकमणिका ज्ञानहोभी गयाहै तथापि जब लग लाल पुष्प स्फटिकमणिके समीप पडा है तब लग स्फटिकमणि लालही प्रतीति होतीहै पुष्पके अभावसे लाली का अभाव होगा अन्यथा नहीं इत्यादि सउपाधिक भ्रमके अनेक दृष्टांत हैं तेसेही यह संसार सउपाधिक भ्रमहै यद्यपि आत्मवेत्ता विद्वानने कारण कार्य रूप संसारका अत्यंता भाव अपने स्वरूप विषे सम्यक् जानभी लियाहै तथापि जबलग प्रारब्ध रूपी पुष्प पड़ाहै तबलग सम्यक् आत्म विद्वानको भी अपने शरीर सहित संसार रूप लालीकी अपने शुद्ध स्वरूप आत्मा में प्रतीति होतीहै जैसे जलके समीप वृक्षोंके सम्यक् ज्ञाता पुरुषको भी जल विषे उलटे वृक्ष दीखतेहैं जैसे वस्त्र जलाभी जबलग वायुका संबंधनहीं हुआ तबलग वैसेही दीखता है परंतु कार्य नहीं देता केवल देखने मात्रही है तथा कैसाभी कपड़ा वा कोई और पदार्थ हो पर अग्निके संबंध से बदल कर काला होजाताहै तैसेही यह पुरुष ज्ञानरूपी अग्निके संबंधसे पूर्वमें देहहों कर्ता भोक्ता सुखी दुःखी पापी पुण्यी वर्णी आश्रमी हों मैं जन्म मरण वानहों इत्यादि देहाध्यास से मिलकर जो निश्चय है सो भया सफेद कपडेकी मुवाफिक जब ज्ञान रूपी अग्निका पुरुष रूपी सफेद कपडेको संबंध हुआ तब मैं शुद्ध चैतन्य नित्यमुक्त सुख स्वरूप व्यापक आत्माहों न मैं जन्मताहों न मर्ताहों न मैं खाता पीता लेता देता सोता जागता हों न मैं देहहों न वर्णी आश्रमी हों इत्यादि सर्व देहके धर्महैं मेरे नहीं यही पूर्वसे विलक्षण निश्चय पुरुष रूप सफेद कपड़ेका रंगबदल कर काला होनाहै तथा ज्ञान रूपी अग्निकर कारण उपादान अज्ञान सहित इसदेह सहित संसार रूप कार्य दग्ध हुआ हुआ भी परंतु जबलग प्रारब्ध का नाश रूप वायुका देहसहित संसार रूप कपडेको संबंधनहीं भया तबलगहीं कार्य कारण देहसहित संसार रूप कपड़ा ज्ञानी वैसेही प्रतीति होताहै परंतु भावी जन्म रूप कार्य को नहीं देता जैसे भूनाचना पूर्ववत प्रतीति भी होताहै भक्षणते क्षुधाका नाश रूप कार्यको भी देताहै परंतु भावी अंकुरको नहीं देसक्ता तैसेही दार्ष्टांत जानलेना

तथा जैसे पुरुष मन विशिष्ट देहसे भुवाटी (चक्कर) लेताहै तिस भुवाटी कर सर्व पृथिवी आदि पदार्थ फिरते मालूम होतेहैं तिन पदार्थोंके घूमनेका उपादान कारण अंतष्कर्ण विशिष्ट देहका घूमना था पुनः देहके न घूमनेसेभी किंचित् काल पीछेभी सर्व पदार्थ घूमते प्रतीति होतेहैं तैसेही ज्ञानकर संसारके उपादान कारण अज्ञानके नाश हुआभी प्रारब्धके नाशपर्यंत किंचित् काल इस देहसहित जगत्की ज्ञानीको भी प्रतीति होतीहै याज्ञवल्क्यने कहा हे वशिष्ठ नाम तेरा योगवशिष्ठहै तुझको चाहिये योगका पक्षकरना वशिष्ठने कहा क्रिया रूप योग कर्ताके अधीनहै चाहे करे चाहे न करे इसीते मिथ्याहै जिसकर योग अयोग दोनो अंतर सिद्ध होतेहैं सोई सतरूपहै तेरा मेरा तथा सर्व जगत्का स्वरूपभी वहीहै जो कर्ता नहो तो योग अयोग कहांहै याज्ञवल्क्यने कहा व्यासकी प्रसन्नतानिमित्त योगको त्यागकर ज्ञानको निश्चयकरेहैं व्यासने कहा मेरापक्ष अपक्षनहीं परंतु जो अकृतिम स्वतःसिद्ध सत वस्तु सर्वके अनुभव सिद्धहोवे तिसी को निश्चय मानो हों कहो योग आपते आपहै कि कर्ताते प्रकट होताहै याज्ञवल्क्यने कहा कर्नेहीसे योग होताहै व्यासने कहा योगके करने वाले सत आत्माको जान जो योग अयोगते मुक्तहोवे पराशरने कहा हे मैत्रेय मैं भी तिस सभामें गया अरु मैंने कहा सब नहीं हैं एकमैंहीं हों वशिष्ठने कहा ऐसे मतकहो जो तू है तो सब भी हैं मैंने कहा मैं आपते आपहों मुझ विषे पर अपर नहीं वशिष्ठने कहा सभाते निकस क्या पर अपर तुझ ते भिन्नहै जैसे पंचभूत कहैं पर अपर भौतिक पदार्थ हमारेमें नहीं तिनका कहना सभामें हाँसी योगहै मैंने कहा मैं किसी की सभामें नहीं बैठा हों आपते आप स्वयंप्रकाश स्वरूपहों जो बैठा हों तो अपनी सभामें बैठाहों काहेते पंच ज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेंद्रिय पंचप्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार इत्यादि कार्य कारण नामरूप प्रपंच मुझ अधिष्ठान समुद्र विषे फेन बुद्बुदे तरंगादिकोंकी न्याईं कल्पितहैं मुझ चैतन्यकी सत्ताते पृथक् श्रोत्रादिक इंद्रियोंकी पृथक् सत्ता नहीं मुझ करही चैतन्य हो रहे हैं जैसे दाहकता उष्णता प्रकाशकता रूप अग्नि करही लोहा उश्न प्रकाश दाहक होताहै स्वतः नहीं इसते पूर्वोक्त इंद्रिय मनादि मुझ चैतन्यके गुलामहैं ताते तिन विषे मैं चक्रवर्त्ती राजाकी न्याईं विराजमान् हों ताते यह अन्य किसीकी सभा नहीं किंतु मैं अपनी

सभा में बैठाहों जैसे फेन बुद्‌बुदे झाग तरंगादिकोंकी सभामें जल बैठे जैसे अनेक घटोंकी सभामें मृत्तिका बैठे जैसे अनेक भूषणोंकी सभामें स्वर्ण बैठे जैसे स्वप्नके ऋषीश्वरों मुनीश्वरों सिद्ध योगीश्वरों ब्रह्मवेत्तोंकी तथा धर्मात्मा तथा अन्य स्वप्न नरोंकी सभामें स्वप्नद्रष्टा बैठे तैसे में इस मायक प्रपंच रूप संघात सभा में बैठाभी मैं अमायिक स्वरूपहों हे याज्ञवल्क्य जो योग सत होता तो आपते आप क्यों न होता योग करनेसे होताहै तो काया मन वाणी कर जो जो कर्म होताहै अरु जो तिन् कर्मोंका फलहै सो सर्व अनित्य मायामात्रहै अरु तेरा योग भी कायिक वाचिक मानसिक कर्म रूपहै ताते अनित्यहै मुझ योगके जाननेवाले सत आत्माको तेरे अनित्य योगकी इच्छा नहीं तिस समय विष्णु आवता भया अरु कहा जो विष्णु नाम व्यापक नित्य सुख चैतन्यके साथ अपने आत्माको अभेद सम्यक् जानेगा सो कालके भयते छूटेगा काहेते जो देश काल वस्तु भेदवान पदार्थ होताहै सोई परिछिन्न अनित्य पदार्थ होताहै तिसीको काल भक्षण कर्ताहै ताते मुझ चैतन्यके साथ अभेद होवो जो अज्ञान रूपी कालते छूटो जैसे घटाकाश जब आपको महाकाशसे अभेद सम्यक् जानताहै तब भ्रमरूप पर अपर परिछिन्न प्रतीत रूपी मृत्यु ते मुक्त होता है पराशरने कहा हे विष्णु मुझ चिद सुख नित्य व्यापकके साथ जो अभेद होगा सो कालते मुक्त होगा जिस कर यह मन वाणीका कथन चिंतन् सिद्ध होताहै सो मैं अवाङ्मनसगोचर स्वयं प्रकाश स्वरूप हों मुझ विषे भेद अभेद दोनों नहीं काहेते जिसमें अभेद होगा तिसमें भेद भी होगा अरु जो भेद अभेदवान पदार्थहैं सो मिथ्या दृश्य मायामात्रहैं अरु विष्णु नाम मायाकाहै माया ते रहितही विष्णुका परमपद है कहो मायक अमायकका अभेद कैसे होगा दूसरा यह बड़ा आश्चर्य है तुझ नित्य सुख चिद व्यापक स्वरूप विष्णुको यह मुझसे भिन्न है जब तुम मुझसे अभिन्न होगे तब कालकी फांसते मुक्त होवोगे यह भेद अभेद तुझको कैसे प्रतीत हुआ जैसे मधुरता द्रवता शीतलता रूप जल फेन बुद्‌बुदे तरंगादिकोंको उपदेश करेकि तुम सभ मुझसे अभिन्न होवोगे तो कालते बचोगे भिन्न रहोगे तो कालका ग्रास होगे यह तिसका उपदेश हांसी योग है काहेते फेन बुद्‌बुदे तरंगादिक मधुरता द्रवता शीतलता

87

रूप जलते पृथक् हैंही नहीं वा जलरूपही हैं तिन तरंगादिकोंको भेद अभेदका जलका उपदेश जलको लज्जाका काम है तैसे जब नित्य सुख प्रकाश व्यापक कालादिक स्वरूपभी तूही है तुझ ते कहो कौन भिन्न है जो तुझसे अभिन्न होके काल ते बचे ताते यह सभ कहनेमात्र है विष्णुने कहा तुझ अवाङ मनस गोचरने मन वाणी का चिंतन कथन कैसे जाना मैंने कहा मैं चिद घन देव अवाङ्मनसगोचर हुआ हुआभी सर्वका आत्मा होनेते स्वतःही सर्वको अनुभव कर्ताहों जो मैं अनुभव स्वरूप नहीं होंवों तो यह जड चैतन्य है यह नहीं इत्यादि दृश्यके व्यवहारकी सिद्धि कैसे हो जैसे स्वप्नदृष्टा सर्व स्वप्न सृष्टिते अवाङ्मनसगोचर हुआ हुआभी सर्व स्वप्न सृष्टिको अनुभव करे है जो स्वप्नदृष्टा स्वयंप्रकाश स्वप्नके अनुभव करने वाला नहीं होता स्वप्न सृष्टिका तथा तिसके व्यवहारोंका भिन्न भिन्न हाल कैसे जाना जावे किंतु नहीं जाना जावे तिससमय ज्ञानके समुद्र शिव आवतभये अरु कहा शिवनाम कल्याण स्वरूप तथा मंगल स्वरूप एकचिद्रूप मैंहीहों मुझसे पृथक् हुई यह सर्व नामरूप दृश्य अकल्याण अमंगल स्वरूपहै मुझ करही यह मंगल स्वरूप होरहीहै अन्यथा नहीं जैसे सूक्ष्म शरीर करही स्थूल शरीर मंगल रूप होरहाहै काहे ते तिस अमंगल स्वरूप दृश्यका मैं शिव मंगल स्वरूप आत्मा होनेते धर्मरायने कहा स्वरूप मंगल अमंगल ते न्याराहै मंगल अमंगल दृश्य माया कोटि मेंहीहै काहेते जैसे स्वप्नमे कोई पदार्थ मंगल रूप प्रतीत होताहै कोई अमंगल रूप प्रतीत होताहै मंगलनाम सुख काहै अमंगल नाम दुःख काहै परंतु स्वप्नदृष्टा दोनोते अतीतहै शिवने कहा हे धर्मराय अपेक्षित दृश्य रूप मंगल अमंगलके प्रकाश करनेहारा मैं शिव स्वयं सिद्ध मंगल स्वरूपहों व्यासने कहा जो मंगल स्वरूपहै सो अमंगलभी होगा शिवने कहा मंगल स्वरूप चैतन्यको अमंगल किसने कियाहै कहो जीवने वा ईश्वरने वा ब्रह्मने वा मायाने वा मायाके कार्य प्रपंचने जीव ईश्वर ब्रह्मतो मुझ शिवसे भिन्न होकर मुझको अशिव करनहीं सक्ते काहेते मुझ शिव चिद्घन देवते भिन्न अशिवहोनेके भयते अरु मायाका कार्य प्रपंच मुझ सत् रूप शिवते जुदे अशिव असत रूपहैं अरु सत असतका एक कालमें अरु एकही स्थानमे इकट्ठा संबंध होतानहीं जैसे स्वप्न जाग्रतका

संबंध होतानहीं अरु संबंध बिना शिवको अशिव कैसे करसकेंगे किंतु नहीं करसकेंगे ताते मैं एकही अनंत नित्य ज्ञानरूप शिवहों जैसे निमकके डलेको कोईभी मधुर नहीं करसक्ता स्वभावसेही लवण स्वयंसिद्धहै यमकिंकरने कहा जब तुम एकही शिव हौ तो अशिव कहाँ है जिसका निरूपण कर्तेहो शिवने कहा जिसने मुझ शिवते भिन्न होकर मुझ शिवका निरूपण सुनाहै सोई अशिवहै हे यम किंकर जब मैंहीहों तू हैहीनहीं तैंने मुझका निरूपण कैसे सुना ताते तूही अशिवहै यमकिंकर तूष्णी भया मैंने कहा हे याज्ञवल्क्य रूपतेरा क्याहै याज्ञवल्क्यने कहा मैं पूरक कुंभक रेचक कर्ता हों ईश्वरका योग विषे स्थित होकर ध्यान कर्ताहों परंतु आपको नहीं जानता कि मैं कौनहों तूही कहो मैं कौनहों हे याज्ञवल्क्य जिसकर पूरक कुंभक रेचक प्राणायामकी न्यूनाधिक भाव जाना जाताहै जिसकर योग विषे स्थित हुआ मैं ईश्वर का ध्यानकर्ता हों वा नहीं यह मनका धर्म रूपध्यान अध्यान जिसने सिद्ध करा सोई तू निर्विकार निर्विकल्प स्वतः सिद्ध मनका ध्यान रूप योग वा प्राणोंकी क्रिया रूप योगका द्रष्टा चैतन्य है हे याज्ञवल्क्य तुम बंधरूप दुःखकी निवृत्ति वास्ते अरु मोक्ष रूप सुख की प्राप्ति वास्तेही योगादिक साधनोंमें प्रवर्त होते हो औरतो कछु योगादिसाधनोंसे मतलब नहीं सो तुम पक्षपातसे रहित होकर सूक्ष्म विचारसे देख मनकी वृत्तिरूप सुख दुःखके सिद्ध करने वाले तुम द्रष्टा साक्षी चैतन्य में सुख दुःख कहांहै कहो अंतर मनकी एकाग्रता रूप समाधिके सुखको अरु मनके विक्षेप रूप दुःखोंको वा शारीरक दुःखोंको किसने अनुभव करा जिसने अनुभव करा सोई तुम अनुभव स्वरूप सुख दुःखते रहित आत्मा हो क्यों बिना कीचड़ लागे कीचडके दूर करनेका यत्न करतेहो आत्म विज्ञानवान पुरुषोंके मध्य में क्यों अपनी हाँसी कराते हो ताते योग अयोग सुख दुःख रूप बंध मोक्ष अरु बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते यत्न विद्या अविद्या ग्रहण त्यागादि सब अनात्म धर्म तुझ आत्माकी दृश्य हैं दृश्यके धर्म अपनेमें मानकर क्यों विक्षेपवान होते हो याज्ञवल्क्यने कहा हे पराशर श्रवन मनन निदिध्यासन साक्षात्कारका स्वरूप कहो मैं तूष्णी भया शिवने कहा हे याज्ञवल्क्य सुन श्रवण करनेवाला चैतन्यके आभास सहित अंतःकर्ण अरु श्रवण नाम अंतःकर्णकी

वृत्ति अरु श्रवण करने योग्य शब्दका अर्थ इस त्रिपुटीका प्रकाश करनेवाला जो चैतन्य वस्तु है सोई मैंहों अन्य नहीं इस दृढ़ नि श्चयका नाम श्रवण है वा अंतर प्राणरूप वायुके संचार कर साधारण शब्द होता रहताहै जिसको अनहद शब्द बोलते तेहैं सो मनकी भावना रूप दश प्रकारका शब्द कल्पना होताहै सो मनकी एकाग्रता वास्ते मनको जोडना होताहै सो दश प्रकारके शब्द तथा तिन दश प्रकारके शब्दों में मनका जुडना न जुडना जिसकर यह सर्व व्यवहार जाना जाताहै सोई मैं निर्विकार निर्विकल्प वस्तुहों अन्य मैं नहीं इस निश्चयका नाम श्रवणहै श्रवणके सिद्ध करने वाला आत्माही श्रवणीहै ताते आपको आत्मा श्रवणी जान इसीका नाम श्रवणहै तात्पर्य यहकि श्रोत्र इंद्रिय सहित मनका धर्म श्रवण है मुझ चैतन्यका धर्म नहीं किंतु मैं असंग चिद्घन देव हों हे याज्ञवल्क्य तैसेही चैतन्यके प्रतिबिंब सहित मनन कर्त्ता मन तथा मनकी वृत्ति तथा धर्म अर्थ काम मोक्ष मनन करने योग्य पदार्थ इस त्रिपुटीके सर्व व्यवहारके अनुभव करनेवाला मैं नित्यमुक्त ज्ञान स्वरूप आत्मा हों सारांश यहकि मन अरु मनके मननको जानने वाला हों इस निश्चयका नाम मननहै तैसे ध्याता ध्यान ध्येय सारांश यहकि साक्षी चैतन्यके आभास सहित अंतःकर्ण ध्याता बालककी न्याईं वा तलावके जलकी न्याईं जानना ध्यान डोरकी न्याईं वा तलावमें छिद्र द्वारा निकसे जलकूलकी न्याईं जानना अरु गुण वा निर्गुण परमेश्वरसे आदिलेकर सर्व नाम रूप कार्य कारण प्रपंच ध्येय कोटि में जानना सो कनकौवा क्यारीके तुल्य दृष्टांत जानना तात्पर्य यहकि ध्याता ध्यान ध्येय रूप त्रिपुटीके न्यूनाधिक भावा भावके पहचान करने वाला अपनी महिमामें स्थित साक्षी आत्मा मैं हों यह त्रिपुटी दृश्य रूप मैं नहीं जैसे सूर्य वा आकाश लडकेको तथा डोरको तथा गुडीको निर्विकार असंग हुआ पूर्वोक्त त्रिपुटीको प्रकाशकर्ता अविकाश देताहै तिस त्रिपुटीको अपना स्वरूप नहीं जानते हैं इस दृढ निश्चयका नाम निदिध्यासनहै जैसे संशय विपर्यय ते रहित सर्व अज्ञानी जीवोंकी देहविषे आत्मबुद्धि अपरोक्षहै तैसेही श्रवण मनन निदिध्यासन का तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आदिका तथा तिनमें वर्तने वाले प्रपंचका जो प्रकाशकहै सो

अनंत नित्य चिद्घन देव मैंहीं निश्चय करहों इस अपरोक्ष बुद्धिका नाम आत्म साक्षात् कारहै परंतु इस बुद्धिके निश्चय रूप साक्षात्कारको भी मैं जाननेवाला इस साक्षात्कारते परे अवाङ्मनसगोचर स्वयं प्रकाश स्वरूपहों इसतेपरे और कछु नहीं यह अनुभवही परम अवस्थाहै यही परमपदहै यही परम साक्षात् कारहै आगे जो तेरी इच्छा हो सोकर हे याज्ञवल्क्य जब इस अनुभवका अनुभव होताहै तब प्रह्लादकी न्याई अनेक संकटोंमें प्राप्तहुआ भी अपने अस्ति भाति प्रियरूप सर्वात्म स्वरूपके निश्चयते चलायमान नहीं होता जिधर किधर अपनाही स्वरूप देखता है बाहरते तिसका व्यवहार जैसे पूर्व श्रेष्ठाचरणवाले विद्वान् पुरुषोंका होता भया है तैसेही होताहै परंतु वास्तवते अंतर तिनका जड चेतनका तथा जीव ईश्वर स्त्री पुरुष शुभाशुभ बंध मोक्षादि भेद निवृत्त होजाताहै याज्ञवल्क्य तूष्णी भया यमकिंकरने कहा मन इंद्रियोंका प्रकाशक गोविंदही आत्माने अनेकनाम रूप होयकर प्रकाशकियाहै कैसे एकात्मा जानो शिवने कहा हे यमकिंकर जैसे एक ही स्वर्ण ते अनेक नाम रूप भूषणोंका प्रकाश होताहै परंतु स्वर्ण हींहै अन्य कछु नहीं जैसे अनेक नाम रूप करके वृक्ष प्रकाशमान भी है परंतु विचारेते सर्व काष्ठ रूपही है तैसे यह अनेक नाम रूप कर जगत् भासेभी है परंतु सम्यक् विचारे सर्व नाम रूप प्रपंच अस्ति भाति प्रियरूप आदि मध्य अंत तूही सर्वात्माही है तुझते पृथक् नही यमकिंकर तूष्णी भया काहेते जब समुद्र लहरी मारे तब हंसली कूप तलाउ कहाँ रहे गौतमने कहा मुक्ति भजन ते होतीहै भजन यही है जो रसनाते नारायण नारायण कहना मैंने कहा भजन सब करतेहैं पर सुखकी अप्राप्तहै हे गौतम भजन नाम भज जानेका नाम त्यागजाने काहै न अर्थ निषेध काहै तात्पर्य यहकि इस कार्य कारण रूप संघात देहविषे अनहुये अहंकारका त्याग करना तिसका नाम भजनहै पुनःतिस देह विषे अहंकार बुद्धिके त्याग काभी अभिमान न करना तिसका नाम परम भजन है माया अरु मायाके कार्य स्वप्नवत् सर्व नाम रूप प्रपंचका नाम नर है सो नर रूप गृहविषे अस्ति भाति प्रिय सर्वका आत्मारूप करकेंहै निवास जिसका सो कहिये नारायण जैसे फेन बुद्बुदे तरंगादि रूप गृह विषे मधुरता शी

89

तलता द्रवता रूप करकेहै निवास जिसका सो कहिये जल वा पूर्वोक्त नरका आयन नाम आश्रयनाम जो नित्य सुख प्रकाश स्वरूप अ-
धिष्ठान है सो कहिये नारायण जैसे फेन बुद्बुदे तरंगादिकों का अधिष्ठान जलहै सो पूर्वोक्त नारायण शुद्ध असंग निर्विकार बुद्धि आदि-
कोंके साक्षी आत्माते भिन्ननहीं जो भिन्नमानोगे तो तुम्हारा नारायण अनात्मा घटवत् अनित्य होजावेगा काहेते आत्माते भिन्न अना-
त्माही होताहै यह नेमहै ताते क्या सिद्ध भयाकि पूर्वोक्तरीतिसे इस संघातका तथा संघातके सुख दुःखादि धर्मोंका अहंकार त्याग पुनः
तिस अहंकारके त्यागकाभी अभिमान नकरके सच्चिदानंद नारायणको अपने आत्मासे अभेद जान परम भजन यहीहै सबसंतोंसे पू-
छ देख ऊंच नीच अंतर बाहर सर्व नारायण आत्माहीं जान गौतमने कहा मैं सर्वको त्याग कर विरक्त होता हों मैंने कहा विरक्त उस-
को कहतेहैं जो किसीसे हेत खेद नकरे ताते तू गृहस्थादिक पदार्थोंके द्वेषकर त्याग करताहै किसी मोक्षादिक पदार्थके लिये विरक्तता
विषे ग्रहण नाम रति कर्ताहै ताते तू विरक्त न हुआ दूसरा यहकि जिस अहंकारके त्यागवत त्याग कर आत्माकी प्राप्तिकी प्राप्ति जाननी
थी सोतो करता नहीं जो अयत्नहीं सुख का हेतुहै अरु कपासके वस्त्र सफेद तथा धातुके पात्रको त्यागके सयत्न मृगछाला वा भोजपत्र तथा
करमंडलुका ग्रहण करना सो क्या त्याग्या अरु क्या ग्रहण करा केवल जिस अभिमानको संन्यास करना था तिसको उलटी बुद्धि करी
विरक्त वहीहै जो ग्रहण त्याग बुद्धि रहित अपने स्वरूपमें स्थितहै जो एक वस्तुको द्वेष पूर्वक संन्यास कर्ता है अरु अन्य वस्तु को राग
पूर्वक गृहणकर्ता है सो विरक्त नहीं वा निज स्वरूपसे पृथक् दृश्यमें रति नहीं करता तिसका नाम विरक्तहै वा नाम रूप दृश्यको
मिथ्यत्व निश्चय पूर्वक जो निज स्वरूपमेंही विशेष करके रति कर्त्ताहै तिसीका नाम विरक्तहै गौतमने कहा भेष मेखली आदि विरक्त
राखतेहैं तिनकी न्याई मैंभीहोताहों मैंनेकहा तेरीबुद्धि हँसने योग्यहै काहेते विरक्तको भेषमेखली साथ क्यो प्रयोजनहै जो अहंकारका
त्यागीहै सोई विरक्तहै इतनेमें अत्रि आवतभया अरु कहा जो प्राणायामरूपी योगकरही यह जो मुनीद्र योगेंद्र मुक्त भयेहैं विना योग
मुक्तिनहीं व्यासने कहा योग स्वयंप्रकाशहै कि पर प्रकाश है अत्रिने कहा योग करनेसे होता है ताते जानीताहै पर प्रकाशहै व्यासने

कहा पर प्रकाश योग ते स्वयंप्रकाश नित्यमुक्त आत्माकी मुक्ति कैसे होगी उलटा स्वयंप्रकाश आत्माकरकेही योगकी सिद्धि होती है
जो आगेही स्वरूपसे मुक्त है सो किसी रीतिसे आपको भ्रमकरके अमुक्त माने तिसी की भ्रमकी निवृत्ति ते मुक्तकी मुक्ति होतीहै
अन्य किसी योग कर्मादि अनेक क्रिया रूप साधनोंसे तिसकी मुक्ति नहीं होती काहेते कर्म योगादिभी भ्रम रूपहैं जैसे स्वप्नमे रा
जा निद्रादोषसे आपको दरिद्री मानता है सो तिसकी दारिद्रता निद्रा रूप दोष की निवृत्ति विना और अनेक क्रिया रूप योगादि
साधनोंसे दूर नहीं होती तथा जैसे परप्रकाश स्वप्न पुरुषोंके योगादि अनेक साधनोंसे स्वप्नद्दष्टास्वयंप्रकाश स्वरूपकी मुक्ति नहीं होती
काहेते स्वप्न पुरुषों सहित सर्व योगादि स्वप्न पदार्थोंको स्वप्नद्दष्टा में कल्पित होनेते कल्पित पदार्थ अधिष्ठानकी अनुकूलता तथा
प्रतिकूलता कछुकरनहीं सक्ते किंतु विचार द्वारा भ्रमकी निवृत्तिते मुक्त स्वरूप आत्मा पुनः आपको मुक्त स्वरूप मानताहै अत्रिने क
हा योग ते शुद्धि होती है व्यासने कहा कितनेही आपको योगी माननेवाले तथा जगत् मेंभी तिनका योगीपना प्रसिद्धथा परंतु
जब वह मुये हैं वा जीवत अवस्था मेंभी तिनके अंग शरीर मांस त्वचा रुधिर अस्थि नाडी रोम मल मूत्र जैसे सर्व अयोगीपुरुषोंके
हैं तैसे ही तिन योगियोंके द्दष्टि आयेहैं विशेषता नहीं रोजही नेती धोती जलका पखालना मलके दूरकरने वास्ते कर्ते हैं परंतु
उलटी आगेसे डबलहोतीहै न्यून नहीं यह सब विद्वानोंको अनुभवहै तथा यह क्रिया रूप योग तो नट मंगता लोकभी करसक्ते हैं पंजाब
के राजा रणजीतसिंहके वक्तमें यह प्रसिद्धवात है और पंजाबदेशके निवासी विद्वान जानते भी हैं कि कोईक मंगताने लाहोरमें रणजीतसिं
हके सन्मुख तथा अन्य हजारों पुरुष स्त्रीयोंके सन्मुख षट् मासकी प्राणायाम करके समाधि नामा दशवें द्वार प्राण चढ़ायेथे पीछे
सरकारसे इनाम माँगता भया ताते योगक्रिया है करवाने वाला सम्यक् चाहिये सब हो सक्ता है अन्य जगह में भी सुनने में आताहै देखो
प्रसिद्धहै नट अरु नटनी लोगोंके शरीर की कसरत देखकर सबको आश्चर्य होताहै नित्य अभ्यासका फल है परंतु तिनकी मुक्ति नहीं होती
जिनोने सम्यक् आत्म अपने विचारकर सम्यक् स्वरूपको अपरोक्ष जाना है सो जीवत अवस्थामें ही आपको कृत्यकृत्य मानते हैं ताते

हे अत्रि आत्म विचारकर भ्रम दूर होता है क्रियारूप योगते भ्रम दूर नहीं होता भ्रम छूटे विना सुख नहीं आत्मविचारते योग आपही आप होताहै अत्रिने कहा योगते विना अंतर दृष्टी कैसे खुले व्यासने कहा दृष्टी अंतरते आत्मविचारते खुलती है योगते नहीं योगते अंतर मलीन होताहै काहेते जब योग कर्ता है तब दृष्टी सर्व अंगोंपर कर्ता है जिधर किधर रुधिर मांस ऊपर दृष्टी जाती है और कछु दृष्टि नहीं आता शरीर अति मलीन है शरीरके अकार दृष्टि भी मलीनहै जिसको सम्यक् आत्मविचार भया है तिसको दिव्यदृष्टि कहते हैं काहेते जो पिंडे सोई ब्रह्मंडे जो खोजे सो पावे जैसे एक घटका सम्यक् विचार करनेसे घटका मृत्तिका रूप अपरोक्ष बोध पुरुषको होताहै तैसेही सर्व ब्रह्मांडके सर्व घटोंकाभी विना यत्नते तिसको मृत्तिका रूप अपरोक्ष बोध होता है तैसेही जिस विद्वान् पुरुषने इस व्यष्टी शरीरको दृश्य रूपता वा पंचभूत रूपता वा मायारूपता वा अनात्मरूपता वा अपने आत्मस्वरूपमें कल्पित स्वरूपता अरु अपने आत्माको अवाङ्मनसगोचरता वा अस्ति भाति प्रिय सर्व रूपता सम्यक् अपरोक्ष रूप जानाहै तैसेही तिसको समष्टीका भी विनायत्न अपरोक्ष बोध होताहै काहेते जो पिंडे सोई ब्रह्मंडे जिसको भूत भविष्यत वर्तमान कालका ज्ञानहैं वह काल दृष्टी बाजता है सो ज्योतिषी आदिक घने हैं कोई परमपदको नहीं प्राप्त होते ताते मोक्ष का हेतु आत्मदृष्टी वास्तेही आत्मविचार कर्तव्य है ताते हे अत्रि अंतर बाहर सर्व गोविंद आत्मा मैंही हों मुझ आत्माते भिन्न कछु नहीं इस दृढ़ निश्चयका नामही योगहै जो अपने स्वरूप ते पृथक् देखनाहै सोई मलीनताहै जैसे जलते भिन्न बुदबुदे तरंगादिकों की प्रतीति भ्रमहै अत्रि तूष्णी भया तिस समय इंद्र आवत भया अरु कहा मैं नित्य सुख चिद्रूप इंद्र इस संघात रूप स्वर्ग विषे मन चक्षु इंद्रियादि देवतोंका साक्षीरूप होकर स्थित हों सत्, रज, तम गुण रूप त्रिलोकीका मैं चैतन्य साक्षी ही प्रेरकहों वा स्थूल शरीर समष्टी व्यष्टी तथा समष्टी व्यष्टी सूक्ष्म शरीर तथा समष्टी व्यष्टी कारण शरीर रूप त्रिलोकी का व्यवहार मैं चैतन्य इंद्र ही सिद्ध करने वाला हों वा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति रूप त्रिलोकीका प्रकाशक मैं ही तुरीय चैतन्य रूप इंद्र हों माया रूप मुझ आत्मा इंद्र

की इंद्राणी इस त्रिलोकीका उपादान कारण है श्रोत्रादिक देवता रूप इंद्रिय शब्द स्पर्श रूप रस गंध आप अपने विषयों में मुझ द्रष्टा साक्षी चैतन्य इंद्रकी आज्ञा रूप सत्ता करही प्रवर्त होतेहैं अन्यथा नहीं पृथिवी अप तेज वायु आकाश मुझ चैतन्य इंद्रके आगे प्रधान देवताहैं मैं चैतन्य साक्षी इंद्र सर्व नाम रूप त्रिलोकी में पूर्ण हों मैं चैतन्य त्रिलोकीको प्रकाशकर्त्ता हों जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्न सृष्टी में पूर्ण है तथा सर्वको प्रकाशकर्त्ता है जो मैं पूर्ण नहीं होवों तो तिनकी सिद्धी कैसे होवे नाम जानता हों मुझ सतरूप चैतन्यको त्रिलोकी तथा त्रिलोकी अंतर्वर्ती पदार्थ कोई भी जान नहीं सक्ता इसीते मैं स्वयंप्रकाश हों व्यासने कहा स्वयंप्रकाश अरु पर प्रकाश मन वाणीका कथन चिंतन रूप धर्म है मैं आत्मा इसते भी परे हों मुझ आत्मा में पूर्ण अपूर्ण दोनों नहीं स्वतःही निर्वि कल्प हों इंद्र तूष्णी भया तिस समयमें ब्रह्मा आवता भया अरु कहा मैं व्यापक ब्रह्म चैतन्य अंतर्यामी परमेश्वर सर्व ब्रह्मलोक रूप देहों में साक्षी रूप होकर स्थित हों परंतु जिस अधिकारीको मुझ व्यापक चैतन्य परमेश्वरके दर्शन करनेकी इच्छा हो सो इस मनुष्य देहरूप ब्रह्मलोक विषे जो सर्व मनादिकों का हर वक्त सदा अपरोक्ष साक्षी रूप चैतन्य आत्माहै सोई मेरा स्वरूपहै और इसते पृथक् नहीं सो साक्षी चैतन्य आत्मा मैं हों यही निश्चयका नाम मेरा दर्शन है और वहम (भ्रम) नहीं करना कि पूर्वोक्त स्वरूप ते भिन्न परमेश्वरका स्वरूप किसी स्थान में है वा किसीका लमें मिलेगा सो नहीं हे अधिकारी जनो मैं तुम्हारा आत्मा मनादिकोंका साक्षी रूप होकर सदा अपरोक्ष स्थितहों व्यासने कहा हे देवनके देव वचन तुम्हारा अमृतके समानहै तुम नित्य सुख अनंत साक्षी आत्मा मन वाणीके अगोचर हो तुमको कैसे जाना जावे ब्रह्मा कहते भये हे व्यास मुझ सुख चिद नित्य साक्षी आत्माको अवाङ मनस गोचर कर जो अनुभव होनाहै यही मुझ परमेश्वर साक्षीका सम्यक् जाननाहै अन्य प्रकार असम्यक् जाननाहै व्यास तूष्णी भया महादेव कहते भये हे सभा जो तुम्हारे अंतर सच्चिदानंद रूप मनादिकोंका साक्षी आत्माहै तथा मन वाणीके चिंतन व [illegible] रे है तथा स्वरूपतेही बंध मोक्षते रहितहै परंतु सदा हा-

जिर हुजूरहै सोई वस्तु तुम आपको जानो इस वस्तुते जुदा परमेश्वर परमात्मा ईश्वर नारायण गोविंद विष्णु शिवादिक नामों- कर प्रतिपाद परमात्मा भिन्न नहीं जो भिन्न होवेंगे तो असत जड़ दुःख रूप होवेंगे तथा मन वाणीका गोचर अनात्मा दृश्य होवेंगे काहेते जो जो मन वाणीके कथन चिंतनमें आताहै सो सो दृश्य दुःख जड अनित्य अनात्माहै सो तुम सम्यक् अपना स्वरूप मत जानो कायिक वाचिक मानसिक कर्म कर्त्ता भी आपको अकर्त्ता अभोक्ता जानो तुमको तिन कर्मोंका स्पर्श सुख दुःख न होगा जैसे चकोरको चंद्रमाके साथ अति प्रीति होनेते अग्निका भक्षण कर्ता हुआ भी अग्निका दाह तिसको नहीं होता तिस समय शुक्र आवत भया अरु कहा जब लग त्रिपुटी विषे न बैठे तब लग सुख नहीं पाता ताते तुरीया श्रेष्ठहै व्यासने कहा हे शुक्र जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्तिके प्रकाश करनेवाले आत्माका नाम तुरीयाहै तिसकीही श्रेष्ठताहै अन्यकी नहीं सो आत्मा जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिमें भी हरवक्त अपरोक्षहै जो आत्मा तिनमें पूर्ण न होवे तो तिनका प्रकाश कैसे होवे ताते जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिको त्यागकर तुरीयामें स्थित होवे यह वचन हाँसीके योग्यहै हाँ ! जाग्रतादिकोंमें पूर्ण हुआ तिनका प्रकाशक सुख रूप तुरीय आत्माहीहों यह निश्चय तो ठीकहै तैसेही सुखरूप आत्मा सर्व अंगोंमें पूर्णहै जो आत्मा सर्व अंगोंमें पूर्ण नहीं होवे तो सर्व अंगोंका ज्ञान न होना चाहिये काहेते ज्ञान स्वरूप आत्माहीहै अन्य नहीं ताते सर्व अंगोंको त्यागकर त्रिपुटीमें स्थित होवे यह तेरा कहना लज्जाका कामहै काहेते सुखरूप आत्मा पूर्ण होने ते त्रिपुटी तो रुधिर माँस अस्थिरूपहै तिसमें सुख कहां है आत्मा सर्व अवस्थामें सम है अरु आत्मामें सर्व अवस्था समहैं मैत्रेयने कहा हे पराशर मैं कौन हों नेत्र, त्वचा, कान, रसना, घ्राण हों वा हाथ पाँउ वाक शिष्णु गुदा वा शब्दादिक पंच विषे हों वा सत रज तम तीन गुण हों वा प्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार हों वा पंचभूत हों वा जड़ मायाहों पराशरने कहा यह सब तुझ चि दघन देवते प्रगट भयेहैं तुझको कौन कहै जो तू अमुक है मैत्रेयने कहा इस संसार समुद्र जलते मैं पार कैसे होवों पराशरने कहा तुझको अस्ति भाति प्रियरूप वस्तुते भिन्न संसार समुद्र जल हैहीनहीं तो पार कासों उतरताहै लज्जामान हो जो मृगतृष्णाके जलते पारहोने

वास्ते नवकाकी इच्छा कर्ताहै पहले संसार विषे जलको निश्चय कर पीछे पार हूजियो मैत्रेयने कहा तुमही कहो जल कौनहै पराशरने कहा जैसे जलसे विना समुद्र असारहै तैसे तुझ सुख अनंत चिद्रूप आत्मा रूप जलते यह नाम रूप संसार तरंग असारहै ताते तूही चैतन्य आत्मा जलरूपहै जब तैंने आपको अस्ति भाति प्रियरूप सार जल जाना तो विचार देख संसार रूप समुद्र कहाहै किंतु कछु नहीं यही मुखपक्ष है गौण अर्थ यहहै कि संसार रूप समुद्र में जल अहंकार रूप वासना है मैत्रेयने कहा वासनाकारूप क्याहै पराशरने कहा वासनाका रूप मैंने देखानहीं मैत्रेयने कहा जब रूप देखा नहीं तो संसार समुद्र विषे वासना जलहै यह कैसे कल्पा जब अहंकार रूप वासना रूप नहीं राखत तो मुझको वासनाते क्या भयहै काहेते रूप रहित आकाश किसीको दुःख नहीं देता तिस समय गणेश आवत भये अरु कहा गण नाम मन सहित चक्षु आदि इंद्रियों काहै वा गण नाम इस नामरूप मूर्ति सहित सकारण समूह प्रपंचका है तिनको जो नियमन करे नाम प्रेरणा करे तिसका नाम ईशहै वा ब्रह्म विष्णु शिवादिक सर्व मूर्ति अमूर्ति मान प्रपंच गणका जो मालिक होवे तिसका नाम गणेशहै सो यह पूर्वोक्त गणोंका ईशपना चैतन्य वस्तु मेंही घटसकेहै अन्य किसी सूक्ष्म वा स्थूल मूर्तिमान वस्तु में घटसके नहीं काहेते चैतन्यते भिन्न सर्वको संसारके अंतर्भूत होनेते ताते गणेश नाम मनादिकोंके साक्षी चैतन्य आत्मा काहै सो पूर्वोक्त गणेश तुम्हारा तथा सर्व जगत्का वोही स्वरूपहै यह नहींकि ब्रह्मा विष्णु शिवादिक देवतोंका पूर्वोक्त गणेश आत्मा है अरु चींटीका आत्मा नहीं चींटीका स्वरूप औरहै ऐसे नहीं चाहे ब्रह्मा विष्णु शिव सतवक्ता यथार्थस्वरूपके ज्ञाता बैठेहैं तिनसे पूछलो पुनः सबने कहा यथा र्थहधी यहीहै स्वरूप में भेदनहीं व्यवहारमें भेदहै पुनः गणेशजी कहते भये हे सभा असली विचार करें तो व्यवहारमें भी भेद नहीं काहेते व्यवहार नाम कथन प्रतीति काहै सो भी एकसा है काहेते पंचज्ञानेंद्रिय पंचकर्मेंद्रिय पंचप्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार यहतो ग्राहक अरु शब्दादिक विषय ग्राह्य सो यह ग्राहिक ग्राह्यभाव करके प्रति सर्व शरीरोंमें तुल्यहै तथा इंद्रिय विषयके संयोग वियोगजन्य पुरुषोंको सुख दुःखकी प्रतीति भी तुल्यहै औरभी पंचभूतोंकी प्रतीति भी तुल्यहै अरु चक्षु

92

आदिक इंद्रियोंके दर्शनादिक व्यवहार स्वतः सिद्धही भिन्न भिन्न सर्व शरीरोंमें होरहेहैं यहभी तुल्यही है ताते हे सभा सम्यक्
अपने गणेश आत्माको जानो और संसारके पदार्थोंके न्यूनाधिक भाव मत देखो यह दृश्यमान प्रपंच मायामात्र है यह कह कर गणेश
तूष्णी भये अरु सर्व सभाने गणेश जीका अनुमोदन करा तिस समय चंद्रमा आवत भये अरु कहते भये भ्रम सिद्ध जो बंध मोक्ष रूपी
तपतते रहित विष्णुहै सोई शांति रूप सुख चंद्रमाहै तथा जो स्वतःही ज्ञान अज्ञानते तथा जन्म मरनते तथा हर्ष शोकते तथा सर्व संसारके
धर्म रूपी तप्तते रहितहै तथा जो स्वतःही काम क्रोधादिकों ते तथा उदय अस्त भाव रूपी तप्तते रहित है सोई शांति रूप सुख
चंद्रहै अरु जो न्यूनाधिक भावते रहित सदा एकरस निर्विकार दृश्य संबंधते रहित सदा अपरोक्ष मनादिकोंका साक्षी आत्मारूप चंद्र-
माहृदय आकाशमे स्थितहैं जिस नित्य चिद्रू सुख रूप आत्मारूप चंद्रमाके दर्शनसे ही अध्यात्म अधिभूतक अधिदैवकताप मिटजातेहैं
तथा सर्व दर्शन अपनाहीं होजाताहै दर्शन योग्य अन्य कोई पदार्थ रहतानहीं तथा ब्रह्मलोक विष्णुलोक शिवलोकादिकोंके सुख जिस
चंद्रमाके नजदीक समुद्रमें एक किनके की न्याई हैं तथा आत्मा रूप चंद्रमाके सम्यक् दर्शनसे जो कछु करनाथा सो हो चुकता है तथा
जहाँ जानाथा सो जा चुकताहै तथा सर्वकर्ता भोक्ताभी आपको अकर्ता अभोक्ता मानताहै तथा वास्तवते आप अकर्ता अभोक्ताभी
अपनी माया कर सर्वका कर्ता भोक्ता आपको जानताहै तथा इस अनित्य सर्व नामरूप जगत्का आपकोही अधिष्ठान प्रकाशक निया-
मक उत्पत्ति पालक संहारक सम्यक् संशय रहित अपरोक्ष जानताहै तथा अस्ति भाति प्रियरूप कर आपको सम्यक् सर्वात्मा जानताहै
जिस अनंत नित्य चिद्रूप आत्मरूपी चंद्रमाके आनंदकरही सर्व आनंदमान होरहेहैं जो यह आनंद स्वरूप सर्वके हृदय विषे आ-
त्मरूप चंद्रमा न होवे तो सर्व जीवोंका कैसे जीवन होवे किंतु नहीं होवे देखो मुझ चैतन्य आत्मा चंद्रमारूप आनंदकी पूर्णता जो मेहतर
अपने हालमेहीं मस्तहै जब मलसे निपटकर अपने बाल बच्चेमें निवास कर्ता है तब राजाको भी कछु गिनता नहीं अन्य-
की क्या बातहै तैसेही शूकर कूकरभी अपने बालबच्चेमें हीं प्रसन्नहैं इंद्रानी सहित इंद्रादिकोंके भोगोंकी इच्छा नहीं करते देखो

मजदूर सारा दिन मजदूरी कर्ता है परंतु जब रात्रिमें अपने बाल बच्चोंमे निवास करताहै तब धनियोंको स्वप्नमे भी याद नहीं कर्ता और आपलोग ख्याल करो मलका चींटा मलमेंही अपनी सृष्टी में प्रसन्नहै अपनेसे भिन्न सृष्टीके भोग विलासको मन्जूरही नहीं कर्ता तैसे पक्षी अपनी सृष्टीमे खुश रहते हैं बनोके वृक्षोंमेंही रहना मन्जूर रखते हैं महलोंका नहीं परंतु अन्य सृष्टीके भोग विलासोंको तृणकी न्याई जानते हैं सारांश यहकि एक दूसरेकी दृष्टीसे सुख दुःख न्यूनाधिक भाव प्रतीति होताहै स्वदृष्टिमें नहीं किंतु स्वदृष्टिमें सुख हीहै तैसे मृगादि पशुभी आप अपनी सृष्टीमे आनंद है अन्य सृष्टिमें नहीं देखो मच्छरादि हमारी दृष्टिसे तुच्छ जीव भी एकदिन मेंही बालक युवा वृद्धादि अवस्था अपने बालबच्चों सहित भोगकर नष्ट हो जातेहैं परंतु अन्य सृष्टीके सुखोंको तुच्छ जानतेहैं इत्यादि सर्व सृष्टिमें सूक्ष्म अंतर विचार करनेसेही अपने स्वरूप आनंदकी पूर्णता मालूम होतीहै अन्यथा नहीं तात्पर्य यहकि जहाँ कोई जिस किस योनि वा स्थानमें तथा जाति मे तथा मंत्र तंत्र ओषधी शस्त्र वेद पुराण षट् शास्त्रादि विद्या में तथा विषय लंपटता में तथा धर्म अधर्म लड़ाई चोरी यारी ठगी दंभ ज़िमींदारी नौकरी व्यापार स्त्री पुरुष राज्यमें तथा वर्ण आश्रममें तथा ज्ञान अज्ञान फकीरी अमीरी ध्यान पूजा जप तप योग वेदांत समाधि व्रत तीर्थ यम नियम तमाशे, जादूमें तथा कविता धूर्तता में तथा परमहंसी से आदि कर जहाँ कोई स्थितहैं वहांही आनंदमान रहे हैं काहेते आनंद स्वरूप चैतन्य साक्षी आत्मा सभके हृदयमें पूर्ण होनेते इसीतेही सर्व आनंद मान होरहे हैं जो चैतन्य सुख अनुभव रूप अलौकिक चंद्रमा सर्व प्राणीमात्रके हृदय देशमें नित्य स्थित न होवे तो यह सुख दुःख रूप संघात में एक दिनभी कटना कठिन हो जावे उलटा जिस शरीरमें है उस शरीरको अन्य शरीरोंते सुख रूप उत्कृष्ट मानता है जो आपको निकृष्ट माने तो जीवना कठिन होवे ताते पूर्वोक्त चंद्रमाकी महिमा अवाङ्मनसगोचर है किसकी उपमा देवें काहेते मन वाणी आदिक सर्वका तथा षट् प्रमाणोंका प्रकाशक होनेते जो अनंत चिद सुखात्मा रूप अलौकिक चंद्रमाके पूर्वोक्त विशेष ण कहेहैं सो लौकिक दृश्यरूप आकाशज चंद्रमा विषे एक भी घटे नहीं तथा और मनादिक दृश्य पदार्थों में घटे नहीं यह सूक्ष्म

भाव बुद्धिके विचारसे जानीताहै स्थूलतासे नहीं ताते पूर्वोक्त विशेषणों युक्त नित्य सुख मनादिकोंका साक्षी चिदात्मा रूप चंद्रमाही ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका वही स्वरूपहै तिसी चंद्रमाको मैं अपना आत्मा जानकर सर्व संसार भ्रमते रहित संतुष्ट हुवा सुखी जीवताहों कोई भी संसार धर्म मुझको स्पर्श नहीं कर्ता सदा आकाश में गमन रूप क्रिया कर्त्ता भी अकर्ताहों व्यासने कहा तिसके जाननेका साधन कौनहै चंद्रमाने कहा हे व्यास तुम सरीखे सत्यवक्ता ब्रह्मनिष्ठ पक्षपातते रहित हस्तामलकवत अपरोक्ष स्वरूपके विद्वान पुरुषोंका संगही परमसाधनहै आत्मा साक्षीरूप चंद्रमाके देखनेके सतसंग नेत्रहैं काहेते शम दमादि अन्य सर्व साधनो का सतसंगके अंतर्भूतहोने ते ताते निःसंग पुरुषोंका सतसंगही कर्त्तव्यहै अन्य नहीं व्यास तूष्णी भया तिस समय धनेश आवते भये अरु कहते भये हे सभानिवासी महात्माओ धननाम प्रसिद्ध निज कार्य सहित जड मायाकाहै कईक महात्मा ने धननाम स्त्री पुत्र पैसा गृह पशु आदिकोंका कहा है तद उपलक्षित सर्व संसार लेलेना इस व्यक्ति सहित सर्व नाम रूप जगत्‌का जो स्वामी होवे सो कहिये धनेश वा धन नामहै कृत्यकृत्य ताका सो कृत्यकृत्य धर्म मनकाहै काहेते जो अकृत्य होताहै वही कृत्य २ होताहै मनादिकोंको रूप मोक्ष तथा मनादिकोंके धर्मोंका जो ईश नाम मालक नाम अपनी सत्तास्फूर्ति धन देकर जड मनादिकोंको ऐश्वर्यवान नाम चैतन्य करे तिसका नाम धनेश है सो यह धनेशका अर्थ किसी माया तथा माया का कार्य रूप दृश्यवान् मूर्त्ति विषे घटे नहीं साक्षी चैतन्य आत्मा विषेही बने है सो पूर्वोक्त धनेशही सर्वका आत्माहै इस बुद्धि आदिकोंके प्रकाशक धनेशको साक्षीआत्माकोही सम्यक् जानकर कृतकृत्य हुआ संसार भ्रमते रहित होता है संसारमें स्थित भी जल कमलवत् संसार धर्मोंते असंग रहता है ताते यह दृश्य-मान व्यक्ति धनेश कहन मात्रही है असली धनेश चेतन आत्माहीहै मैं आत्मारूप धनेशही सर्वको स्फूर्ति रूपधन देताहौं मुझको कोई दृश्य पदार्थ सत्ता स्फूर्ति दे नहीं सक्ता ताते तुम मुझ चैतन्य धनेशको अपना आत्मारूप जानो जो तुमभी धन रूप धनके ईश (धनेश) होवो वशिष्ठने कहा मैं चैतन्य आत्मा कर्तव्यसे धनेश नहीं होता किंतु स्वतः ही धनेश हौं जैसे घटाकाशको महाकाश

रूपता बनानेसे नहींहोती किंतु आगेही महाकाश रूपताहै धनेशने कहा तू कौन है वशिष्ठने कहा तू है धनेशने कहा मैं कौन हों वशिष्ठने कहा जो मैंहों धनेशने कहा जहां मैं तू है वहां मायाहै मैं मायाते परे हों व्यासने कहा तू चैतन्य सर्वरूप है कि असर्व रूपहै तथा जो तू चैतन्य धनेश सर्व रूपहै तो माया भी तूहींहै तथा परे उरेभी तूहींहै जो तू असर्व रूपहै तो जो असर्व रूप होताहै सो परिछिन्न-जड उत्पत्तिवान् अनित्य दृश्य होताहै धनेशने कहा सर्व असर्व दोनो रूप मैं चैतन्य आत्माही हों काहेते अस्ति भाति प्रिय रूप दृष्टी कर सर्व माया अमाया जड चेतन नित्य अनित्य मैंही सर्वरूपहों अरु अवाङ्मनसगोचर दृष्टीसें कल्पित सर्व संसारसे परे अधिष्ठान् हों कल्पित अधिष्ठान की यही रीति है जैसे स्वप्नदृष्टा सर्व स्वप्नके पदार्थ रूपभी है अरु स्वप्न पदार्थों ते अगोचरभी है काहेते स्वप्न पदार्थोंको कल्पितहोनेते अरु स्वप्नदृष्टा अधिष्ठानसत होनेते व्यासने कहा वाङ्मनसगोचर अवाङ्मनसगोचर तुझ चैतन्य में भेद कहाँसे आया धनेशने कहा भेद अभेद तैंने कल्पा है मुझ चैतन्य में नहीं जैसे सूर्य में दिन रात्रि नहीं औरोंने दोनों कल्पे हैं व्यास तूष्णी भये तिस समय ध्रुव आवत भये अरु कहा हे सदसभा विचारकरा चाहिये और शोच कर देखो यह जगत् अनादि कालका चला आताहै इस जगत्के व्यवहारकी मर्यादा स्थापन करने वास्ते सच्चिदानंद आत्मा ध्रुवई-श्वरने जैसे सूर्य चंद्रमा लोकरचेहैं तैसेही ध्रुव उत्तर अरु दक्षिण दो रचेहैं कोई पीछे होनेवाला उत्तानपाद राजाका पुत्र ध्रुव नहीं हुआ ध्रुव सूर्यादि अनादिहैं परंतु उत्तानपाद राजाके पुत्रका नाम भी ध्रुवही था नाम नामकी तुल्यताते लोगोंने अनादि अकाश ज ध्रुवही कथामें लिख दिया सो उत्तानपाद राजाका पुत्र ध्रुव भी अपने तपके प्रभावते माता पिता सहित वा एकलाही निश्चित बहुत काल स्थायी लोकोंको प्रात होता भया है वा ध्रुव लोककोही प्राप्त होता भया है इहां ध्रुव नक्षत्रका प्रकरणहै सो ध्रुव कहता भया हे सभानिवासी उत्तम जनो ध्रुव नाम निश्चयकाहै तथा अचलकाहै निश्चय करके जो अचल होवे तिसका नाम ध्रुवहै सो ऐसा निश्चय अचल नित्य सुख चिद रूप आत्माहीहै अन्य नहीं काहेते इस निक्षत्र ध्रुवसे आदिलेके सूर्य चंद्रमा सुमेरु समुद्र पृथिवी

अप तेज वायु आकाशादि जो अचल महान पदार्थ दीखतेहैं सो महा प्रलयतकहीहैं महाप्रलयमें चल रूप हो जावेंगे अपनी उत्पत्तिते पहले थे नहीं अरु अंत रहैंगे नहीं मध्यमेंही इनकी अचलता प्रतीति होतीहै सोभी भ्रममात्रहै इसीते चलहै जिस चैतन्य कर चलभी प्रपंच अचल प्रतीति होताहै सो आत्माही अचलहै काहेते जिसका जो स्वरूप आदि अंत होताहै वैसाही तिसका मध्यमें होताहै यह न्याय प्रसिद्धहै जो आदि अंत मध्यमें तथा भूत भविष्यत वर्तमान कालमें जाका बाधा ज्ञान से वा अन्य साधनसे न हो किंतु एक रस रहे सो अचल होताहै ब्रह्मा विष्णु शिवभी महाप्रलयमें अपने नित्य चिद सुख ध्रुव स्वरूप आत्मामें आगेही स्थित हुये हुयेही उपाधिके अदृश्यकी अपेक्षासे पुनः स्थित होतेहैं जैसे घटाकाश महाकाश रूप हुआ हुआही घट उपाधिके अभावते यह घटाकाश महाकाश रूप होगयाहै ऐसे प्रतीति होवेहै यह ब्रह्मा विष्णु शिवादि कभी अध्रुव दृश्य रूप शरीरोंको त्याग देतेहैं अन्यकी क्यावातहै ताते यह सर्व नाम रूप प्रपंच अध्रुव रूपहै ध्रुव नहीं नित्य सुख चिद रूप आत्माही एक ध्रुवहै अन्य नहीं सोई सर्वका आत्माहै अपने ध्रुव स्वरूपके अज्ञानसे आपको अध्रुव मानतेहैं अपने ध्रुव स्वरूप आत्मासेही अध्रुव मनादिक संघातकी तथा संघातके धर्मोंकी सिद्धिहै बड़ा आश्चर्यहै जिस अध्रुव नाम रूप मनादिकोंको यह ध्रुवात्मा सिद्ध कर्ता है सो अपना स्वरूप मानताहै परंतु वास्तवते अध्रुव रूप होता नहीं मुझ ध्रुव स्वरूप आत्मा करकेही यह अध्रुव रूप संसार ध्रुव रूप प्रतीति हो रहाहै जैसे अग्नि करही लोहा प्रकाशमान होताहै स्वतः अप्रकाश रूपहै ताते जिस अधिकारीको भ्रम रूप बंधकी निवृत्ति अरु मोक्षकी प्राप्तिकी इच्छा होवे सो मुझ चैतन्य ध्रुवको अपना साक्षी आत्मा जाने सारांश यह कि मैं नित्य सुखचिद रूप बुद्धि आदिकोंका दृष्टा साक्षी आत्माहों सत संभाषणादि धर्म पूर्वक सम्यक् जाननाहीं कर्तव्य है और कोई भ्रम निवृत्ति वास्ते कर्तव्य नहीं जैसे अकाशज ध्रुवके चौफेर शिशुमारचक्र फिरताहै परंतु ध्रुवनहीं फिरता जो ध्रुवभी फिरेगा तो ध्रुव संज्ञाते रहित होवेगा तैसे सर्वके अंतरसाक्षी रूप होकर जोमैं ध्रुवहों सो मुझके चौफेर विषेभी जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तथा सत रज तम शुभ

अशुभ संकल्पादि तथा बालक युवा वृद्धादि सर्व पदार्थोंका न्यूनाधिक भाव होना रूप शिशुमार चक्र फिर रहाहै तात्पर्य यहकि कभी जाग्रत होतीहै कभी स्वप्न होताहै कभी सुषुप्ति होतीहै कभी तुरीया होतीहै कभी सत्व कभी रज कभी तम होताहै कभी शुभ संकल्प विकल्प होताहै कभी अशुभ संकल्प विकल्प होताहै कभी बालक कभी युवा कभी वृद्ध अवस्था होती है ऐसेही सर्व पदार्थ जानलेनें परंतु मैं चैतन्य ध्रुव निर्विकार स्थितहों जो पूर्वोक्त चक्रवत मुझका भी चक्रहो तद्वत मुझकीभी अध्रुवता होवेगी ताते मुझ चैतन्य रूप ध्रुव ते भिन्न सर्व नाम रूप जगत् अध्रुव जड रूपहैं यमकिंकरने कहा ध्रुव अध्रुव द्वैतमें हैं मैं अद्वैत हों ध्रुवने कहा मुझ चैतन्य ध्रुवते अभिन्न हुआहुआही तू अद्वैत सिद्ध होगा नहीं तो अध्रुव होगा यमकिंकरने कहा जब अद्वैतहै तो भिन्न अभिन्न क्या ध्रुवने कहा भिन्न अभिन्नभी अद्वैत ध्रुवही है धर्मरायने कहा ध्रुवहै तो चलभीहै ध्रुवने कहा लौकिक ध्रुव अध्रुवते रहित मैं अलौकिक ध्रुवहों वास्तवते अस्ति भाति प्रिय सर्व चल अचल नाम रूप मैंही आत्माहों धर्मरायनें कहा लौकिक अलौकिक ध्रुव यह तीन पद भये बुद्धिमान एक कहते भी लजायमान होतेंहैं तुम तीन कहते हो ध्रुव तूष्णी भया तिससमय दक्ष प्रजापति आवत भया अरु कहताभया दक्षनाम चतुर काहै चतुराई बुद्धिसे होती है बुद्धिनाम ज्ञान काहै ताते दक्ष नाम ज्ञान स्वरूप काहै सर्व नाम रूप प्रजाका पति नामस्वामी ज्ञानस्वरूप होवे तिसका नाम दक्ष प्रजापतिहै वा सर्व प्रजा जिसते होवे सो प्रजापतिहै सो यह अर्थ ज्ञान स्वरूप आत्मामेंही घटेहै ताते हे साधो इन ब्रह्मासे आदिलेके चींटी प्रयन्त सर्व प्रजाका ज्ञान स्वरूपमैं आत्माही पतिहों मनकरकेभी अचिंतनीयहै रचना जिस की ऐसे सर्व नाम रूप सर्व प्रजाकी उत्पत्ति पालना संहार करोहों अरु मनादिक प्रजा विषे मैं निवास कर सर्वको आप अपने व्यवहार में नियमनभी करों हों मेरा नियमन कोई नहीं कर्ता परंतु तिनके कर्मोंते अस्पर्शहों यही मुझकी चतुराई है जैसे आकाश सर्वमें स्थित हुआ हुआ अस्पर्श (अलग) है यही आकाशकी चतुराई है ताते तुम सर्व प्रजा मुझ ज्ञान स्वरूप अनंत चिदात्माको पतिजानो काहेते मैं ज्ञान स्वरूप आत्माहीं सर्वका स्वरूप हों जो जिसका स्वरूप होताहै सोई तिसका पति होताहै जैसे सर्प दंडमालादि कल्पित

95

पदार्थोंका रज्जुही पतिहै काहेते रज्जुके अधीन ही तिन सर्पादिकों की प्रतीति होतीहै अन्यथा नहीं तैसे मुझ चैतन्य करकेही मुझ विषे कल्पित इस दृश्य जडकी प्रतीतिहै अन्यथा नहीं चंद्रमाने कहा मुझ आनंद स्वरूप ते भिन्न तू दुःखरूपहै दक्षने कहा जो ज्ञान स्वरूपहै सोई आनंद स्वरूपहै तथा सतरूपहै मुझ ज्ञानरूपते तुम जुदे हुये असत जड़ होजावोगे ताते ज्ञानके भीतर सबको आना पड़ेगा चंद्रमा तूष्णी भया तिस समय सूर्य भगवान् आते भये अरु सभामें कहते भये कि मैं एकही चिदसुख नित्यस्वरूप आत्माहीं सर्व सूर्य चंद्रमादिक ज्योतियोंका तथा मायासे आदि लेकर देहपर्यंत सर्वका प्रकाशकहों अरु आपही स्वयंप्रकाश स्वरूपहों मुझका कोई प्रकाशकनहीं जैसे बाहर सूर्यकर चैत्रादि बारामास षट्ऋतु तीन चातुरमास सिद्ध होतेहैं तैसेही अंतर बाहर पंचभूतोंकी सात्विकी सांझी तथा एक एक अंश होनेवाले ज्ञानेंद्रिय तथा अंतःकर्ण पाँच जानने तैसेही भूतोंकी राजसी सांझी तथा एक एक अंशते प्राण तथा कर्मेंद्रियोंकी उत्पत्ति होतीहै ताते पांच यह जानने देवता ११ विषय १२ तात्पर्य यहकि पंचज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेंद्रिय साधारण वायुरूप प्राण अरु अंतःकर्ण तथा तिन अंतःकर्णादिकोंके देवता तथा श्रोत्रादिक इंद्रियोंके विषय रूप बारामहीने मुझ चैतन्य साक्षी आत्मा सूर्यकर प्रकाशत हुये हुये सिद्धही होतेहैं मुझ चैतन्य विना इनकी सिद्धि कोईनहीं करसक्ता तैसेही मनादिकोंके साक्षी मुझ चैतन्य सूर्य करही देहके षट्भाव विकार रूप षट् ऋतु जानने में आतीहैं वा पृथिवी अप तेज वायु आकाश तथा तिनका कारण माया यह षट्ऋतु सिद्ध होतीहैं वा षट् शास्त्ररूपी षटऋतु भी मुझ चैतन्य सूर्य करहीं सिद्ध होतीहैं वा मनसहित श्रोत्रादिक षट्इंद्रिय तथा षट्ही तिनके विषय यह दोनों प्रकारकी षट्ऋतु मुझबुद्धि आदिकोंके साक्षी नित्य सुख चैतन्य आत्मा सूर्य करही सिद्ध होतीहैं वा अन्न मयादि पंचकोश अरु एक अविद्या यह षट् ऋतुभी मुझ चैतन्य सूर्य करहीं सिद्ध होतीहैं वा षट् दोष रूप षट्ऋतु भी मुझ चैतन्य सूर्य करही सिद्ध होतीहैं वा अविद्या अस्मता राग द्वेष अभिनिवेष यह पंच कलेश तथा पंचकलेशोंके भोगता जीव वा सूक्ष्म शरीर यह षट्ऋतुभी मुझ साक्षी चैतन्य अंतर सूर्यसेही प्रकाशमान होतेहैं वा जाग्रत स्व-

प्र सुषुप्ति तुरीया अरु तुरीयातीत यह पांच बुद्धिकी अवस्था तथा एक बुद्धि यह षट् ऋतु वा स्थूल सूक्ष्म कारण तथा महाका
रण शरीर तथा तिनका उपादान कारण माया तथा तिन शरीरोंके निमित्त कारण कर्म यह षटऋतु वा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मूर्छा
मरन समाधि यह षट्ऋतुहैं वा तीनव्यष्टी शरीर तथा तीनसमष्टी शरीर यह षट्ऋतुहैं वा समष्टी व्यष्टी षट् शरीरोंके अभिमानी विश्व
वैराटादि षट्ऋतुहैं इत्यादि अनेक ऋतु मुझ प्रत्यक् आत्मा सूर्य करही सिद्ध होतीहैं अरु बाहरकी भी मधु ग्रीष्म वर्षा शरद हे
म वसंत यह षट् ऋतु भी मुझ चैतन्य सूर्य करही सिद्ध होतीहैं काहेते जो सर्वका स्वरूप चैतन्य साक्षी सूर्यादिकों काभी प्रकाशक
है सोई वसंतादिक षट्ऋतुका भी प्रकाशकहै तैसेही जैसे बाहर सूर्य कर तीन चातुरमास सिद्ध होतेहैं तैसेही मुझ चैतन्य अंतर
साक्षी आत्मारूप सूर्यकरही सत रज तम तीन गुण रूप तीन चातुरमास सिद्ध नाम जाने जाते हैं तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति
तथा तिनके अभिमानी विश्व तैजस प्राज्ञ रूप तीन चातुरमास मुझ तुरीय रूप सूर्य करही जाने जातेहैं तथा समष्टी व्यष्टी स्थूल
तथा समष्टी व्यष्टी सूक्ष्म तथा समष्टी व्यष्टी कारण तीनशरीर रूपी तीन चातुरमासभी मुझ चैतन्य तुरीय रूप सूर्य करही प्रकाश
मान होतेहैं तथा बालक युवा वृद्ध अवस्था रूप तीन चातुरमासभी मुझ चिदात्मा रूप सूर्यसेही सिद्ध होतेहैं काहेते
जिस शरीरकी अवस्थाहै सो शरीर रूप जड सर्व संघात अपनी अवस्था सहित आपको जान नहींसक्ते बाकी
शेषमें मैं ज्ञान स्वरूप आत्माहीं सर्वको असंग होकर सिद्धकर्ताहों तथा जीव ईश्वर ब्रह्मशब्द रूप तीन चातुर
मासभी मुझ चैतन्य सूर्य करही सिद्ध होतेहैं अर्थ सहित जो शब्द रूप ऋक् यजुः सामवेद रूपी तीन चातुर्मास तथा
ब्रह्मादिक अभिमानी सहित जगत्की उत्पत्ति पालन संहाररूपी तीन चातुर्मास मुझ चैतन्य सूर्यसे ही सिद्धहोतेहैं तथा मरन मूर्छा समा
धि तथा दृष्टा दर्शन दृश्य इत्यादि त्रिपुटी रूप तीन चातुर्मास भी मुझ ज्ञान स्वरूप दृष्टा साक्षी सूर्य करही जाने जाते हैं त्रिलोकी
रूपी तीन चातुर्मास मुझ चैतन्य सूर्य आत्मा कर ही प्रकाशमान हैं त्रिलोकीरूपी मंदिरका मैं चैतन्य आत्माही दीपकहों तथा

96

सुषुप्ति में प्रिय मोदप्रमोद रूप तीन वृत्ति रूप चातुर्मास भी मुझ निर्विकार साक्षी आत्मा करही सिद्ध होतेहैं अन्यसे नहीं जैसे किसीका कोई मित्र वा पुत्र बहुत काल परदेश गया होवे सो अकस्मात् ते आजावे तिसको पिता वा मित्र देखते ही जो तिसकालमें आह्लादाकार अंतःर्णकी वृत्ति होतीहै तिसका नाम प्रियवृत्ति है जब नजदीक परस्पर हुये तिसकाल में जो वृत्ति होतीहै तिसका नाम मोद वृत्ति है जब भुजा पसार कर आपसमें मिले तिस कालमें जो वृत्ति होती है सो प्रमोद नाम वृत्तिहै पूर्व पूर्व वृत्तिसे उत्तर उत्तर वृत्तिमें एकाग्रता अरु वृत्तिजन्य सुखकी अधिकता जानलेनी यही हाल सुषुप्ति मेंभी जानलेना जैसे बाहर सूर्यकर दक्षिणायन उत्तरायन दो अयन सिद्ध होतेहैं तैसेही बंध रूपी दक्षिणायन अयन मोक्षरूपी उत्तरायन अयन भी अंतर बाहर मुझ चैतन्य सूर्य करही सिद्ध होते हैं काहेते पुरुषोंके अंतर बंध मोक्षको तो बाहरके हज़ार सूर्यसे भी प्रकाश नहीं होता मैं चैतन्य सूर्यतो पुरुषके अंतर मनकर कल्पित बंध मोक्षको अपरोक्ष साक्षी रूपसे प्रकाश करता हों अरु बाहरके अयनोको सूर्य मंडल होकर प्रकाशमान करता हों ताते मैं चैतन्य ही प्रकाशमान हों अन्य जड दृश्य नहीं तैसेही जैसे ब्रह्माड विषे आकाशज सूर्य करही दिन अरु रात्रि सिद्धभी होती है तथा दिन रात्रि विषे वर्तने वाले साठ चौं-सठ मुहूर्त भी तिसी सूर्य कर सिद्ध होतेहैं परंतु सूर्य विषे दिन रात्रिका तथा साठमुहूर्तोंका अत्यंताभावहै तैसेही अंतर अज्ञान नामरूप दिन रात्रिका तथा तिनविषे वर्तने वाले दैवी आसुरी गुण दोष रूप घटिका मुझ सतसुख चिदरूप आत्मा सूर्यकरही सिद्ध होते हैं परंतु मैं चैतन्य आत्मा सूर्य पूर्वोक्त सर्व पदार्थों ते रहित अवाङ्मनसगोचर स्थित हों मुझ चैतन्य सूर्यकीही यह सर्वनाम रूप किरणें हैं कोई किरण ब्रह्मा रूप कोई किरण जटाधारी शंकर रूप कोई किरण विष्णु रूप कोई देवता कोई दैत्य कोई जड कोई चैतन्य रूप होकर स्थित भयी हैं अरु कोई किरण पृथिवी अप तेज वायु आकाश रूप होकर स्थित भई हैं कोई किरण स्त्री कोई पुरुष वर्ण आश्रम रूप होकर स्थित भई हैं कोई किरण सप्तव्याहृति रूप कोई अतलादि सप्त नीचेके लोक रूप कोई स्वर्ग रूप कोई नरक रूप होकर स्थित भईहैं कोई इंद्र यम तथा मनुष्य देह रूप कोई माया प्रकृति महत्तत्त्व रूप होकर स्थित

भई हैं वहुत क्या कहों अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वात्मा मैंहीं हों मेरी मुझकोही नमस्कारहै मैं चैतन्य अपनी महिमा विषे आपही स्थित हों
जैसे स्वप्नद्रष्टाही स्वप्नमें सर्वरूप होताहै हेयमकिंकर कहो तू कौनहै यमकिंकरने कहा मैं आपको नहीं जानता कि कौन हों का-
हेते अवाङ्मनसगोचर होने ते तुमहीं कहो मैं कौन हों सूर्यने कहा मैं आपको नहीं जानता यह मन वाणीका कथन चिंतन अं-
तर जिसने जाना सोई तू मैं है यमकिंकरने कहा ऐसे मुझके स्वरूपको तुमने कैसे जाना सूर्य तूष्णी भया काहेते जो जो मन-
वाणीसे कथन चिंतन करेंगे तिस कथन चिंतनकी अनुत्पत्तिको तथा तिनकी उत्पत्तिको तथा तिनके लयको मानो पास बैठा देख
रहा है जैसे दाई वालककी अनुत्पत्तिको पुनः उत्पत्तिको तथा तिसके अभावको जानती है जैसे अंकुरकी अनुत्पत्तिको तथा तिस-
की उत्पत्तिको तथा तिसके नाशको आकाश अवकाश देताहै ताते अंकुर आकाशके हालको क्या जाने तिस समय बृहस्पति
देवतोंका गुरू आवतभया अरु कहा गो नामहै इंद्रियोंका वा पृथिवीका वा अज्ञानका और रू नामहै प्रकाशका तात्पर्य्य यह कि
जो कारण अज्ञान सहित सर्व नाम रूप प्रपंचको काटे (तराजू) की न्याई परिमाण करे वा प्रकाशे नाम जाने सो कहिये गुरू सो ऐसा
अनंतचिद् सुखरूप यह आत्माही गुरु शब्दका अर्थ बन सक्ताहै माया तथा मायाका कार्य दृश्य वस्तुमें गुरू शब्दका अर्थ
घटे नहीं सोई पूर्वोक्त गुरु आत्माही तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का अपना स्वरूपहै अन्य नहीं चाहे इस संघात ब्रह्मांड में खोज
देखो ताते हे अधिकारी जनो पूर्वोक्त अपने आत्मा स्वरूपकोही तुम सर्व सूर्यादि दृश्य प्रपंच नीति पूर्वक आप अपने व्यवहारमें
आज्ञा चलानेवाला जानो तथा सर्व दृश्यते अपने गुरू स्वरूपकोही महान् जानो तथा पूज्य जानो तुम्हारे गुरू रूप आत्मा ते भिन्न
सर्व प्रपंचके तुच्छ अपूज्य असत जड़ दुःख रूपहै यह प्रत्यक् चैतन्य आत्माही लौकिक गुरू मूर्ति अलौकिक गुरू मूर्ति धारण
करके अपने सत् चित् आनंद स्वरूपका सत् उपदेश कर मुमुक्षुओंका उधार करैहै ताते प्रत्यक् चैतन्यहीं तुम्हारा
हमारा तथा सर्व जगत्का इष्टदेव है इसको अपना स्वरूप सम्यक् जाननेसे संसारसे मुक्त होताहै संसारके तरनेका यही

97

जहाजहै अन्य तृणोंका आलंवन करनाहै तिस समय मनुष्याकृति धार कर भूमि आवत भई अरु कहती भई हे सभाके निवासी सज्जन पुरुषो देहको देहीही धारण करताहै यह अति प्रसिद्धहै यह दृश्यमान पर्वतों सहित काठिन रूप पृथिवीसे आदि लेकर माया पर्यंत सर्व नाम रूप जगत् रूप देहको मैं सुख स्वरूप प्रत्यक् आत्मा चिद सत्ता देही धारण कर रही हों जे से फेन बुदबुदे तरंगादिक देहोंको जल देही धारण करै है यह नहीं कि तरंग बुदबुदेको वा बुदबुदा तरंगको धारण करे है काहेते रज्जु विषे सर्पवत् कल्पित होनेते परस्पर आधारा आधेय भाव नहीं बनसक्ते तैसेही इस पृथिवीसे आदि लेकर माया तक सर्वको मुझ अनंत चिद सत्ताविषे कल्पित होनेते इन कल्पित पृथिवी आदिकोंका परस्पर आधारा आधेय भाव नहीं बनसक्ता जो कहो सर्व जगत्को पृथिवी धारण करती है परंतु पृथिवीको कौन धारण करता है इसका भी विचारकरा चाहिये ताते यह सिद्ध हुआ कि जो पृथिवीको धारण करताहै सोई सर्व जगत्को धारणकर्ता है अन्य नहीं हे साधो देह अनेकहै परंतु मैं अनंत प्रत्यक् चिद सत्ता देही एक हों जैसे घट अनेक हैं परंतु देही मृत्तिका वा आकाश एकहीहै सारांश यहकि सर्वनाम रूप जगत्का मैं प्रत्यक् अनंत चिद सत्ता आत्मा स्वरूप हों इसीते पृथिवीका विकार भूत शस्त्रोंसे भी कटनेमें नहीं आती हों काहेते तिन शस्त्र आदिकोंका आत्माहोनेते अपने आत्माको कोई नहीं काट सक्ता इसी तेही सर्वका आधार रूपहों काहेते आप अपना स्वरूपही कल्पित सर्वका आधार अधिष्ठान् होता है यह प्रसिद्ध है जैसे घटका स्वरूप मृत्तिका है सोई तिस घटका आधार अधिष्ठान है जैसे पटका स्वरूपतंतुहै सोई तिसका आधार अधिष्ठान है ताते मुझ अनंत चिदसत्ता सर्वके अधिष्ठानको अपना आत्मा सम्यक् जानेसे ही भ्रमकी निवृत्ति होगी भ्रम दूर हुये बंध मोक्षभी जाते रहैंगे आगे जो तुम्हारी इच्छा है सो करो पुनः जलों का राजा वरुण आता भया अरु कहता भया माया अरु तत् कार्य मलते रहित मैं शुद्ध चैतन्य आत्मा हों सर्व वस्तुका गीलापन भी मैं ही कर्ता हों गीला नाम द्रवणा द्रवणा नाम सर्व पदा र्थोंको आप अपने कार्यके सन्मुख करना यमकिंकर ने कहा जो मैं चैतन्य तुझ देह सहित जलको गीला कर रहाहों सोई मैं सर्वको

गीला कर रहा हों काहेते तू जल मुझ चैतन्य आत्माते भिन्न किया हुआ हैहीनहीं गीलापना किसको करेगा हे वरुण जैसे तुझ कर सर्व वृक्ष हरियाईको पातेहैं तैसे मुझ चैतन्य आत्माकर तुझसे आदिलेकर सर्व जगत् हरियाई नाम स्फुर्ण होरहाहै अन्यथा नहीं हेजल राज जो तुझका साक्षी चैतन्य स्वरूप है सोई शुद्ध है अन्य नहीं ताते परिछिन्न अभिमानको त्याग पुनः तिसका भी त्यागकर पीछे निर्विकल्प तेरा स्वरूप है वरुण तूष्णी भया और अग्निदेवता आता भया अरु कहता भया मैं सर्वको भक्षण कर्त्ता हों धर्म रायने कहा सर्व कहां है तू ही है अपने आपको भक्षण कर वा नकर अग्निने कहा यह सर्व प्रकाश मेराहै यमकिंकर ने कहा तेरे प्रकाशसे हमें क्या मतलब है हम अपने प्रकाशसे प्रकाशमानहैं तू अपना प्रकाश अपने पासरख अग्निने कहा मैं सर्वको दाह करोंगा गणेशने कहा तुझकी क्या ताकत है जो मुझ चैतन्य विना एक तृणकोभी तू दाहकरे मुझ साक्षी चैतन्यते पृथक् तू अनग्निरूपहै दाह क्या करेगा हे अग्नि तू अपनेसे भिन्न पृथिवी जलको तथा तिनके कार्य पदार्थोंकोही दाह करसक्ता है आकाश वायुको भी दाह नहीं करसक्ता आकाशते अतिसूक्ष्म तुझका जो चैतन्य साक्षी स्वरूपहै तिसको तू दाह नहीं करसक्ता यामें क्या कहना है अग्निने कहा तू कौनहै गणेश बोले हे अग्नि तुझके अंतर तुझसे अज्ञात अरु तुझके सर्व व्य वहार जानने वाला सदा अपरोक्ष साक्षी तेरा आत्मा स्वरूप मैंहों अग्नि तूष्णी भया तब वायु देवता आता भया अरु कहा अबहीं मैं सर्वको शोषण कर्ताहों व्यासने कहा पहले अपने अहंका अंतर शत्रुको शोषण कर जो तुमको दुःखदायकहै पीछे सभको शोषण करियो वायुने कहा तूहीं मेरा शत्रुहै जो मुझ निर्विकार निर्विकल्प चैतन्यमे अहंकार अरोपण करताहै व्यासने कहा जब तू नि र्विकल्पहै तो मेरे अहंकार अरोपणका तुझको ज्ञान कैसे हुआ वायु तूष्णी भया अरु आकाश मनुष्य मूर्तिधार कर आता भया अरु कहा मैंहीं सर्वमें पूर्ण होरहाहों अरु निर्विकार हों तथा अक्रियहों पृथिवी अप तेज वायु तथा इनके कार्य मुझमेही समारहेहैं परंतु मैं निर्ले पहों वशिष्ठने कहा हे आकाश लोकदृष्टी कर तथा पृथिवी जल तेज वायु इन चार भूतोंकी दृष्टीकर जैसा तैंने कहाहै तू ऐसेहींहै परंतु

तुझका जो साक्षी चैतन्य अपना स्वरूप है सो नित्य सुख चिद रूपहै तू असत जड़ दुःख रूपहै तथा उत्पत्तिवानहै इसीते विकारी
है तुझकी अरु आत्माकी उपमा एक कैसे होवे किंतु नहींहोती जो चैतन्य तुझकोभी अवकाश देताहै नाम स्फुरण कर्ताहै सोई
सर्वको अवकाश देताहै परंतु चैतन्य आत्माने इस संसार बगीचेके निर्वाह वास्ते तुझका देह अवकाश रूपही रचाहै वायुका देह
ऐसेही रचाहै अग्निका प्रकाशमयही देहरचाहै आगेभी ऐसेही जानलेना परंतु देही सभका एक चैतन्य आत्माहै कहो सुषुप्ति में तेरा
स्वरूपकहां रहताहै ताते अपने प्रत्यक् चैतन्य आत्माको अपना स्वरूप सम्यक् जान मौन गहो आकाश तूष्णी भया पुनः दुर्वासा
ऋषि आवत भये अरु कहते भये सर्वको मैं अभी भस्म कर्ताहों धर्मरायने कहा हे दुर्वासा जो शरीरको भस्म कर्ताहै तो तुझके भस्मकरे
से यह आगेहीं भस्म कृमि विष्ठारूप होनाहै अब तुझके भस्म करने की बड़ाई कछु न भई केवल तेरा अभिमान हीहै किमैं सर्व
को भस्मकर्ताहों वा यह शरीर पंचभूतोंका है वा स्वप्नवत मायाका कार्यहै इनके भस्म करने वालेके साथ मायाका वा पंचभूतोंका
मुकद्दमा होगा अरु उनहींको इन शरीरोंके भस्म होने अरु नाश होनेमें हर्ष शोक होगा हम इस संघातके साक्षी चैतन्यको हर्ष
शोक नहीं एक वक्त नहीं लक्ष वक्त भस्म करो वा न करो अपना जोर किसको दिखलातेहो जो तुम कहो मैं चैतन्यको भस्मकर्ताहोंसो
चैतन्य तुम्हारा आत्माहै उलटा अपने आत्माको कोई भस्म कर नहीं सक्ता अरु होता भी नहीं साक्षी चैतन्य करकेही तुम सहित ज-
गत्की तथा तुम्हारे भस्म करनेके संकल्पादि सर्वकी उपलब्धी होरहीहै ताते किसको भस्मकर्ता है तुझको लज्जा नहीं आती
पहले भस्म करनेवाले अपने अहंकार दुःखदायक शत्रुको भस्म कर पीछे दूसरेको भस्म करिये आपको महान तपस्वी तेजस्वी अरु
पंडित मान कर लोगोंको वर शाप भय देता फिरताहैं लोगभी यही कहतेहैं जहाँ दुर्वासा जाताहै वहां शाप रूप भयही देताहै अरु अभय
नहीं देता तुम अपने नामके अर्थको स्मरण करो दुर्वासा नाम सच्चिदानंद आत्माकाहै तुम आपको शरीरमानके दूसरेको भस्म करा
चाहते हो विचारो तो तुम शिवरूपहो काहेते जन्म मरण रूपी दुर्नाम दुःखके देनेवाला संसार वा अहंकार वा अज्ञान तिसते परे

होवे वासा नाम स्थिति जिसकी सो कहिये दुर्वासा वा दुर्नाम दुःख असत जड माया विकार रूप संसारकाहै तिस विषे उलटा सत् चित् आनंद अमाया असंग रूप करके होवे निवास जिसका सो कहिये दुर्वासा वा कठिनता करके होवे स्थिति जिसमे सो कहिये दुर्वासा वा दुर नाम कठिनहै सहन जिनका ऐसे जो काम क्रोधादिकों विषेऔ दुर्वासन विषे तथा माया विषे तथा सर्व मायाके कार्य मनादिकों विषे जो असंग निर्विकार निर्विकल्प अक्रिय रूप करके होवे निवास जिसका सो कहिये दुर्वासा सारांश यह कि अवाङ् मनस गोचर पद विषे मनकी स्थिति अत्यंत कठिनहै ताते तुम अपने पूर्वोक्त स्वरूपमें स्थित होवो अरु सर्वको अभयदान देवो दुर्वासा तूष्णी भया तिस सभामें नारद आते भये अरु कहते भये जो भक्ति करेगा सोई कालके भयते छूटेगा अन्यथा नहीं यमकिंकरने कहा भक्तिका स्वरूप कहो नारदने कहा आप सहित सर्वको हरि रूप सम्यक् जानना यही भक्तिका स्वरूपहै यमकिंकरने कहा हे नारद तुम सर्वस्थानोमें गमन करतें रहते हो परंतु सबसे उत्तम स्थान कौनहै अरु कहीं परमात्माभी आपने देखा होगा कि नहीं तिसका भी वर्णन करो नारद कहते भये हे साधो मैं दशोदिशा फिराहों परंतु मायाका कार्य रूप सर्व पंचभूतक रूपही सृष्टि दृष्टि आईहै कहूँभी इन पंचभूतोंते पृथक् सृष्टि नहीं आई यही पंच ज्ञानेंद्रिय तथा पंच कर्मेन्द्रिय तथा पंच प्राण चतुष्टय अंतःकर्ण यही श्रोत्रादिक इंद्रियोंके शब्दादिक विषय अरु विषय इंद्रियके संयोग वियोग जन्य सुख दुःख होना सर्वत्र वैकुंठादि स्थानोमेंभी समही दृष्टि आयाहै काम क्रोधादिक भी सर्वत्रही न्यूनाधिक भाव कर देखेहैं कहीं जलका स्नानहै कहीं धातु मय वा पाषाण मय मूर्तिका दर्शनहै जैसे इंद्रिय अंतःकर्णादिकोंका स्वभाव अस्मदादिकोंके शरीरों में वर्तताहै तैसेही सर्वत्र देखाहै सारांश यह कि स्त्री पुरुषादिक व्यवहारभी सर्वत्र एक सरीखाही देखाहै अरु सर्वत्र असत जड दुःख रूप पंचभूत भौतकसृष्टीहीं देखनेमें आईहै कहूंभी सच्चिदानंद स्वरूप परमात्मा की मूर्ति देखनेमे नहीं आई काहेते परमात्मा व्यापक सर्वके हृदय में है वाहर कहां देखने में आवे अरु विचार रूप दिव्यद्रष्टिसे अंतर वाहर सर्वात्माही भान होताहै इतने में सनकादिक आते भये अरु कहते भयेकि हे नारद सो नित्य चिद अनंत

प्रमात्मा अंतर तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का आत्माहै वाहर देखनेमें कहां आवे यद्यपि अस्ति भाति प्रियरूप आत्माही अंतर वाहर भेद रहित सर्वदा सर्वको प्रत्यक्ष दर्शन होताहै परंतु सम्यक् विचार दिव्य दृष्टिसे जानाजाताहै सम्यक् विचार रूपी दिव्य दृष्टि ते रहित पुरुषोंको पूर्वोक्त स्वरूप जानानहीं जाता किंतु मिथ्या नामरूप माया तथा मायाका कार्य असत जड दुखःरूप प्रपंचही तिनको प्रत्यक्ष दर्शन होताहै आत्मा अधिष्ठान ज्ञानी अज्ञानी सर्वको प्रत्यक्ष होहै जानने न जानने का भेदहै सारांश यहकि अधिष्ठान तथा कल्पितका विचार करे हुये प्रथम अपरोक्ष अधिष्ठानकी प्रतीति पूर्वकही मिथ्या कल्पित नाम रूपकी पश्चात् प्रतीति होतीहै सर्वको, परंतु जानने न जानने का भेदहै दरशनका नहीं जैसे मधुरता द्रवता शीतलता रूप जल अधिष्ठानकी प्रथम अपरोक्ष प्रतीति पूर्वकही पश्चात् नाम रूप मिथ्या तरंगादिकोंकी प्रतीति होतीहै जैसे स्वर्ण अधिष्ठानकी प्रथम अपरोक्ष प्रतीति पूर्वकही मिथ्यानाम रूप भूषणों की पश्चात् प्रतीतिहोतीहै जैसे प्रथम रज्जु शुक्ति ठूंठादिक अधिष्ठान अपरोक्ष प्रतीति पूर्वकही कल्पित सर्पादिक नाम रूपकी पश्चात् प्रतीति होतीहै इत्यादि अनेक दृष्टांत हैं तैसे तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का स्वरूप जो सच्चिदानंद अत्मा अधिष्ठानके प्रथम अपरोक्ष दर्शन पूर्वकही सर्व नामरूप घट पटादिकोंका पश्चात् दर्शन होताहै पूर्व अज्ञानी लोगोंकी दृष्टिसे जहाँ कहाँ नामरूप प्रपंचकाही दर्शन कहाहै जैसे तू नारदको वाहर तलाश करे सो कहां मिले किंतु नहीं मिलेगा काहेते नारद आप ठहरा ताते हे सज्जनो देश काल वस्तु भेद रहित मन वाणीका अगोचर अपरोक्ष तुम्हारा साक्षी आत्मा है सोई आनंद नित्य चिद्रूपहै जो मन वाणी का गोचर देश काल वस्तु भेद वान पदार्थ है सो दुःख रूप दृश्य जडरूपहै ताते वाहरमत खोजो जो पिंडे सोई ब्रह्मंडे नारद तूष्णी भया पुनः कागभुशुंड आवत भये अरु कहते भये हे साधो मैं कोटान कोट ब्रह्मांडोंको उत्पत्ति लय स्थिति समभी अरु विलक्षण भी देखीहै अनेक ब्रह्मा विष्णु शिवादिकोंके राम कृष्णादिक अवतार देखेहैं परंतु सब प्रतीति मात्रहैं सत् नहीं आतमही सतहै जैसे समुद्रमें अनेक फेन बुद्बुदे तरंगादिक होतेहैं पुनः मिट जातेहैं जल ज्योंकात्योंस्थितहै हे साधो मे

वोंमें जो चातुर्मासमें बूंद पडती हैं तिनकी गिनती होनी कठिन है तथा समुद्रके किनारे बालूकी गिनती होनी कठिनहै पर तिनकी गिनती भी कोई बुद्धिमान करसके तो होसके परंतु सत् चित आनंद रूप निज स्वरूप आत्माते यह मायामात्र अनंत ब्रह्मांड उत्पन्न होतेहैं पुनः मिट जाते हैं तिनकी गिनती नहीं हो सक्ती जलतरंगोंवत् जब अपने स्वरूपको जानता है तब सर्व कल्पित ब्रह्मांडोंका अत्यंताभाव प्रतीत होता है जैसे जलके जानेते अनंत फेन बुदबुदे तरंगादिकोंका अत्यंताभाव प्रतीति होताहै किंतु जलते पृथक् सत्ता तिनकी नहीं प्रतीति होती जैसे भौतिक पदार्थ अनंत हैं परंतु तिन पदार्थों का स्वरूप जो पंचभूत है तिन पंचभूतोंके ज्ञाता पुरुषको भौतिक पदार्थों विषे अनंतता किंचित्मात्र भी प्रतीत होवे नहीं वशिष्ठने कहा हे कागभुशुंड अपने स्वरूपका स्वरूप क्या है कागभुशुंडने कहा हेसाधो किसी निमित्तसे दुःखाकार वा सुखाकार अंतःकर्णकी वृत्ति उत्पन्न होकर निमित्तके अभावसे वा स्वभावसे ही मिटगई पुनः दुःखाकार वा सुखाकार उत्पन्न हुई नहीं वा उत्पन्न हुई है इस व्यवहारको जिसने अनुभव कराहै सोई अपने स्वरूपका स्वरूप है तैसेही पुण्य वा पाप रूप संकल्प उत्पन्न होकर मिटगया है पुनः पुण्य पापका संकल्प उत्पन्न हुआ नहीं वा हुआ है इस सर्व व्यवहारोंको अंतर जिसने देखाहै सोई अपने स्वरूपका स्वरूप है तैसेही सात्विकी वा राजसी वा तामसी अंतःकर्णकी वृत्ति उत्पन्न होकर मिटगई जबलग पुनः सात्विकी वा राजसी वा तामसी वृत्ति उत्पन्न हुई नहीं वा उत्पन्न हुई है यह सर्व व्यवहार अंतर जिसने जाना है सोई अपने स्वरूपका स्वरूपहै तैसेही जाग्रत वा स्वप्न वा सुषुप्ति अवस्था होकर मिटगई है जबलग दूसरी अवस्था प्राप्तभई नहीं वा प्राप्तभई है इन सर्व संधियोंको संधियोंमे स्थित हुआ हुआ जो स्वयंप्रकाशमान वस्तु है अरु पूर्वोक्त जाग्रतादिक संधियोंकी जिससे सिद्धीहोवे है सोई अपने स्वरूपका स्वरूपहै तैसेही कमर पर्यंत कोई पुरुष जल में स्थित होवे सो कमर नीचे शीतलताका तथा कमर ऊपर उष्णताका जिससे अनुभव होवेहै सो निर्विकल्प अपना स्वरूप है तैसेही कामाकार तथा क्रोधाकार तथा लोभाकार तथा मोहाकार तथा अहंकारादिक वृत्तियां उत्पन्न होकर नष्ट होगई हैं पुनः कामाकारादिक वा अकामा

कारादिक वृत्तियां जवलग उत्पन्न हुई नहीं वा हुई हैं तिनके मध्यमें जो निर्विकल्प निर्विकार तिन कामाकारादिक वृत्तियोंके भावाभावको तथा अन्य वृत्तियोंकी अनुत्पत्तिको वा उत्पत्तिको जानताहै सो द्रष्टा साक्षी वस्तु अपना स्वरूपहै तैसे शांति आदिक वृत्तियां उत्पन्न होकर नष्ट हो गई हैं अन्य शांतिरूप वा अशांतिरूप वृत्तियां उत्पन्न हुई नहीं वा उत्पन्न हुई हैं तिनके भावाभावके प्रकाश करनेवाला साक्षी चैतन्यवस्तु अपने स्वरूपका स्वरूप है तैसे ही हर्षाकार वा शोकाकार वृत्ती उत्पन्नहोकर समाप्त होगई अरु अन्य उत्पन्न हुई नहीं वा हुई हैं इस सर्व व्यवहारकी पहँचान करने वाला अपना स्वरूपहै तैसेही प्राणोंके वाहर कुंभकको तथा प्राणोंके रेचक पूरकको तथा अंतर कुंभकको तथा प्राणोंके गमनागमन को तथा प्राण अपानकी संधिको जो सिद्ध करता है सोई अपना स्वरूपहै ज्ञान अज्ञान बंध मोक्षकी कल्पना जिसकर सिद्ध होतीहै सोई अपना स्वरूप है इत्यादिक अनेक संधियाँहैं वशिष्ठने कहा हे कागभुशुंड तुम योगी हो अरु दीर्घ आयुवाले हो जो अलौकिक देखा हो सो कहो भुशुंडने कहा योग नाम चित्तकी एकाग्रताके करनेवाले का नाम योगीहै अरु चित्तकी एकाग्रताके न करके वाले का नाम अयोगीहै सो योगी चैतन्यके आभास सहित मनरूपी जीव योगका कर्ता है तातें मनरूप जीव योगीहै मनका धर्म एकाग्रता न एकाग्रता रूप योग अयोगके भावाभाव सहित जो मनके सर्व व्यवहारको अंतर जानताहै सोई परमयोगी है सो ऐसा परमयोगी अनंत नित्य चिद्रूप प्रत्यक् आत्माहै तिस पूर्वोक्त प्रत्यक् आत्माको सम्यक् जो अपना स्वरूप जानताहै सो पुरुष परमयोगीहै नेति धोती जल पखालके करने वालेका नाम न समान योगीहै अरु न परम योगीहै हे वशिष्ठजी अनंत ब्रह्मांड होगये हैं अरु अनंत होवेंगे परंतु चैतन्यकी दृश्य रूपता करके तथा मायामात्र रूपता करके तथा पंचभूत रूपता करके तथा शब्दादि पंचविषय रूपता करके तथा श्रोत्रमनादि इंद्रिय रूपता करके तथा सात्विकादि त्रिगुणरूपता करके तथा काम क्रोधादि रूपता करके जैसे यह वर्तमानमें ब्रह्मांड है तैसेही अतीत ब्रह्मांड होगये हैं तथा आगे होवेंगे कदाचित् विलक्षणता होतीभी है तो भौतिक पदार्थोंमें होती

देखीहै पूर्वोक्त प्रकार कर नहीं देखी हे वशिष्ठजी बहुत जीवनेसे कछुलाभनहीं अरु थोड़ाजीनेसे कछु हानि नहीं परंतु सम्यक् आत्मबोध पूर्वक जीना ही सफलहै अन्यनहीं वास्तवतें पूछो तो यह सर्व अज्ञानी जीवभी चिरंजीवीहैं काहेते अनेक प्रलय इनोने देखीहैं अरु अनेक देखेंगे अनेक वार अनेक ब्रह्मांडोंमे इनकी उत्पत्ति हुईहै अरु होवेगी इसीते सर्व अज्ञानी जीव चिरंजीवी हैं परंतु अविद्या कर आच्छादित हुये हुये इनको ज्ञाननहीं अरु इस विद्वान शरीरका अनेक महा प्रलयतक प्रारब्ध कर्म है अनेक स्वरूपका सम्यक् ज्ञान पूर्वक इस शरीर का जीनाहै यह ईश्वर की नेति ऐसे हीहै इतनाही जीवोंके चिरंजीवतामें तथा मेरे में भेदहै अधिक नहीं जैसे स्वप्नमें सर्व जीवोंकी आयु समानही है न्यूनाधिक भावनहीं एक स्वप्नद्रष्टाही चिरंजीवी है अन्यनहीं तोभी अविद्याने किसी स्वप्न नरमें चिरंजीवता प्रतीति करारक्खी है किसी स्वप्न नरमें अचिरंजीवता प्रतीति करारक्खीहै वास्तव ते नहीं अविद्याकी विचित्र महिमा है एक कालावछेदकर स्वप्न सृष्टि उत्पत्ति होतीहै निद्रारूप अविद्याके अभावते एकही कालावछेद कर नाश होताहै कहो चिरंजीवी औ अचिरंजीवी कौन हुआ परंतु तिसी स्वप्न सृष्टिमें किसी स्वप्न नरको तो युगोंकी तथा कल्पोंकी पंगती व्यतीत होती प्रतीति होतीहै किसीको उसीकालमें चार घटिकाही व्यतीत होती प्रतीत होतीहैं किसीको क्षणकही प्रतीत होताहै किसीको वही काल चित्त देश विषे होनेवाले स्वप्नमें अनंत योजनो सहित अनंत ब्रह्मांड प्रतीति होतेहैं इत्यादि अविद्याकी महिमा कहांतक लिखें ताते चिरंजीवी एकचिद वस्तु है अन्य सर्व मायामात्रहैं वशिष्ठ तूष्णी भया अरु रोमश ऋषि आवत भये अरु कहत भये हे साधो यह मिथ्या मन वाणी का गोचर परिछिन्न दृश्य वस्तु दृष्टासाक्षी चैतन्य निर्विकार आत्माका रोम मात्रभी बिगाड कछु नहीं करता जैसे आकाशका पृथिवी अप तेज वायु तथा तिनके कार्य आकाश में स्थित हुये हुये आप अपना व्यवहार करतें हुयेभी आकाशका किंचित् मात्रभी विकार नहीं करसक्ते तैसे सर्व देह इंद्रिय मनादिकोंके व्यवहार में साक्षी आत्मा निर्विकार रहताहै कदाचित्तभी अपने असंग स्वरूपको नहीं त्यागता यमकिंकरने कहा हे रोमशऋषि सुनतेहैं कि ब्रह्मा मरताहै तो रोमशऋषि एक रोम उखाड़ कर फेंक देताहै यह बात कैसे

है रोमशने कहा यह लौकिक व्यवहार है वैदिक नहीं परंतु इस में आत्माकी तथा दृश्य वर्गकी अनंतता बोधनहै और कछु तात्पर्य नहीं है हे साधो जैसे तुच्छ आयुवाले जीव सदा जीवनेकी इच्छा रखतेहैं जीनेसे तृप्तहोते नहीं तथा जैसे अज्ञानी मरने ते भय करते हैं तथा चक्षु आदिक इंद्रिय रूपादिक विषयोंको ग्रहण करनेमें धापते नहीं तथा शरीरकी अरोगता चाहतेहैं इत्यादि अनेक व्यवहारोंमें पश्चात्ताप तथा विलाप करते हुये ही जैसे शरीरको त्यागतेहैं तैसेही अज्ञानी दीर्घआयुवालोंका हालभी सम्यक् ऐसेही जानना यह व्यवहार सब विद्वानोंका अनुभव है बल्कि ज्ञानीकोभी जीवना अच्छा लगताहै मरना बुराही लगता है ताते नित्य चिद अनंत निज स्वरूप आत्माका सम्यक् बोधही श्रेष्ठहै न्यूनाधिक जीवना श्रेष्ठ नहीं हे यमकिंकर असली विचारकी बात सुन जैसे बहुते स्वप्न नर किसी स्वप्न ऋषि पुरुषको कहें हे ऋषि असुक स्वप्नका ऋषि स्वप्नावीके मरे वा स्वप्नावीके जागते एक अपना रोम उखाडके फेंक देताहै काहेते स्वप्नावी हमारे पिताने रोज मरना ठहरा हम रोज कैसे क्षौर कराते तकलीफको पातेहैं हे साधो तुम अपने मनमें शोच देखो कि स्वप्नावीके मरनेसे वा स्वप्नावीके जागनेसे स्वप्न पुरुष पीछे कहां रहैंगे किंतु नहीं रहैंगे काहेते स्वप्नसृष्टी स्वप्नावीके संकल्पमें है अन्यमें नहीं तैसेही समष्टी हिरण्यगर्भ परमेष्टीके वा शबलब्रह्म विष्णुके वा माया विशिष्ट चैतन्य ईश्वरके संकल्पमें अस्मदादिकों सहित सर्व सृष्टि है तिसके संकल्पके अभावसे अस्मदादिकोंका शरीर पीछे रहना कैसे होगा अरु शरीर विना रोम उखाड़ना कैसे होगा जो कहो हिरण्यगर्भ समष्टीके संकल्पसे अस्मदादिकोंके शरीर बाहरहैं तो जैसे दूसरेके स्वप्नद्रष्टाकी सृष्टिको तथा स्वप्नद्रष्टाको तथा स्वप्नद्रष्टाके मरनेको तथा तिसके हर्ष शोकको सारांश यह कि तिसके सर्व न्यूनाधिक व्यवहारको दूसरा स्वप्न सहित स्वप्ननर जान नहीं सक्त तैसेही हिरण्यगर्भकी संकल्पित सृष्टि सहित हिरण्यगर्भको और हिरण्यगर्भकी कल्पित सृष्टीके बाहर अस्मदादिकोंके शरीर जान नहीं सक्के अरु जो हिरण्यगर्भके संकल्पमें अस्मदादिकोंके शरीरहैं तोभी पूर्वोक्त रीतिसे हिरण्यगर्भको निज आयुके क्षय ते सर्व संकल्पको त्यागके विदेह कैवल्यको प्राप्त होताहै अस्मदादिकोंके शरीरही पीछे न रहनेसे रोम उखाड़नादि व्यवहारभी नहीं बन सक्ता ऐसे

जब रोमशने कहा तो सबने सच्ची वात सुनकर श्लाघा करी अरु वड़ा हर्ष हुआ तिसी समयमें अश्विनीकुमार आवत भये अरु कहते भये हे सभा अनंत चिद सत्य रूप निजात्मा साक्षी सूर्य है यह ब्रह्मांडरूप संघात साक्षी चैतन्य रूप सूर्यका रथ है समष्टी बुद्धिसे अभिन्नही यह व्यष्टि बुद्धि रूपी अश्विनी (घोड़ी) तिस रथके आगे जुड़ी हुईहै तिस पूर्वोक्त बुद्धि रूपी अश्विनी ते नाम रूप अश्विनीकुमार हम दोनोंकी उत्पत्ति हुई है इसी तेही नाम रूप हम दोनो अश्विनीकुमार इकट्ठे रहतेहैं [illegible]किंकरने कहा हे अश्विनीकुमारो तुम कहाँ कहाँ रहते हो अश्विनीकुमारोंने कहा हे यमकिंकर मन वाणीते अगोचर जो प्रत्यक् [illegible] अपरोक्षहै तिस विषे हम नहीं रहसक्ते तिसते पृथक् माया अरु मायाके सर्व कार्यमें हम पूर्ण होकर रहतेहैं यद्यपि पृथिवी आदिकोंकी अपेक्षासे वायु आकाश[illegible]यामें रूप शास्त्र दृष्टीसे तथा प्रत्यक्षादि प्रमाणसे रूप प्रतीत नहीं होता परंतु चेतनकी अपेक्षासे वायु आकाश मायादि रूप रहित नहीं काहेते चैतन्यकी दृश्य होनेते जो जो दृश्य होताहै सो सो नाम रूप स्वरूपही होताहै जैसे अस्मदादिकोंकी दृष्टीसे परमाणु सूक्ष्म रूप रहितहैं परंतु आकाशकी दृष्टिसे नहीं तथा सूर्य जैसे सुमेरुको प्रकाशताहै तैसे मणियोंको प्रकाशताहै अरु हम देववैद्यहैं समष्टी ब्रह्मांडसे अभिन्न जो यह व्यष्टी संघात रूप स्वर्गहै तिसमें हम मूर्तिधार कर विशेष रहते हैं प्रत्यक् साक्षी चैतन्य इस स्वर्गका महान इंद्रहै मन गुरु बृहस्पतिहै श्रोत्रादि क इंद्रिय देवता हैं जीव केवल इंद्रहै हे यमकिंकर जो पुरुष हमारी विचार रूप मृत्यु संजीवनी ओषधी अंतर खावेगा तिसका अज्ञान रूप रोग चलता रहेगा यमकिंकरने कहा विचार रूपी ओषधी कहो अश्विनी कुमार कहते भये हे यम किंकर एक द्रष्टा पदार्थ है एक दृश्य पदार्थहै तीसरा पदार्थहैही नहीं द्रष्टा दृश्य नहीं होता दृश्य द्रष्टा नहीं होती दृश्यका कोईभी धर्म द्रष्टाको स्पर्श नहीं कर्ता यह नेम अति प्रसिद्ध है चक्षु दीपक सूर्यादिकों विषे देखनेमे सर्व लोकोंको आवैहै ताते जो जाननेमें आवैहै सो दृश्यहै जाननेवाला द्रष्टाहै सारांश यह कि जो जो ज्ञानका विषयहै सो सो दृश्य असत जड दुःख रूप कोटिमे है अरु जो स्वयंप्रकाश ज्ञानहै जिस ज्ञान कर मायासे आदि लेकर देह पर्यंत सर्व दृश्य जानी जातीहै सो ज्ञान स्वरूप कर ज्ञान एकही है सो ज्ञान सत् चित् आनंद स्वरूप आत्मा साक्षी द्रष्टाहै सो साक्षी द्रष्टासे परमात्मा पर

मेश्वर ईश्वर गोविंद नारायणादिक भिन्न माने तो सर्वको असत जड दुःख रूपता तथा दृश्य रूपता बलात्कार आवेगी काहेते सतते भिन्न असत है चैतन्यते भिन्न जडहै सुखते भिन्न दुःखहै दृष्टाते भिन्न दृश्य है ताते सत् चित् सुखरूप दृष्टा साक्षी आत्मवस्तुके अंतर्गतही ईश्वरादि नामोंकरके प्रतिपाद वस्तु होगी पृथक् नहीं जो पृथक् मानो तो पूर्वोक्त उनकी असत आदिगति होगी ताते इस प्रकरणमें महावाक्यों विषे जीव ईश्वरका भिन्न भिन्न लक्ष वाचका कथन तथा वाच वाच भागत्यागके लक्ष लक्षकी एकता लक्षणासे करणा केवल परिश्रम हीहै हेयमकिंकर पूर्वदृष्टा साक्षी आत्मा कैसाहै सर्वके अंतर स्थित हुआ हुआ भी स्वरूपसेही बंध मोक्षादि धर्मोंते रहित है जैसे आकाश स्वरूपसे ही सर्वमे स्थितभी अस्पर्शहै हेयमकिंकर यह अधिकारी पुरुष अपनी शुद्धबुद्धिसे वा संतोंके संगसे विचार करके इन दृष्टा दृश्य दोनों पदार्थोंमें मैं कौनहों दृष्टाहों वा दृश्यहों जोमैं दृश्यहोंवो तो दृश्यको मैं जानो कैसे जो दृश्यको जानताहै सो दृश्यनहीं होता जैसे चक्षु रूपको जानतेहैं रूपस्वरूप नहीं होते तैसेही मैं सुषुप्तिमें अज्ञानसे आदि लेकर जाग्रतमें देह पर्यंत सर्व नामरूप दृश्यको मैं प्रकाशकर्ताहों नाम जानता हों ताते मैं दृश्य कदाचित् भी नहीं बनसक्ता। बाकी शेष दृष्टा ही मैं सम्यक् निश्चय करके हों अन्य दृश्यनहीं हेयमकिंकर जब इस अधिकारीने अपनेको सम्यक् दृष्टा जाना तो बंध मोक्षादि सर्व कर्तव्यों ते रहित निष्कलंक स्थित हुआ हुआ विराजमान् होवेगा काहेते दृष्टामे कोईभी बंध मोक्षहै नहीं बंध मोक्षादि प्रपंचकी अपने स्वरूप दृष्टाविषे निवृत्ति प्राप्तिवास्ते कर्तव्य भी कछुनहीं जो बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते कर्तव्यकर्त्ता है सो भ्रमजन्यहै जिसने अपने दृष्टास्वरूपको सम्यक् जानाहै सो बंध मोक्षके फिक्र ते रहित हुआ व्यवहार परमार्थ दोनोंमे आनंद लूटताहै अरु जो ऊपरसे बंध मोक्ष भ्रमसे रहित आपको कथनकर्ताहै अंतरसे सम्यक् भ्रम दूर नहींहुआ सो अधिकारी पुरुष व्यवहार परमार्थ दोनोंविषे तपायमान दुःखी रहताहै यमकिंकरने कहा तपायमान क्यों रहताहै अश्विनीकुमारने कहा मायाके कार्य जो वैराग शम दमादि दैवीगुणहैं अरु काम क्रोधादिक जो आसुरी गुणहैं सो स्थूल सूक्ष्म शरीरोंमें न्यूनाधिक भाव अनात्म धर्महैं तिनको अपने धर्म मानके तपाय

मान होताहै काहेते सम्यक् अपने द्रष्टा प्रत्यक् आत्माका अनुभव होनेते अरु स्वभावसेही सर्व दृश्य अरु दृश्यके धर्मोंते रहित
अलिप्त साक्षी द्रष्टा आत्माहै कर्तव्यसे नहीं इसके प्रतिपादन करने वाले शास्त्रमें सम्यक् तिनका विश्वास न होनेते हेयम
किंकर जिसको सम्यक् अपने स्वरूपका अनुभव भयाहै सो किसीभी शास्त्रकी कछु अपेक्षा नहीं रखता काहेते आंखोंदेखी
चीज़में संशय नहीं होता मायासे लेकर देहपर्यंत सर्वद्रष्टा आत्माकी दृश्यका स्वभावसे ही कोईभी धर्म द्रष्टाको स्पर्श नहींकर्ता
सम्यक् जाननाही कर्तव्यहै करना कछु नहीं ताते सम्यक् अपने स्वरूपको न जानना ही तपनेका हेतुहै दूसरा नहीं जैसे भेदवादि-
योंको वा निष्कपट श्रद्धा सूधे शरीरको गुरुशास्त्र जो परोक्ष बातभी पकड़ा देताहै सो मृत्यु पर्यंत छोड़ते नहीं वैसेही तपनेवाला जो
वेदांती है तैसे तिसकी श्रद्धा नहीं है यह नहीं विचारता कि जो परोक्ष विष्णु शिव गणेशादिकोंके प्रतिपादक शास्त्र तथा मीमाँसा-
दिक पंचशास्त्र जो सत्हैं तो वेदांत शास्त्रभीछेवां सत्है जो वह असत्हैं तो यहभी असत्हैं ताते आप सहित सर्व हरिहै इस दृढ़ श्रद्धा
पूर्वक भावना रूप उपासनासे भी ताप नहीं होता तिस समय अगस्त्य अरु अंगिराऋषि आवत भये अंगिरा कहते भये हे साधो
चार वेद चार उपवेद षट् तिनके व्याकरणादिक अंग अरु षटशास्त्र अरु पुराण इत्यादिक सर्व विद्या अपर विद्याहै नाम निकृष्ट विद्या
कहतेहैं साधारण भाषा वाणी कर चाहे फारसी कर चाहे अंग्रेजी कर चाहे संस्कृत कर चाहे दक्षिणी भाषा कर चाहे बंगाली भाषा कर
चाहे किसी देशांतरकी भाषा कर अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जगविध्वंस प्रकाश अवेदत्व सदापरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धा
नंदका सम्यक् बोध होवे सोई परमविद्याहै नाम उत्कृष्ट विद्याहै ताते येनकेन भाषा कर वा संस्कृत कर सम्यक् अपने स्वरूपका
बोधकही परमविद्याहै तिस सभा में अगस्त्य बोलते भये अगस्त्य नाम प्रत्यक् अभिन्न परमात्माकाहै सारांश यह कि अगस्त्य नाम
अक्रिय पदार्थकाहै वा सूर्यकाहै सो अगस्त्य नाम परमात्मा प्रलयकालके आदिमें सूर्यरूप होकर सर्व समुद्रादिकोंके जलको
पान करलेवैहै पुनः कोई काल पीछे महाप्रलयके आरंभ कालमेंही पुनः हाथीके शुंड तुल्य जलधाराको त्याग देवैहै वा हमेशा सालके

103

साल ग्रीष्मऋतुमें अगस्त्य नाम सूर्य जलको अपनी किरणों द्वारा जलपान करलेवेंहै चातुर्मासमें त्याग देवेंहै वा सर्व जीवोंके सुख दुःखका अनुभव रूप भोग देनेवाले कर्मोंके उपराम होने ते अगस्त्य रूप परमात्मा सर्व नामरूप प्रपंच रूप जलको अपनी माया शक्तिमें खैंच लेताहै पुनः जब भोग देनेके सन्मुख कर्म होतेहैं तो अगस्त्य रूप परमात्मा नाम रूप प्रपंच रूप जलको त्याग देताहै नाम सूक्ष्मसे प्रगट कर्ताहै इसीते तिस प्रत्यक् अभिन्न परमात्माका नाम अगस्त्यहै जो ऐसे नहीं माने कि अगस्त्यऋषिनेही पहले समुद्र मधुर था किसी निमित्तसे पान करके पुनः लघु शंकावाले रस्तेसे निकासनेते खारा होगया है ऐसे माने तो धाता जो ईश्वरहै जैसे पूर्वकल्पमें जगत्की मर्यादा थी तैसेही उत्तरकल्पमें मर्यादा रचता भया इस मंत्रकी अवस्था नहीं लगेगी अरु जो ऋषिसे ही माने तो मंत्रका अर्थ ऐसा लगे कि हमेशह कल्पके कल्प पहले ईश्वर इस समुद्रको शुद्ध जलका रचताहै पीछे अगस्त्य ऋषि पीकर लघुशंके कर देताहै इसते खारा हो जाताहै सो यह बात विद्वानोंके अनुभवसे मिले नहीं अरु सतशास्त्रसेभी मिले नहीं काहेते ब्रहदारण्यकके पंचम अध्यायमें याज्ञवल्क्य भुजुके प्रसंगमें तथा जगत् की अनेक उत्पत्ति प्रसंग में इस समुद्रको पहलेसे ही खारा लिखतेहैं यह नहीं लिखते कि पीछे अगस्त्य ऋषिने खाराकरा है ताते अगस्त्य नाम सूर्य का भी है सो महाप्रलयके आदि कालमें वा हमेशह सालके सालमें जल खैंचलेता है पुनः त्यागदेताहै यही हाल क्षीर समुद्र मथनेका तथा चौदह रत्ननिकासनेका जानलेना काहेते पूर्व समुद्र प्रकरणकी न्याईं हरएक कल्पमें पहले चंद्रमादि रत्नों रहित यह जगत् उत्पन्न होता है पीछे देवता दैत्य क्षीर समुद्रको मथके चंद्रमादि रत्नोंको निकासते हैं सो वेद अनुभव से विरुद्धहै काहेते यह वेद मूलमें तथा ब्राह्मणमें तथा धर्मशास्त्र रूप स्मृतियोंमें तथा सम्यक् जगत्की उत्पत्ति पालना प्रकरण में यह बात कहीं भी लिखीनहीं काहेते श्रुतिमें रयीरूप चन्द्रमाको भोग्य लिखाहै अरु सूर्यको भोक्ता लिखाहै भोक्त भोग्य मयहो यह सर्व संसार है जो पुरुष सूर्य चंद्रमाको भोक्ता भोग्य मय सर्व संसार रूप जानकर उपासना करता है सो उत्तम सुखको प्राप्तहोताहै ऐसे लिखाहै जो चंद्रमा पीछेहोवे तो चंद्रमा से प्रथम होनेवाले

वेदवाक्यकी व्यवस्था न होगी तथा भोग्य विना भोक्ता की सिद्धी नहीं होती ताते सूर्यभी जगत्की उत्पत्तिके पीछे ही उत्पन्न होना चाहिये सारांश यहकि भोक्ता भोग्यमयही संसार है अगस्त्यनाम भी ईश्वरकाहै तथा ऋषि नामभी ईश्वरका है ताते अगस्त्यऋषिनाम ईश्वरका तथा महान तपस्वी ब्राह्मण अगस्त्यकी नाम संज्ञा एक होनेते ऋषिका नाम लेते हैं वा इसमें तपकी महिमा जानीतीहै ताते जगत्के पीछे जगत् होता भया यह अर्थ अनुभवशास्त्रसे मिलै नहीं ताते यह अर्थ जानना शुद्ध माया वा अज्ञान क्षीरसमुद्र जानना जगत् रचनेकी ईश्वर इच्छा मंदराचल पर्वत जानना ईश्वरकी क्रियाशक्ति शेषनाग जानना जीवोंके पुण्य पाप रूप देवता दैत्य जानने ईश्वरकी ज्ञानशक्तिको कूर्म (कछुवा) जानना जिनने मंदराचलको सहन कराथा काहेते ईश्वरकी ज्ञानशक्तिसे ही यथायोग्य यह जगत् धारण होवैहै पूर्वोक्त क्षीर समुद्र मंथन करने ते पंचज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेन्द्रिय चतुष्टय अंतःकर्ण प्राण कर्मेंद्रियोंके भीतरही जानलेने काहेते कर्मेंद्रिय तथा प्राणभूतोंकी रजो अंशते उत्पन्न होनेते तथा तिनके देवता तथा तिनके विषय यह चौदह प्रकारकी त्रिपुटी रूप चौदह १४ रत्न भोक्ता भोग्य मय संसार उत्पन्न होता भया यह यथार्थवक्ता अगस्त्यका वाक्य सुनकर सर्व सभा प्रसन्न होती भई तिसी समयमें काल भगवान आवतभया अरु कहता भया हे सभासद विद्वानलोको काल तीन प्रकार का है एकका नाम केवल काल है एक महाकाल है एक अति काल है सत् चिद आनंद स्वरूप प्रत्यक् आत्माके अज्ञानते उत्पन्न भया जो काल देश सहित भूत भौतक सूक्ष्म स्थूल जगत् है तिस जगत्के मध्यमें मैं केवल काल हौं कैसा भीमैं हों जबलग अज्ञान रूप पिता मुझका जीता है तबतकही मेरी भाइयों सहित आयुहै पीछेनहीं हे विद्वानो मुझ केवल काल करकेही जगत्की उत्पत्ति पालना तिरोभाव होताहै मुझ करही जीवोंके स्थूल शरीर जीर्ण होतेहैं पुनः नवीन उत्पन्न होतेहैं परंतु मुझ केवल कालकर सूक्ष्म शरीर न जीर्ण होतेहैं न उत्पन्न होते हैं पूर्वोक्त सर्वके निजस्व रूप अधिष्ठानके अज्ञानते स्थूल सूक्ष्म संसार रूप वगीचारचाहै तिस स्थूल वगीचेका मुझको मालीपना सिपुर्दकरा है जैसे माली जीर्ण

झाड़ोंको काटके नवीन लगादेताहै कदाचित्त नवीनभी झाड़ शोभादायक नहीं होते तो तिसको भी काटके अन्यस्थान में लगा देताहै परंतु बीजका नुकसान नहीं कर सक्ता काहेते बीजविना झाड़ कहांसे होगा सारांश यहकि मालीही वगीचे की सफाई तथा गुलजार रखताहै तथा जब वगीचा देखें तब वैसेका वैसाही दिखताहै नदी प्रवाहवत तैसेही पिता अज्ञानने मुझ केवल कालको स्थूल संसार रूप वगीचे का माली कराहै सो मैं मालीकी न्याई जीवोंके कर्मोंके अनुसार स्थूल शरीरोंको तथा अन्य स्थूल पदार्थोंको तोड फोड़कर तथा नवीन पैदाकर वैसेका वैसाही गुलजार प्रतीति करा रखताहों जैसे माली झाडोंको तोड़े फोड़े नहीं तथा नवीन लगावे नहीं तो वगीचे की शोभा जाती रहती है काहेते बहुत प्राचीन झाड कोई सूख जाताहै कोई फल नहीं देताहै तैसे मैं स्थूलपदार्थोंको जीर्ण पुनः नवीन नहीं करों तो संसार रूप वगीचेकी शोभा जाती रहे ताते मैं इस स्थूल संसार वगीचेकी सफाई करने वाला केवल कालरूप मालीहों परंतु ब्रह्मा विष्णु शिवादिकों की स्थूल मूर्तियोंको भी मैं नाश करताहों मैं नहीं छाँडता चाहे ब्रह्मादिकों से पूछलेउ अन्यकी क्या वातहै पूर्वोक्त अज्ञान पिता काही पुत्र अरु हमारे भाई ऐसा जो सर्व नाम रूप कल्पित संसारका अधिष्ठान जो अनंत चिद् सत स्वरूप बुद्धि आदिकोंका साक्षी आत्माहै तिसका जो सम्यक् बोधरूप ज्ञानहै सो महाकालहै काहेते अपने अज्ञान पिताका तथा पिताके कार्यरूप मुझ केवल काल भाइ सहित परिवारका एक कालावछेदकर नाश कर देताहै सारांश यहकि सर्व कार्य कारण प्रपंचमें सम्यक् मिथ्यत्व दृष्टि करादेताहै ताते पूर्वोक्त सर्व कल्पित संसारके अधिष्ठानका ज्ञानहीं महाकालहै यमकिंकरने कहा हेदेव परिवार सहित अपने पिता माताको ज्ञानरूप महाकाल क्यों मारताहै कालने कहा हे यमकिंकर वस्तुका स्वभाव अपना विगाना नहीं देखता जैसे अग्नि अपने उत्पात्ति कर्ताको तथा अपने पूजक को तथा अपने अपकारीको स्पर्श करने से दग्ध कर देतीहै जैसे विच्छू अपनी माताको नाशकरही उत्पन्न होताहै जैसे वाँसोंसे ही अग्नि उत्पन्न होतीहै पुनः वाँसोंकोही जलातीहै जैसे कोई राजाका दुष्टनौकर राजासेही वृद्धिको प्राप्तहोकर पुनः राजाकोही नाशकर्ता है इत्यादि अनेक दृष्टांतहैं तैसे यह ज्ञानभी अपने कारणको नाशकरता हुआही उत्पन्न होताहै

इसांते ज्ञान महाकाल रूपहै मुझ काल सहित सर्व कारण कार्य जगत्के मिथ्यत्व निश्चयका नामही भक्षण है तैसेही सत् चित् आनंद स्वरूप प्रत्यक् आत्मा अतिकाल रूपहै काहेते ज्ञानरूप महाकालको भी यह पूर्वोक्त साक्षी आत्मा भक्षण कर जाताहै जैसे अग्नि सर्वको दाहकर आपभी समान रूप महाअग्निमें लीन होजातीहै जैसे निर्मली जलकी मलीनताको दूर करके आपभी नीचे बैठ जातीहै इत्यादि अनेक दृष्टांतहैं विस्तृत भयसे लिखेनहीं तैसेही ज्ञानरूप महाकाल मुझ सहित सर्वकल्पित जगत्की निवृत्ति करके नाम मुझ सहित सर्व नाम रूप जगत्में मिथ्यत्व निश्चय कराके वा अभाव निश्चय कराके वृत्तिरूप ज्ञानभी प्रारब्ध प्रतिबंधकके नाश हुये पीछे आपभी साक्षी चैतन्यमे लीन होजाताहै ताते हे विद्वान लोगो सच्चिदानंद प्रत्यक् मनादिकोंका साक्षी आत्माही अतिकाल है सो अतिकाल आत्माही ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका निज स्वरूप है जो अधिकारी अपने अतिकाल स्वरूपको सम्यक् स्वतःही बंध मोक्षते रहित जानताहै कि मैं बुद्धि आदिक सर्व दृश्यका द्रष्टा साक्षी चैतन्य निर्विकार निर्विकल्पहों ऐसे दृढ अपरोक्ष निश्चय कर्ताहै सो मुझ केवल स्थूलके नाश करने वाले कालके भयते भयनहीं करता जैसे स्वप्नावीके निद्रारूप अज्ञानते देश काल सहित सर्व स्वप्नसृष्टी उत्पन्न होतीहै अरु स्वप्न नर सत जानता है सो स्वप्न स्थूल सृष्टिकोही स्वप्नका काल नाशकर्ताहै तिसकालते पुरुष भयकर्तेहैं कदाचित्त स्वप्नके गुरु शास्त्रसे स्वप्न पुरुषको अपने स्वप्नावी स्वप्न अधिष्ठानका सम्यक् ज्ञान होताहै तो अज्ञान देश काल सहित सर्व स्वप्न सृष्टीको मिथ्या निश्चय जानताहै वा स्वप्नावी अधिष्ठान विषे अत्यंताभाव निश्चय जानताहै यही तिस ज्ञानका सर्वको भक्षण करना है कोई दृश्यकी अप्रतीतिका नाम भक्षण नहीं जैसे घटकंबूग्रीवावान् प्रतीति होता हुआभी घटनाम उच्चारण होताहुआ भी जलका धारण रूप वा जलका ल्यावना रूप क्रिया देताहुआ भी परंतु सम्यक् मृत्तिकाके ज्ञानवाले पुरुषको पूर्वोक्त घटका मृत्तिकामे अत्यंताभावहै यह सब विद्वानोंको अनुभवहै अरु ठीक ठीक ऐसेहीहै कोई घटको चूर्णकरके वा किसीरीतिसे घटकी अप्रतीति होवे तबहीं घट मृत्तिका रूप होताहै वा अभाव होताहै यहनहीं स्वर्णादि अनेक दृष्टांतहैं अपनी अक्कसे जानलेना

सारांश यहकि जैसे स्वप्नद्रष्टाका ज्ञान स्वप्नसृष्टीको मिथ्यत्व निश्चय रूप वा अभाव निश्चय रूप भक्षण करजाताहै इसीते महाकालहै पुनः वह ज्ञान सहित पुरुष तथा ज्ञानकर वाधित हुईहुई सर्व स्वप्नसृष्टि किसी निमित्तसे निद्रारूप प्रतिबंधके दूरहोनेसे जिस स्वप्नद्रष्टाके अज्ञानसे हुईथी तिसी स्वप्नद्रष्टामें लीन होजातीहै यही तिसका भक्षणहै ताते स्व-प्नद्रष्टा अतिकालहै तैसेही सांगोपांग अपनी अक्कसे दार्ष्टांत विद्वानोंने जान लेना हे सभानिवासी पुरुषो मैं लौकिक केवल काल ब्रह्मासे लेकर चीटीतक सर्वकी स्थूलताको नाशकर्ताहों पुनः नवीन पैदा कर्त्ताहों परंतु सूक्ष्म सृष्टि मुझसे नाश पैदा नहीं होती वह ज्ञान रूप महाकालसेही मिथ्यत्व निश्चय रूप वा अभाव निश्चय रूप नाश होवेहै अन्यथा नहीं मुझ केवल काल करही अनंत वार स्थूल सृष्टि उत्पन्न होतीहै पुनः लीन होतीहै तात्पर्य यह कि लौकिक वैदिक सर्व व्यवहार मुझ काल करही होवेहैं पुनः लीन होवेहैं परंतु यह नहीं कि सृष्टि मिथ्याहै अरु मैं सत हों किंतु सृष्टिके साथही मेरी सत्ताहै पृथक् नहीं अतिकाल रूप आत्मामें मुझ सहित सर्व सृष्टि कल्पित मिथ्याहै परंतु नित्य सुख चिद् रूप प्रत्यक् आत्माने किसीको कोई भाव सिपुर्द कराहै कि सीको कोई सूर्यादिकोंको उदय अस्तादिकोंका कार्य सौंपाहै वह वैसाही करतेहैं जैसे जिसको जो व्यवहार राजाने सिपुर्दकराहै सो तिसी हुकुम की तामील करतेहैं अरु मुझको सर्व जीवोंके स्थूल शरीरोंका नाश उत्पन्न करनादिक काम सिपुर्द कराहै सो मैं तिसी हुकुमकी तामील वजाता हों कोई मुझमें बड़ाई नहीं कि काल सर्व स्थूलको नाश उत्पन्नादिक कर्ता है इस ते काल बड़ाहै सो नहीं जैसे स्वप्नका काल अरु सृष्टी तुल्यहीहै यमकिंकरने कहा हे यथार्थ वक्ता देव॥ कईक शास्त्रोंमें अज्ञानको मृत्यु नाम काल लिखा ह तथा शब्दादिक विषयोंको अतिकाल लिखाहै वा काम क्रोधादिकोंका काल लिखाहै अरु आपने महाकालका स्वरूप औरही कहाहै कालने कहा हे किंकर विचार देख अज्ञानसे तो सुख दुःख रूप जगत्की उत्पत्ति होतीहै कोई अज्ञान जगत्का नाशक नहीं लौकिक पितावत् जैसे रज्जुका अज्ञान सर्पादिकोंकी उत्पत्तिका कारणहै कोई सर्पादिकोंका नाशक नहीं स्वप्नादि अनेक दृष्टांतहैं तैसे शब्दा

दिक विषयही तो संसारहै सो विषय दुःख देनेवाले होनेते काल कहाहै सो विषय अपरोक्ष आत्मज्ञानीको तथा भ्रमज्ञानसे विषय लंपटको भी तथा ब्रह्मादिक ईश्वरोंको भी दुःख नहीं देसके अरु यह ज्ञान रूपतो महाकाल सर्व दृश्यको मिथ्यत्व निश्चय रूप वा अभाव निश्चय रूप भक्षण करजाता है इसी ते ज्ञानही महाकालहै आगे जैसे इच्छाहो तैसे मानो ऐसे कहकर काल तूष्णी भया तिस सभामें जगत्जननी माया जिसको प्रधान तथा प्रकृति अविद्या अज्ञानशक्ति भी कहते हैं सो मूर्तिधारकर आती भई अरु कहती भई हे पुत्रो मैं सत्व रज तम त्रिगुणात्मक रूपहों नित्य सुख चिद्रूप प्रत्यक् आत्माकी मैं शक्ति हों नमैं आत्माते भिन्न हों न अभिन्न हों नसवैव निरावैवहों उभय रूपताभी नहीं नमैं सतहों न असत हों न उभय रूपहों काहेते विरोधहोनेते किंतु अनिर्वचनीयहों जैसे अग्नि विषे दाहक शक्ति अग्निते भिन्न अभिन्न तथा उभय रूपता नहीं जैसे स्वप्नदृष्टामें निद्रारूप अविद्या भिन्नाभिन्न कछुनहीं कह सक्ते परंतु साक्षात् स्वप्न प्रपंच कार्य द्वारा निद्रा रूप अविद्याका अनुमान होताहै यह नहींकि स्वप्नदृष्टामें निद्रारूप अविद्यानहीं यद्यपि प्रत्यक्ष नहीं दीखती तौभी निद्रारूप अविद्या विना स्वप्न प्रपंच नहीं होता जो स्वप्न प्रपंचको अनुभव करने वाला स्वप्नदृष्टा भी चैतन्य वस्तुहै सोई जाग्रत अवस्थाके अनुभव करने वाला चैतन्य वस्तु अब वर्तमान भी हाजिर हुजूरहै परंतु अब जाग्रतमें स्वप्न प्रपंच नहीं है ताते जानीताहै जो स्वप्न जगत्का उपादान कारण निद्रारूप अविद्याही स्वप्न प्रपंचकी उत्पत्ति पालना संहार का कारणहै अरु स्वप्नदृष्टानिर्विकार असंगरूपहै यद्यपि निद्रारूप अविद्या अबभीहै तथापि कार्यके सन्मुख नहीं तैसे तुम मुझ मायाको जगत्की उत्पत्ति पालन संहारादि सर्व व्यवहारका निर्वाहिक जानो चैतन्य असंग पुरुष निर्विकार जानो परंतु मैं माया चैतन्यके भासको ग्रहण करकेही जगत्की उत्पत्ति आदि सर्व व्यवहार करनेको समर्थ होतीहों स्वतःनहीं काहेते स्वतःजड होने ते अरु मैं माया अरु मेरा यह सर्व नामरूप कार्य चैतन्य दृष्टाकी दृश्य होनेते मिथ्या मृगतृष्णाकी न्याई केवल प्रतीति मात्र मेरा अरु मेरे कार्यका स्वरूप है पृथक्नहीं अरु मैं माया अनेक अपने हाउ भाउकटाक्ष करती हों त

था सो मोहित करनेवाले अनेक विचित्र कार्य उत्पन्न करतीहों सारांश यहकि मैं अपना सर्व बल इस मनादिकोंके साक्षी चैतन्यके मोहित करने वास्ते कर्तीहों अरु सतको अपने बलसे असत अरु असतको सत जडको चैतन्य अरु चैतन्यको जड अरु सुखको दुःख अरु दुःखको सुख अरु पूर्णको अपूर्ण अरु अपूर्णको पूर्ण इत्यादि अनेक रूप अवास्तव इंद्रजालकी न्याई कर दिखलाती हों न वास्तवते तौभी प्रत्यक् आत्मा प्रसन्न अप्रसन्न नहीं होता तथा प्रसन्न करने वास्ते अनेक प्रकारके शांति आदि रस उत्पन्न करती हों परंतु नित्य सुख चिदरूप यह साक्षी आत्मा मुझ सहित मुझके चारेत्रोंका ऊपरका ऊपर द्दष्टाही रहता है कदाचित्तभी साक्षी आत्मा हर्ष शोकको नहीं प्राप्तहोता जैसे इंद्रजालीपुरुष अपने मायाकर रचे अनेक सुंदर असुंदर पदार्थोंसे आप हर्ष शोकको नहीं प्राप्तहोता अन्य होतेहैं देखो मेरी अवस्था नवीन जोबनवानहों तथा अत्यंत सुंदररूपहों तथा पतिव्रतहों काहेते अनंत चिद सत् स्वरूप प्रत्यक् आत्मा मुझके स्वामीते भिन्न सर्व नामरूप प्रपंच मेरा कार्य नाम बाल बच्चा होनेते शेष एक चैतन्य ही मुझका पतिहै परंतु ऐसे मुझ स्त्रीसे कदाचित् भी स्पर्श नहीं कर्ता जो मैं लीला रचों तिसते पहलेही स्थित हुआ हुआ मुझका तथा मुझकी लीलाका द्दष्टा रहताहै मैं क्षणमात्रभी तिसते भिन्ननहीं रहसक्ती हे पुत्रो चैतन्य तुम सर्व नामरूपका पिता है अरु मैं माया तुम्हारी माताहों ताते तुमको योग्यहै कि अपने माता पिताका सम्यक् स्वरूपजानो जो अपने माता पिताका सम्यक् स्वरूप नहीं जानता सो पुत्र नालायकहै काहेते द्दष्टा द्दश्यका सम्यक् स्वरूप जानना ही कल्याणका हेतुहै वर्तमान साक्षात् माता पिताके पुत्रको कोई अधिकारी पूछे कि तुम अपने माता पिताको जानते हो जो वह कहेकि मैं सम्यक् जानता हों तो उत्तमता तिसकी सिद्ध होतीहै अरु जो कहै मैं नहीं जानता तो नीचता सिद्ध होतीहै तैसे जो द्दश्य द्दष्टा रूप माता पिताको जानताहै सो उत्तमहै जो नहीं जानता सो नीचहै ताते तुम लोक अपनी नीचताके दूरकरने वास्ते सम्यक् अपने माता पिताको जानो व्यासने कहा हे मातेश्वरी तूही यथार्थवक्ता अपना तथा अपने पतिका सम्यक् स्वरूप कहो मायानेकहा हे पुत्रो असत जड दुःख परिछिन्न रूप मुझ सर्वकी जननी मायाका तथा नामरूप आकाशादि प्रपंच मुझके बालबच्चोंका सम्यक्

स्वरूप तुमने जानना अन्यथा नहीं तात्पर्य यहकि जो स्वरूपसे होवेनहीं अरु अधिष्ठानके अज्ञानते प्रतीति होवे सो अपने कार्य सहित मायाका स्वरूपहै स्वप्नवत् तथा मृगतृष्णाके जलवत्है तैसेही सत् चित् आनंद स्वरूप ब्रह्मसाक्षी आत्मा मुझके पति अरु तुम्हारे पिताका सम्यक् स्वरूप तुमने जानना अन्यथा नहीं सारांश यहकि आपको सर्वदृश्यका दृष्टा जानना मायासे लेकर देह पर्यंत अपनी दृश्य जाननी दृष्टा स्वभाव तेही बंध मोक्षते रहितहै काहेते बंध मोक्षकाभी दृष्टा होनेते ताते बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते प्रयत्न भ्रमसिद्ध है सम्यक् नहीं यह कहकर माया चलती भई अरु कश्यप ऋषि आतेभये और कहते भये हे सभासद जनो दैवी आसुरी गुणदोष रूप जो देवता दैत्यहैं मुझ कश्यप नाम चैतन्य तेही उत्पन्न [illegible] अरु मुझमेही लय होतेहैं परंतु मैं चैतन्य निर्विकारही रहताहों जैसे स्वप्नदृष्टा स्वप्नप्रपंचको उत्पन्न करताभी निर्विकारहै जैसे अनेक अंधेरी वर्षादिक उत्पन्न लय होतेभी आकाश निर्विकार है ताते मैंही चैतन्य सर्वाधिष्ठानहों मुझ चैतन्यको अपना स्वरूप जानो जो कालके भयते छूटोगे अन्यथा नहीं वा मन रूप कश्यप जानना प्रवृत्ति निवृत्ति तिस मन रूप कश्यपकी दिति आदिति दो स्त्रियां जानना तिनते दैवी आसुरी गुण देवता दैत्य होते भये जिसके शरीर में दैवीगुण अधिकहै सो शरीर स्वर्गवत् जानना अरु जिसके शरीरमे आसुरीगुण अधिकहै सो शरीर पातालवत जानना वा यह एकही शरीर स्वर्ग पाताल रूप जानना काहेते जब इसी शरीरमें अमानित्व अहिंसादिक दैवीगुण रूप देवतोंकी अधिकता तथा बलिष्टता अरु क्रोधादिक दैत्योंकी निर्बलता तथा न्यूनता होतीहै तब यही शरीर स्वर्ग रूप जानना जब इसी शरीरमें काम क्रोध लोभ मोह अहंकार दंभादिक आसुरी गुणरूप दैत्योंकी अधिकता तथा बलिष्टता तथा अमानित्व अहिंसा ब्रह्मचर्यादिक दैवी गुण रूप देवतोंकी न्यूनता तथा निर्बलताहोती है तब यही शरीर पाताल रूप जानना वा नरक रूप जानना जब दैवी आसुरी गुण रूप देवता दैत्य इस शरीरमें समरहें तो तब इसी शरीरको भूमि लोक जानना हे साधो पूर्वोक्त इसी शरीरमें दैवी आसुरी गुण रूप देवता दैत्योंकी लड़ाई होती रहती है तथा सर्वदा विरोध

रहताहै जब कभी दैवी गुण रूप देवता बली होजातेहैं तब शरीर रूप स्वर्गमें यह जीवरूप इंद्र परमशोभाको पाताहै अरु आसुरी गुण रूप दैत्य शोभा रहित हुये हुये मलीन भावको प्राप्त होतेहैं जब आसुरी गुण रूप दैत्य बली होजाते हैं तब इस शरीर रूप पाताल विषे दैत्य शोभायमान होते हैं देवता शोभा रहित होते हैं हे विद्वान् लोगो यह दैवी आसुरी गुण दोनो इस जीवको बंधनका हेतु हैं जैसे स्वर्णकी बेड़ी तथा लोहेकी बेड़ी दोनो बंधन का हेतु हैं अरु यह सभ दैवी आसुरी मनके धर्म हैं नाम बालबच्चे हैं प्रत्यक् साक्षी आत्माके यह धर्म नहीं मन अनित्य है काहेते सुषुप्ति में अपने बालबच्चे सहित अभाव हो जाताहै पुनः जाग्रत स्वप्नमें अपने बालबच्चे सहित उत्पन्न होताहै एक रस नहीं रहता इसीते अनित्य है जब यह पुरुष मनका नाशकर्त्ताहै तब सर्व बंधनोते छूटजाताहै परंतु मन और किसी भी उपाव कर नाश नहीं होता जिस नित्य सुख चैतन्य रूप आत्माते यह फुरना रूप मन उत्पन्न होता भयाहै तिसी में डालने से नाश होताहै सारांश यहकि सूर्यकी किरण सूर्य रूपहैं लालकी दमकां लाल रूप हैं तैसेही चैतन्य रूप सूर्य लालकी मन रूप किरणदमकां हैं पृथक् नहीं यही जानना ही मनका नाश करना है जैसे घटको तथा भूषणोंको मृत्तिका स्वर्ण रूप जानना यही घट भूषणोंका नाश है जैसे कोला किसी भी उपायसे सफ़ेद नहीं होता परंतु जिसके वियोगसे काला हुआ है तिसीमें डालदेनेसे तिसकी कालखता मिटती है अन्यथा नहीं सारांश यहकि मनको मिथ्या जाननाही मनका नाशहै ताते आपसहित सबको वासुदेव जानना यही परम उपदेश मुमुक्षुओंको है अन्य नहीं वा पूर्वोक्त दैवी गुणों संयुक्त जो पुरुष हैं सो देवता हैं अरु पूर्वोक्त आसुरी गुणोंकर जो पुरुष संयुक्त हैं सो दैत्य हैं इस भूलोकमें हीं रहतेहैं तिनका परस्पर विरोध हमेशह बना रहता है काहेते सच्चे पुरुषका अरु झूंठे पुरुषका एकत्व कैसे होगा किंतु नहीं होगा इत्यादि दृष्टांत अपनी बुद्धिसे जानलेना इन मनुष्योंमें ही देवता दैत्य संज्ञाहै धर्मात्मा राजाही इंद्र है अरु अधर्मात्मा राजाही दैत्यराजहै ऐसे कह कर कश्यपऋषि तूष्णी होजाते भये तिस समय मनु भगवान आ ते भये अरु कहते भये हे साधो यह जगत् मनोमात्रहै जैसे संकल्प मन दृढ़कर्त्ता है, तैसेही भासताहै जो देह सहित जगत्का

सत संकल्प कर्ताहै तो सत भान होताहै असत संकल्प दृढ़ कर्त्ताहै तो असत भासताहै जैसे एकही स्त्रीमे अनेक पुरुषोंके अनेकही संकल्प होतेहैं तिनको एकही स्त्री आप अपने संकल्पके अनुसार अनेक रूप पुरुषोंको प्रतीत होतीहै ताते मैं देह नहीं किंतु मैं प्रत्यक् साक्षी आत्मा हों यही निरंतर दृढ़ संकल्प करे तो काल पायकर वैसेही हो जावेगा अरु चूना मट्टीसे यह संसार किसीने बनाया नहीं अरु न बनसक्ताहै केवल समष्टी वा व्यष्टी मनके फुरने कर हुआहै जब लग फुरनाहै तबहींतक जगत् है जब फुरना नहीं तब सुषुप्ति आदिकों में जगत्भी नहीं अपना सत् चित् आनंद रूप [illegible] आत्मा एकरस विकार शून्यहै और सर्व मन वाणीके गोचर पदार्थ एक रस नहीं जैसे स्वप्नका प्रपंच केवल मनोमात्रहै एक रस नहीं स्वप्नद्रष्टाही एक रस नाम एक रूपहै तैसे जाग्रत स्वप्न सुषुप्त्यादि सर्व पदार्थ परस्पर व्यभिचारीहैं एक आत्माहीं अव्यभिचारीहै आत्मा व्यभिचारी नहीं यमकिंकरने कहा हे मनु शास्त्रमें लिखाहै कि मनु शतरूपाते सृष्टि भई है सो कैसे है मनुने कहा हे साधो मनु नाम चैतन्य पुरुषका है शतरूपा नाम प्रकृतिका है सो प्रकृति पुरुषके संयोग ते यह सृष्टि उत्पन्न होतीहै नहीं तो मनु शतरूपा कहांसे उत्पन्न भये जो कहो ब्रह्माते तो ब्रह्मा कहाँसे उत्पन्न भया जो कहो ब्रह्मा विष्णुते तो विष्णु की व्यक्ति किसते होती भई जैसे तरंगसे तरंग नहीं होता जलसेही तरंगादिक होतेहैं ताते जैसे स्वप्नद्रष्टाके अरु निद्रा रूप अविद्याके संयोगतेही स्वप्न सृष्टि होतीहै अन्य हेतु नहीं स्वप्न सृष्टि ते स्वप्न सृष्टि नहीं होती सो चैतन्य पुरुषही तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का साक्षी आत्मा स्वरूपहै यह कह कर मनु तूष्णी भये एते में सर्व जगत्का स्वामी जो परमात्मा है सो मुमुक्षुओंके निःसंदेह अपरोक्ष अपने स्वरूपका बोध कर्नेवास्ते दिव्य मूर्तिको धार कर तिस सभामें आते भये सर्व सभा उठ खड़ी हुई अरु सब दंडवत प्रणामकर स्तुति कर्ने लगे हे परमेश्वर सर्व रूप तुमहींहो अरु असर्व रूपभी तुमहीं हो सर्व जगत्की उत्पत्ति पालना संहार कर्तेभी आप निर्विकार हो तथा आकाशकी न्याई असंग हो स्वप्न द्रष्टावत् कर्तेभी अकर्ता हो हे भगवन् आप हम सर्व अधिकारियों प्रति उपदेश करो यद्यपि आपकी यथार्थ वेद रूप वाणी सर्व अधिकारियोंको उपदेशप्रसिद्धहै अब नवीनमें क्या कहों जो ऐसे कहो

108

तथापि वही वेद रूप उपदेश पुनः हम अधिकारियोंके प्रति कथन करना योग्यहै काहेते आपका इस सभामें उपदेश सर्वके कल्याणका कारण होगाहमको पूंछो तो आज हम कृत्यकृत्य भयेहैं काहेते जिसकी प्राप्तिवास्ते कर्म उपासना ज्ञानकांडरूप वेद साधन कहेहैं सो आप हमको अपरोक्ष प्राप्त भये हो ताते हमको अब करना कछु नहीं रहा परंतु अन्य अधिकारियोंको अपने सम्यक् अपरोक्ष स्वरूपका उपदेश करो परमेश्वर कहते भये हे अधिकारी जनो मैं सत् चित् आनंद स्वरूप परमात्मा देश काल वस्तु भेदते रहित परिपूर्ण हों अरु ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वके हृदय विषे मनादिकोंका साक्षीरूप करकें नित्य प्राप्त अपरोक्ष स्थितहों मुझ नित्य प्राप्त साक्षीकी प्राप्तिवास्ते जो यत्न करना है सो भ्रमहै हे अधिकारी जनो मुझ परमात्माने जो त्रिकांड रूप वेद रचेहैं सो संसाररूप भ्रमकी निवृत्ति निमित्त रचेहैं कोई संसारकी अनेक प्रकारकी रचना विषे मेरा तात्पर्य नहीं वेदविषे सृष्टिका अध्यारोप करके पुनः अपवाद कराहै जो संसारकी रचना मेंही तात्पर्य होता तो अपवाद पुनः वेद नहीं कहता ताते जिस परमात्मा ते यह भूत भौतिक सृष्टि हुईहै पुनः तिसीमें लीन होतीहै सो परमात्मा तुम्हारा स्वरूप है जैसे कोई तरंगको उपदेश करैकि हे तरंग तुम सहित जिसते यह तरंग बुद्बुदा फेनादि उत्पन्न होकर पुनः लीन होतेहैं सो तुम्हारा स्वरूपहै जैसे स्वप्नजीवको कोई उपदेश करै हे जीव तुम सहित यह स्वप्न प्रपंच जिस स्वप्नद्रष्टा चैतन्य ते उत्पन्न होकर पुनः तिसमें लीन होताहै सो स्वप्नद्रष्टाही तुम्हारा स्वरूपहै सो स्वप्न प्रपंचकी तथा तरंगादिकों की उत्पत्ति लीनताके कथन में वेद देशकका तात्पर्य नहीं किंतु जल स्वप्नावी निर्विकार निर्विकल्पके बोध में है कोई तरंगादिकोंकी सृष्टि कथन में तात्पर्य नहीं नहीं तो संसार तथा संसारके पदार्थोंके कथनमें जीवको तथा वेदको क्या लाभहै उलटा संसार कथनमें दुःखकी प्राप्ति रूप श्रमही फल है ताते बंधरूप संसार भ्रमकी निवृत्तिकी निवृत्ति अरु सत् चित् आनंद मोक्षरूप ब्रह्मकी प्राप्तिकी प्राप्तिमें वेदका तात्पर्य है कि इस गुह्य तात्पर्यके अज्ञात भ्रमी पुरुषोंके भ्रम दूर करने वास्ते वेदमें कर्म उपासना ज्ञान कथन कराहै कोई बंध मोक्ष यथार्थ है इस अभिप्रायसे नहीं कथन करा हेअधिकारी जनो जैसे महाकाशही घट

उपाधिसे घटाकाश संज्ञाको पाताहै तैसे मैं परमात्माही देहरूप उपाधिकर साक्षी आत्मा संज्ञाको प्राप्त होता भया हों जैसें एकही आकाश ब्रह्म लोकादिकों में तथा ब्रह्मलोकनिवासी पुरुषादिकों में तथा इस भूमि में अंतर वाहर व्यापक एकरसहै तैसे मैं सत् चित् आनंदरूप परमात्मा सर्वके हृदय देशमें मनादिकोंका साक्षी रूपता करके स्थितहों हे अधिकारी जनो यह तुमने संशय नहीं करना कि यह बुद्धि आदिकोंका प्रकाशक आत्मा परमात्मा रूप नहीं परमात्मा तो ब्रह्म वैकुंठादिक लोकों में रहताहै मैं परमात्मा तो तुम्हारा प्रत्यक् आत्मा स्वरूपहों इसीते पूर्ण हों जो ऐसा मुझ परमात्माको नहीं मानोगे तो जो देश काल वस्तु भेदवान पदार्थ हैं सो अनित्यहैं अनित्यके जाननेसे अनित्यही फल होताहै ताते अपने प्रत्यक् आत्मा ते पृथक् करके जो मुझ परमात्माको जानेगा मानो मुझका तिसने खंड खंड किया है अरु अतत में तत बुद्धि वान भ्रमी है ताते तु मने भूलकरभी अपने प्रत्यक् आत्माते मुझको भिन्न नहीं जानना अर मुझको अपने अंतर सम्यक् अपरोक्ष स्वरूप विद्वान् पुरुषोंके साथ मिलके आत्मा नात्माका विचाररूपी उपाय निर्अहंकारसे करोगे तो अवश्यमेव मुझ परमात्माका तुमको दर्शन होगा दर्शन नाम मुझको निसंशय साक्षी आत्मा रूप जानोगे वाहर कोई हठक्रिया कर वा अंतर हठक्रियाकर वा अभिमान कर मुझको ढूंढोगे तो लाखों वर्षतक न मिलोंगा जैसे कंठस्थित माला वाहरकभी भी नहीं मिलती हे अधिकारी जनो कर्मकांड अंतःकर्णकी निर्मलताके लिये है नि र्गुण वा सगुण उपासना अंतःकर्ण की निश्चलताके लियेहै अज्ञान कांड अज्ञान रूप आवर्ण की निवृत्ति वास्ते है जब मुझ परमात्माको सम्यक् अपना आत्मा रूप जाना तो कृत्यकृत्य होताहै इसते आगे कछु जानना नहीं वेदसहित सर्व संसारको स्वप्नवत् जानताहै जो इ सते आगेभी कर्तव्य माने सो भ्रमी पुरुष है हे अधिकारी जनो मुझ सत् चित् आनंद रूप ब्रह्मात्माकी भेद उपासना तो बेशककरो परं तु मुझ पूर्णको अपूर्ण मत करो जो अपूर्ण है सो अनित्यहै अरु अपने प्रत्यक् आत्माते जुदा मुझको मतमानो काहेते आत्माते भिन्न अना त्मा होताहै तो मुझ परमात्माको अनात्मा पना सिद्ध होगी दूसरा परिछिन्नता होगी अरु मुझ सत् चित् आनंदरूप परमात्मा ते प्रत्यक्

आत्माको भिन्नमानोगे तो प्रत्यक् आत्माको असत जड दुःख रूपता सिद्ध होगी अरु प्रत्यक् आत्माकी असत जड दुःखरूपता किसी को इष्टनहीं अरु अनुभव शास्त्रसे भी प्रत्यक् आत्माकी असत जड दुःखता जानी जातीनहीं ताते मुझब्रह्मात्माके स्वरूपको सम्यक् जानो असम्यक मत जानो काहेते सम्यक् रूप जानेही लाभहे अन्यनहीं हे विद्वान पुरुषो जो मैं चैतन्य आत्मा तुम्हारे अंतर प्रकाशक नहोंवों तो मनादिक जड पदार्थों की सर्व चेष्टा कैसे जानी जावे काहेते जडको स्वपरका ज्ञाननहीं होता और किसीदेशमें परमात्मा कचहरी लगा कर नहीं बैठा हे अधिकारी जनो इस नामरूप संसार रूपी जड पुतरीको मैं चैतन्य देवने रचाहै अरु मैंही इसमे प्रवेश कर इसकी चेष्टा कराता हों काहेते मुझ परमात्मा ते भिन्न और कोई चैतन्य हैनहीं अरु स्वतः सिद्धजडकी चेष्टा होती नहीं ताते यह विचारा चाहिये जो इस मनादिक जड़ संघातकी चेष्टा कराता है तथा जो चेष्टाका प्रकाशक है सो ईश्वरका रूपहै सुषुप्तिकाल में जो केवल अज्ञानका द्रष्टाहे अरु जाग्रत स्वप्नमें जो अज्ञान सहित अज्ञानके कार्यका द्रष्टाहै सोई ईश्वरका स्वरूपहै अरु जो प्रिय-मोद प्रमोद वृत्तियोंके भावाभावके अनुभव करनेवाला हैं तथा सात्विकी राजसी तामसी मनके स्वभावोंको जाननेवालाहै तथा समाधि आदि जन्य सुखका तथा विक्षेपजन्य दुःखका जो अंतर अनुभव कर्त्ताहै अरु आप किसीकर अनुभव नहीं होता सोई ईश्वरका रूपहै जिसकर ध्याता, ध्यान, ध्येय, ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय, द्रष्टा, दर्शन, दृश्यादि अनेक त्रिपुटीयां अंतर-बाहर निरंतर सिद्ध होतीहैं सो ईश्वरका स्वरूपहै ज्ञान, अज्ञान, बंध, मोक्ष, हेय, उपादेयादिक मनकी कल्पनाको तथा मनादिकोंका जो द्रष्टाहै सो ईश्वरका रूपहै हे विद्वानलोगो पूर्वोक्त ईश्वरही तुम्हारा स्वरूप है मैं सत कहताहों ब्रह्मचर्यादि व्रतोंपूर्वक सतसंगमे तुम आत्मविचार निरंतर करोगे श्रद्धापूर्वक तो अपने स्वरूपको सम्यक् अपरोक्ष जानोगे अरु जो मन वाणीका गोचर वस्तुहै सो ब्रह्मात्माका स्वरूप नहीं किंतु सो दृश्यका रूपहै अरु जो मन वाणीते अतीतहै अरु मन वाणी सहित मन वाणीकी कल्पनाको जो सदा परिमाण कर्त्ताहै सो ब्रह्मात्माका स्वरूपहै देश देशांतरको मन जाताहै पुनः आताहै पुनः आयकर दूसरे कार्य में लगताहै कभी

शुभाशुभकी कल्पना कर्त्ताहै यह सर्व मनका व्यवहार जिसकर जाना गया सो तुम्हारा स्वरूपहै हे साधो अपने स्वरूप अपरोक्षके लिये प्रथम अंतःकर्णकी शुद्धीवास्ते तुम निष्काम कर्म करने अरु अंतःकर्णकी निश्चलतावास्ते तुम सगुण वा निर्गुण वा अन्य कोई वेदरीति अनुसार उपासना करना इन दोषोंको दूरकरके पश्चात् ज्ञानमार्गमें पड़ना पूर्वजन्मोमें करे जो कर्म उपासनासे पूर्वोक्त दोष अंतःकर्ण में नहीं देखे तो प्रथम ज्ञानमें प्रवृत्ति करे अरु सर्व वासना त्यागे इसप्रकार परमात्मा सर्व अधिकारियों प्रति उपदेशकर अंतर्ध्यान होते भये पराशरने कहा हे मैत्रेय अपने चैतन्यस्वरूप आत्माते पृथक् देहादिकोंमे आत्मा बुद्धि होनी यही अहंकाररूप वासनाका-स्वरूप परमात्माने कहा है काहेते इसी अहंकारपूर्वकही आगे सुख दुःखरूप संसार पसरताहै जैसे वीजतेही वृक्ष पसरता है मैत्रेयने कहा जो अहंकार संसार समुद्रका मूल नाम वीजहै तो मुझ असंग चैतन्यको क्या प्रयोजनहै जैसे वृक्षका बीज पृथिवीमेंहै आकाशको तिससे क्या प्रयोजनहै ताते अहंकारभी मैंने कियाहै अरु त्यागनाभी मैंनेहींहै अरु पारभी मैंनेहीं होनाहै अरु भ्रमकर वंध मोक्षभी मैंने मानीहै अरु विचार कर वंध मोक्षका वहमभी मैंनेहीं छोडना है तो और किसीकी क्या कानहै आपही आपहों पराशरने कहा हे मैत्रेय जोतू संसार समुद्रते पारहुआ चाहता है तो आत्मविचार रूपी नावका कर जो अयत्नहीं पारहोवे विचार यहीहै जो अन विचारे मिथ्या परिछिन्न अहंकारको त्यागकर देख संसारसमुद्र कहांहै जिसते पारहोता है आपसुये जगप्रलयहै हे मैत्रेय तैंने कभी चाहनाते रहित स्वरूपको नजाना यहीदृढ़ किया कि किसीका ग्रहण करना किसी वस्तुका त्याग करना जो तुझे धनकी उत्पत्तिकी वात कहै उसीकी तरफ़ तेरे मन इंद्रिय प्राण तदरूप होजातेहैं स्वरूप चिंतनमें आलस्य करताहै पर कहो तू कौनहै मैत्रेयने कहा मैं चैतन्य स्वरूप ब्रह्महों पराशरने कहा तू जीवत्व अहंकार में मिथ्या वंधहै मैं चैतन्य रूप ब्रह्महों यह कैसे जाना जावे मैत्रेयने कहा जाना जावे चाहे न जाना जावे मुझको अपने निश्चयका फल होनाहै परंतु तैंने भला कहाहै ब्रह्मपूर्णको कहते हैं जब मैं ब्रह्म चैतन्य हों जीवत्वमिथ्या अहंकार वंधमें भी व्यापकहों त बही तिनकी सिद्धि होतीहै जो मैं पूर्णनहीं होवों तो तिनकी सिद्धि कैसेहोवे पराशरने कहा हे अभाग्य तुझको कालते भयनहीं यह सर्व

110

देवता ऋषि मनुष्य कालके भयमेंहैं मैत्रेयने कहा जब मैं दृश्यके अंतर बाहर अस्ति भाति प्रिय रूप सर्वात्मा हों तो कालका भी मैंहीं आत्माहों अपने आत्माते भय किसीको होतानहीं वा अपने आत्माको कोईभी भयदेता नहीं भय द्वैतते होताहै मैं आत्मा अद्वैतहों भय अभय सर्व चिद रूपहै वा वर्तमान मैंहीं स्वरूपसेहीं मुझ असंग चैतन्य साक्षी आत्माकी कालरोम मात्रभी छेदन नहीं कर सक्ता पीछे कब भय देवेगा हां जबमैं चैतन्य असंगभ्रमेस संगी दृश्यरूप होजावोंतो कालभय वेशक देवोपरंतुमैं कालादिकदृश्यके द्रष्टाअसंग चैतन्यने कभीभी संगीस्वरूप सेही दृश्य होनानहीं ताते विचार देखो मैं असंग चैतन्य कालते भय कैसे करों जो जिसका स्वभावसे जो स्वरूप होताहै सो अन्यथा किसीसे भी नहीं होसक्ता जैसे अग्निका स्वभाव अन्यथा किसीकर भी नहीं होसक्ता तथा जैसे स्वभावसे असंगी आकाशको कोईभी पृथिवी अप तेज वायु तथा इनके कार्य देश काल अंधेरी आदिक पदार्थ संगी तथा भय नहीं करसक्ते हेपराशर मैं भयते रहितहों उलटा कालादिक दृश्य मुझ चैतन्यसे भय कर्तेहैं कालकाभी यह नेमहै संगवान मन वाणीके गोचर दृश्य वस्तुकोही भक्षण करना अरु जो असंग मन वाणी अगोचर आत्माको कैसे भक्षण करैंगे किंतु कदाचित्तभी करेगा नहीं पराशरने कहा अब मैं तुझको परब्रह्म कहोंगा मैत्रेयने कहा तुझकी कल्पनाहै कोई नाम राख मैं चैतन्य नाम रूप तथा पर अपर ते परे हों पराशरने कहा ऐसे मत कहो आप नाम रूपमें फँसा पड़ाहै अरु कहताहै मैं नाम रूपते परे हों मैत्रेयने कहा ठीक है जैसे मृत्तिका सर्व नाम रूपमें फँसी पड़ीहै काहेते घटादिकोंका स्वरूप होनेते तैसे मैं नित्य सुखप्रकाश स्वरूप आत्मा सर्व नामरूप प्रपंचमें फँसा-पड़ा हों काहेते सर्व नाम रूपका स्वरूप होनेते पराशरने कहा तू इंद्रियोंकी पालनामें तत्पर है अरु बातें अतत् परकी कहता है मैत्रेयने कहा जो मैं सत अधिष्ठान चैतन्य आत्मा इंद्रियादिक अनित्य जड प्रपंचकी पालना नाम चेष्टा प्रतीतिका तत्पर नाम कारण नहीं होंवों तो इनकी चेष्टाकी प्रतीति कैसी होवे किंतु नहीं होवेगी ताते मैं चैतन्य इंद्रियोंका पालक ठीक ठीकही हों जैसे स्वप्नद्रष्टा नहीं होवे तो स्वप्नके इंद्रियादिक प्रपंचकी चेष्टाकी प्रतीति कैसे होवे ताते स्वप्नद्रष्टा ठीक स्वप्न प्रपंचका पालकहै तथा जैसे पुरुष नहीं होवे तो

जड़ पुतलियोंकी चेष्टा कौन करावे ताते पुरुषही जड पुतलियोंका पालक है इसमें जलतरंगादि अनेक दृष्टांत हैं पराशरने कहा हे मैत्रेय कहन मात्र बात और होती है धारणकी बात और होतीहै मैत्रेयने कहा पूर्व तुम आपही कहचुके हो अपने स्वरूप अधिष्ठान विषे भ्रम सिद्ध जो बंध मोक्षादि प्रपंचहैं तिसकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते केवल अधिष्ठान आत्माका सम्यक् जाननाही कर्तव्य है शारीरादिकोंके कर्तव्य कछु नहीं करना अब कछु शारीरक कर्तव्य अन्य बतलाते हो जो आप कहो तो बंध मोक्षवान आपको मानो वा बंध मोक्ष सत्मानो वा बंध मोक्ष रूप भ्रमकी निवृति वास्ते मैं तीर्थ पर्यटन करों कछु चांद्रायणादि व्रत करों अन्य नहीं पाओं दूधही पिया करों वा फलाहारही करों वा नग्न होवों वा हठकर एक मकानमें ही पड़ारहों वा मौनी हो जावों वा पंचधूनी तापों वा पूजाकरों वा गृहस्थ त्यागकर जंगलमें चला जावों वा शरीरको अनशन व्रत कर नाश करों वा अनेक न्यायादि शास्त्र पढ़ों वा मंत्र यंत्र विद्या सीखों वा वैद्यक शास्त्र पढ़ों मंडलीचलावों वा अनेक अनात्मउपाय कर लोगोंको वा रहीसोंको चितावों किसीकी माला कंठी छापा मारका नाम तिलक करों वा जपकरों वा अपनी सामर्थ्यके अनुसार मानसी वा शारीरक यज्ञ दान होमादिकरों वा विभूतादि लगावों इत्यादि अनेक साधन जो तुम कहो अपनी सामर्थ्यके लायक सोई करों अरु करे भी हैं परंतु यह सभ भ्रममात्र संसारही है विना भ्रमके अधिष्ठान सम्यक् जाने विना भ्रमकी निवृत्ति नहीं होती अन्य अनेक साधनोंसे भी, जो यह ठीकहै तो आप हमको अन्य जंजालमें क्यों गेरोहो आगे हम अनेक जन्मों में तथा इस वर्तमान शरीर करभी बहुत भटके हैं आप सतवक्ता हो जो यह बात ठीक नहीं तो आप पुनः पुनः यह बंध मोक्षादि प्रपंच भ्रममात्रहै क्यों उपदेश कर्तै हो जो ठीक नहीं अरु उसको ठीक कहना विप्रलिप्सादि दोष होताहै तथा वेदांत उपनिषदोंमें इस भ्रम रूप संसारकी निवृत्ति अरु परमआनंद मोक्ष रूप आत्माकी प्राप्ती केवल अधिष्ठानके ज्ञानसेही वारंवार डोंडी पिटाकर कहाहै सो निष्फल हो जावेगा सो यह बात अप्रमाणहै ताते मैं आपकी कृपासे इस संसार भ्रमका अधिष्ठान अपने सच्चिदानंद स्वरूप आत्माको सम्यक् अपरोक्ष कर जानाहै ताते मुझ चैतन्य आत्माको भ्रम रूप बंध मोक्ष रूप संसारकी

निवृत्ति प्राप्तिवास्ते किंचित्मात्रभी कर्तव्य नहीं चाहे तुम चाहे शास्त्र चाहे कोई और विद्वानभी अनेक उलट पुलट कहेभी परंतु जो मुझको सम्यक् अनुभव हुआहै तिसको कोईभी दूर नहीं कर सक्ता जैसे किसी पुरुषने किसी स्पर्शादिक विषयका अपरोक्ष सम्यक् अनुभव कराहै तिसके शरीरको मारो बांधो तिरस्कार करो अनेक पीडा देवो परंतु तिसके अनुभवको नाश कोईभी नहीं करसक्ता जैसे ब्राह्मणको राजा वा राजपुरुष लोभ भयादिदेके निज ब्राह्मणत्व ते उलट पुलट कराया चाहे तो यद्यपि भयादि कारणों ते मैं क्षत्रियादिहों परंतु भीतरसे क्षत्रियादि आपको नहीं जानेगा किन्तु ब्राह्मणत्वही निश्चय रहेगा पराशर ने कहा हे मैत्रेय इसीपर एक सूक्ष्म कथा सुन एक समय मैं वन विषे गया परन्तु उस समय मेरे मन विषे पराशरकी लक्षभी नथी न दूसरेकी ॥ न जानताथा कि मैं कौनहों जो मेरा नाम लेकर पुकारता तो मुझसे शब्द न निकसताथा उस वनमें तपस्वी बस्ते थे उन्होंने यह मेरी अवस्था देखकर जाना कि मृतकहै उन्होंने लकडी इकट्ठी कर मेरा शरीर चितामें डाल दिया अरु अग्नि लगा दिया परंतु लकडी जलती थी अरु मैं होसमें नथा अरु कछुभी मुझको अग्निका स्पर्श नहीं होता भया तू इंद्रियोंके पालनेमें बंधहै कहताहै मैं देहते मुक्तहों कैसे प्रतीत करों मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्यका नामही इंद्रियोंकी पालनामें बंधहै जो मैं चैतन्य इंद्रियों सहित सर्व जड जगत्की पालना नाम सत्ता स्फूर्ति नहीं देवों तो कौन करे जैसे तागे कर मणियां बंधनमें रहतीहैं तैसे मुझ चैतन्य तागे कर यह नाम रूप मणियां ठीक ठीक बंधनमें रहतीहैं नाम मुझकी सत्ता स्फूर्तिसे स्फुरण होवेहैं अरु हे पराशर तुमहीं धर्म पूर्वक कहो मैं साक्षी आत्मा देहते भिन्न स्वतः सिद्ध स्वरूपसेहौं वा यत्न साध हौं जो स्वरूपसे हौं तो मुझका कहनाभी सफलहै अरु ना कहों तोभी सफलहै जो यत्न साधहों तो मुझको यत्न कहो देह नाश पर्यंत करोंगा यह प्रकरण जैसे है तैसेही रहो परंतु यह कहो तुम बेसुध कैसे हुये क्या भांगपी थी वा तुमको सिरसाम रोग होगयाथा वा ज्ञानने बेसुध करदिया था भांग रोगकी विशेषता होनेसे तो बेसुध सभ होजातेहैं इसमें तुम्हारी बड़ाई क्या अरु जो ज्ञानसे बेसुध हुये थे तो तुमको ज्ञान न

हुआ एक महान रोग हुआ पुरुषकी प्रवृत्ति कैसे होगी अरु ज्ञानसे कोईभी वर्तमान में विद्वान बेसुध होता देखा नहीं न कोई सुनाहै जान करके भलाहीं बेसुध होवो वा होसमन्द हो अरु कोई विद्वान बावला देखनेमें आताहै रोगकी वृद्धिसे होता है ज्ञानसे नहीं उलटा ज्ञानसे अन्य पुरुषते कईदर्जे बुद्धि अधिक होजातीहै ताते कहो तुम बेसुध कैसे हुये दूसरा तुमको अग्निने दाह न करा इसमें कारण कौन है तुम जंत्री मंत्री हो वा अग्निने तुमसे भाईचारा करा जो तुम न जले और वर्तमान विद्वानोंका तो अग्निके संबंधते शरीर नजले ऐसे देखने में नहीं आता वा तुमको वर्तमान विद्वानोंसे आत्मज्ञान अधिक है इसते न जले जो सम्यक् आत्मज्ञानको न्यूनाधिक भाव कहोगे तो श्रुति अनुभव दृष्टि विरोध होगा काहेते हजारों विद्वानोंका सम्यक् अनुभव एकहीहै वस्तु एक होने ते जैसे एक घटके हज़ार सम्यक् द्रष्टा पुरुषोंको मृत्तिका रूपही बोध होवेगा अन्यथा नहीं यह श्रुति कहतीहै जो जानने योग्य वस्तु पुरुषोंको भिन्न भिन्न होवे तो शांति पुरुषोंको कदाचित्त भी नहीं होगी परंतु ऐसा नहीं ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका स्वरूप अखंड सच्चिदानंद साक्षी आत्मा एकही बंध मोक्ष ते रहित निर्विकार निर्विकल्पहै दूसरा नहीं इसीतेही सर्व जीव अपने आनंदसे आनंद हैं ब्रह्मादिकोंके आनंदकी इच्छाभी नहीं रखते काहेते जिस आनंद स्वरूप आत्मासे ब्रह्मादिकभी आनंदी हैं सो आत्मा सर्वके हृदय विषे साक्षीरूप होकर विराजमान् होरहाहै ताते सम्यक् आत्मज्ञानमें न्यूनाधिक भाव नहीं होसक्ता तुम अग्निमें प्रवेश होकर कैसे न जले पराशरने कहा जैसे प्रह्लाद नहीं जलाथा ऐसे हमभी नहीं जले मैत्रेयने कहा प्रह्लाद भेद उपासक था अपने इष्टको अपनी रक्षा करनेवाला अपनेसे भिन्न जाने था इसी ते तिसकी रक्षा होतीथी परंतु तुम ज्ञानी लोग तो अपने आत्मासे भिन्न इष्ट मानते नहीं तुम्हारी रक्षा किसने करी ऋषभदेव अग्निके संबंधसे जल गया महाज्ञानी था पराशरने कहा हे मैत्रेय मेरे शरीरकी प्रारब्ध शेषथी तिसने रक्षा करी जैसे भृगुके पुत्र शुक्रके शरीरकी शेष प्रारब्धने रक्षा करी जैसे बालक वा अन्य पुरुषभी तीसरे वा चौथे अंमालेसे वा कुयेमें तथा दीवालादिकोंके नीचे आजातेहैं तिनके जीवनेका कारण प्रारब्ध किंचित् मात्रभी चोट नहीं लगने देती

112

उलटा हँस्ते रहतेहैं तैसे हमारीभी प्रारब्धने रक्षा करी परंतु हे मैत्रेय जैसे तू कहताहै व्यवहारमें ऐसेहीहै परंतु इस प्रकरणका तात्पर्य औरहीहै मैत्रेयने कहा सो कहो पराशरने कहा हे मैत्रेय सुषुप्ति वा समाधि अवस्थामें भोग देनेवाले प्रारब्ध कर्मोंके उपराम हुये तब मुझको जाग्रत स्वप्नमें सुख दुःखरूप भोग देनेवाले प्रारब्ध कर्म रूप तपस्वियोंने विषय इंद्रिय रूप काष्ठ इकट्ठा कर विषय इंद्रियके संबंध रूप अग्निमें गेरदिया परंतु मुझ चैतन्यको अपनी तथा परकी सुधि नहींथी इसका अर्थ सुन हे मैत्रेय मैं चैतन्य स्वयंप्रकाश स्वरूपहों किसी मनादिक इंद्रियोंका मैं विषय नहीं अपने आप करके भी मैं अपने आपका विषय नहीं आत्मा श्रयादि दोष होनेते तथा आवाङ्मनसगोचर होनेते यही मुझको स्व परकी सुधि नथी अरु मुझको अग्नि नहीं दाह करती भयी तिसका अर्थ सुन जो मैं चैतन्य समाधिकालमे तथा सुषुप्तिकालमें निर्विकार निर्विकल्प सर्व दृश्यते रहित स्वयं-प्रकाशरूपथा सोई मैं चैतन्य जाग्रत स्वप्नादिक अवस्थामें तथा विषय इंद्रियके संबंधरूप अग्निमें असंग निर्विकारहों अन्यथा भाव मैं चैतन्य कदाचित्तभी नहीं होता यह मुझको दृढ़ निश्चय रहा यही अग्निका अस्पर्श है जैसे आकाशको यह निश्चय दृढ़है कि जैसे मैं ब्रह्मलोकादिक उत्तम स्थानोमें सर्व पदार्थोंते अलिप्त व्यापक शुद्ध निर्विकारहों तैसेही मैं भूमिलोक विषे तथा पाताल विषे तथा नरकादि मलीन स्थानों विषे मेरा वही स्वरूपहै यह बात ठीकहीहै सब जानेहैं ताते हे मैत्रेय जो तू चैतन्य आत्मा जगत्की उत्पत्तिसे आदि निर्विकार निर्विकल्प था सोई तू चैतन्य अब वर्त्तमानमेंभी वही है अन्यथा नहीं हुआ यह दृढ़ निश्चयकर यह निश्चयही जन्म मरन संसाररूप अग्निके दाहते रहितताहै हे मैत्रेय इसीपर एक कथा सुन एक समय दत्तात्रेय स्वभाविक वनमें विचरेथा तिस स्थानमें जो पक्षी थे तथा मृगादि पशुथे वे सर्व शिव शिव पुकारेथे दत्तने कहा शिव तो आपहै शिवके पुकारनेसे क्या प्रयोजनहै उत्तर आया कि जब सर्व शिवहै तो पुकारना अरु न पुकारनाभी शिवहै दत्त आगे चले तब शीशकी जटा एक वृक्ष सों अटकीं तब विचाराकि स्थावर जंगम सर्व शिवहै कैसे छुटाकर जावों पुनः विचारा कि जब सर्व शिवहै तब छुटाना न छुटाना तथा

छुटानेवालाभी शिवहै तिस वनके निकट एक नगर था तिस देशके राजाको भवानीने स्वप्न दिया कि मुझका तुझको तब दर्शन होगा जब अपना मनुष्य शरीर बलि देवेगा देवीके तात्पर्यको मूर्ख राजाने न जाना अपने नगरमें ढंढोरा फेराकि जो अपना शरीर देवे तिसको धन बहुत मिलेगा परंतु किसीनेभी मन्जूर नहीं किया तब प्रातःकाल राजा शिकार खेलनेको निकसा तिस वनमें दत्त विचरतेथे कैसे दत्तहैं न हिंदू न मुसलमान प्रतीत होतेहैं न वर्णी न आश्रमी न मूर्ख न पंडित मालूम होतेहैं तिनको देख-कर पूछता भयाकि तुम कौन हो दत्तने कहा शिवहों राजाने जाना यह मूर्खहै इसके मारनेका कोई दोष नहीं हुकुम कराकि इसको बांधलेवो तिनोंने वैसेही करा परंतु दत्त जैसे अबंध अवस्थामें था तैसेहीं बंधमें रहा हर्ष शोकको न प्राप्त होता भया काहेते बांधनेवाला अरु बंधन करनेका साधन अरु बंधन योग्य सर्व त्रिपुटी शिवहै यह तिसके निश्चयथा इसीते हर्ष शोक न होता भया दत्तको देवीके देवलमें लेगये राजाने पूछा तेरा माता पिता कौनहै कहा शिवहै पुनः पूछा तेरा वर्णाश्रम कौनहै कहा शिवहै राजाने कहा तेराशीश देवीकी प्रसन्नता वास्ते काटतेहैं कहा शिवहै राजाने कहा तुम कहाँसे आयेहो कहाँ जा-वोगे कहा सर्व शिवहै राजाने कहा कछु खाते पीतेहो कहा सर्व शिवहै अशास्त्री जंगल देशका राजाथा तिस दत्तके गलेमें रज्जुडारी अरु खड्ग निकास कर चाहाकि इसका शीशकाटों तिसकाल में आकाशवाणी हुई हे मूर्ख राजा अबतक तैंने जानानहीं इसको जो आदिसे लेकर अरु मारने वास्ते मियानसे खड्ग तेरे निकासने तक एकसा है हर्ष शोकको प्राप्त नहीं भया यह विद्वानहै इनको सुख देने वाला तथा दुःख देनेवाला एकसाहै किसीको भी वर शाप नहीं देता पूर्व जो तुझको मैंने स्वप्न दिया था तिसका तात्पर्य तैंने नहीं समझा राजाने दीनता पूर्वक कहा हे मातेश्वरी सो तात्पर्य कहो आकाशवाणीने कहाकि पूर्व जो मुझका तैंने अनेक जन्म पूजन कराहै तिस का परमफल आत्मज्ञान है तिस ज्ञानकी प्राप्ति वास्ते मैंने तुझको यह उपदेश कराथा कि मानस सूक्ष्म शरीर मुझकी भेटकर जो मुझका तुझको साक्षात् दर्शन होगा तात्पर्य यहकि शरीरसे आदि लेकर ब्रह्मादिक पर्यंत बंध मोक्ष सुख दुःख हर्ष शोकादिक सर्व ना-

113

म रूप प्रपंच मनका मननहै अन्य रूप प्रपंचका नहीं काहेते जब मन सुषुप्तिमें अपने कारण उपादान अज्ञान में लीन होताहै तब सं-
सारकी गंध मात्रभी प्रतीति होतीनहीं जो यह प्रपंच मनकर रचित न होता तो मनके अभावते जगत् प्रतीत होता मनके अभावते ज-
गत् प्रतीत होता नहीं ताते जानीताहै जगत् मनोमात्रहै पृथक् नहीं सो पूर्वोक्त मन मेरी भेटक: पीछे जो शेषरहेगा सोई तेरा बंध मो-
क्षते रहित अवाङ्मनसगोचर स्वरूपहै यह ज्ञानहै यही मेरा दर्शनहै वा यह उपदेश कराथाकि मैं देवी समष्टी फुरणा रूप मनसे आदि
लेकर देह पर्यंत सर्व जगत्का उपादान कारण हों जैसे निद्रारूप अविद्या मन देह सहित स्वप्न प्रपंचका उपादान कारणहै घट मृत्ति-
काकी न्याई ताते निद्रारूप अविद्यारूप स्वप्न प्रपंचहै जैसे स्वप्नद्रष्टा निद्रारूप अविद्या सहित स्वप्न प्रपंचका प्रकाशक असंग निर्वि
कार अपनी महिमा में स्थित है तैसे मन शरीर सहित सर्व जगत् मेराहै तेरा नहीं मेरीचीज मेरेको ही सम्यक् भेटदेदेना अर्थात्
मन शरीर सहित सर्व नाम रूप जगत् मायामात्र जानना नाम मिथ्या जानना स्वप्नवत् शेष जिस अधिष्ठानकी सत्ता स्फूर्ति कर मिथ्या
की प्रतीति होतीहै जैसे स्वप्नद्रष्टा कर स्वप्नकी प्रतीति होती है सोअधिष्ठान चैतन्य निर्विकार बंध मोक्षादि रूप सुख दुःखसे रहित स्वयं
प्रकाश स्वरूप मैं हों यह भेट देनेका उपदेश कराथा सो प्रतिबंधके वशते तैंने तात्पर्य जानानहीं परंतु हे मैत्रेय दत्त सर्व पूर्वोक्त
व्यवहारमें एकसाहै इसप्रकार पूर्वोक्त परमहंसोंकी अवस्था होतीहै तू कहता है मुझमे नामरूप जगत्हैही नहीं अभी तेरा नाक कान
काटें तो कहै मैं ब्रह्मनहीं जीवहों ताते तेरी दृष्टि शरीर परहै भक्ति गोविंदकी कर जो निर्मलहोवे मैत्रेयने कहा हे पराशर जब सर्व जीव
ब्रह्म ईश्वरादिक मैंहों तो जीव कहनेसे शरीरादिकोंका उपद्रव भिटजावे तो क्या नुकसानहै किंतु कछुनहीं जब सर्व मैंहों तो जीवभी मैंहों
कहा तो क्या हानि है अरु न कहातो क्या लाभहै किंतु कछु नहीं जैसे एकही आकाशके घटाकाश मठाकाश महाकाशादिक अनेक नाम
उपाधिकर कल्पितहैं तिस आकाशका आपको घटाकाश कहनेसे उपद्रव मिटे तो क्याहानिहै काहेते घटाकाश मठाकाश महाकाशनाम
आकाश केहीहैं सर्व नामरूप अपने हीहैं एक नामीके नामोंका अर्थ एक नामीमें हीं घटैहै जैसे गंगाधर नीलकंठ विश्वेश्वरादिक नाम एक

महादेवकेही हैं जैसे एक पुरुषके दो नाम होवें तो एकको छोंडके दूसरा नाम लेनेसे उपद्रवते मुक्त होवे तो क्या तिसको हानिहै तात्पर्य यहकि सम्यक् अपने स्वरूपके विद्वान पुरुषको मैं जीवनहीं ब्रह्महों वा ब्रह्मनहीं जीवहों इत्यादि सर्व कायिक वाचिक मानसिक व्यवहारोंमे आग्रह नहीं अगर किसी व्यवहारमे मनका आग्रह होजावे किसीमें नहोवे तिसमेभी तिसको आग्रह नहीं काहेते आपको अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जग विध्वंस प्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष सर्वदृश्य का साक्षी सच्चिदानंद विशुद्धाघन जानताहै और सर्व कायिक वाचिक मानसिक व्यवहारोंको आप चैतन्यकी दृश्य मायामात्र नाम मिथ्या जानताहै वास्तवते जानने अजानने ते आप परेहै परंतु कथा राजाकी कहो पराशरने कहा हे मैत्रेय इसप्रकार विद्वानोकी स्तुति पूर्वक अनेक प्रकारके वाक्य देवीने कृपादृष्टिसे राजाको कहे अरु राजाके ज्ञानका प्रतिबंध का निमित्त इहां तकही था सो इस निमित्तसेही दूर होनाथा यही नेतिथी लज्जायमान हुआ हुआ राजादत्तके मारनेका त्यागकिया अरु नम्रता पूर्वक कहा मेरे कर्मको मतदेख मुझके अपराधको क्षमाकरो जोकछु हुआहै सो अविद्यासे हुआहै दत्तने कहा हे शिव तुझते भिन्न कौनहै जो क्षमाकरे राजाने कहा नाम रूप इस संसारतेमैंकैसे छूटों दत्तने कहानाम रूपको तैंने आप पकड़ाहै नामरूपने तुझको नहींपकड़ा ताते दूसरा कौनहै जो तुझको छुड़ावे बड़ा आश्चर्यहै जो है तू आपमुक्त अरु छूटनेकी इच्छा कर्ताहै सो भ्रमहै सारांश यहकि नपछानने अपने स्वरूपके निमित्तसे है जैसे स्वप्नदृष्टा कहैकि मुझमें कल्पित स्वप्न प्रपंच नाम रूपते मुझको कोई छुड़ावे सो नपछानने अपने स्व रूप के निमित्तसे यह स्वप्नदृष्टाका फुरणाहै उलटा तुझ चैतन्य अधिष्ठान आत्माते कल्पित नामरूप संसारका छूटना मुशकिलहै तुझ चैत न्य अधिष्ठानका नहीं काहेते कल्पित पदार्थ अपने अधिष्ठानसे बिना नहीं होता अरु कल्पित बिना आधिष्ठान होता है जैसे सुषुप्तिमें अरु समाधि में तथा जगत्की उत्पत्तिके आदिमें तू चैतन्य कल्पित जगत्से बिना स्थित है अरु जगत् तुझ चैतन्य बिना नहीं जैसे भूषणों की कल्पना बिना स्वर्ण है अरु स्वर्ण बिना भूषणोंकी कल्पना नहीं जैसे स्वप्नदृष्टा बिना स्वप्न प्रपंच नहीं अरु स्वप्न प्रपंच बिना स्वप्न

114

दृष्टा चैतन्य जाग्रतमे भी है तथा सुषुप्ति आदिकों में भी है परंतु स्वप्नप्रपंच नहीं हे राजन् तू चैतन्य मनादिकोंका दृष्टा है मायासे ले कर देह पर्यंत यह तुझकी दृश्यहै दृश्यको दृष्टाका बाँधना नकभी किसीने देखाहै अरु न शास्त्रमें सुना है और कोई चैतन्य दूसरा हैही नहीं जो तुझ चैतन्यको बाँधे ताते किसते मैं तेरेको छुड़ावों हेराजन् व्यवहारक सत्तावाले आकाशको भी व्यवहारक सत्तावाले पृथिवी अप तेज वायु तथा तिनके कार्य मनुष्य शरीरादिक भी रज्जु आदिक साधनों से बांध नहीं सक्ते काहेते पृथिवी आदिकोंका कारण तथा सूक्ष्म निराकार व्यापक असंगस्वरूप आकाशको होनेते परंतु तू चैतन्य तो परमार्थ दृष्टा सत स्वरूप है यह नामरूप तुझ चैतन्यकी दृश्य असतरूप है सतको असत कैसे बांधेगा किंतु नहीं बांधेगा हे राजन् वैराग कर नाम परिछिन्न आपा अहंकारको त्यागकर देख संसार कहांहै यही परम वैराग है जो तुझसे वैराग नहो तो जो नामरूप संसार भासता है तो आपसहित सर्वको वासुदेव जान हेराजन् पंचभूतोंका विकार रूप जो यह महामलीन संघात है तिसको आपा मत जाने तूतो मनादिक संघातका साक्षी है अरु मल मूत्र रूप संघात आपको मानता है यही बंधन है परंतु तुमको किसीने बाँधा नहीं अपन संकल्प से आपही बांधा गयाहै जैसे घुरायण आपही अपना मकान बनाकर फँसमरती है ताते हे राजन् तू आपको मनादिकोंका दृष्टाजान दृष्टामें बंध मोक्ष हैही नहीं इसीते बंध मोक्ष की निवृत्ति प्राप्ति वास्ते किंचित्मात्र भी तुझको कर्तव्य नहीं अपने स्वरूप आत्माको सम्यक् जानना कर्तव्य है हे मैत्रेय ऐसे कहकर दत्त जाते भये राजा जीवनमुक्तहोकर यथालाभमें विचरता भया पराशरने कहा हे मैत्रेय राजाको यत्किंचित् सतसंगहोनेसे अपने स्वरूपको सम्यक् जानता भया ताते तुम अभिमानीको सतसंगका स्पर्शही नहीं होता मैत्रेयने कहा चारों ओर दृश्यकर मानने योग्य जो मैं निर्विकार चैतन्य हों सो मुझको ज्ञानसे प्रथम सत है संज्ञा जिस दृश्यकी तिसका संग नाम स्पर्शनहींहोता काहेते मुझ साक्षी चैतन्यको असंग होनेते ताते ठीकहै मुझ अभिमानी को सतसंगका स्पर्श नहीं होता औ मन सहित वाङमनसगोचरते मैं अवाङमनस गोचर हों अथवा अपने सहित सर्व वासुदेव है यह मुझको अभिमानहै ताते मैं ठीक अभिमानी हों पराशरने कहा तू कौनहै मैत्रेयने कहा

मैं आपको नहीं जानता जानना द्वैतमें है मैं चैतन्य स्वयंप्रकाश अद्वैतहों अरु सर्वशास्त्रों कर मैं चैतन्यही प्रतिपाद्य हों सर्व ब्रह्मादि
क मुझ चैतन्यको अपना आत्मा जानेहैं ताते तू कहो मैं कौन हों पराशरने कहा मैं हों हे मैत्रेय इसीपर एक कथा सुन एक काल
मैं ब्रह्मलोक विषे गया आगे ब्रह्मा सर्व देवता ऋषीश्वर मुनीश्वर योगीश्वर गंधर्वों संयुक्त बैठेथे मुझको देखकर ब्रह्मा हँसा अरु कहा
हे पराशर किस निमित्त यहां आयाहै मैंने कहा निजस्वरूप पावनेवास्ते आयाहों ब्रह्माने कहा बड़ा आश्चर्यहै जैसे फेन बुद्बुदा
दिक अपने स्वरूपके पावन वास्ते देशांतरको गमन करें जैसे घटाकाश अपने स्वरूपके पावने वास्ते देशांतरको गमन करे जैसे
प्रतिबिंब अपने स्वरूपके पावनेवास्ते देशांतरको गमन करे तो हँसने योग्यहै तैसे तेरा कथनभी हँसने योग्यहै योगियोंने कहा हे
पराशर योगकर जो स्वरूपको पावे मैंने कहा कर्ता हों पर योगके करने न करनेवालेके जाननेवालेको प्रथम पहँचान करनी चाहिये
जब तिसको जाना तो आपते आप योग होगा योगेश्वर तूष्णी भये सनकादिकोंने कहा बड़ा आश्चर्यहै हे पराशर अपने देखनेको यहां
आयाहै जैसे कोई अपने देहके ढूंढनेवास्ते देशांतरको जावे पर कहो जो सर्व अस्ति भाति प्रिय रूपहै तो द्रष्टा दर्शन दृश्य कहां है मैंने
कहा जब सर्व स्वरूपहै तो द्रष्टा दर्शन दृश्यभी स्वरूपहीहै पुनः मैंने कहा जब मैंहों तो अपने आपको क्यों नहीं जानता सनकादिकोंने कहा
तू आपही कहताहै तथा जानताहै जो हाथ कान नाक नेत्र शीश उदर छाती पाँउँ मेरेहैं मन बुद्धि मेरी व्याकुलहै वा नहीं है इत्यादि मना
दिक इंद्रियोंके तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आदिकोंके सर्व व्यवहारोंको जानताहै तू कहो आपको कैसे नहीं जानता परंतु तेरेमें जा-
ननेका मार्ग नहीं मैंने कहा जो दृश्यहै मिथ्या भ्रमहै जो दृश्यका प्रकाशक दृश्यते परेहै तिसको कौन जाने जो जाननेमें आताहै सो दृश्य
भ्रमहै उन्होंने कहा जो दृश्यहै सोई अदृश्यहै काहेते कि आदि अंत मध्य अव्यक्त रूप तेराहै मैंने कहा जो मैं ब्रह्म हों तो चाहना
कर्त्ताहों क्यों नहीं पूर्ण होती उन्होंने कहा चाहना धर्म चित्तकाहै तू चैतन्य अचिंतहै ताते तुझकी चाहना कैसे पूर्ण होवे पुनः मैंने
कहा मैं कौनहों ब्रह्माने कहा सो मैंने कहा सो कौनहै ब्रह्माने कहा अहं पुनः मैंने कहा अहं कौनहै कहा सो मैंने कहा सो कौन

है पुनः कहा अहं मैंने विचार करा कि मैंने सोको पूछा तो अहं अरु अहंको पूछा तो सो ताते क्या पूछों जैसे सोयं देवदत्त इस शब्द का अर्थ पुरुषका शरीरमात्रहै तैसे सोहंका अर्थ अखंड सच्चिदानंद प्रत्यक् आत्मा मैंहों अन्यदृश्य जातमें नहीं तब ब्रह्माने कहा हेपराशर सो कौनहै मैंने कहा जिस अखंड सच्चिदानंद पूर्णते इस जगत्की उत्पत्ति होतीहै सो सोहै पुनः कहा कि अहं कौनहै मैंने कहा अहंसाक्षी चैतन्य मैंहों परंतुअहंसो शब्द अरु शब्दके अर्थ ते रहित अवाङ्मनसगोचरहों तात्पर्य यहकिमैं अवाङ्मनसगोचरहोंइसमनके चिंतनतेभी परे हों ब्रह्मा तूष्णी भया वशिष्ठने कहा हे पुत्र योगकर जो स्वरूपको पावे मैंने कहा हे पिताजी विना अपने पहचानने योग कैसे करों स्वरूप जो सर्वका मूलहै तिसते तो अज्ञात रहों अरु अनात्म योग करों तिसते क्या प्रयोजन सिद्ध होगा अनात्मताकी प्राप्तिही सिद्ध होगी अन्य नहीं भृगुने कहा योग अभ्यास कर्म यह सर्व शरीरसे होते हैं अरु शरीर अनित्यहै अनित्य शरीरकी कृत्यका जो फलहै सोभी अनित्यही है अनित्य फलकी प्राप्तिवास्ते बुद्धिमान यत्न नहीं करैं वशिष्ठने कहा देखना स्वरूपका योग्यते होताहै कहनेते नहीं मैंने कहा स्वरूप तेही योग्य अयोग्य देखनेमें आताहै योग्यते स्वरूप देखनेमें नहीं आता काहेते जब योग्य नाम चित्तकी एकाग्रता का तथा चित्तके आदि अंत मध्य जो देखताहै सोई सर्वको देखताहै वशिष्ठने कहा जो देखना योगसे नहीं तो इहां क्यों आयाथा अरु क्यों पूंछताहै कि मैं कौन हों मैंने कहा इस कारण आयाथा जो यह अनुभव क्या कहैंगे पर देखा तो सम्यक् आत्माका अनुभव एकही है असम्यक् अनुभव अनेक हैं ब्रह्माने कहा जब तूही है तो क्यों अन्य उपाव कर्ता है सर्व जगत्को मृगतृष्णाके जलवत् तुल्य जान अरु अपनेको अधिष्ठान जान पराशरने कहा जब सर्व जगत् मृगतृष्णाका जल है तो तुझ सों क्या कामहै काहेते तुमभी जगत्कोटि में हो ब्रह्माने कहा हे पुत्र अपने आत्मामेंहो हेत कर जो सतहै जान जो मैं शरीर नहीं शरीर रूप वस्त्रते नग्न हों नाम आपा अहंकार त्याग जो सुखी होवें यह जो अतीत वनों में फिरते हैं तथा नगरोंमें फिरते हैं इनसे पूछें तुम किसते अतीत हुये होतो कहैंगे गृहस्थ ते सो यह आपते आप सिद्धहै काहेते स्त्री मुई भर्ता रहा अरु भर्ता मुवा स्त्री रही हे पुत्र तू ऐसा अतीत हो जो इस

संघात रूप गृहस्थ में स्थितभी संघात तथा संघातके धर्मोंके अहंकारका त्याग रूप अतीत हो यद्यपि तेरा साक्षी आत्मा स्वतःही संघात ते अतीत नाम जुदाहै परंतु जुदेको जुदाही जानना यही अतीत होनाहै जब तू परिछिन्न पराशर नहीं तब देख जगत् कहां है पाप पुण्य तबतकही है जबतक कछु मायाके गुणोंसाथ मिलके बनताहै जहाँ बीज है तहाँ वृक्षभी है तैसे जहां परिछिन्न अहंकार है तहां ही संसार है जहां अहं नहीं तहां संसारनहीं मैंने कहा हे ब्रह्मा पराशर नहीं तूही है क्यों कहते हो पराशर जीवहै ब्रह्माने कहा जीव ईश्वर ब्रह्मको मैं चैतन्य सिद्धकर्ताहों अरु जीव ईश्वर ब्रह्म सर्व रूपभी मैंही हों अरु कर्मभी मैंही हों जैसे स्वप्नद्दष्टा स्वप्नके जीव ईश्वर ब्रह्म सर्व स्वप्न जगत्की सिद्धकर्ताभी आपहै सर्व स्वप्न जगत् रूपभी आपहै पुनः मीमांसा आता भया अरु कहता भया कि जैसे कर्म करे तैसेही कर्मका फल पाताहै ताते कर्मही प्रधान है हे प्रजापते यह बात सचहै किझूठ ब्रह्माने कहा सतहै अंतःकर्णकी शुद्धी वास्ते कर्मोंकीही प्रधानताहै मैंने कहा हे ब्रह्मा तुम कहते थे कि मैं हों तो कर्म कौन करे ब्रह्माने कहा जब सर्वमैं हों तो कर्मभीमैं हों विशेषक आयकर कहा सब झूठ कहते हैं कालही सर्वका आत्माहै कालकरही जगत्की उत्पत्ति पालना संहार होती है कालही खुदाहै अन्य खुदाका दबदबाहै हे ब्रह्मा कहो मैं सत कहता होंकि झूंठ कहताहूं कालका किसवक्त अभावहै भृगुने कहा स्वप्नका काल,स्वप्नते भिन्न पूर्व उत्तर नहीं स्वप्नके अंतरवर्ती होनेते स्वप्नवत् मिथ्याहै स्वप्नके कालका जाग्रतमें अभाव है अरु जाग्रतका काल सुषुप्तिमें अभाव है अरु कालही सत है कालही खुदाहै अरु कालही उत्पत्ति आदि करे है यह बात जिसकर सिद्ध हुई सोई सतहै काल तसनहीं तिस विषे कालका अभाव है हे विशेषक सुषुप्ति काल करके होवो परंतु कहो अनुभव सिद्ध सुषुप्तिमें काल है किंतु नहीं ताते काल मिथ्या हुआ अरु अज्ञानके भावका अरु कालादिकोंके अभावका सुषुप्ति में सिद्धकरनेवाला साक्षी चैतन्य आत्माही सतहै तथा खुदाहै अन्य कालादिकनहीं पुनः न्याय आवत भये अरु कहा सर्व जगत् ईश्वरके अधीन है कर्मबीजहै कालकर प्रगट होताहै पर ईश्वर चाहेतो नाश होय जाय ताते सभ ईश्वर तेंहै मैंने कहा मुझ सत् चित् आनंद प्रत्यक् आत्माते भिन्न ईश्वर नर शृंगवत है स्वप्नद्दष्टाते भिन्न

116

स्वप्न ईश्वरवत्, स्वप्नमें राजा तथा प्रजा भासती भी है परंतु सब प्रतीतिमात्र हैं पूर्व उतर नहीं स्वप्नद्रष्टाही तीनो कालों में सतहै स्वप्नसृष्टिके संगही स्वप्नके ईश्वरादिकहैं तैसेही दार्ष्टांत जानलेना न्यायने कहा ईश्वर वह है जिसने तुझको उत्पन्न कराहै मैंने कहा मैं चैतन्य स्वयंप्रकाश रूपहों मुझकी उत्पत्ति करने वाला कोई नहीं न्याय ने कहा हे पराशर ईश्वर रूप सूर्य कर सर्व जगत्की तथा तुझके संघातकी चेष्टा होतीहै मैंने कहा सो चैतन्यरूप सूर्य मैं हों हे न्याय वेद सत कहते हैं एकनारायण अद्वितीयहै न्यायने कहा सबको भक्षण करोगा भृगुने कहा श्रुति स्मृति कर प्रतिपाद्य सर्व ईश्वर तेरा स्वामी उपास्यहै तिसको भक्षण कर जो तेरा स्वामी दासपना सिद्धहोवे हे मूर्ख जल अरु बुद्बुदे विषे क्याभेद है न्यायने कहा जीव ईश्वर नहीं होसक्ता काहेते यह पराधीनादिगुणोंवालाहै ईश्वर स्वतंत्रादि गुणों वाला है अगस्त्यने कहा मैं नहीं जानता जीव ईश्वर क्या वस्तु हैं भिन्न है वा अभिन्न है परंतु मैं सत् चित् आनंद प्रत्यक् आत्माहों यह मैं जानता हों जो जीव ईश्वर सत् चित् आनंद आत्माते भिन्न है तौ ऐसे असत जड दुःख रूप अनात्मा जीव ईश्वरको हम क्या करें चाहे भिन्नरहो चाहो अभिन्न रहो जो सच्चिदानंद आत्माहै सो मेरा स्वरूपहैस्वरूप विषे भिन्नाभिन्नक्याहै जैसेस्वप्न जगत्के जीव ईश्वर भिन्नहोवेंवाअभिन्नहोवें स्वप्नद्रष्टाकोक्या स्वप्नद्रष्टाते भिन्न जीव ईश्वरका अत्यंताभाव होनेते हेन्याय कहो जीव ईश्वर तैंने देखाहै न्यायने कहा देखानहीं भृगुने कहा हेमूर्ख देखानहीं तो भिन्न अभिन्न कैसे कल्पा है न्यायने कहा जीव ईश्वरका अंशहै भृगुने कहा अंशका अर्थ क्या मृत्तिकाका जैसे घट अंशहै वा जलका जैसे बुद्बुदा तरंगादिक अंशहै वा स्वर्णके जैसे भूषण अंशहै जैसे महाकाशकी घटाकाश अंशहोवे तबभी अंशअंशीभावनहीं होताहै पिता पुत्र की न्याई जीव ईश्वरको कहे तो बनता नहीं काहेते श्रुति स्मृतिसे विरोध होनेते अंश अंशी भाव पिता पुत्र दोनों अनित्यहैं जीवको नित्य कथन कराहै न्यायने कहा जगत् परमाणुओंते होताहै बृहस्पतिने कहा हे न्याय धर्मसे कहो स्वप्न प्रपंच किन परमाणु ओंते होताहै एकक्षण विषे परमाणु ओं सहित स्वप्न जगत् निद्रारूप अविद्याने उत्पन्न कराहै किसीभी पुरुषके अनुभव में नहीं घटेकि स्वप्न जगत् परमाणु ओंते उत्प

न्न हुआहै तद्वत जब घटकोकु लालमृत्तिकाते बनाताहै वा नाश होताहै तो परमाणु विखरते मिलते किसीनेभी नहींदेखे हे न्याय पृथिवी का गर्दा वायुसे आकाशमे देखकर परमाणु ओंको कारण रूपतासे नित्य औ कार्य रूपतासे अनित्य कथनहाँसी योग्यहै हे न्याय इंद्र जालकर रचा जगत् कहो किस परमाणु ओंसे रचाहै अरु किन परमाणु ओंके विखरनेसे नाश हुआ है तैसेही रज्जुविषे सर्पदंड मालादिक पदार्थोंकी उत्पत्ति नाश किन परमाणु ओंते हुईहै किंतु किसी परमाणु ओंते नहीं हुई केवल रज्जुके अज्ञानते सर्पादिकोंकी उत्पत्ति हुई है रज्जुके ज्ञानते सर्पादिकोंका नाश देखनेमे आताहै तैसे यह जगत सच्चिदानंद साक्षी आत्माके अज्ञानसे उत्पन्न होताहै तिसके सम्यक् ज्ञानसे लीन होताहै बीचमें परमाणु ओंकी टांगडी अडानी केवल मूर्खताहै न्यायने कहा सप्त वा षोडश पदार्थोंके सम्यक् ज्ञानसे मोक्ष होताहै मैंने कहा हेन्याय जिस अधिष्ठानके अज्ञानसे बंध होतीहै तिसीके ज्ञानसे मोक्ष होतीहै अन्यथा नहीं तात्पर्य यहकि अपने स्व रूपके अज्ञान पूर्वक आपको जन्म मरण वान बंधवान तथा पंचकलेशादिकों सहित संसारी मानताहै ज्ञान पश्चात आपको नित्यमुक्त चैतन्य रूप मानताहै यही मोक्षहै और कोई मोक्ष पदार्थ नहीं केवल मनन रूपही बंध मोक्षहै हे न्याय स्वप्न पदार्थोंके ज्ञानकर वा निर्णयकर पुरुषको कहा सिद्धिहै अरु निद्रारूप अविद्याके नाश विना स्वप्न भ्रमरूप पदार्थोंका अंतभी हजारों वर्षतक पदार्थोंका निर्णय करे तो भी नहीं होता यह अनुभव सिद्धहै ताते मायामात्र पदार्थोंका अंत अधिष्ठान चैतन्य आत्माका सम्यक् जाननाहीं कर्तव्यहै नभ्रम रूप पदार्थोंका निर्णय पराशरने कहा हे मैत्रेय मैंने कहा हे ब्रह्मा जब सर्व तूहीहै तो न्याय कहांहै ब्रह्माने कहा जब सर्व मैं हों तो न्याय भी मैं हों मैंने कहा न्याय कर्म परहै वह कौन कर्महै जापर न्याय क रेगा ब्रह्माने कहा अपना आप न्याय करो हों वास्तवते असंग निर्विकारहों जैसे स्वप्नदृष्टा सर्व स्वप्नके व्यवहारभी आपहै अरु वास्त-वते असंग है पुनःपतंजल योग शास्त्र आता भया अरु कहाकि जो प्रणवको लेकर योग करे सो जीवन्मुक्तहै मैंने कहा प्रणव शब्द मात्र है प्रणवको लिये मनने योग करनाहै मन प्रणवको सिद्ध करनेवाला प्रत्यक् चैतन्य आत्मा स्वतः सिद्ध जीवनमुक्तहै योग कर्नेसे

नहीं जो कर्तव्य कर सिद्धहै सो अनित्यहै पुनः मैंने कहा योगीका क्या स्वरूपहै याज्ञवल्क्यने कहा जाने अहंकारको जलाकर भस्म शरीर पर लगाई है अरु मन परमेश्वर में जोडे सो योगीहै मैंने कहा जब अहंकार भस्म हुआ तो जीव ईश्वर मन कहां है जो जोडना होवे परमेश्वरका स्वरूप क्याहै कहा सत् चित् आनंद रूपहै परंतु वास्तवते अवाङ्मनसगोचरहै मैंने कहा जब सच्चिदानंद परमेश्वर आत्मा मन वाणीके अगोचरहै तो मनका जोडनारूप योग कैसे होगा किंतु किसी दृश्य अनित्य पदार्थों मेंही मनका जुडना रूप योग होगा परमेश्वरमें नहीं पतंजलीने कहा खाना पीना सोनादि व्यवहार अल्प करेते इंद्रियवश अपने होतेहैं पश्चात् योग होता है अगस्त्यने कहा खाने पीने सोनेसे इंद्रियां वशनहीं होतीं किंतु संसारमें सम्यक् मिथ्यत्व ज्ञान पूर्वक स्वस्वरूपके सम्यक् बोधसे इंद्रिय वश होतेहैं अन्यथा नहीं जैसे इंद्रजाल कर रचे जो स्त्री आदिक पदार्थहैं तिनके सम्यक् ज्ञाता पुरुषके इंद्रिय तिन पदार्थों की तर्फ भोग बुद्धि करनहीं प्रवर्त होते किंतु विलासपूर्वक प्रवर्त होतेहैं हेपतंजली खाने आदिकोंके अभावते तो रोगी केभी इंद्रिय वश होतेहैं परंतु पदार्थोंका सूक्ष्म राग बनारहताहै अरु क्रोध अधिक होजाताहै याज्ञवल्क्य ने कहा तूनिगुराहै तुझको कहना योग्य नहीं परंतु मन योगते शुद्ध होताहै मैंने कहा गो नाम अज्ञान तत्कार्य काहै रू नाम प्रकाशक काहै ताते नाम रूप अज्ञान तत्कार्य को जो अपने स्वयंप्रकाशसे प्रकाशे तिसका नाम गुरु है तिस स्वयं प्रकाशका और कोई प्रकाशकहै नहीं याते मैं चैतन्य ठीकही निगुराहों पुनः मैंने कहा दयालुहोकरकहो योगते मन कैसे शुद्ध होताहै पतंजलीने कहा प्राणायाम करके प्राणोंको रोके पीछे अनाहद शब्द सुने मैंने कहा यह करने तकनहीं अनाहद शब्द आपते आपहोता रहताहै काहेते अंतर अवकाश रूप आकाशहै तिसमें प्राण वायुका संचार रूप शब्द यत्न विना हमेशह होता रहताहै ताते प्राणरूप वायुका संचार रूप दश प्रकारका अनाहद रूप शब्द तिस शब्द में मनका जुडना वा न जुडना तिन दोनोको जो चैतन्य साक्षी आत्मा जानताहै सोई शुद्धहै तिसको अपना आप जानने ते ही मन शुद्ध होता है मैंने कहा कहो योग वास्ते और क्या करना चाहिए याज्ञवल्क्यने कहा जब गुरु शास्त्र अनुसार प्राणायामका

अभ्यास करते सुष्मना नाडी द्वारा प्राण दशवें द्वार स्थित होवें तब योगी जिह्वाको लंबा कर तालूमें लगाके प्राणोंको ऊपरही रोके नीचे आने नहीं देवे पश्चात् योगी अमृत पीताहै मैंने कहा हे विद्वानो आपलोग विचारोकि शीश में कोई अमृत पड़ा है नहीं केवल मिंझ मज्जा मांस अस्थि रुधिरहै यह सबको अनुभवहै शीशमे योगी अमृत पान कैसे कर्ताहै किंतु नहीं पान कर्ता हाँ प्राणके रुकनेसे अग्नि प्रज्वलित होतीहै तिस अग्निके तेजसे मिंझ मज्जा मांस पिघिल कर शीशसे नीचे गिरताहै तिस अमृतकोयोगी पानकर्ताहै इससे भिन्न अमृत कोई अनुभवमें नहीं आता याज्ञवल्क्यने कहा परमेश्वरका माराहो जो तुझसों वचन करै मैंने कहा परमेश्वर अरु आपमे जो बीच अहंकार नाश करे सोई परमेश्वरका माराहै पर मैं तेरा चेलाहों मुझको त्याग मतकर पर कहो तिसते आगे योगी किससे जुड़े याज्ञवल्क्यने कहा दशवां द्वार कैसाहै सूर्य चंद्रमा विजुली तारागण विना प्रकाशहै अरु ईश्वर का वहांही निवासहै तथा प्रकाशहै मैंने कहा झूठ मत कहो दशवें द्वारमें प्रकाश कहां है शीशमें तो अंधकारही है यह बात सबको अनुभव सिद्धहै हे याज्ञवल्क्य साक्षी आत्मा इस शरीरके नख शिख पर्यंत पूर्णहै इसीते दशवें द्वारमेंभी आत्माकाही प्रकाशहै अन्यका नहीं इसी ते आत्मा करकेही दशवें द्वारका तथा सर्व प्राणोंकी न्यूनाधिक्य व्यवहार जाना जाता है इतना काल प्राण मेरे दशवें द्वारमें स्थित रहेहैं इतने काल नहीं रहे ताते आत्माही सर्वका प्रकाशकहै हेयाज्ञवल्क्य जैसे स्वप्नद्रष्टाकी प्राप्तीवास्ते स्वप्न नर प्राणायाम करके प्राणोंको दशवें द्वार चढ़ावे सो तिसकी मूर्खताहै काहेते स्वप्नद्रष्टा स्वप्ननरका आत्माहै अपने आत्माके ढूंढनेवास्ते क्रियारूप प्राणायाम रूप योग नहीं करना केवल विवेक द्वारा जाननाहीहै जिसका चित्त अति स्थूलहै विचार करनेमें असमर्थ है तिसके वास्ते स्थूलारुंधती न्यायकर हठयोगहै अन्यके लिये नहीं याज्ञवल्क्यने कहा योग सनातनहै एक तुझके न माननेसे योग खंडन नहीं होता मैंने कहा जैसे और सभ शास्त्र तथा पृथिवी अप तेज वायु आकाशादिक अज्ञान पूर्वक सनातनहैं तैसही योग शास्त्रकोभी संसार अंतःपाती होनेते सनातनहै ताते सर्व शास्त्रोंके तथा प्रत्यक्षादि प्रमाणोंके सिद्ध करनेवाला तथा सर्व दृश्यके सिद्ध करनेवाला आ-

त्माही असली सनातनहै अन्य नहीं पुनः कपिलदेव आते भये अरु कहा जो स्वरूपको प्राप्त हुआ चाहे तो नित्य अनित्यका विचार करै मैंने कहा हे कपिल नित्य क्या अरु अनित्य क्या कहा तीन गुणों ते उत्पत्ति होनेवाला शरीर सहित संसार अनित्यहै अरु तीन गुण अहंकारतेंहैं जिसते यह सर्व प्रकाशमानहैं सो नित्यहै प्रकृति पुरुषके अविवेकते बंधहै अरु विवेकते मोक्षहै पुरुषके सुख दुःखके भोगवास्ते प्रकृति स्वतंत्र जगत्को रचैहै पुरुष असंगहै अरु अनेकहै अरु चौवीस तत्त्वहैं यह संक्षेपसे सांख्य शास्त्रका सिद्धांतहै मैंने कहा हे कपिल तेरा वचन सब ठीकहै परंतु पुरुष असंगको अनेकता तथा प्रकृतिको स्वतंत्रता जगत्की रचकता यह ठीक नहीं कपिलने कहा भिन्न भिन्न पुरुष नहीं माने तो एकके सुखसे सुखी अरु एकके दुःखसे दुःखी सभ होने चाहिये मैंने कहा जैसे एकही आकाश अनंत घटों में स्थितहै अरु घृत तेलादिक अनेक पदार्थ तिन घटों में पड़ेहैं अरु सर्व मृत्तिकाके घटभी एक हैं परंतु एक घटके फूटने तथा एक घटमें क्रिया होनेसे सर्व घट फूटते तथा क्रियावान नहीं होते अरु आकाश सर्व घटों में एकही असंग निर्विकार स्थितहै तैसे सतसे भिन्न प्रकृति असत जडहै जड पदार्थमें स्वतंत्र क्रिया होवे नहीं जैसे पुतलियों में स्वतंत्र चेष्टा होवे नहीं ताते चैतन्यके आभास युक्त हीं प्रकृति जगत्को रचैहै स्वतंत्र नहीं हे कपिल सत विचारसे देख पक्षपात न कर सुख दुःखके संकरवास्ते ही असंग पुरुषको अनेक माननाथा सो पूर्वोक्त प्रकारसे बनसक्ताहै, इस असंग पुरुषको नानामानना व्यर्थ है कपिल तूष्णी भया व्यासने कहा एक अद्वितीय नारायण है द्वैत नहीं मैंने कहा एकहै तो दूसराभी है व्यासने कहा नारायण विषे दूसरा कहां है स्वयंरूपहै मैंने कहा दूसरा नहीं तो एक क्यों कहा व्यासने कहा द्वैत अंगीकार विना वचन नहीं चलता ताते तेरे कहेते ऐसा जानीताहै कि मुख बंध राखनाहीं भलाहै मैंने कहा संतपदको वेद क्या जाने काहेते वेद त्रिगुणरूप है अरु संतपद त्रिगुणातीत है ताते कछु कहो कछु सुनो व्यास तूष्णी भया ब्रह्माने कहा हे पराशर तैंने आपको सबते बड़ा मानाहै मल मूत्रका यह शरीर कालका ग्रासहै जो जगत्की उत्पत्ति पालना संहार करते हैं वहभी अहंकार नहीं कतें काहेते चैतन्य विना इस नामरूप

जड़ मनादिक दृश्यसे स्वतंत्र कोईकार्य नहीं होता अरु विद्या आदिकोंका अभिमानभी विद्वान नहीं करें काहेते एकदिन ज्वर ठाढा होवे वा छिदामकी भांग पीनेसे सर्व विद्या विस्मर्ण होजाती है वा कोईक औषधी सूँघनेसे सर्व विद्या नष्ट होजाती हैं इन अनित्य पदार्थोंका क्या अभिमान करना है अभिमान करें तो यह करांकि मैं देहादिक संघात नहीं किंतु मैं अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जग विध्वंस प्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंद स्वरूप हों यहो निरंतर चिंतन करो मैंने कहा हे ब्रह्मा अभिमान वास्तवते विचारें तो शुद्ध अशुद्ध अनात्म धर्म तुल्यही हैं जैसे सोनेकी बेड़ी अरु लोहेकी बेडी पुरुषके संचार निरोधमें तथा दुःख देने में तुल्यही हैं काहेते अभिमान किसी मायाके गुणको लिये देह अध्यास पूर्वक होताहै तुम अंतर्यामी होकर देखो मुझ में पराशरकी रेखमात्रभी नहीं मैं स्वयंप्रकाश स्वरूप हों मुझ साक्षी चैतन्य में बड़ाईभी होवे तो छुटाईभी होनी चाहिये यथार्थ वस्तुके निरूपण में अभिमान अरु निर्अभिमानका क्या प्रयोजनहै हे ब्रह्मा भ्रममात्र सिद्ध बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते बंध मोक्षसे रहित मुझ चैतन्य मात्रको योगादिक साधन किंचित् मात्रभी कर्तव्य नहीं यह मुझको वेशक अभिमानवत् अभिमान है तुम सतवक्ता कहो यह बात ठीकहै कि नहीं जैसे स्वप्नद्रष्टाका सर्व स्वप्न प्रपंच तें; रहितता तथा स्वप्नके बंध मोक्षते रहितता तथा स्वप्नके जीव ईश्वरकी कल्पनाते रहितता तथा निष्कर्तव्यताका चिंतन ठीकहै कि नहीं तुम कहो ब्रह्माने कहा कहो ब्रह्मका रूप क्या है मैंने कहा अंतर बाहर जिस कर सर्व मनादिकोंका व्यवहार जाना जाताहै तिसको ब्रह्म साक्षी चैतन्य कहते हैं वा यह सर्व ब्रह्मही है ब्रह्माने कहा जो दृश्यमानहै सो नाशी है अरु ब्रह्म नाम रूपते रहित है कैसे इसको ब्रह्म जानिये मैंने कहा हे ब्रह्मा वस्तुके सम्यक् स्वरूप विचारे विना जो प्रतीत होवे सो भ्रममात्र जानिये जैसे मधुरता द्रवता शीतलता रूप जलके स्वरूप विचारे विना जो फेन बुद्बुदा तरंगादिकोंकी प्रतीति है सो भ्रममात्रहै तैसे अस्ति भाति प्रिय रूप ब्रह्मके स्वरूप विचारे विना जो नाम रूप संसारकी प्रतीति है सो भ्रममात्रहै इत्यादि मृत्तिका स्वर्णादिकोंके अनेक दृष्टांतहै भ्रमी पुरुषकी दृष्टी

११९

प्रमाण नहीं होती ब्रह्माने कहा तैंने ब्रह्मको देखा है मैंने कहा मायासे लेकर देह पर्यंत सर्वको देखनेवाले मुझ ब्रह्मको कौन देखे काहेते माया अरु मायाके मन देहादिक कार्य दृश्य अपने द्रष्टाको देख नहीं सक्ते इस साक्षी चैतन्यके पृथक् और कोई द्रष्टा है नहीं ताते इस ब्रह्म चैतन्यको कौन देखे स्वयंप्रकाश है जैसे सूर्य सर्वको प्रकाशता है परंतु सूर्यको कोई प्रकाश पदार्थ प्रकाशता नहीं ब्रह्माने कहा भजन कर मैंने कहा भजनका रूप क्या है ब्रह्माने कहा आप सहित सर्व भगवत रूप जानना परंतु तू वर्णाश्रममें तथा शुभ अशुभ में तथा इंद्रियोंके विषयों में बंधहै भजनका रहस्य क्योंकर देखे मैंने कहा यह सभ दृश्य मुझ चैतन्य कर बांधी हुई ह म चैतन्य इन कर बांधा हुआ नहीं जैसे स्वप्न द्रष्टाकर सर्व स्वप्न पदार्थ बांधे हुये हैं ब्रह्माने कहा हे पराशर जिस समय तू कर्म ते निष्कर्म होवेगा सर्व आशा ते निराश होकर आत्मविचारके सम्यक् सन्मुख होवेगा तव देवता शोकवान होवेंगे काहेते देह अभिमानी ही देवतोंका पशुहै देह अभिमान सम्यक् रहित विद्वान पुरुष देवतोंका गुरू नाम आत्मा होताहै तथा कालभी कांपताहै काहेते आत्म विद्वान पुरुष कालकाभी काल होताहै मैंने कहा जो आशामें बांधा हुआहै सो निराश होवे मैं चैतन्य सर्व दृश्यरूप आशा ते नित्य मुक्त हों ब्रह्माने कहा आपा अहंकारको त्याग अरु निर्वाण वैराग कर जो शांतिमान होवे मैंने कहा निर्वाण वैरागका क्या रूपहै ब्रह्माने कहा वाण नाम देहादिकोंका है मैं देहमनादिक यह संघातन हीं किंतु मैं चैतन्य इन देह मनादिक संघात का साक्षी हों इस सम्यक् निश्चय का नाम निर्वाण वैराग है मैंने कहा हे ब्रह्मा जो पूर्व तुमने भजनका रूप कहाथा कि आपसहित सर्व गोविंद है सोई मैं भजनकर्ताहों ब्रह्माने कहा जव सर्व गोविंदहै तव तू कौनहै मैंने कहा जव सर्व गोविंद है तो मैं भी गोविंद हों ब्रह्माने कहा गोविंद स्वयंप्रकाशरूपहै मैं तू कहाँ है मैंने कहा जव सर्व गोविंद है तव मैं तूभी सर्व गोविंद है हे ब्रह्मा मैं पराशर नहीं हों ब्रह्माने कहा जव तू नहीं तो भजन सों क्या प्रयोजन राखता है मैंने कहा आपको जानता नहीं सुनकर कहता हों जो जीव हों ब्रह्माने कहा जव आपको नहीं जानता तो जीव ईश्वर कैसे थापा,ताते यह जानीताहै कि जीव ईश्वरको तुझ

चैतन्यने सिद्ध कराहै मैंने कहा जो मैं भगवान चैतन्य हों तो आपको क्यों नहीं जानता ब्रह्माने कहा जाननेका तुझमें मार्ग नहीं क्यों जो तू ही है तो किसको जाने कौन है जो तुझको जाने जाते तू स्वयं प्रकाश है जब तुझको यह निश्चय हुआ तो आवागवनते मुक्त हुआ सर्व कर्म कर तिन विषे अहंकार मतकर आपसहित सर्व गोविंद जान अरु सर्व चाहना ते अचाह हो गोविंद भी कहां है जो मुझ चैतन्यको अपना आत्मा जानता है सो अचिंत मेरा रूप होताहै हे पराशर आप कछु मतकर करने अकर्नेको देखता रहो पुनः विष्णु आवत भये अरु कहा हे ब्रह्मा मैं रूप आपनेको नहीं देखा कहो रूप मेरा क्या है ब्रह्माने कहा रूप तुम्हारा शिवहै तुझको कौन देखे तुझविना कछु नहीं मैं चुपकर बैठाथा विष्णुने कहा हे पराशर तू चिंता मतकर ब्रह्माने कहा हे विष्णु पराशर तैंने अकार्थ मानाहै सर्व तूहीहै तो पराशर कहाँ है विष्णु हँसाअरु कहा हेब्रह्मा जो सर्वमैंहों तो पराशर भी मैंही हों तुझको पराशर अरु मैं दो भासते हैं जानीताहै तुझका द्वैत भेद गया नहीं ब्रह्माने कहा जब सब तूही है द्वैत भेदभी तूही है तुझको लज्जानहीं आती जो अपने में अपना भेद देखता है जैसे स्वप्नद्रष्टा कल्पित स्वप्न भेदकर अपने में भेद नहीं मानता विष्णुने कहा लज्जातो करो जो द्वैत राखों जब सर्व मैं हों तो लज्जाकासों करों ब्रह्मा तूष्णी भया पराशरने कहा हे मैत्रेय तू भी संतहै कछु कहो मैत्रेयने कहा सर्व मैंहीं चैतन्य कहता हों सुनता हों देखताहों देता लेता हों काहेते सर्व रूप होनेते स्वप्नद्रष्टावत कहो मुझ चैतन्यते भिन्न वह कर्ता कौन है जो कथन करे पराशरने कहा तुझको मूर्ख कहा चाहिये जो तू एक कर्ता है तो भेद क्योंकिया मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्य में भेद अभेदका मार्ग नहीं तेरे वचनका उत्तर दियाहै पराशरने कहा ब्रह्म यज्ञ सुन मैंने कहा हे विष्णु तू भजन किसका कर्ता है विष्णुने कहा ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका स्वरूप सत् चित् आनंद आत्माहै सो स्वतः बंध मोक्ष रूपी सुख दुःखते रहित अजन्मा व्यापक अद्वितीय हों यह दृढ़ निश्चय ही भजन करनाहै वा जो कछु मन वाणी शरीरकर प्रवृत्ति निवृत्ति जो करनीहै सो सुखकी प्राप्ति वास्ते अरु दुःखकी निवृत्ति वास्तेहै सो सुखकी प्राप्तिरूप अरु दुःखकी निवृत्ति रूप पूर्वोक्त आत्मा

स्वतः सिद्ध नित्य सर्वको प्राप्तहैं भजन करनेसे वा कोई और प्रवृत्ति निवृत्ति करनेसे प्राप्त नहींहोता तातें अपनेते भिन्नका भजन करना भ्रममात्रहै यह स्वयंप्रकाश है भजन त्रिपुटीमे होताहै मैं चैतन्य त्रिपटीते रहितहों काहेते त्रिपुटी रूप भजनका द्रष्टा होनेते अरु द्रष्टाका द्रष्टाहै नहीं जैसे स्वप्नद्रष्टाको सुख दुःखादि स्वप्न पदार्थोंकी प्राप्ति निवृत्ति वास्ते किंचित् मात्रभी कर्तव्य नहीं अरु जो मुझको अपने आत्मासे भिन्न जान मुझकी उपासना कर्त्ताहै सो निज स्वरूप ज्ञानते भृष्टहै काहेते उपासना करनेवालेका मैं आत्माहों पुनः शिव आवत भये अरु कहा ब्रह्मा विष्णु पराशरादि हैहीं नहीं मैं चैतन्य अद्वितीय शिवहों विष्णुने कहा जो सर्व शिवहै तो विष्णुभी शिवहै शिवने कहा विष्णु विश्वको कहतेहैं मेरेविषे विश्व कहांहै मैं निर्मलहों विष्णुने कहा विश्वको जो अपना स्वरूप जाने वही शिवहै शिवने कहा ऐसी विचाररूपी निर्मल विषखाई है जो तुझ विष्णुरूप विश्वको विचार रूप विषसाथ मिलाकर निगल गयाहों सारांश यहकि अपने चैतन्य स्वरूपमे विश्वका अत्यंताभाव अनुभव कर्त्ताहों विश्वविषे विश्वपना कहांहै शिवहै जैसे स्वर्ण ज्ञाता पुरुषको भूपणों विषे भूषणपना कहँहै स्वर्णहीहै विष्णुने कहा विष्णु विष शिवहैही नहीं काहेते शिव नाम आनंद काहै विष्णुविषे सुख दुःख दोनो नहीं ब्रह्मने कहा विष्णुपना तथा शिवपना मुझ चैतन्य ब्रह्म स्वरूप में दोनोनहीं प्रगटहै सर्वकी आदि ब्रह्महै विष्णु शिवादिक मुझ चैतन्यते प्रकाश राखतेहैं मुझ अवाङ्मनसगोचर साक्षी चैतन्य विषे पूर्णापूर्ण तथा भेद अभेद दोनोंनहीं ब्रह्माने कहा मैं सर्वते अतीत हों यहभी भूलकर कहाहै नहीं तो अतीत किसते हों अतीत भी मैं सर्व मैहींहों जैसे स्वप्नद्रष्टाकहै मैं स्वप्न प्रपंचते अतीतहों परंतु स्वप्न द्रष्टाही सर्वरूपहै अन्य वस्तुका अभाव होनेते शिवने कहा हे विष्णु रूप अपना कहो विष्णुने कहा किसको कहों मुझ चैतन्यते भिन्न सर्व दृश्य जातको जड होनेते श्रोता कोई नहीं पर कहताहों जो यह दृश्यमानहै सर्वमैं हों शिवने कहा जो दृश्यहै सो नाशीहै विष्णुने कहा अस्ति भाति प्रियते भिन्न दृश्य कहांहै जो नाशी होवे अरु सर्वते अतीतभी हों अरु सर्व रूपभी मैं हीहों जैसे स्वप्न द्रष्टा स्वप्न प्रपंच ते अतीत भीहै अरु सर्व स्वप्न प्रपंच रूपभीहै पराशरने कहा हे मैत्रेय मनको सचेतकर सुन मैत्रेयने कहा

मन कहां है जो सचेत करों शिवहै पराशरने कहा चित्तविना चैतन्य कैसे कहैगा किन्तु नहीं कहैगा मैत्रेयने कहा जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्नमें चित्त विना चिंतन कर्ता है वाणी विना कहताहै तात्पर्य यहकि संघात विना संघातके व्यवहार कर्ता है तैसे मैं चैतन्य चित्त वाणी विना सर्व व्यवहार कर्ता हों ताते वास्तव अचिंतभी माया कर सचिंत हों सचिंतभी वास्तव अचिंत हों शिवने कहा माया रूप विश्वते रहित तुम्हारे स्वरूपका स्वरूपक्या है विष्णु तूष्णी भये काहेते मायाते रहित अवाङ्मनसगोचर पदमें वचनका अवसर नहीं शिवनेकहा हे विश्वरूप तूष्णी अतूष्णी निजस्वरूप मेंतुल्यहै परंतु वचन ते संशयनाश होताहै जोसंशयते छूटाहै वही तूष्णीहै विष्णुने कहा सत तुमने कहाहै पर क्या कहों बुद्धि नहीं रही शिवने कहा शरीर वाणीको स्थिर कररक्खाहै औ मन स्थिरनहीं तो तूष्णी होना नि-ष्फलहै अरु मन आत्मबोधकरवा पदार्थों में दोष दृष्टिके विचार कर वा योग कर वा किसी अन्य विचार साधन कर स्थिरनामसंघात विषे अहंनहीं है अरु शरीर वाणी कर लौकिक शास्त्री व्यवहार कर्ता है तिसको भी तूष्णी होना निष्फलहै काहेते तिस विज्ञानीके वचन ते अनेक कल्याणको पावेंगे तूष्णी पुरुष पर वास्ते भीत तुल्यहै काहेते उपदेश विना कल्याण सम्यक् होतानहीं ताते विज्ञानीको तूष्णी अतूष्णी तुल्यहै विष्णुने कहा आपने सत्य कहाहै प्रथम जिज्ञासूको योग्यहै जो ज्ञानका मुख्य साधन विद्वानो संग मिलकर आ त्म विचार करे जव स्वरूप जाना मन स्थिरभया विना विचार स्वरूप प्रकाश नहीं होता ताते मुमुक्षुको तूष्णी होकर प्रथमें विचार करना भलाहै शिवने कहा जब आप चैतन्य स्वरूपहै तो कर्तव्य करने सों क्या प्रयोजनहै काहेते चैतन्य रूप परमात्माकी प्राप्ति वास्तेही सब साधनहैं वाक् इंद्रियका वचन करना धर्महै वाक् इंद्रिय केवल भजन वास्तेही प्रगट भई है वा भ्रमकी निवृत्ति द्वारा निज चिद सुख नित्य आत्माके दरशन वास्ते सम्यक् आत्मदर्शी पुरुषोंके आगे प्रश्न वास्ते प्रगट भईहै अरु भजनसे अंतःकर्णकी शुद्धि होतीहै अरु-अंतःकर्णकी शुद्धि विना ज्ञाननहीं होता ज्ञान विना सुख नहीं ताते हेमित्रो आपेका त्याग कर भजन गोविंदका करो जो आवागमन ते छूटो ग्रहण त्याग बुद्धि केवल दुःखहै जिह्वा जो मुखमें चामका टुकडाहै भजन विना राखनी योग्यनहीं चाहनाते अचाह होकर भजन

121

करो काहेते जो शरीर स्वप्नकी न्याईं क्षणभंगुरहै अरु भजन संसार ते तारवने की नावकाहै पूछो भजन कौनहै आप सहित सर्व ह-
रिहै वा मैं परिछिन्न नहीं पीछे जो शेष रहा सो अवाचपदहै वही सर्वका स्वरूपहै इस निश्चयका नाम मुख्य भजन हैविष्णुने कहा गो-
विंद जिह्वासे उच्चारण करना इसका नाम भजन है शिवने कहा हेविष्णु क्षेत्र कौनहै विष्णुने कहा जो मुझ व्यापक चैतन्य
क्षेत्रज्ञ ते आपको भिन्न मानता है वही क्षेत्रहै शिवने कहा भिन्न क्या विष्णुने कहा यही भिन्नहै जोहै आप व्यापक चैतन्य विष्णु
अरु कहता है मैं देहवान् वर्णी आश्रमी हों विष्णुने कहा हे पराशर कहो तेरा निश्चय क्या है मैंने कहा क्या कहों निश्चय बुद्धिते
होताहै मैं चैतन्य बुद्धिते रहित बुद्धिका साक्षीहों पर जो तुम कहो सोई निश्चय करों विष्णुने कहा तू निर्लज्जहै तुझको
कहना योग नहीं मैंने कहा शरीरके पहरावे ते नग्न हों इसी ते निर्लज्जहों हे विष्णु रूप तुम्हारा क्याहै विष्णुने कहा शिव मैंने
कहा हे शिवरूप तुम्हारा क्याहै कहा विष्णु अगस्त्यने कहा न शिव न विष्णु आपते आप अवाचपदहों हे मैत्रेय तिस सभामें
यही निश्चय भया कि आत्माविना और कछु नहीं तूभी शरीरके पहरावेसे नग्नहो मैत्रेयने कहा मैं तो हैही नहीं तो नग्न होवों क्या मन
कल्पित नवीन वनततेही नग्न होनाहै पर कहो नग्न किसको कहतेहैं पराशरने कहा वही नग्नहै जो स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरके
पहरावे ते तथा सर्व पदोंते मुक्तहै मैत्रेयने कहा तू सभते वड़ा भासताहै मानो दूसरा ब्रह्माहै पराशरने कहा द्वैत अद्वैत ते रहित स्वयं
हों ब्रह्मा विष्णुके देहसे लेकर सर्व नामरूप विकारको मैंने उत्पन्न कराहै परंतु मैं विकारी नहीं होता जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्न वि-
कारको अविद्या रूप निद्रासे उत्पन्न कर्ताहै परंतु आप विकारी नहीं होता हे मैत्रेय तू अतीतहो जो सुखी होवे मैत्रेयने कहा अतीत
होनेका मार्गवता पराशरने कहा वस्त्र उतारदे अरु रोम शीश दाढीको मुडाडाल सवकहें मैत्रेय वड़ा परमहंस सिद्धहै तेरी कृपाते
मेरा नामभी चलेगा हे मैत्रेय किसी अतीतसे पूछिये तू किसते अतीत भयाहै कहैगा गृहस्थते पूछिये गोविंदके मिलनेका मार्ग कौन
है तो कहेगा भक्ति पुनः पूछे भक्ति क्याहै कहेगा रामनाम भजन करना पुनः पूछे राम नामका स्वरूप क्या तो कहेगा चल लंडी

दुनिया राम नामका स्वरूप ऐसे नहीं बताया जाता गउनकी बारावर्ष सेवा कर हे मैत्रेय तूभी लंबी माला लेकर भजन कर अरु राजा बाबुओंको चिता अरु स्वांग विरक्तताका धारकर अरु निज भोगोंके लिये वैद्यकके बहानेसे द्रव्य एकट्ठा कर अपना भेष वृद्धिके वास्ते यत्न कर अरु जगत्के ठगने वास्ते अतीतों की मंडली बांधकर विचरो हे मैत्रेय सच्चे दिलसे अतीतहो अरु इस लोकपर लोकके भोगोंकी इच्छाको त्याग अरु शरीर रूप पहरावे ते नग्न हो अरु कछु मतकर अरु रक्षा तेरी इसीमेंहै मैत्रेयने कहा भक्तिका रूप कहो पराशरने कहा आप सहित वासुदेव जानना सर्व मनादिक माया पर्यंत सर्वको अपनी दृश्य जाननी अरु आपको द्रष्टा जानना सो द्रष्टा आत्मा एक रस निर्विकार नित्य मुक्त चैतन्य आनंद स्वरूपहै कालते रहितहै तिस आत्माको जो अपना रूप जानताहै सोई भक्तिहै सोई कालके भयते रहित होताहै जो कालके भयते रहितहै तिसका सुख रसनाते नहीं कहा जाता काहेते सर्व जगत् कालके भयमेंहै अकाल वस्तुको अपना स्वरूप जानेविना कालका भय दूर नहीं होता हेमैत्रेय अपरोक्षते तथा विद्यत अविद्यत मनके धर्मोंते तथा सर्व देहादिक संघातते भिन्न आपको जानना तथा स्वयं प्रकाश स्वरूप आपको जानना यही अतीत होनाहै कोई स्वांग वदलानेका तथा रोमकटानेका नाम अतीत नहीं यह अनेकता जो भासती है सोभी अपना स्वरूपही जान काहेते जो आदि अंत होताहै सोई मध्य मेंभी वही होताहै जो आदि अंत नहीं होता सो मध्यमेंभी नहीं होता ताते अपने स्वरूपमें तो अनेकता किसी कालमेंभी नहीं जो है तो वही रूपहै जैसे स्वप्नद्रष्टा में अनेकता आदि अंत नहीं मध्य[illegible] नाम स्वप्न कालमें जो अनेकता भासती है तो स्वप्नद्रष्टा रूपही है प्रत्यक् नहीं ऐसा अपने स्वरूपका सम्यक् दृढ़ जिसको निश्चयहै वही पुरुष सर्व कायिक वाचिक मानसिक व्यवहार कर्ताभी अकर्ता है अरु स्वरूपसे अकर्ताभी मायारूप उपाधि कर सर्व कर्ताभी हैं जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वरूपसे अकर्ता असंगभी निद्रारूप अविद्या कर सर्व कर्ता है सर्व कर्त्ताभी अकर्ता है हे मैत्रेय वही नग्न है जो स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर रूप वस्त्रोंके अभिमान ते नग्नहै यह सब तुझते प्रगट भये हैं नहीं तो कहां हैं तैंनेही बंध

मोक्ष ज्ञान अज्ञानादि प्रपंचकी कल्पना करी है आपही तिन में बंधमान भयाहै कबतक जबतक तैंने आपको नहीं खोजा जैसे नट अपने नटपनेको सम्यक् जानता हुआ अनेक स्वांग कर्ताभी बंधमान नहीं होता है मूर्ख भली प्रकार देख जो तुझ बिना यह नाम रूप जगत् कछु नहीं जैसे स्वर्णसे बिना भूषण कछु नहीं है मैत्रेय कहना मेरा अकार्थ है काहेते तुमको निश्चय नहीं वचन मेरा अद्वितीय है जो अद्वितीय होवे तिसको ही मुझ वचनोंका सुख है अन्यको नहीं मैत्रेयने कहा निश्चय अनिश्चय बुद्धिका धर्म है अरु मैं मन बुद्धि ते परे हों पराशरने कहा स्वानकी न्याई असत् विषे बंधहै तुझको क्या सुखहै मैं मूर्खोंके ठगनेवास्ते नहींहों मैत्रेयने कहा मैं पूर्ण हों इसीते मैं असत् मेंभी पूर्णहों मैत्रेयने कहा उपदेश करो पराशरने कहा यही उपदेश है न तू न मैं यह जगत् एक अद्वितीय आत्मा मैं हों वा सर्व नाम रूप जगत् अस्ति भाति प्रिय रूप मैंही आत्मा हों हे मैत्रेय जिनोंने परमार्थ जानाहै तूष्णी भयेहैं पर तूष्णी होना यही है जो आपको मन वाणी ते परे सम्यक् जानना वा तूष्णी अतूष्णी में आपको निर्विकार एकरस चैतन्य मात्र जानना वेद अरु संत सत्य कहते हैं कि सर्व नारायण है मैत्रेयने कहा नारायण कोई छिपा हुआ नहीं काहेते सर्वके हृदय विषे मनादिकोंका साक्षी रूपता करके प्रगट है अरु जो साक्षी चैतन्य नित्य आनंद स्वरूप आत्मा ते नारायणको भिन्न मानते हैं मानो वह नारायणके घातकहैं काहेते सत् चित् आनंदते भिन्न नारायण असत् जड दुःखरूप होनेते पराशरने कहा हे मैत्रेय आत्मारूप नारायण विषे जाननेका मार्ग नहींहै इसीते छिपा हुआ है ताते भजन गोविंदका कर भजन पूछे क्या है आप सहित सर्व हरिहै इस भजनको निरंतर चिंतनकर काहेते जीवना श्वासमात्र है जब श्वास है तब सभ वस्तु अपनी है नहीं तो स्वप्न समान है अरु चाहनाते अचाहहो अरु प्रसन्न रहो देख जगत् का राजामुआ क्या साथ लेगया ताते देहाभिमान त्याग अरु चाहना ते निर्भय हो जो प्रारब्ध है सो अमिटहै चाहना करे अथवा न करे हे मैत्रेय जिस शरीरकी प्रारब्ध है तिसने तो कभी चिंताकरी नहीं तू काहेको चिंता कर्ता है ताते अचिंत होकर भजनकर जो मैं परिछिन्न नहीं तो तू अरु जगत् कहां है मैत्रेयने कहा भजन कैसे करों मन भजनका मार्ग रोकता है कहा नहीं मानता पराशर

ने कहा तू इसीते पाखंडी है जो मनके कहे चलताहै विचारे मन कछु वस्तु नहीं जो तुझको रोके पर कहो मनका रूप क्याहै मैत्रेयने
कहा रूप मनका नहीं देखा पराशरने कहा हे मूर्ख जाका रूप नहीं देखा सो तुझे क्या रोकेगा जैसे आकाश रूप रहित होनेते किसीको
रोकता नहीं परजान जो संकल्प विकल्प मनका रूपहै तू आपको संकल्प विकल्पका साक्षी जान यही परमभजनहै हे मैत्रेय मैंने
तुझको अनेकरीतिसे उपदेश कराहै जब तू आप न विचारे तो स्वरूपका जानना कैसे हो इसी पर एक इतिहास सुन पूर्व एक ब्राह्मण ने
विष्णु का अति दारुण तपकरा अरु विष्णु दर्शनदिया अरु कहा हे ब्राह्मण मैं विष्णु व्यापक चैतन्य तेरे हृदय विषे साक्षी आत्मा
तेरा स्वरूपहों मुझ व्यापक विष्णुको अपने आत्माते भिन्न मतजान यह दुःख तपस्याका मत मुझको कर काहेते अंतर बाहर मैंही
हों मुझको अपना आत्मा जान अपने आत्माको मुझको जान जैसे घटाकाश आपको महाकाश रूप जाने अरु महाकाश सर्व
घटाकाशोंको अपना स्वरूप जानता है यह वाक्य सुन ब्राह्मण मनमें विचारा कि यह कोई भजनमें विघ्न करनेवाला देवतोंका
दूत है यह विचारकर बोलाकि मैं मूर्ख नहीं हों जो तेरे कपटते निश्चयका त्याग करों जहाँ से आया है तहां चलाजाय नहीं तो
तप अग्निसे तुझको भस्म कर देवोंगा विष्णुने कहा सुन जब अपने कर्मते आप न फिरे तब तक कहना गुरु शास्त्रका व्यर्थ है
विष्णु यह बात कहकर चलते भये हे मैत्रेय आपको पहचान अपने कार्यका कर्त्ता आपहै अन्य नहीं हे मैत्रेय एक समय कचने
वृहस्पति पितासे पूछा कि हे पिता सर्व विद्यामें मैं कुशल हों पर यह नहीं जानता किमैं कौनहों वृहस्पतिने कहा
यह सर्व नाम रूप दृश्य जगत् तुझ चैतन्य करही प्रकाशमान है अरु तू साक्षी चैतन्य स्वयंप्रकाश अविनाशीहै हेपुत्र अन्नम
यादिक पंचकोश रूप देह तेरा स्वरूप नहीं यह पृथिवी आदिक पंचभूतोंका विकाररूपहै तू चैतन्य निर्विकारहै काहेते जन्म ना-
शादि विकारोंका तू साक्षी होनेते हे पुत्र सर्व दृश्यका प्रतिष्ठा तू भूमा सुखरूपहै जैसे सर्व स्वप्न प्रपंचका स्वप्नद्रष्टाही प्रतिष्ठाहै इसी
पर एक कथा सुन हंस अवतारने पक्षियोंको ज्ञान उपदेश कराथा सो परंपरा ज्ञानसंप्रदायरीतिसे चला आताहै सोई ज्ञान एक समय

सारस पक्षी अपनी वोलीमें अपनी स्त्रीको ज्ञान उपदेश करता भया हे रूप मेरे यह जो अनेक प्रकारका दृष्टमान जगत्है केवल नाशी अरु मृगतृष्णाके जलवत् मिथ्याहै विचारे विना प्रतीति होताहै अरु तेरा स्वरूप इस दृष्टमानते परे नाम भिन्नहै स्त्रीने कहा हे प्रभो दृष्ट मानतो नाशीहै अरु दृष्टा इन्द्रियोंसे अगोचर है पर निश्चय कैसे करिये सारसने कहा हे रूप मेरे यह साक्षी आत्मा मन वाणीते अगोचर हुआ हुआ भी मन वाणीका साक्षी रूपकर प्रगटहै छिपानहीं पर निश्चय तवहो जव दृष्ट मूलपर पड़े जैसे पत्र फूल फल मूलके अंतर्भावहैं स्त्रीने कहा सो मूल कौन है सारसने कहा मूलकौनहै इस मनके चिंतनको तथा कथनको जिसने जाना वही मूलहै स्त्रीने कहा सो तोमैं हों पर नहीं जानती कि कौनहों सारसने कहा सत् चित् आनंद तेरा रूपहै स्त्री सुनकर हँसी अरु कहा हे निर्बुद्धि यह सर्व लक्षण द्वैतसे मिले हुयेहैं काहेते सत तव कहिये जव असतहोइ अरु चैतन्य तव होइ जव जड़होइ अरु आनंद तवहोइ जव दुःखहोइ सोमैं इन पदोंते मुक्तहों अवाङ्मनसगोचर मेरे स्वरूप में सत् चित् आनंद यह क्यों कलपताहै पर कहो रूप मेरा क्याहै पुनः गरुड आवत भया अरु कहा सर्व जगत् विषे एक विष्णु हीहै द्वैतनहीं सारसने कहा जो केवल विष्णुहीहै तो जगत् कहांहै परंतु हमको क्या लाभ है दूसरेके धनसे, गरुडने कहा जव सर्व विष्णुहै तो तुमभी विष्णुहो सारसने कहा इस तेरे वचनको मेरी स्त्री प्रतीत न करेगी! गरुडने कहा तेरीस्त्री स्वरूपते अप्राप्त है तव एकदो कहांहै अरु विष्णुहीं सर्वहै ऐसे कथन चिंतन कर्त्ताहै पर अपने साक्षी चैतन्य आत्माते विष्णुको भिन्न मानताहै मानो विष्णुका घातीहै काहेते आत्माते पृथक् अनात्माहै ताते विष्णुको अपने आत्मासे अभेद जानना कथनते अद्विती यपना नहीं सिद्ध होता सारसने कहा जव सर्व विष्णु है तो आपको आप कहे तो क्या हानिहै गरुडने कहा मेरा वचन ज्ञानियों प्रति है अज्ञानी प्रतिनहीं सारसने कहा अव तक तेरी द्वैतदृष्टि नहीं गई यह अस्ति भाति प्रिय रूप विष्णु चैतन्य आत्मा तेहीहै द्वैतनहीं तो ज्ञानी मूढ कहांहै तुझको मूलकी अप्राप्तहै अरु मलीनताविषे वंधहै एते में कागभुशुंड आवत भया अरु कहा ब्रह्मासे लेकर चींटीं पर्यंत एक रामही है गरुडने कहा जव एक रामही है तव तू कौनहै भुशुण्डने कहा मैं रामका दासहों गरुडने कहा तव राम पूर्ण न

भया काहेते आदि अंत मध्य जब रामहै तथा अंतर बाहर परोक्ष अपरोक्ष सर्व रामही है तैंने अकार्थ आपको दास मानाहै भुशुंड
यह वचन सुनकर मनमें विचारा अरु खोजा कि जो कछु मैंने पूर्ण राम विषे अहंकार कर आपको मानाहै सो मैं नहीं काहेते
मानना केवल मनका मननहै जैसे स्वप्नमें स्वप्नदृष्टाते जो कछु पृथक् माननाहै सो भ्रमहै जैसे स्वर्णते पृथक् कछु भूषणोंकी सत्ता
माननाहै सो केवल भ्रमहै ताते सर्व रामहै तो मैं जुदा कहाहों मैंभी रामहों ऐसे विचार कर कहा हे गरुड मुझहीको राम कहतेहैं एक
अद्वितीय राममें दास स्वामी भाव मानना केवल भूलहै गरुडने कहा अभी विष्णुको जाय कहोंकि कागभुशुंड तेरी आज्ञा ते बाहर
भयाहै जो कहताहै मैं विष्णुहों भुशुंडने कहा जो मैंने कहाहै उसमें फर्क नहीं जैसे घटाकाश यह कथन चिंतन करैकि मैं महाकाश
स्वरूपहों तो ठीकहै पुनः हंस आवत भया अरु कहता भया शुद्ध चैतन्य मैं ब्रह्मस्वरूपहों भुशुंडने कहा हे गरुड
देख यह क्या कहै है कि मैं ब्रह्महों जो मैंने कहा कि मैं विष्णु रूपहों तो क्या भयहै अचिंत्य आप ते आप विष्णुहै गरुडने
कहा जो मैं प्रभुके सन्मुख हंसको लेके कहों कि यह हंस कहताहै मैं ब्रह्महों तो तू साक्षी कैसे देवेगा भुशुंडने कहा यह क-
होंगा हे विष्णु तैंने मुझ चैतन्यते प्रकाश पायाहै पुनः मयूर आवत भया अरु कहा सर्व जगत् विषे प्रकाश मेराहै अरु मैं स्वयं प्रका-
शमानहों भुशुंडने कहा हे मयूर ऐसे मत कहो सर्व राम रूपहै मयूरने कहा कहो राम तेरा किस ठौरमें है भुशुंडने कहा राम सर्व ठौरमें
है गरुडने कहा जो राम एक ठौरमेंहै तौ तैंने उसमें त्रिपुटी किया आत्मामे दृष्टा दृश्य दर्शन तीनो नहीं मोरने कहा हे गरुड तुझको
अपने स्वरूपकी अप्राप्तहै जब सर्व रामहै तो त्रिपुटीभी रामहै जैसे स्वप्नकी त्रिपुटी स्वप्नदृष्टा रूपहै भुशुंडने कहा हे मयूर राम एक है
कि दो मयूरने कहा हे बुद्धिखोये जब सर्व रामहै तो एक अरु दो क्या कहों पुनः कुलंग आवत भया अरु कहा हे मयूर जब तक तू त्रिगुण
रूप प्रणवको नहीं त्यागता तब तक तुझको सुख न होगा काहेते आत्मा प्रणवते परेहै मयूरने कहा जो विचार रहितहै सो ग्रहण त्यागकी इ-
च्छा करतेहैं जैसे मृगतृष्णाके जलको न जानकेहीं जलपानकी इच्छा कर्ता है हे कुलंग कल्पितके अधिष्ठानके ज्ञाता पुरुष कल्पित पदार्थोंमे

ग्रहण त्याग बुद्धि नहीं कर्त्तो काहेते जो मूलते कछुहैंहीं नहीं तो किस वस्तुका ग्रहण त्याग करिये हे कुलंग जो मैंहींहों तो ग्रहण त्याग मुझमें
अविद्यासेहै अरु प्रणव मुझ चैतन्य कर सिद्ध होताहै इसीते दृश्यहै ताते रसना प्रणवका जप करो वा न करो मुझ चैतन्यको हानि लाभ नहीं
हे कुलंग जब तू स्वरूपको जानेगा तब तेरा ग्रहण त्यागका भ्रम दूर होवेगा विचार कर देख वक्ता श्रोतादिक आपही है सारसने कहा
हे मयूर तुझको आत्मबोधकी अप्राप्त न होती तो तुझको कैसे भासती जो कुलंगने कहाहै हंसने कहा हे सारस तू भी आत्मबोधते अ-
प्राप्त न होता तो इनको आत्मबोधते रहित क्यों कहता सारस तूष्णी भया गरुडने कहा हे हंस तू कहो तैंने स्वरूप देखा नाम जानाहै कि-
नहीं देखानाम जानाहै तोभी कहो अरु न जानाहै तोभी कहो हंसनेकहा हे अंध प्रगट भया जो तुझको स्वरूप ज्ञाननहीं काहेते अपना
आत्मस्वरूप जानने न जाननेते परेहै औ न जानना रूपतो अज्ञानहै अरु जानना वृत्ति ज्ञानभी मायारूपहै वा मायाका कार्यरूपहै
आत्मा माया अरु मायाके विकार से परे नाम भिन्नहै जानना नजानना आत्मा में कैसे होवे जानना नजानना दूसरे में होताहै आत्मा
तो जाननेवाले जीवका तथा जानना न जानना बुद्धिरूप व्रतीका आत्मा नामस्वरूपहै स्वरूपमे जानना न जानना नहीं होता जुदे
में होताहै क्यों आत्माते पृथक् सर्व ज्ञान अज्ञानादिक कल्पित अनात्माहै कल्पित पदार्थ प्रगटहैं जो अधिष्ठानको नहीं विकार
करसक्ते जैसे निद्रारूप अविद्याने स्वप्नदृष्टा चैतन्यकी सहायता कररचा जो ज्ञान अज्ञानादि स्वप्न प्रपंच सो स्वप्नदृष्टाको स्पर्श
नहीं कर सक्ता हे मूर्ख देखना नाम जानना न जानना कहन मात्र है जो सर्व सत् चित् आनंद स्वरूप आत्मा मैं ही हों कहो वह
मुझते पृथक् कौनहै जो मुझको देखे वा न देखे काहेते देखना न देखना नाम जानना न जानना त्रिपुटी विना होता नहीं जब त्रिपुटी
भी मैं चैतन्य हीहों तो जानने नजानने योग्यभी मैंहों अरु जानने न जाननेके अयोग्य भी मैं चैतन्य हों भिन्न भी तथा अभिन्न
भी मैंहों अरु सर्वते असंगभी हों जैसे स्वप्नदृष्टाही सर्व स्वप्न सृष्टी रूप होताहै अरु असंग निर्विकार सर्व स्वप्नसृष्टीते अगोचरभी
है अविद्याकर किसी वस्तुकी जब जाननेकी चाहना कर्ता है तब तिस वस्तुको प्रथमे स्थापन कर्ता पीछे दृष्टी जानने वास्ते उत्पन्न

होतीहै पुनः पीछे तिस वस्तुको देखताहै जहाँ एक कीभी समाईनहीं तहाँ तीन कैसे होवेंगी किंतु नहीं होवेंगी गरुडने कहा वचन मेरा सुन हंसने कहा कान (श्रोत्र) नहीं राखता पर कानों विना सुनता हों कहो गरुडने कहा रसना नहीं पर कहता हों गरुडने कहा मैं चैतन्य आत्माही जब हों तू मैं जगत त्रिपुटी रूपभी मैंहीं हों हंसने कहा जब मैं आत्मा हों तोतीनो नहीं द्वैत अद्वैत ते मुक्त हों द्वैत अद्वैत कहन मात्रहैं दोनो तूष्णी भये कुलंगने कहा हे मयूर कछु मुझको उपदेशकर मयूरने कहा ऐसा उपदेश करो हों जो तू नरहै कुलंगने कहा जब मैं नरहा तब तीनोंलोक न रहैंगे मयूरने कहा सभीमेरा सत वचन सुनो सबोंने कहा हमारे विषे कहना सुनना दोनो नहीं पर कहो मयूरने कहा कछुनहीं कहताहुआभी सर्व कहताहों सबोंनेकहा उपदेश उपदेष्टा उपदेशके योग्य यह सर्व त्रिपटी स्वप्न भ्रममात्रहैं मयूरने कहा सभको निर्वाण उपदेशकर्ता हों सबोंने कहा हमारे स्वरूपमें बाण निर्वाण दोनों नहीं स्वयंरूपहैं सबने कहा नमस्कार हमारी हमकोहै यह तीन लोक चैतन्य रूप हमको ही नमस्कार कर्तें हैं तथा उपासना कर्तें हैं अरु सर्व कर्ताभी चैतन्य रूप हमहींहैं अरु सर्वका भोक्ता भी हमही हैं दिन रात्रि देवता मनुष्य यह सर्व दर्शन चैतन्य रूप हमाराही है ब्रह्मा विष्णु रुद्र सूर्य चंद्रमा यम कुवेरादिकोंने चैतन्य रूप हमारे सेही प्रकाश पायाहै पराशरने कहा हेमैत्रेय संतोंकी यही नमस्कारहै जो सर्व रूप हमही हैं एतेमें चकवी चकवा आते भये अरु कहा जो यह दृष्टमान क्षेत्रहै सो नाशीहै अरु मैं चैतन्य क्षेत्रज्ञ अदृष्टमान हुआ हुआ सतहों सबने कहा तू कहां है हमही हैं कचने कहा हे पिता वह संत कैसे थे जो ऐसी नमस्कार करी बृहस्पतिने कहा हे पुत्र जो उन संतोंने कहा सो सतही कहाहै काहेते चैतन्य ही सर्वको उपास्यहै तथा सर्व कर्ता भोक्तादिक चैतन्यही है तिसते पृथक् सर्व मायामात्रहै हे कच कारणही कार्यका भोक्ता कर्ता उपास्यादिकहोताहै कारण कार्यका नहीं सो चैतन्यही सर्व नामरूप दृश्यका कारणहै सो वह आपको चैतन्य दृष्टी लेकर कहतेथे उनकी शरीर दृष्टीनथी उन्होंने जो कहाथा हे चकवा तू क्षेत्रज्ञनहीं हमहींहैं सो क्षेत्रको उठाकरकहाहै काहेते क्षेत्रके अभावते क्षेत्रज्ञ कहांहै जैसे दंडके अभावते दंडी कहांहै कोई क्षेत्रज्ञके अभाव कहने में उनका तात्पर्य नहीं किंतु क्षेत्रज्ञ क्षेत्र शरीरसेंहै स्वरूपमें नहीं

125

वनसक्ती हे पुत्र सुन चकवा कहता भया सो कहने मेंतो नहीं आवती परसुनो हेसंतो यह सर्व विकार रूप चकवीहै अरु मैं चैतन्य विकार का दृष्टा होने ते निर्विकार हों यह चकवी प्रकृति हैं मैं पुरुष हों सभ ठाट जगत्का इसके मिलापतेहै अरुमैं अक्रिय सर्वव्यापी सत् चित् आनंद ब्रह्मरूप हों जब मैं चकवी रूप प्रकृतिको अपने विषे लीन करोहों तब प्रकृति का कार्य जगत् नाश होताहै अरु मैं अद्वितीय सदा आपसे आपरहोंहों काहेते मुझको निराश्रय होनेते और सभ मुझ चैतन्य के आश्रयहैं जैसे स्वप्नदृष्टा आप किसीके आश्रय नहीं स्वयं है स्वप्न प्रपंच स्वप्नदृष्टा के आश्रय है तुम कहो प्रकृति राखते हो वा नहीं सब पक्षीओंने कहाहे चकवा जो तू चैतन्यहे तो प्रकृति कहांहै जो प्रकृतिहै तो तू कहांहै काहेते पद एकहै प्रकृति कहो वा पुरुष कहो चकवेने कहा एकता विषे वचन नहीं चलता इसीते प्रकृतिको संगलियाहै सबने कहा तू आत्मा ते जुदा रहाहै अब तक दृष्टि मायामें राखताहै चकवेने कहा सत है मैं आत्माते भिन्न रहाहों काहेते आत्माको मिलना भ्रमतेहै मुझ अवाङ्मनसगोचर विषे पावना मिलना जुदा होना नहोना है नहीं तुम सबोंने आत्मा पायाहै तुमको लज्जा नहीं आती आत्मा तो अपना स्वरूपहै भ्रम बिना अपने स्वरूपका पावना मिलना जुदा नहीं होता जैसे भूषणोंको तथा घटको तथा पटको स्वर्ण मृत्तिका तंतुका पावना मिलना जुदा होना नहीं होता यह वचन सुनकर सब तूष्णी भये चकवेने कहा तुम सर्व मेरे शिष्य होवो. सबने कहा. जहाँ आत्माका पावना जुदा होना नहीं तहां गुरू शिष्य कहांहै. चकवेने कहा. जो कछु वचन मनन में आताहै सो कर्मसहित सर्व नामरूप प्रपंचका प्रगट करनेवाला मैं चैतन्य हों अपनी करी हुई वस्तुते क्या मुझको बंधहै जैसे इंद्रजालको अपनी मायाकर रचे पदार्थ बंधमान नहीं कर्त्तें जैसे नट अपनी विद्या कर अनेक स्वांग कर्ता हुआभी तिन स्वांगोंमें बंधमान नहीं होता किंतु अपनेको नटत्वभावही जानताहै सर्व अपने स्वांगको मिथ्या जानताहै. हंसने कहा जिस पदमें वचन नहीं तिस पदमें मैं तू कहांहै ताते तू चकवेपनेको अरु मैं हंसपनेको त्यागें तब पीछे वचनकरें चकवेने कहा तू निश्चयकर जो मैं हंस नहींहों जब हंस नहीं तब चकवा आपते आप न रहा आप मुये जग प्रलय

होतीहै हेहंस यह सर्व दर्शन मुझ चैतन्यकाहै मैं किसीका दर्शन नहीं स्वयंप्रकाश होनेते हंसने कहा तुझको इस वचनते लज्जा नहीं आती जो सर्व दर्शन तेरा हुआ तो तू भिन्न हुआ जैसे राजा कहै सर्वदर्शन मेराहै तो राजा दर्शनते भिन्न है चकवेने कहा हे हंस ऐसे नहीं जैसे स्वर्ण कहै यह सर्वभूषणदर्शन मेराहै तो द्वैतापत्ति दोषनहीं जब सर्व मैं चैतन्य हों तो कहने ते क्या हानिहै कहना अरु लज्जाभीमैं हों अहंकारसे बंध होताहै देहाभिमानरहित मोक्षहै परंतु बंध मोक्षादि केवल मनका मननहै मैं प्रत्यक् चैतन्य निर्विकारहों सारसने कहा हे चकवा जब तेरेमें बंध मोक्ष रूप जगत् नहीं तो तैंने बंध मोक्ष कल्पना कैसे करी जैसे आकाश असंग निर्विकारहै तिसको विकार संगकी कल्पना भ्रमविना नहीं होती चकवेने कहा. मैं चैतन्य अद्वितीयहों सर्वकल्पनाते रहितहों परंतु जैसे नेत्ररोगते आकाशमें दो चंद्रमा भान होतेहैं तैसे तुझ जीवको अविद्या दोषते मुझ चैतन्य अधिष्ठान निर्विकल्प मे बंध मोक्षादि प्रपंच प्रतीत होताहै जैसे स्वप्ननरोंने स्वप्नद्रष्टामें बंध मोक्षकी कल्पना करीहै परंतु स्वप्नद्रष्टा निर्विकार है हेसारस सोया पुरुष जाग्रत पुरुषके हालको नहीं जान सक्ता सारसने कहा जो तू अद्वितीय है तो प्रश्न उत्तर किससों करैहै चकवेने कहा प्रश्न उत्तरादि सर्व व्यवहार कल्पित मायाकर कर्ता सद्वितीय भी वास्तवते अकर्ता अ-द्वितीयहों जैसे निद्रारूप अविद्याकर अनेक प्रकारका स्वप्न प्रपंच प्रतीत होतेभी स्वप्नद्रष्टा वास्तवते अद्वितीय है मयूरने कहा यह सर्व प्रकाश मेराहै जैसे सर्व किरणा सूर्यकीहैं लोगोंको नेत्रदोषते किरणा लाल सुफेद नीली प्रतीत होतीहैं परंतु सूर्यको अपना रूपही कर भान होताहै तैसे न चकवा न सारस न मयूर एकमैंहीं अद्वितीय हों हे सभा अहं त्वंका त्यागकरो अरु निज स्वरूपको भजो मुक्ति आनंदको पावोगे सबने कहा हमारे प्रत्यक् चैतन्य स्वरूपमे ग्रहण त्यागहै नहीं अरु हम आपही आनंद स्वरूपहैं हमारेमे बंध मोक्षहै नहीं बंध मोक्ष केवल कहनमात्रहै वास्तवते नहीं काहेते आत्मा में बंध हो तो मोक्षभी होवे अरु स्थिर अनिस्थिर रूपभी हमहीं हैं अरु स्थिर अनिस्थिरते रहितभी हमहीं हैं आश्चर्य रूप हमाराहै मन वाणीके गोचर अगोचरते रहितभी हमहीं हैं ऐसे चिंतन करते हुये तूष्णी

होगये कछु वल न रहा जो वचन करें सारांश यहकि द्वैतके फुरनेते रहित होगये कछुक कालपीछे कोकिला आतीभई अरु कहा हेसभा तुमने जानाहै जो तूष्णीहोना मुक्तिहै अरु वचन करना बंधहै परंतु यह नहीं जो तूष्णी औ वचन दोनों अहंकारहै कुलंगने कहा हे कोकिला जानना नजानना तथा अहंकार अनहंकारको त्याग जो तुझको सम स्वरूप आत्माकी प्राप्तिहोवे तूष्णी वचनादि सर्व संघातके धर्मों का साक्षी निज स्वरूपमे माया अरु मायाके कार्य तूष्णीं अरु वचनादि सर्व व्यवहार कल्पित होनेते समहै अपरोक्ष आत्मस्वरूपके ज्ञातावत् ज्ञाता संत चाहें तूष्णीं होवें चाहे वचन करैं हे कोकिला अहंकार जो तैंने कल्पाहै तिसका रूपकहो कोकिलाने कहा अहंकार का रूप होहै जो मनकी एकाग्रता में वा तूष्णी में सुख मानना अरु मनकी विक्षेपतामें वा वचन करने में आपमें दुःख मानना विना अनात्म अहंकार अनात्म धर्म अपने में मानने होतेनहीं अरु पूर्व जो तैंने कहाहै कि अहंकार को त्याग सो हे कुलंग मुझ अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते भिन्न कछुनहीं जाका मैं ग्रहण त्यागकरों जैसे पंचभूतोंते भूतोंका कार्य भिन्न नहीं इसीते पंचभूतोंको अपने कार्य में ग्रहण त्याग नहीं मयूरने कहा हे कोकिला तू कौन है कोकिलाने कहा तू कौन है जिसकर यह अंतर मन वाणीका कथन चिंतन अपरोक्ष जाना जाता है वही मैं हों यह सभ दर्शन मेरा है मुझ विषे दर्शन नहीं सभ तूष्णी भये कोकिलाने कहा सभोंका गुरूमैं हों हंसने कहा तेरे विषे गुरू शिष्य कहां है कोकिलाने कहा जो सर्व मैं हों तो गुरू शिष्य भी मैं हों मुझ चैतन्यते क्या भिन्न है मयूरने कहा मैं तेरा शिष्य होता हों पर पहले तेरा नाश करोंगा कोकिलाने कहा तुझ सहित सर्वनाम रूप दृश्य मुझ सच्चिदानंद अधिष्ठान प्रत्यक् अत्माके शिष्य हैं पूर्व तुम दृश्य रूप शिष्यने मुझ अधिष्ठान का नाश न किया तो अव कैसे करैगा जैसे स्वप्न सृष्टी सर्व स्वप्नद्रष्टा की शिष्य है सारांश यह कि कल्पित पदार्थों का अधिष्ठानही गुरुनाम आश्रय होताहै रज्जु सर्पवत् हे मयूर यह सर्व कौतुक मेरा है मैं चैतन्य कौतुकी किसीका कौतुक नहीं जैसे मायारूप इंद्रजाल मायावी इंद्रजालीका कौतुक नाम लीलाहै इंद्रजाली किसीकी लीला नहीं हंसने कहा मैं चैतन्य बिना कान वाणी

वचन कहता सुनता हों विना हाथ पांव चलता लेता देता हों विना नेत्र नासिकासे देखता सूंघता हों विना त्वचा रसना स्पर्श रस लेता हों विना मन अहं चित्त बुद्धिके संकल्प विकल्प निश्चय चिन्तन अहंपना करता हों जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्न में विना इंद्रियोंके व्यवहार शब्दादिकोंका प्रकाशकर्ता है यह बात प्रसिद्ध है जो अंतर्दश प्रकारके शब्दको अनुभव कर्ता है सो विना कानो सुनता है तैसेही अंतर जो चैतन्य पदार्थ सर्व मनादिकोंके न्यूनाधिक व्यवहार को अनुभव कर्ता है सो विना इंद्रियोंके कर्ता है इसीते मैं चैतन्य आत्मा स्वप्रकाशरूपहों कोकिलाने कहा यह प्राणरूपी पवन ही स्वप्रकाश है सारसने कहा निर्बुद्धिकी न्याई मतकहो प्राणरूपी वायु जड है तथा आकाशका कार्य है अरु सुषुप्तीमें इसका अभाव होजाताहै तथा न उष्ण न शीत स्पर्शवाली है तथा चैतन्यका दृश्य है इसीते पर प्रकाश है अरु आत्मा पूर्वोक्त प्राणोरूप वायुके विशेषणोते रहित है इसीते स्वयंप्रकाश रूपहै जो प्राणरूप वायु चैतन्य होवे तो सोया पुरुषका धन तस्कर लेजाते हैं अरु प्राण ज्योंके त्यों चल रहे हैं क्यों नहीं चोरोंको वर्जित कर्ते हेकोकिला पवन स्वप्रकाश है इस कथन चिंतनको जिसने जाना सो स्वप्रकाश है कोकिलाने कहा सो अनुभव पवनही करे है सवने कहा तेरा कहा नही मानते कोकिलाने कहा मैं एक अद्वितीय हों मुझ बिना कौनहै जो वचन मेरा माने पवनही स्वयं है मयूरने कहा तुरीयामें पवन कहां है हे कोकिला सर्व शास्त्रोंमें पंचभूत कहेहैं अरु पंचभूतोंका कारण माया कहीहै अरु पंचभूतोंमें वायुहै जो पवन स्वप्रकाश होवे तो भूतचार कहने चाहिये ताते जो सर्वका साक्षी है सोई स्वप्रकाश है कोकिलाने कहा सर्वका साक्षी प्राण है. सवने कहा वचन तेरा अयोग्य है कोकिलाने कहा योग्य अयोग्य सब पवन है. मयूरने कहा सत कभी असत् नहीं होता असत् कभी सत् नहीं होता कोकिलाने कहा यह सत असतभी पवन है अरु मैं माया अनंत शक्ति राखती हों सतको असत अरु असतको सत करों हों सभी कहो यह सर्व नाम रूप पवन है मयूरने कहा जो कहनमात्र है तिसका क्या प्रमाण है हंसने कहा ब्रह्मा कहेहैं पवन परप्रकाश है जड चेतनका क्या संयोगहै कोकिलाने कहा ब्रह्मासे लेकर चीटीपर्यंत सब जड चैतन्य नाम रूप पवनहीं कर प्रगट है पराशरने कहा

हे मैत्रेय कोकिला आपको कभी मायारूप कहतीथी कभी प्राणकर अज्ञान रूप कहतीथी अरु आत्माको अवाङ्मनसगोचर कहतीथी काहेते मायारूप द्वैत विना अवाचपदमें कहना बनता नहीं जो कथन चिंतन करेंगे सो मायाही है अवाच पदमें कथन चिंतन है नहीं. पुनः जलकुक्कुट आवत भया अरु कहा जब ईश्वर सर्व जगत्को अपने में लीन कर्ता है तब पवनरूप अज्ञान कहां है कोकिलाने कहा ईश्वरता जगत्की लीनतादि व्यवहार पवनरूप अज्ञान करही होताहै आत्मा अवाचपदहै. हेसभा जितनाक तुम कथन चिंतन करोगे सो पवनरूप मायामात्र है माया अंगीकार करे विना अवाचपदका कभी कथन चिंतन नहीं होगा सभ तूष्णी भये गरुडने कहा ब्रह्म विषे माया कहां है कोकिलाने कहा माया विना अवाच पदका ब्रह्म नाम किसने राखा गरुडने कहा हे भुशुंड तुम हजारों वर्षोंके भक्ति तप किया है कोकिलाको उत्तर देवो भुशुंडने कहा असंतोंकी सभामें आया हों बुद्धि नहीं रही बुद्धिविना कहा जाता नहीं ताते क्या कहों मैत्रेयने कहा हे गुरू भुशुंडने असंत सभा क्यों कही हे मैत्रेय संतनाम श्रेष्ठका है जहाँ श्रेष्ठताहै वहां अश्रेष्ठता भी है ताते सापेक्षक श्रेष्ठ अश्रेष्ठ ते रहित जो पदहै सो असंत कहिये अथवा नहीं है श्रेष्ठता परे जिसके तिसके अपरोक्ष निष्ठावान जिस जगहमें स्थित होवें तिसका नाम असंत सभाहै सबने कहा हे कोकिला मायारूप वायुकरही सर्व कथन चिंतन बनसक्ता है अरु जिसका कथन चिंतन कर्ता है सोभी माया रूपवान है अरु तिस कथन चिंतनका विषयभी माया तत्कार्य रूप पवनहै अरु कथन चिंतनभी मायारूपहै परंतु यह सर्व त्रिपुटीरूप माया तत्कार्यरूप पवन चैतन्य आत्माकी पवनरूप त्रिपुटी दृश्य होनेते परप्रकाश है चैतन्य आत्माही स्वयंप्रकाश है कोकिलाने कहा मैं तुम्हारा निश्चयही देखतीथी कोई पवनको स्वप्रकाश कहनेका मेरा तात्पर्यनहीं किंतु आत्मवस्तुही स्वप्रकाश है दृश्य परप्रकाशही है जैसे निद्रारूप अविद्याकरही सर्व स्वप्न प्रपंच तथा स्वप्न प्रपंचका व्यवहारहै तथा वायु आदित्यभी स्वप्नमें हैं परंतु स्वप्नद्रष्टा कर प्रकाशितहैं इसीते परप्रकाशहैं स्वप्नद्रष्टाही स्वप्रकाशहै तिस समय ब्रह्मा अपने मरीच्यादि पुत्रों सहित आकाश मार्गमे किसी कार्यके

वास्ते चले जाते थे पक्षिओंका अपनी बोलीमें आत्म निरूपण सुनते भये हंसने कहा ब्रह्मासे लेकर चीटी पर्यंत सर्व प्रकाश मुझ चैतन्यकाहै गरुड़ने कहा मुझ अवाच पद आत्मामें प्रकाश्यप्रकाशक भाव दोनों नहीं ब्रह्मादिक सर्व दृश्यका उपास्य मैंहींहों कुलंगने कहा उपास्य उपासकभाव द्वैतमें होताहै मैं अद्वैतहों ब्रह्मा सुनकर हँसा अरु मरीच्यादिकोंको कहा कि तुम आपको बड़ा मानतेहो पर आत्मविचार नहीं राखते जो आत्मविचाररूपी परम धर्मवानहै वही बड़ाहै अन्य नहीं है ब्रह्माने कहा हे पक्षी तुम धन्यहो जो देहाभिमान त्यागकर अपने निर्विकार स्वरूपमें स्थित भयेहो सर्वोंने कहा हेब्रह्मा तुम्हारे विषे समता न देखी काहेते सभको तुमनेही उत्पन्न कराहै ताते भला बुरा क्यों कहतेहो वा सर्वरूप आत्माहीं इस संसाररूप मढीमें स्थितहै तो भला बुरा कौनहै ब्रह्माने कहा जब सर्वात्माहै तो भला बुराभी आत्माहै हे कुलंग जैसे पिता पुत्रोंको उत्पन्न कर्ता है गुणोंके अनुसार भला बुराभी कहताहै पुनः ब्रह्माने कहा हे कुलंग तू कौनहै कुलंगने कहा आत्माहों जाते ब्रह्मा विष्णु शिवादिक दृश्य सर्व प्रगट भयाहै काहेते सर्व सृष्टी प्रणवरूपहै अकार उकार मकार क्रमते स्थूल सूक्ष्म कारण प्रपंच रूपहै तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति रूपहै तथा वैराट् हिरण्यगर्भ ईश्वररूपहै तथा विश्व तैजस प्राज्ञ रूपहै तथा भूर्भुवः स्वः त्रिलोकी रूपहै इंद्रिय विषय देवता रूपहै तथा ऋक् यजुः साम रूपहै तथा सत्व, रज, तम, रूपहै तात्पर्य यह कि सर्व जगत् प्रणव रूपहै प्रणव मायारूपहै माया यह मन शरीरादिक संघात रूपहै अरु मैं नित्य सुख चैतन्य रूप आत्मा इस मन शरीरादि संघातका द्रष्टा निर्विकार निर्विकल्प आप अपनी महिमामें स्थितहों हंसने कहा नमस्कार मेरी मुझकोहै कुलंगने मुझको त्रिगुण मायारूप प्रपंचते अतीत जानाहै इसकी उपासना सफल भईहै तीन गुणभी कहन मात्रहैं नहीं तो मैं चैतन्य ही हों कुलंगने कहा हे गरुड जो तैंने विष्णुते आत्मनिरूपण सुनाहै सो कहो गरुडने कहा सर्व विष्णुहै मयूरने कहा विष्णुनाम तैंने प्रकट कराहै नहीं तो विष्णु कहांहै तूही है जो सर्व विष्णु होता तो सर्व चतुर्भुज होते ब्रह्मा सबके यथार्थ वाक्य सुनकर बहुत प्रसन्न भये सबने कहा हे ब्रह्मा पवन स्वप्र-

128

काशहै कि परप्रकाशहै ब्रह्माने कहा प्राणरूप पवनमे तुमने स्वप्रकाशता अरु परप्रकाशता सिद्ध करीहै ताते तुमहीं स्वप्रकाशहो वायुनहीं कोकिला प्राणरूप उपाधिको लिये बोलतीहै परंतु प्राणउपहित चैतन्य आत्माको स्वप्रकाश कहनेका इसका तात्पर्य है जैसे वत्तीरूप उपाधिको लियेही दीपकको स्वप्रकाशता कहियेहै पर जब वस्तु विचार करें तो दीपकमेंहीं स्वप्रकाशताहै वत्तीमें नहीं काहेते प्राण अरु बुद्धि आत्माकी मुख्य उपाधिहैं अरु प्राण बुद्धिकी तथा आत्माकी किंचित् उपचारक समानता भी घटतीहै जैसे आत्मा शरीर में व्यापकहै तैसे बुद्धि अरु प्राण भी शरीरमे व्यापकहैं जैसे आत्मा चैतन्य विना शरीर स्थित नहीं होता तैसे प्राण बुद्धिते विनाभी शरीर स्थित नहीं होता तथा आत्माभी शरीरके अंतरहै अरु प्राण बुद्धिभी अंतरहैं इत्यादि अनेक तरहकी समता शास्त्रमे लिखीहैं हे कोकिला उपाधि उपहितरूप कभी भी नहीं होती कोकिलाने दोनों हाथ उठाकर पुकारा हे ब्रह्मा आज तैंने समता त्यागी अरु विषमता ग्रहण करी काहेते मुझ निर्विकार निरुपाधिक चैतन्य स्वरूप में तैंनें उपाधि खडीकरी ब्रह्माने कहा क्रोध मतकर विचार प्राण कैसे स्वप्रकाश हैं कोकिलाने कहा प्राण न होवेंतो तुम बोलो कैसें ब्रह्माने कहा प्राण इंद्रिय पंचभूत आत्माते उत्पन्न भयेहैं उत्पत्तिवान पदार्थ स्वप्रकाश नहीं होता कोकिलाने कहा मूल अरु शाखामें क्या भेदहै प्राण जिससे उत्पन्न भयेहैं वही रूपहैं इसते भी प्राण स्वयंप्रकाश हैं ब्रह्माने कहा प्राणोंकी स्थिति होनेंते शरीर स्थितहै शरीरसेही कर्म उपासना ज्ञान होताहै पर शरीर प्राणकर्म उपासना ज्ञान स्वप्नकी न्याई कहन मात्रहैं स्वप्नद्रष्टाकी न्याई मैं ब्रह्मरूप आत्माही नित्य स्वयंप्रकाश अक्रिय रूपहों कोकिलाने कहा जो तू अक्रियहै तो रूप अपना कहो ब्रह्माने कहा अज्ञानीको कहना योग्यनहीं जो समझे नहीं अरु ज्ञानीको भी कहना योग्य नहीं जो कृतकृत्यहै मुमुक्षुको कहना योग्यहै हे कोकिला ब्रह्मा से लेकर चींटी पर्यंत जो सर्व जीवोंके हृदय विषे मनादिकोंका साक्षी रूप करके नित्य चैतन्य स्थितहै सोई मेरा स्वरूपहै कोकिलाने कहा यहतो सभीका स्वरूपहै ब्रह्माने कहा जो सभीका स्वरूपहै सोई मेरा स्वरूपहै अरु जो मेरा स्वरूपहै सोई सभीका स्वरूपहै इसमे संशय नहीं कोकिलाने कहा जब तूहीहै

तो स्वरूप किसने जाना किसीने न जाना यह व्यवहार त्रिपुटी विना नहीं होता ब्रह्माने कहा जब सर्व मैं हों तो त्रिपुटीभी मैंहीं हों ब्रह्मा उठ खड़ा हुआ कहा यह उत्तर तुमको विष्णु देवेगा सो सर्व संत वहाँ बैठेही बैठे विष्णुकी स्तुति करने लगे चतुर्भुज विष्णुकी मूर्त्ति सहित सर्व जगत् हमारे स्वरूप चैतन्य आत्मातेही प्रकाशमानहै तथा उत्पत्तिमानहै तथा हमारे स्वरूप चैतन्य आत्माकी सत्ता स्फूर्ति करही इस जगत्की स्फूर्त्तिहै स्वतः नहीं जैसे स्वप्नद्रष्टा करही सर्व स्वप्नकी स्फूर्ति होतीहै अरु हमारे स्वरूपमें आवा गमन नहीं कोकिलाने कहा हे विष्णु मैं तुझका ऐसा आवाहन कर्तीहों जामे तू मैं आवाहन तीनों नहीं अरु तीनो रूप हैं हंसने कहा मुझका आवाहन सुनो न कोई द्वैषी न प्रीतम न गमनागमन न सुख न दुःख न हेय न उपादेय न बंध न मोक्षादि केवल मैं एक चैतन्य आत्माही विष्णु हों नमस्कार मेरी मुझको है कुलंगने कहा ब्रह्मा विष्णु रुद्रादि सर्व मुझ चैतन्य आत्माकी उपासना कर्त्ते हैं अपना आवाहन आपहीकिर्त्ता हों एते में विष्णु आवत भये अरु कहा हे पक्षियो तुम कौन हो कोकिलाने कहा मैं चैतन्य स्वप्रकाश तुम सहित सर्वका साक्षी आत्मा स्वरूपहों हे विष्णु तुमको लज्जा नहीं आई जो मायाका कार्य पंचभूत रूप यह शरीर मनादि संघात जड है अरु आत्मा वचन ते अगोचरहै कौन तुमको उत्तर देवे जो यहहैविष्णुने कहा तुम्हारा क्या प्रश्न है कोकिलाने कहा आप उत्तर पूर्व दे चुके हो जो पूछा तुम कौन हो जब तुमको अपने स्वरूपकी अप्राप्त है तो तुमसों क्या पूछे शिवलोक विषे जाते हैं सुनाथा विष्णु वेदांत देशमें है पर देखा वेदांत कहां है केवल भ्रम है विष्णुने कहा मैं ईश्वरहों वेदांत अरु अवेदांत मुझ चैतन्य आत्मा में दोनो नहीं पर प्रश्न कहो सबने कहा पवन स्वप्रकाश है कि पर प्रकाश है विष्णुने पवनको स्वप्रकाश अरु पर प्रकाश सिद्ध करने वाला स्वप्रकाश है काहेते प्राण चलते हैं वा नहीं चलते इत्यादि प्राणोंके व्यवहारको सिद्ध करनेवाला ही स्वयं है अन्य नहीं सतको असत अरु असतको सत कैसे कहैं कोकिलाने कहा सर्वका सिद्धकर्ता पवन है विष्णुने कहा हे कोकिला सुषुप्ति मूर्छा में पवन तो है पर जो पवन चैतन्य होवे तो सुषुप्ति मूर्छादिक वा अन्य कोई शरीरादिक संघातका व्यवहार बतलावे सो कछु संघातका व्यवहार नहीं

129

बतलावे अरु न अपना ताते पवन जड है कोकिला ने कहा जड चेतन विभाग पवन में नहीं है विष्णु तुम्हारी कल्पना है पवन तो अखंड है विष्णुने कहा जीव मेरा अंश है कोकिलाने कहा आपको खंड खंड क्यों कर्तें हो अंश अंशी भाव अनित्य होताहै जैसे पिता पुत्र अंश अंशीभाव है इसीते अनित्य है हां महाकाशकी घटाकाश अंश है चिनगारा अग्निका अंश है नाम वही रूप है विष्णुने कहा हे कोकिला तेरा रूप क्या है कोकिलाने कहा रूप अरूप ते रहित हों अरु सर्व रूप अरूप मैं ही हों विष्णुने कहा जब पंचभूत नाश होतेहैं तब पवन कहां है पुरुषमें पवन नहीं कोकिलाने कहा पुरुष चिदाभास किससे प्रकाश राखे है विष्णुने कहा मुझ पुरुषोत्तम चैतन्यते कोकिलाने कहा तू किसते प्रकाश राखे है विष्णुने कहा मैं स्वयं हों कोकिलाने कहा असत मत कहो यह आपते आपही पवन ईश कथन चिंतनको सिद्ध करैहै ताते पवन स्वयंप्रकाश है ब्रह्मा विष्णु सहित सर्व शिवलोक विलास पूर्वक शिव पास जाते भये अरु सबने कहा हमारे रूपको हमारी नमस्कार है शिवने कहा न तुम सब अरु नमैं केवल मैं शिव हों वा सर्व मैंही हों सब तूष्णी भये शिवने कहा हेरूप मेरे यह क्या कौतुकहै सबने कहा आप मंगलरूपहो अरु अपक्षपातहो यह कोकिला पवनको स्वप्रकाश कहै है अरु हम कहतेहैं स्वप्रकाश हमारा स्वरूप चैतन्यहै सो आप कहो स्वप्र-काश कौनहै शिवने कहा प्रथमै तुम आपसमें प्रश्न उत्तर करो पीछे मैं उत्तर देवोंगा हंसने कहा यह दर्शन अदर्शन रूप अरूप मेराहै अरु मैं सर्व दर्शनादिकोंते रहित हों जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्न रूपभी है अरु रहित भीहै इसतैं मुझ चैतन्य की आश्चर्य महिमाहै कुलंगने कहा आश्चर्य होना अरु न आश्चर्य होना अरु सर्व रूप आपको जानना तथा असर्व रूप जानना वा सर्व असर्व ते अतीत जानना वा आपको सत् चित् आनंद जानना वा असत जड दुःख रूप जानना तथा पवनको स्वप्रकाश मानना अन्यको पर प्रकाश मानना तथा आत्मा ब्रह्मको स्वप्रकाश साक्षी मानना अन्य दृश्यको पर प्रकाश मानना अहं त्वं परोक्ष अपरोक्ष मानना इत्यादि मनकी मनोतहै जोहै सो अवाचपदहै जो मनकी सर्व मनोततेपरे है सोई अवाङ्मनसगो

चर तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का ब्रह्मा विष्णु शिव आदिकों का स्वरूप है तिसीको अपना आत्मस्वरूप जानो शिव ब्रह्मा विष्णु आदिक यह अमृत रूप वचन सुनकर बहुत प्रसन्न भये शिव बोलत भये है कोकिला तू धन्यहै निश्चय चाहिये तो पुरुषको तुझ जैसाही दृढ चाहिये झूठ भी सच कर दिखलाया अरु जो गुरु शास्त्र अपने अनुभव विचार ते जो निश्चय भयाहै सोई सतहै तिसते परे सतका निर्णयक कोई नहीं ताते पुरुष सत् निश्चय का त्याग कदाचित्त भी न करना चाहिये हेकोकिला तू पक्षपात ते रहित होकर विचार देख पवन तुझ चैतन्यते प्रगट भयाहै तू चैतन्य किसी पवनादिकों ते प्रगट नहीं भया ताते तूही चैतन्य स्वयंप्रकाश है अन्यनहीं अपने स्वरूप ऊपर पवनको स्वप्रकाश क्यों राखे लज्जा तुझको नहीं आती कोकिलाने कहा अस्ति भाति प्रिय सर्व ब्रह्मरूप आत्माहै सोई स्वयंरूपहै ताते घटभी विधिपक्ष में स्वयंप्रकाश है पटभी स्वयंप्रकाशहै तृणभी स्वयंप्रकाश रूपहै जब नामरूपभी अस्ति भाति प्रियरूप कर स्वयंप्रकाश रूपहै तो पवन क्या स्वप्रकाश रूप नहीं किंतु स्वयंप्रकाश रूपहै काहेते अस्ति भाति प्रियरूप ब्रह्मात्माही स्वयंप्रकाशहै अरु पवनादिक अस्ति भाति प्रिय रूपहै पृथक् नहीं जो पृथक् होवे तो पर प्रकाश होवे ताते पवनभी स्वप्रकाश रूप है इस दृष्टीको लिये मैं पवन को स्वप्रकाश कहतीथी पवनको आत्मा ते भिन्न कर स्वयंप्रकाश नहीं कहतीथी यह कहकर कोकिला तूष्णी भई बृहस्पतिने कहा हे पुत्र निश्चय जो चाहिये ऐसाही दृढ़ चाहिये निश्चय बिना जो कहता है सुनताहै चिंतन कर्ता है सो सब अकार्थ है कहता है मैं दृष्टा सर्व दृश्य काहों तथा निर्विकार बंध मोक्षते रहित हों मुझको किंचित्मात्रभी निवृत्ति अरु मोक्षकी प्राप्ति वास्ते कर्तव्य नहीं मैं चैतन्य निष्कर्तव्य निर्विकल्प हों पर इस कथन चिंतन पर दृढ़निश्चय नहीं तो व्यर्थ है तिसने अपने स्वरूप अमृतको नहीं पान करा काहेते स्वभावसे बंध मोक्ष ते रहित जब आपको मन शरीरादिक संघात तथा संघातके धर्मोंते जुदा सम्यक् जानताहै तब बंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्ति वास्ते सर्वका यत्न है तिस यत्न ते रहित हुआही शांति होताहै अन्यथा नहीं हे कच तू आप सहित सर्व शिवरूप जान कचने कहा हे पिता दृढनिश्चय होना

नहोना सर्व रूप जानना तथा न जानना यह अंतःकर्णका धर्म है अरु मैं चैतन्य निश्चय अनिश्चयका प्रकाशक अवाङ्मनसगोचर हों बुद्धिका धर्म निश्चय अनिश्चय मुझको स्पर्श नहीं करसक्ता बृहस्पतिने कहा हे पुत्र सर्व इंद्रियोंके व्यवहार होते वा न होते सर्व कल्पित नाम रूप संसारका अधिष्ठान हुआ हुआभी अवाङ्मनसगोचर संसार ते अपने प्रत्यक् आत्माको अवाङ्मनसगोचर सम्यक् जानना यही ज्ञान निश्चय है यही परमभक्ति है हे पुत्र शरीर नाश हो तोभी अपना सत निश्चय न त्यागे अरु पिता पुत्रका अहंकार भी त्याग तू चैतन्य आत्मा है न तू किसीका पुत्र है न किसीका पिता है यह संसार भ्रममात्र है जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्न प्रपंच रूपभी तिसते अगोचर भी है स्वप्नवत् पिता पुत्रादि रूप भी तूही है हे पुत्र तेरा स्वरूप आत्मा स्वतः सिद्ध सुख दुःख रूप बंध मोक्ष ते रहित निर्विकार निर्विकल्प है आकाशकी न्याई तुझ चैतन्य सर्वके साक्षीका बंध मोक्ष वास्ते किंचित् मात्रभी कर्तव्य नहीं जैसे स्वप्नद्रष्टा चैतन्यको स्वप्न प्रपंचकी बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते किंचित्भी यत्न नहीं भ्रम विना जैसे कोई कंठमें मालाहै अरु भ्रमसे खोई जानता है अरु आपको दुःखी मानता है अरु प्राप्ति वास्ते यत्न करता है परंतु माला खोई जन्य दुःखकी निवृत्तिवास्ते अरु मालाकी प्राप्तिवास्ते किंचित् मात्रभी भ्रम विना कर्तव्य नहीं कचने कहा हे पिता जो तुम कहो सो मैं करों बृहस्पत्तिने कहा हे पुत्र आप सहित सर्वको आत्मस्वरूप सम्यक् जानना वा आपको पंचकोश रूप त्रिते शरीरका तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आदि सर्व प्रपंचका आपको अपने स्वरूप चैतन्य साक्षी जानना वा साक्षी असाक्षी भाव छोड़के केवल आपको अवाचपद सम्यक् जानना वा न तू है न मैं हों जगत् केवल चैतन्य स्वयं प्रकाश मैं आत्मा हों यही परमतप है वा इस तपका साधन भूत अन्न मयादि कोशोंका तथा आत्माका अन्यय व्यतिरेक युक्ति करके जाग्रतादि अवस्था ते आत्माको भिन्न जानना साधन रूप इस विचार रूपी तपको जब सम्यक् करोगे तब पूर्वोक्त परम तप रूप फलको पावोगे इस विचाररूपी तपके शम दम वेदाध्ययनादि तप अनेक साधन हैं यह मुझका उपदेश यथार्थ जानो अरु मनमें राखो पूर्ण तप पिछानना अपने स्वरूपका है जब देहाभिमान

परिछिन्न दूर हुआ पीछे जो शेष है सो अवाचपद है वही अपना रूप है हे पुत्र वंध मोक्षरूप कालका भयरूप तपत मनते दूर होजानी इस सम्यक् अधिष्ठान ज्ञानका नाप परमतप हैं हे कच त्वं पद नाम जीवपनेका अभ्यास तथा तत्पद नाम ईश्वरपनेका अभ्यास त्याग. अरु जहां जीवत्व ईश्वरत्वादि संज्ञा नहीं ऐसे असीपद ब्रह्मरूप चैतन्य अवाचपद आत्मा आपको जान जैसे जीव ईश्वर स्वप्नके स्वप्नद्रष्टा चैतन्यमें समाप्त होते हैं जैसे घटाकाश मठाकाश आकाश मात्रमें संज्ञा नहीं कचने कहा हे पिता संत कहते हैं बुद्बुदा नदीरूप नहीं होसक्ता जल कहें तो वनता है तुम कहो हो अपने बुद्बुदे रूप जीवत्वको त्याग ब्रह्मरूप समुद्रहो वृहस्पतिने कहा हे पुत्र इन स्वप्नकी वातोंमें तू स्वप्नद्रष्टा वंध मत हो काहेते त्वंपद् अरु तत् पद अरु असी पद केवल मनका मनन तुझ चैतन्य ते पृथक् कहनमात्र है जैसे नदी तलाव समुद्र जलते भिन्न कहनमात्र हैं जैसे स्वप्नका जीव ईश्वर ब्रह्म स्वप्नद्रष्टा चैतन्यते पृथक् कहनमात्र है हे पुत्र तुझ चैतन्य लाल की जीव ईश्वर ब्रह्म दमकां है तू चैतन्य अपनी महिमामें आप स्थित है कचने कहा हे पिता जो यह तीनों कछु नहीं तो जीव ईश्वर ब्रह्म भेद संतोंने क्यों कहा है हे पुत्र स्वप्नके संतोंने स्वप्नमे जीव ईश्वर ब्रह्मकी कथा कही तो तुझ स्वप्नद्रष्टा चैतन्यकी क्या हानि है जो ना कही तो क्या लाभ है न लाभ है न हानि है हे पुत्र जीव ईश्वर ब्रह्मादिक शब्दका अर्थ तुझ अनंत चिद् सत् रूप आत्मामेंही घटे है ताते तूहीं जीव ईश्वर ब्रह्म है अन्य नहीं हे पुत्र संतोंने जो कल्पना तत्त्वं असीपदकी करीहै सो जीवोंके कल्याण वास्ते करी है इनको विचार कर निज स्वरूपको पावे है कचने कहा हे पिता एकही चैतन्यके तीन भेद देखकर संतोंने कहा है कि सुनकर वृहस्पतिने कहा हे पुत्र सबने सुनकर कहा है काहेते आपते भिन्न कौन है जो एक अरु दो कहै कहना चिंतन करना मन वाणीका कर्म है देखना सुननादि श्रोत्र नेत्रादि इंद्रियोंका कर्म है तू चैतन्य स्वरूप आत्मा मनादि सर्व इंद्रियों ते अगोचर है तुझ चैतन्यको कौन देखे तथा कौन सुने कचने कहा तुम्हारे वचन ते आश्चर्यमान भया हों जो कछु संतोंने कहा सो निर्वीज निकसा तिस स्वप्नके सतसंग ते क्या लाभ है वृहस्पतिने कहा

हे पुत्र संतोंमें असंभावना मतकर संसारसमुद्र ते तरनेको सतसंग नवका है सतसंगसे आत्मविचार होता है जब विचारकर आत्मा स्वरूप सम्यक् अपरोक्ष जाना तव सतसंग कहां है हे पुत्र वास्तव ते तो ऐसे है जैसे स्वप्नकेही गुरु शास्त्र संत है तिनका संगभी स्वप्नकाही है मुमुक्षु वोध लेनेवाला तथा वोधसे पूर्व अज्ञान अरु अज्ञान जन्मवंध तथा वंध मोक्ष स्वप्न काहीहै सारांश यहकि अपने सच्चिदानंद स्वरूप आत्माते जो कछु पृथक् प्रतीत होताहै सो सर्व स्वप्न नाम मायामात्र मिथ्या है अरु भ्रमहै हे पुत्र भ्रम रूप स्वप्नते जाग्रत हो कचने कहा हे पिता कथा उन पक्षीयोंकी कहो जो अमृत समानहै वृहस्पतिने कहा तू निश्चय नहीं कर्त्ता कथा क्या कहों कचने कहा तुम्हारे संगते मुझकी बुद्धि नहीं रही निश्चय कौनकरे परंतु तुम्हारे संगते मुझको यह अनुभव हुआहै सो सुनो मैं चैतन्यरूप ब्रह्मात्मा निरुपाधि अक्रिय असंग हों शरीरका धर्म वाल युवा वृद्धादि तथा शरीरते असंग तिनका द्रष्टाहों मुझके स्वरूपमे न दिनहै न रात्रिहै उदय अस्तते रहित हों न हेयहै न उपादेयहै न जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति है नमैं स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरहों तात्पर्य यहकिं कार्य कारण संघात रूप जगत् मैं नही मैं मनादिक जगत्का द्रष्टाहों वा अस्ति भाति प्रियरूप द्रष्टा दर्शन दृश्य रूपभी मैं चैतन्य हों अरु द्रष्टा दर्शन दृश्यते परेभी मैं चैतन्य हींहों अवाङ्मनसगोचरभी मैं चैतन्य हों अरु वाङ्मनसगोचर भी मैं चैतन्य हीहों मुझ चैतन्यकी महिमा अवाचपदहै वाणीसे क्या कहों पर ब्रह्म यज्ञकहो मैं कानो विना सुनताहों तुम वाणी विना कहो वृहस्पतिने कहा मेरे संगने तुझको फलदिया जो आपा अहंकार तैंने विचार रूप अग्निसे जलाया अरु आप भया अव ब्रह्मयज्ञ सुन हे पुत्र सभ पक्षीएक भाषा कहने लगे जो हमारा स्वरूपहै सो न ग्रहण करा जावैहै न त्यागकरा जावैहै वंध मोक्ष ज्ञान अज्ञान माया अमाया हमारे स्वरूपमें नहीं अरु सर्व हमहींहैं कुलंगने कहा जो कछु तुम कथन चिंतन कर्त्तेहो सो मेरा स्वरूप नहीं तिसते मैं चैतन्य अतीतहों जो तुम कथन चिंतन कर्त्तेहो सो सभ उपाधिहैं सभने कहा उपाधि अनउपाधि धनी दरिद्री पाप पुण्य हमहीं हैं औरनते रहितभी हमहींहैं दिन रात्रि क्रिया अक्रिया कर्ता अकर्ता भोगता अभोक्ता योग अयोग सव हमही हैं

भूत भविष्यत् वर्तमान जो कुछहै सो सब हमहीं हैं अरु सर्वते अतीतभी हमही हैं जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्न प्रपंच रूपभीहै अरु तिस स्वप्न जगत्ते अतीतभीहै तैसे हम अस्ति भाति प्रियरूप सर्व हमहींहैं सर्व नाम रूप कल्पितका अधिष्ठान साक्षी द्रष्टा होनेते सर्वते अतीतहैं कोकिलाने कहा तुम सब वायु में धरे घट शब्दकी न्याई शब्द कर्त्तेहो काहेते जो पूर्णहै सो क्या कहे सर्वोंने कहा हे कोकिला जो संतोंने कहाहै सो क्या पूर्णनहीं कोकिलाने कहा कहना चिंतन करना द्वैतमें होताहै संतपद अवाच्यहै अरु संत अनिच्छितहै चाहनानहीं राखते तो क्या कहैं कहना चाहनामेंहै सबने कहा आपत्कामवचन कर्त्ता है कि नहीं कुलंगने कहा सम्यक् अपने ब्रह्मरूप आत्माके अपरोक्ष ज्ञाता पुरुष पर शास्त्रकी विधि नहीं वचन करो वा न करो तिसका द्रष्टाकोई अन्य नहीं आप स्वयंहै मयूरने कहा ब्रह्मा विष्णु शिव यह आपतकामहैं इसीते श्रेष्ठहैं कुलंगने कहा हे साधो सर्वथा विचारें तो मनादिकोंका साक्षी चैतन्य आत्माही आपतकामहै काहेते आपत काम होना अरु अनापत काम होना सब मनके स्वभावहैं तिनका साक्षी आत्मा निर्विकार निर्विकल्प है तिसमें आपतकाम अनापत कामादिनहीं अरु शरीरमें भी आपतकामता तथा अनापत कामता नहीं काहेते जड विकारी होनेते ताते चाहना अचाहना मनविषैहै अरु मन असतहै ताते तिसका कर्तव्यभी असतहै औ जब लग शरीरहै तबतक सर्व रीतिसे आपतकाम नहीं हो सकता चाहे ब्रह्मा विष्णु शिवादिक होवें ताते देहधारी किसी काममें तो आपत कामहोता है अरु किसीमे अनापत काम होताहै यह सर्वके अनुभव सिद्धहै ताते मनके धर्म आपत अनापत कामोंका साक्षी आत्माही सर्व रूपते आपत कामहै शिवने कहा हे कुलंग माता पिता तेरे कौनहैं कुलंगने कहा मैं चैतन्य आपही पिता माता पुत्र रूपहों अरु तिनते रहित भीहों अरु सर्व नाम रूप दृश्य रूपी पुत्रका पिता नाम कारण मैं चैतन्य हीहों मुझका पिता नाम कारण कोई नहीं स्वयं हों जैसे स्वप्नद्रष्टाही स्वप्नके निद्रारूप अविद्या कर माता पिता पुत्र रूप आपहीं है निद्रारूप अविद्याते रहित तिनते अतीत भीहै अरु सर्व स्वप्न प्रपंच का पिता नाम कारण भी आपहीहै तिसका पिता नाम कारण और कोई नहीं शिवने कहा

तेरा गुरु कौनहै कुलंगने कहा मैं चैतन्य गुरु शिष्य भावते रहित सर्वदृश्य जडका गुरु नाम शासना करने वाला हों तथा नियामकहों अरु गुरु शिष्य भी मैं चैतन्य हीहों स्वप्नवत् हे शिव यह सर्व दर्शन मेरा है अरु मैं चैतन्य अदर्शन नाम स्वयंप्रकाश स्वरूप हों शिवने कहा जात तेरी क्याहै कुलंगने कहा अजात हों जाति उपाधि है तथा मलीनहै मैं चैतन्य निरुपाधिहों तथा माया तत्कार्य रूपी मलते रहित हों शिव तेरा वचन केवल कहन मात्रहै मैं अवाचपदहों शिवने विष्णुसे कहा कुलंग क्या कहै है विष्णुने कहा यह सभका मूल उखाडता है काहेते आदि हम तीनो देवतों को उठाता है पीछे दृश्यको ताते इसका वचन सुनना योग्य नहीं शिवने कहा क्या भय है काहेते जो हम चैतन्य इसके आत्मा हैं अपने आत्माको कोई उखाड़नहीं सक्ता अरु नाम रूप दृश्यको तुमभी उठाते नाम असत कहते हो अरु आत्माको सत कहतेहो सोई यह बात कहता है धन्य है जो सम्यक् स्वरूप को जानता है मैं सर्व त्रिलोकीको ग्रास महाप्रलय में कर्ता हों पर जिसको अहंकार रहित सम्यक् निज बोध हुआ है सो मुझको ग्रास करलेताहै हे विष्णु इसी पर एक कथा सुनो एक समय भरथराजा नाम जिसके नामते यह भरथ खंड नाम पड़ा है सो राज्य छोड कर वनको गया तहां देखा तो केते तपस्वी शरीर इंद्रियोंको कष्ट देना रूप तप में आरूढ हैं केते ध्यान में लागेहैं अरु एक संत देखा जो आत्मविचार मेंहै अरु शिष्योंको उपदेशकर्ता है कि न तू न मैं न यह जगत् एक चैतन्य आत्माही है राजा निकट जायकर हाथजोडके कहा कि हे विद्वान् मुझको भी आत्म उपदेश करो इस असार संसार ते मुझको वैराग हुआ है तुम्हारी शरण आया हों संतने कहा ज्ञान उपदेश यही है जो हों मैं अहंकारको त्याग नाम न मैंहों न यह जगत् है एक चैतन्य विष्णु ही जान राजाने विचारा जो संत कहते हैं सो सत है पर जब सर्व विष्णु व्यापक चैतन्य है तो मैं कौन हों अथवा मैं विष्णु ही हों पुनः विचारा कि विष्णुको मैंने जाना है मैं जाननेवाला कौन हों पुनः राजाने संतको कहा हे विद्वानपुरुष विष्णु शिवको जाननेवाला मैं कौनहों संतने कहा तू ब्रह्म है यह वचन सुनकर विचाराकि जैसे मैं विष्णुको जानाथा तैसे ब्रह्मको जाना पर आपको नहीं जाना जो मैं कौन हों संतने कहा हे भरथ तत्त्वं आसिपद नाम जीव ईश्वर

ब्रह्म तुझ चैतन्य आत्मा करही सिद्ध होते हैं जो तू चैतन्य आत्मा न होवे तो इनको कौन जाने परंतु तुम चैतन्य आत्माका कोई सिद्ध करनेवाला नहीं तू स्वयंप्रकाश स्वरूप है काहेते तुम चैतन्य आत्मा सर्व के द्रष्टाका और कोई द्रष्टाहै नहीं इसीते तू स्वयंप्रकाश है हे भरथ जो कछु जीव ईश्वर ब्रह्म जगत् तत्कारण अज्ञान मन वाणीका कथन चिंतन है तिसते तू चैतन्य आत्मा परेही निकसेगा ताते तू मन वाणीका अगोचर है जीव ईश्वर ब्रह्म सब शेषहैं तू चैतन्य मात्र निर्विशेष है जैसे घटाकाश मठाकाश महाकाश निर्विशेष नाम निरुपाधिक आकाशमात्र करही सब शेष सिद्ध होतेहैं काहेते सविशेष नाम घट उपाधि वाले होनेते ताते तू विज्ञानको प्राप्त भया है तूष्णी हो भरथ कहा तूष्णी अ तूष्णी आदि सर्व व्यवहार मन वाणी शरीर आदि संघातका है मुझ चैतन्यका नहीं संतने कहा तूष्णी नाम निर्विकल्पका है सो तू चैतन्य आत्मा स्वतःसिद्ध ही निर्विकल्पहै काहेते मनादिकों की निर्विकल्पता अरु सविकल्पता का साक्षी द्रष्टा होनेते ताते अपने आत्माको स्वभाविक निर्विकल्प जानना इसीका नाम तूष्णी है भरथ यह संतका वाक्य सुनकर स्वरूपमें लीन भया हे विष्णु काल पायकर धर्मरायने दूतको भेजा भरथको ले आओ धर्मरायकी आज्ञासे जायकर दूत देखा तो भरथ नाम मात्र भी नहीं अंतर बाहर केवल शिवहै सारांश यह कि मैं भरथ हों इस परिछिन्न अहंकारसे रहित अस्ति भाति प्रिय रूप मै चैतन्य आत्मा हों सर्व मनादिक दृश्य ते रहित अरु मनादिक सर्व द्रश्यका द्रष्टा अवाङ् मन सगोचर स्वप्रकाशरूप हों यह तिसका दृढनिश्चय था अवाङ्मनसगोचर निश्चयभी मन वाणीका कथन चिंतन रूपही है सो मैं नहीं जो मैं हों सोई हों कथन चिंतन क्या करों दूत देखकर आश्चर्य हो रहा कि मैं किस वस्तुको शरीरते निकासकर धर्मरायपै लेजावों पुनः धर्मरायपै गया अरु कहा हे धर्मराय तू सभसंतोंको मार जो लोकोंको हमारे हाथते आत्म उपदेश कर छुड़ा देते हैं काहेते तुझकी आज्ञासे जब हम भरथ पै गये उसके देह अभिमानका खोजभी सर्व रूपकरखोजा पर न पाया देहाभिमान विना ल्यावें किसको हे धर्मराय तेरी फाँसमें देह अभिमानहीं पडदाहे अन्य नहीं तात्पर्य यह कि इस पंच भौतिक

संघातको अपना अहं अभिमान करनेसे ही यह जीव स्वर्ग नरकको जाताहै अन्यनहीं यह जगत् में प्रगट है कि जो दूसरे की वस्तुमें स्वत कर्त्ताहै वही न्याय पूर्वक जेलखानेमे जाता है हे विष्णुमैं विचरता हुआ भरथ पै गया सूक्ष्म दृष्टी से देखा तो यही कथन चिंतन कर्ताथा कि सर्व में चैतन्यही हों अरु सर्व ते अतीतभी हों पर यहभी कथन चिंतन मन वाणीकाहै मैं चैतन्य इन तेभी अतीतहों पुनः इस अतीतपने तेभी अतीत हों शिवने कहा हे भरथ तू धन्यहै जो स्वरूप सों जुड़ा है भरथने कहा जुड़ना न जुड़ना मुझ चैतन्यमें नहीं यह मायामात्र दृश्यमें है शिवने कहा जब सर्व तूही चैतन्य है तो दृश्य अदृश्य जुडना अजुड़नादिभी सर्व तूही है तो भरथ तूष्णी भया तूष्णी नाम निर्विकल्प अवस्थामें प्राप्त भया पुनः मैंने दो तीन वार प्रश्न किया कि हे भरथ तू कौन है उतर कछुन दिया काहेते तिसकालमें परिछिन्न भरथ भाव नहीं था किंचित् काल पीछे बोला बड़ा आश्चर्य है जो है आप शिव अरु पूछता है तू कौनहै हे शिव भरथको ज्ञानरूपी कालने खाया अरु कालको मैं चैतन्य स्वयंरूपने खाया काहेते भरथ नाम अज्ञानका है अरु अज्ञानको ज्ञान नाश कर्ता है सो ज्ञान मुझ चैतन्य अधिष्ठानमें लीन होजाताहै जैसे रज्जुके अज्ञानको रज्जुका ज्ञान नाश कर्ता है अरु वृत्ति रूप ज्ञानभी मायाका कार्य होने ते कल्पित रज्जु सर्पवत् है ताते सो ज्ञानभी ज्ञान स्वरूप चैतन्य अधिष्ठान रूपहै मैंने कहा हे भरथ मैं तुझपै आयाहों कछु आत्म निरूपण कहो भरथने कहा निकट दूर मुझ चैतन्यमें है नहीं अवाचपदको क्या कहों अरु मुझते भिन्न कौन है जो कहों स्वयंरूप हों शिवने कहा हे विष्णु जिस किस योनिमें स्थित हुआ२ यह बुद्धि आदिकोंका साक्षी चैतन्य आत्मा निर्विकार निर्विकल्प बंध मोक्षादि संसार धर्मोंते रहितहो स्थित है परंतु जबतक अपनी अद्भुत महिमाको नहीं जानता तब तक दुःखी संसारी भ्रम कर आपको मानता है जब पूर्व पुण्योंके प्रतापते संतसंग द्वारा अपने स्वरूपको सम्यक्र अपरोक्ष जानता है तिस तिस योनि शरीरके अभिमानते रहित हुआ हुआ तथा सर्व विश्वका आत्मा हुआ हुआ बंध मोक्षादि सर्व संसार धर्मोंते मुक्त होताहै तिसको कौन नाश करे विष्णु यह इतिहास सुन कर कहा हे शिव मैं सर्व जगतकी पालना कर्ता हों तू सर्व जगत्को संहार कर्ता है ब्रह्मा सर्व जग

त्की उत्पत्ति कर्ता है पर जो आपतकाम सम्यक् अपने आत्माको ब्रह्मरूप अपरोक्ष बोधवान है सो जगत् सहित हम तीनो देवतोंका पालक है पालक नाम अपनी सत् चित् आनंद स्वरूप स्फूर्तिकर सर्व असत जड़ दुःखरूप दृश्यको स्फुर्ना करे हैं नाम सत् चित् सुखरूप प्रतीति होवे है जैसे स्वप्नद्रष्टा अपने स्वरूप प्रकाश कर अप्रकाश स्वप्न प्रपंचको प्रकाशमान करे है इसीपर एक कथा सुन हे शिव एक राजाथा अरु एकही तिसका पुत्रथा सो बालपनेमें मुझकी उपासना कर्ताथा नाम बैठते उठते खाते पीते सोते जागते सर्व कालमें विष्णु विष्णु कहता था और राजविद्यादि कछु सीखे नहीं पिताने कहा हे पुत्र जब मैं शरीर त्यागोंगा तब राज्य कौन करेगा सर्व कालमें विष्णु विष्णु कहना अरु भूतकी न्याईं तिसके पीछे दौडनेमें क्या लाभहै जो कोई किसीका नाम वारंवार बुलावेहै वह क्रोध करैहै जिसका तू दिन रात्रि नाम लेताहै क्या वह क्रोध न करेगा किंतु करेगाही हे पुत्र विष्णु शब्द नाम जो वाचकहै सो किसी नामी वाच अर्थका वाचकहै यह तुझको विचार करा चाहिये विष्णु नाम सत् चित् आनंद व्यापक वस्तुकाहै सोई बुद्धि आदिकोंका साक्षी आत्मा तेरा स्वरूपहै सो अपने स्वरूपकी प्राप्ति वास्ते जंगलमें जाना अरु आत्मविचार विना और उपाय करना पुनः पुनः अपना नाम लेना लज्जाका कामहै हे पुत्र विष्णु तेरा आत्माहै जो तू विष्णुको अपने आत्मा ते पृथक् जानेगा तो विष्णु अनात्मा सिद्ध होगा तो तुझकी भक्तिका लक्षण सिद्धनहोगा इस प्रकार विद्वान पिताने अनेक रीति कही पर पुत्र वैसाका वैसाही रहा कछुक काल पायकर पिता तिसका कालवश भया पीछे शत्रुओंने राज्य लेलिया पर राजाके पुत्रको कछु हर्ष शोक नहीं भया मुझके स्मरणमेंहीं उन्मत्त रहा हे शिव मैं तिस पै गया अरु कहा हे पुत्र तू राज्यकर अरु प्रजा पालनाका बंदोबस्त मैं करोंगा वाने कहा मैं तेरीभी चाहना नहीं राखता तो राज्यकी क्या बातहै तुझते विशेष क्या वस्तुहै जो तुझको त्यागकर उसको लेवों राज्य सहित त्रिलोकीको मैंने तृण समान जानाहै उसकी तो यह अवस्था भई बनो विषे विचरने लगा अरु आप सहित सर्व विष्णुही कथन चिंतन करे कचने कहा हे पिता आप सहित सर्व विष्णु आत्मा चैतन्यहीहै यही ज्ञानहै बृहस्पतिने कहा हे पुत्र आप

सहित सर्व विष्णु आत्माही मेरा स्वरूपहै यह अर्थ सम्यक् बुद्धिमें जच जाना इसका नाम ज्ञानहै यह पूर्वोक्त अर्थ बुद्धिमें नहीं जचे किंतु विष्णु शिवादिकोंको अपने आत्माते पृथक् मानके तिनका नाम अरु स्वरूप कथन चिंतन करना इसका नाम भेद उपासना भक्ति है अरु आप सहित सर्व विष्णुहै वा ब्रह्महै वा वासुदेवहै इत्यादि तिनको अपनेसे अभेद संभावना करके जो परमात्माका सर्व रूपताका जो निरंतर कथन चिंतनहै सो अभेद उपासना भक्ति कहातीहै अरु मैं चैतन्य ब्रह्मरूप आत्मा अस्ति भाति प्रिय सर्व रूपभी हों अरु असर्व रूपभी हों अरु सर्व जगत्की मैं चैतन्य आत्मा उत्पत्ति पालना संहार करो हों अरु निर्विकार असंगहों सारांश यह कि त्रिपुटीरूपभी मैंहों त्रिपुटी ते रहितभी मैंहों अरु अवाङ्मनसगोचरभी मैंहों अरु वाङ्मनसगोचरभी मैंहों वाङ्मन-सगोचर अवाङ्मनसगोचर शब्दते भी अतीतहों तिस अतीतशब्दते भी अतीतहों इत्यादि अर्थ अपरोक्ष सम्यक् अंतःकर्ण में जचजाना इसका नाम ज्ञान है अरु इसी अर्थकी अपने स्वरूप में संभावना करनी इसका नाम अहंग्रह उपासना है अरु तत्त्वदर्शीअभेद उपासना कहतेहैं हेपुत्र जब अहंग्रह उपासनाके निरंतर चिंतन करते हुये ज्ञान नहीं प्राप्तभया तो अत्यंत अश्वमेधादि यज्ञोंका फलरूप वा अहंग्रह उपासना का फलरूप वा अत्यंत पुण्योंका फलरूप जो ब्रह्मलोक सप्तमी व्याहृति है तिसको प्राप्तहोता है तहां अनन्तब्रह्माकी आयुपर्यंत भोगोंको भोगकर ब्रह्माके उपदेशते वा सत्वगुणकी तहां प्रधानता होनेते स्वतःही पूर्व अहंग्रह उपासनाके प्रतापसे सम्यक् अपने स्वरूपका अपरोक्ष ज्ञान होता है पश्चात् ब्रह्माके साथ विदेह कैवल्य मोक्षको प्राप्तहोता है तिसकी पुनरावृत्ति नहीं होती इत्यादि शास्त्रों का लेख है अरु जिसको अहंग्रह उपासना करते इसी वर्त्तमान जन्म में अपने ब्रह्मरूप आत्मा का सम्यक् अपरोक्ष बोधहुआ है सो शरीर होतेही आपको बंध मोक्षादि संसारसे रहित आपको शिवरूप जानता है जीवन्मुक्ति अरु विदेहमुक्ति तिसको तुल्य है काहेते जीवन्मुक्ति अरु विदेहमुक्ति अनात्म मन शरीरादिक संघात का धर्महै आत्मा का नहीं अरु जो पूर्वजन्मो में कृत्यउपासक है सोश्रवण मात्र से वा स्वभाव सेही श्रवणविना वा वेदांत श्रवण मात्रते तिसको सम्यक् अपरोक्ष स्वरूपका प्रतिबंधकरहित ज्ञान होताहै हेपुत्र वह

राजाकापुत्र रात्रिको वन में विचरताथा तिस समय तिसी वनमें दत्त विचरतेहुये स्वभाव से राजाके पुत्रपास आवतभये अरु कहा इस समय तू कौन है राजपुत्रनेकहा मैं विष्णुका दासहों दत्तने कहा वड़ा आश्चर्यहै वह स्वामी अरु तू सेवक आपाहंकाररूप मलीनता तेरी दूर नकी अरु दास स्वामीभावरूपउपाधि दूर न हुई राजपुत्रने कहा जव सर्वविष्णुहै तो तूभी विष्णुहै अरु मैंभी विष्णुहों अरु यह जगत्भी विष्णुहै दूर समीपभी विष्णुहै पर कहो उपाधि मलीनता नाम रूप कैसे दूरहोवे दत्तनेकहा जव सर्वविष्णु है तो तू वीच में कौनहै जो आपको दासमाना है मानो विष्णुको तैंने खंड खंड कराहै यही उपाधि मलीनताभ्रम है जो एक अस्ति भाति प्रियरूप विष्णु आत्मा मैं दासस्वामी भाव बनाना यही भ्रमहै हे राजपुत्र सत् चित् आनंदरूप विष्णु तेरारूपहै आपा अहंकारको त्यागकर देख पीछे शेप अवाचपद है वही तेरा स्वरूप है दासस्वामीभाव कथन चिंतन संघातका धर्महै स्वप्नवत् है तू स्वप्नद्रष्टा चैतन्य स्वप्नव्यवहारों में क्यों वन्धमान होता है तथा क्यों भयमान होता है जव विष्णुको तू अपना आत्मा सम्यक् अपरोक्ष जानेगा तो विष्णु प्रसन्नहोगा काहेते विष्णु का स्वरूप यथार्थ यही है अन्य मायामात्र है मायाके भजन चिंतन से क्या लाभ है जो लाभ होगा तो मायाकाही होगा काहेते जैसे कोई भावनारूप उपासना कर्ता है वैसाही तिसका रूप होताहै मैं सत् चित् आनंदरूप आत्माहों ऐसी दृढ़ निरंतर भावना करेगा तो वही रूप होवेगा जो इससे पृथक् भावना करेगा तो वही रूप होवेगा राजपुत्रने कहा मुझको वैराग उत्पन्न भयाहै ज्ञान उपदेश करो दत्तने कहा नाम रूपका त्याग नाम मिथ्या जान प्रतीति मात्रही नाम रूपका स्वरूपहै भिन्न नहीं अरु अपनेको नाम रूपका अधिष्ठान सत् चित् आनंद स्वरूप जान जो कछु नाम रूपमें सारहै सो तूही है जैसे स्वप्नप्रपंचका सार स्वप्नद्रष्टाहै जैसे भूपणोंका सार स्वर्ण है इत्यादि अनेक दृष्टांतहैं राजपुत्रने कहा हे दत्त अपने स्वरूपको सम्यक् अपरोक्ष जानाहै नाम मैं मन वाणी आदि संघातका द्रष्टा मन वाणी ते अतीतहों अरु मन वाणीका विषयभूत त्रिपुटीरूपभी मैंहीं हों स्वप्नद्रष्टावत् दत्तने कहा हे राजपुत्र जव तक जानना न जानना तू अपने स्वरूपको जानेगा तव स्वरूपकी अप्राप्तीहै

जब जानना न जानना तुझके स्वरूपमें न रहा तो तुझको स्वरूपकी प्राप्ति भई काहेते तुझ अस्तिभाति प्रिय रूप आत्माते क्या जान
ना न जानना भिन्नहै जिसको तैंने जाना अरु न जाना जब तूही है तो काको जाने अरु काको न जाने राजपुत्र स्वरूप विषे लीन भया
हे शिव मैं अंतर्यामी रूपकर जाना जो दत्तने राजपुत्रको अपना सत उपदेश कर सम्यक् बोध कियाहै अरु इस रूप करके तिस
राजपुत्रके पास मैं गया अरु कहा हे राजपुत्र इस अपने शरीरको मुझको सौंप मैं इसकी योग क्षेम रूप पालना करोंगा राजपुत्रने कहा
हे विष्णु तुम सर्व जगत्की पालना मैं चैतन्य आत्मा करों हों काहेते तुझ विष्णु नामरूप सहित सर्व जगत् मुझ चैतन्य आत्माते प्रकाश
रासतहै मुझ चैतन्य आत्माका प्रकाशक कोई नहीं स्वयं हों जैसे स्वप्नदृष्टाही सर्व स्वप्न जगत्की पालना कर्ता है स्वप्नके कल्पित पदार्थ
कोई किसीकी पालना नहीं करसक्के तैसे मैं चैतन्यही सर्व इस नामरूप मिथ्या पदार्थोंकी पालना नाम स्फुर्ण कर्ताहों मैं तू मिथ्या पदार्थ
कोई किसीकी पालना नहीं करसक्ता हे शिवमैं तिस राजपुत्रके वचन सुनकर आश्चर्यमान होरहा कि इसको क्या भयाहै दास दास
पुकारता था आप भया यह कृपादत्तकीहै मैंने पूछा रूप तेरा क्याहै कहा रूप मेरा तूहै मैंने कहा मैं कौनहों कहा मैं हों हे शिव इत्या
दि अनेक वचन परस्पर कहे पर राजपुत्रको अचल बोध भया था अपने स्वरूपते न चलायमान भया यह अवस्था तिसकी देखकर
मैं बहुत प्रसन्न भया अरु अपने वांछित स्थानको गया वृहस्पतिने कहा हे पुत्र इस प्रकार आपसमें आत्मनिरूपण कर ब्रह्मा आदिक दे
वता अरु पक्षी आप अपने वांछित स्थानको गये पराशरने कहा हे मैत्रेय कच अपने अवाच पद स्वरूपमे स्थित भया तूभी
तिसकी न्याई हो मैत्रेयने कहा मैं नहींहों तो तिसकी न्याई क्या होवों जहां कछु क्रियाकर होनाहै सो ठीक केवल स्वांग मात्र
मिथ्याहै जो कछुहै सो आगेही स्वतःसिद्धहै केवल जाननाहीं योग्यहै पराशरने कहा तू कौनहै मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्यते भिन्न
कौनहै जो कहे तू अमुकाहै मैं अमुका हों जो किसी रीतिसे मुझ चैतन्य आत्माते भिन्न दृश्य कहोगे तो तिसको असत जड़ दुःख रूप
होनेते तोभी अहं त्वं फुरणा नहीं अरु मुझ अवाङ्मनसगोचर मेभी अहं त्वं फुरणा नहीं अब कौन कथन चिंतन करै मैं अमुकाहों

पराशरने कहा हे मैत्रेय तू स्वरूपको प्राप्त भयाहै अपने दृढबोधके वास्ते एक कथा सुन एक समय स्वाभाविक विचरते हुये दत्तका गभुशुंडके आश्रम में गये कागभुशुंड एकराजा हुआहै अरु सगुण विष्णुरूप रामका उपासकथा तिसके आसनते वहिर सो रहे अरु भुशुंडका कुमार नामा पुत्रने दत्तको देखा अरु पिताको कहाकि एकसंत नगरते वाहर सोया पड़ाहै आपको दर्शन करना योग्यहै पुत्रके वाक्य सुनकर कागभुशुंड अभिमानते रहित दत्तके पास आता भया अरु देखा तो सारा शरीर धूलिकर लिप्त है नहीं जाना जाता यह कौन है प्रश्नकिया हे राम रूप तू कौनहै दत्तसुनकर हँसा अरु कहा वड़ा आश्चर्य है कहताहै हे राम रूप अरु पूछताहै तू कौनहै हेकागभुशुंड जब सर्व रामहै तो तू अरु मैं भी राम हैं कागभुशुंडने कहा जब सर्व रामहै तो पूछना अपूछना भी रामहै दत्तने कहा हे कागभुशुंड तुझकी न्याई जो वर्ण आश्रम राखता होवे तिससे पूछ तू कौनहै कागभुशुंडने कहा हे दत्त वर्णाश्रमकी पोटका वोझ किसीने लादा हुआ नहीं वर्णाश्रम मानना नमानना केवल मनका मननहै जवतक शरीरहै तवतक कोई नकोई वर्णाश्रममें रहेगा काहेते वर्णाश्रम शरीरके धर्महैं जव धर्मी है तव धर्म भीहैं इन दोनों धर्म धर्मीते राम रूप आत्मा रहितहै शरीर नहीं दत्तने कहा हे कागभुशुंड यहीतो मैं कहता हों जो कछु तैंने अंतर वा वाहर कथन चिंतन मानाहै सो सव मन का मननहै तू रामरूप आत्मा इसते अतीतहै पर तुमको चाहिये एकांत वैठकर रामरामजपो कागभुशुंडने कहा हे दत्त तुम आपही कहचुके हो यह सर्व नामरूप मनका मननहै तो रसना रामराम कथन करे मन तिस राम शब्दके अर्थको चिंतन करे पर रामरूप आत्मा इनते परेहै अरु उरेभी रामरूप आत्मा हीहै ताते राम वा अन्य कथन चिंतन करना न करना रामही हुआ पुनःभुशुंडने कहा हे दत्त नगरको चलो दत्तने कहा स्थूल सूक्ष्म कारण समष्टी नगरका वा स्थूल सूक्ष्म कारण व्यष्टी नगरका तथा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तीनों नगरोंका तथा नगरनिवासी विश्व तैजस प्राज्ञ जीवोंका मैं चैतन्य एकही आकाशकी न्याई सर्वका आत्माहों अरु सर्व मेरे आत्मा हैं मैं कहांचलों चल अचल संघातका धर्म है मुझ चैतन्य आकाशका नहीं मैं चल अचलते अतीत सदाचल अचलका साक्षी हों जो शरीर का प्रारब्ध है सो ईश्वरकी भी शक्ती नहीं

जो बढ घटकरे हे भुशुंड देहाभिमान त्यागे पीछे अवाच रामही तेरास्वरूप है भुशुंड ने कहा देहाभिमानते रामकी भक्ति होती है
कैसे त्यागों दत्तने कहा सुनाथा कि कागभुशुंड परमहंस है देखा तो कागहै काहेते स्याना काग विष्ठा परही बैठता है माता पिताका म
लरूप यह शरीर मल है शरीराभिमानी कागहै मैं शरीरादिकहों तथा शरीरके जन्ममरणादिकधर्मवान्हों यह चिंतनही मलका भक्षण है
हे कागभुशुंड जिस रामचंद्र अयोध्यावासीका तू भजन कर्ताहै तिसकास्वरूप चैतन्य आत्मा मैं हों सो मुझ काही तू भजन कर्त्ताहैं वा-
स्तवते हे भुशुंड मुझ चैतन्यके अनेक रामादिक नामहैं अरु भजन रामका यही है आप सहित जाने सर्व वहींहै न और पर यह बुद्धि
तुमको कहांसे प्राप्त होवे पिता तेरा काग अरु माता तेरी हंसनी तैंने जानाहै जो माया मेरे निकट नहीं आती पर माया रूप
शरीरके साथ तू एकमेक हुआ हुआ माया रूपही तू है तेरे निकट माया कैसे आवे इसीको माया कहते हैं जो स्वामीदास-
भावते रहित चैतन्यमात्रमें स्वामीदासभाव कल्पना हे भुशुंड ज्ञानदृष्टीसे वा भक्तिदृष्टीसे देख जबतू परिछिन्न कछु बनता है तो
रामभी है जब तू नही शेष जो है सो अवाचपद है तिसको अनेक रामादि नामोंके बोध वास्ते नाम राखे हैं पर कहो माया किसको
कहते हैं भुशुंडने कहा रामरूप आत्माते पृथक् जो कछु जानना है सोई मायाहै दत्तने कहा इसीते नित्य चिद सुख निज
आत्माते भिन्न तत् त्वं ब्रह्मकी प्रतीति करना मायाहै भुशुंडने कहा हे दत्त संत जो यह चिंतन कर्त्ते हैं अहंब्रह्मास्मि यह कैसें है दत्तने
कहा यह चिंतन मनका मनन मायारूप है काहेते तत्त्वं ब्रह्मादिक पदोंकी इसने कल्पना करी है यह कल्पना नहीं करे तो
तत् त्वं आदिक कहां हैं काहेते ज्ञान प्रथमकालमे मैं ब्रह्म नहीं जीव हों औ ज्ञानपीछे ब्रह्महों विचार देखें तो जीव ब्रह्मते
प्रथमही इस साक्षी चैतन्यकी सिद्धी होतीहै अरु इस साक्षी चैतन्य ने ही जीव ब्रह्मको प्रकाश करा जो यह प्रथम सिद्ध नहीं
होता वृत्तिरूप ज्ञानतेपूर्व अपनेमें ब्रह्मका अभावपना अरु जीवका सतपना अरु ज्ञानपाछे अपनेमें ब्रह्मका सद्पना अरु
जीवका अभावपनेका कैसे अनुभव होता किंतु नहीं होता ताते मनके मननरूप सर्व पद इस साक्षी चैतन्य ते ही

प्रकाश राखते हैं काहेते ज्ञानपूर्व कालमें मनने आपको जीवमाना ब्रह्म नहीं माना इस व्यवहारको भी साक्षी चैतन्यने प्रकाशकरा अरु ज्ञान उत्तर काल में मननेही आपको ब्रह्ममाना जीव नहीं माना यह भी व्यवहार साक्षी चैतन्यने सिद्धकरा विचार देखो तो कभी जीव मानना कभी ब्रह्म आपको मानना केवल मनका मनन है अरु प्रत्यक् आत्मा तो सर्व मनकी कल्पनाका साक्षी अरु मनके मनन ते परे है जैसे स्वप्नके तत्त्वं असीपद तथा सर्व स्वप्नके पदार्थ एक स्वप्नद्रष्टा करही सिद्ध होते हैं अरु सर्वसे स्वप्नद्रष्टा प्रथम सिद्ध है सुख दुःखते रहित यह पद विज्ञान ते प्राप्त होता है भुशुंडने कहा रामरूप आत्मा विषे प्राप्त अप्राप्त दोनों नहीं सबमें रमण करनेवालेको राम कहते हैं तिसमें सुख दुःख दोनों नहीं हे दत्त अंतःकर्णरूपी दर्पणके मलके दूर करनेके अनेक साधन हैं साधनो बिना साध्य नहीं प्राप्त होता ताते राम सर्व साधनोंका साध्य है. तहां मीमांसा आवत भया अरु कहा जो वेदोक्त कर्म नहीं करे राम रूप कैसे होय दत्तने कहा आत्मा अक्रियहै अरु शरीर जडहै कहो कर्म कौन करै अरु कर्मों ते राम रूप होताभी नहीं काहेते जो यह राम नहीं तो हजार वेदोक्त कर्मोंके करने ते राम कैसे होगा जो रामरूप आगेहीहै भ्रमसे अराम रूप आपको माने है भ्रमकी निवृत्तिसे वही रूप होता है जैसे चिनगारा भ्रमते आपको अग्निरूप न माने भ्रमकी निवृत्ति ते वही अग्नि रूप होताहै अनेक कर्म करनेसे अग्नि शीतलरूप नहीं होता जल अग्निरूप नहीं होता मीमांसा तूष्णा भया तिस समय वैशेषक आता भया अरु कहा सर्व जगत् कालके अधीन है दत्तने कहा कर्म है तो अधीनताभीहै जब कर्म नहीं तो अक्रिय अविनाशी स्वतंत्र असंग आत्मा विषे कालका क्या संबंधहै वैशेषक तूष्णी भया पुनः न्याय आवत भया अरु कहा जो कछु कर्त्ता है सो ईश्वर करताहै दत्तने कहा कर्म है तो कर्त्ताभी है जो कर्म नहीं तो कर्त्ता कहां है दंडसे दंडी है दंड नहीं तो दंडी कहां है न्याय तूष्णी भया अरु पतंजली आवत भया अरु कहा योगते मुक्ति होती है दत्तने कहा योग स्वप्रकाश है कि किसीका किया होता है पतंजलीने कहा जानीता है किसी कर्तासे योग होता है दत्तने कहा कर्ताका क्या स्वरूप है मन वा आत्मा पतंजलीने कहा प्रत्यक् आत्मा असंग निर्विकार है

बाकी शेष जड चेतनके मध्यवर्ती साक्षी चेतनके आभास सहित अंतःकर्णही योगका कर्ता है आत्मा पुरुष योगका अनुभव कर्ता है दत्तने कहा अधिकारी पुरुषने आपको क्या जानना चाहिये आत्माके अंतःकर्ण पतंजलीने कहा आत्मा दत्तने कहा आत्मामे योग है वा नहीं पतंजलीने कहा नही दत्तने कहा फिर योगसे क्या प्रयोजन है पतंजली तूष्णीभया पुनः सांख्य आता भया अरु कहा जो नित्य अनित्य विचार करे विना स्वरूपकी प्राप्ती नही होती दत्तने कहा नित्य अनित्यका विचार द्वैतमें होता है अरु मनके धर्म नित्य अनित्य विचारते आत्मा असंगहै साक्षी होनेते सांख्य तूष्णी भया अरु लक्ष्मण सीता सहित राम आवत भये दत्तने कहा हे भुशुंड कहो मैं रामरूपहों नहीं तो तुझको तथा रामको दोनो तुम जीव ईश्वरको भस्म करोंगा जैसे स्वप्नके जीव ईश्वर स्वप्नद्रष्टाके जाग्रत हुये नाश होते हैं राम सुनकर हँसे अरु कहा हे भुशुंड निःसंशय निर्भय होकर कहो मैं रामरूप हों काहेते जब सर्वेरामहै तू जुदा कहाँ हैं तूभी राम है भुशुंड प्रसन्न होकर कहा राम कहने से नहीं होता दृश्य दृष्टा नहीं होसक्ता दृष्टा दृश्य नहीं होने सक्ता यह न्यायहै रामने कहा हे भुशुंड स्वप्नमे दृष्टा स्वप्नदृष्टा ही दृश्य रूप होताहै अरु दृश्यका स्वप्नदृष्टा ते भिन्न स्वरूप कछुनहीं ताते वह निषेध पक्ष अपने स्वरूप आत्माकी असंगता तथा निर्विकारताके वोध अर्थ है अरु सर्व रामहै यह विधि पक्ष फल रूपहै पराशरने कहा हे मैत्रेय राम अरु दत्तके वचन ते भुशुंड स्वरूपको प्राप्त भया हे मैत्रेय तैंने कभीभी वर्णाश्रम अभिमानका कारण जो देहाभिमान है तिसको न त्यागा मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्य विषेदेह होवे वा मुझ चैतन्य का देह धर्म होवे तो त्यागभी करों अनहुई वस्तुका त्याग कैसेकरों दूसरा यह कि मुझ चैतन्यको देहाभिमान किंचित् मात्रभी हर्जनही करता जैसे स्वप्न नरक देहाभिमान स्वप्नद्रष्टाको हर्जनहीं कर्ता काहेते मुझ चैतन्यको असंग स्वप्रकाश होनेते दृष्टाका हर्ज दृश्य कछु नहीं करसक्ता जैसे पृथिवी अप तेज वायु तथा तिनके कार्य तिनमें व्यापक असंग आकाशका हर्जा नहीं कर सक्ते देहाभिमान मनकरे हैं तथा नहीं करे है इन दोनो अवस्था का साक्षी मुझ असंग चैतन्य की क्या हानिहै जो मुझमे अभिमान हो तो

मैं त्यागों भी जो नहीं हो तो त्यागों कैसे पराशरने कहा यह सब तू वातें बनाताहै निश्चय नहीं मैत्रेयने कहा ठीकहै आपने कहा जो मुझ अवाचपदको बुद्धि निश्चय कैसे करे बुद्धि तो नाम रूप काही निश्चय करे है मैं नाम रूपते रहित हों पराशरने कहा हे मैत्रेय इस पर एक इतिहास सुन एक राजाथा अरु कपिलमुनिके दर्शन कर्ताथा एक दिन प्रश्न किया किहे ऋषि यह जगत् क्या है अरु तू कौन है अरु मैं कौन हों ऋषिने कहा न तू न मैं न यह जगत् एक ब्रह्म हीहै तू मैं यह जगत् सभ ब्रह्मस्वरूप है राजाने कहा मैं तू जगत् नहीं तो ब्रह्म क्या है ब्रह्मको नहीं जानता कपिलने कहा ब्रह्म तुझ ते प्रकाश राखतहै काहेते जब तैंने शास्त्र संतोंका वचन नहीं सुनाथा तब तू ब्रह्म शब्दके अर्थको जानताही नहींथा काहेते ब्रह्म शब्द वा ब्रह्म शब्दका अर्थ ग्रंथोंमें लिखरक्खा है कोई तुझ चैतन्य ते पृथक् देशांतर मे वा सन्मुख देशमें ब्रह्म खेलता नहीं फिरता जो जाना जावे अरु न जाना जावे परंतु गुरु शास्त्र ते ब्रह्मादिशब्द अरु ब्रह्मादिक शब्दके अर्थ सुने पूर्व तू प्रत्यक् आत्मा था जो तू पूर्व न होता तो ब्रह्मको सुनता कौन पुनः सुनकर ब्रह्मको जाना अपने आत्मासे भिन्न करके वा अभिन्न करके हे राजन् जो वस्तु जानने न जानने मे आई तो जानने न जानने वालेका प्रकाशक सिद्ध होताहै जो जानने मे आवे सो प्रकाश्य सिद्ध होताहै जैसे नेत्र नीलादि रूपके जानने वाले प्रकाशक सिद्ध होते हैं अरु रूप प्रकाश्य सिद्ध होताहै ताते तुझ प्रत्यक् चैतन्य आत्मा हीते ब्रह्म प्रकाश राखता है राजाने कहा ब्रह्मके सिद्ध करने वाला मैं कौन हों कपिलने कहा सत् चित् आनंद रूप तेरा है राजाने कहा सत् चित् आनंद रूप ब्रह्म है ऐसे श्रुति कहती है कपिलने कहा ठीकहै यह पूर्वोक्त लक्षण तुझबुद्धि आदिकोंके साक्षी मेंही घटेहै ताते तूही ब्रह्महै जैसे निरुपाधि महाकाशमें अवकाशदातृत असंगता अलिप्तता व्यापकतादि लक्षणा व सोई घटाकाशमें घटेहै ताते घटाकाश महाकाश रूपही है हे राजन् सत् चित् आनंद रूप स्वरूप वस्तुको ब्रह्म कहो चाहे प्रत्यक् साक्षी कहो नामांतरकाभेद है नामीका भेदनहीं राजाने कहा मैं शरीर ते भिन्न हों कि शरीर रूपहों कपिलने कहा तू शरीर नहीं शरीर तुझते प्रगट भया है जैसे स्वप्नद्रष्टा शरीर नहीं स्वप्नके शरीरादिक स्वप्नद्रष्टा ते प्रगट भये हैं

राजा यह वनच सुनकर हँसा अरु कहा हे मुने मुझ एक चैतन्य विषे द्वैत पद कैसे कलपते हो काहेते प्रथम मे मुझको अद्वैत कहते हो पीछे कहते हो तू शरीर नहीं जड चैतन्य दो पद भये मुझ चैतन्य अवाचपद विषे एक पदकी भी समाई नहीं तो दो कैसे होवेंगे कपिलने कहा सम्यक् स्वरूप जाने विना हे राजन् यह कहन मात्रही है स्वरूप जानना कठिन है राजाने कहा हे गुरु वह कहना जानना क्या है सो कहो कपिलने कहा जो तुझ चैतन्य में कहना जानना होय तो मैं कहों दोनो ते तू परे है हे राजन् कहना जानना वही है जिसके कहने जाननेसे मायासे लेकर देह पर्यंत वा ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका कहना जानना हो जावे हे राजन् अपरोक्ष निश्चय तब होता है जब विज्ञान होता है विज्ञान परोक्ष ज्ञान ते होता है अरु ज्ञान ते उपासना रूप भक्ति होती है अरु भक्ति वैरागसे होती है अरु वैराग शुभकर्मोंके अनुष्ठानसे होता है ताते हेराजन् इनको तू क्रमसे करो राजाने कहा जब मैं आपही हों अपनी प्राप्ति वास्ते निश्चयादि करनेसे क्या प्रयोजन है कपिलने कहा जो तू है तो निश्चय भी तू कर राजाने कहा निश्चय कल्पना ते होता है मैं चैतन्य निर्विकल्प हों निश्चय अनिश्चय मुझ विषे नहीं यह बुद्धि आदि संघात का धर्म है अरु किस वस्तु का निश्चय करों जो मुझ अस्ति भाति प्रिय रूप आत्मा ते पृथक् कछु नहीं जिसका निश्चय करों कपिलने कहा वेद कहै है जाग्रत में नेत्रों विषे स्वप्न में कंठ विषे सुषुप्ति में हृदय विषे तुरीया दशवें द्वार विषे ब्रह्मरूप आत्मा निवास कर्ता है यह निश्चय कर राजाने कहा और अंगोंने क्या पाप करा है जो उन में आत्मा नहीं वा आत्माको सर्व अंगों में रहने में शर्म आता है आकाश की न्याई आत्मा सर्व में पूर्ण है ऐसे नहीं कि एक स्थान में है एक में नहीं न्यूनाधिक नहीं है सर्वकाल में सर्व स्थान में एकसा है कपिलने कहा सूर्य का प्रकाश सब ठौर पूर्ण है परंतु जहाँ दर्पण जलादि होवें तहाँ प्रतिबिंब सहित सूर्यका विशेष (द्विगुन)प्रकाश होता है अन्य घट पटादि पदार्थों में आभास भी नहीं अरु सूर्य घट पटादियों में विशेष जलादिकोंकी न्याई प्रकाश कर्ते परिश्रम भी नहीं होता वस्तु स्वभाव है ताते जो आत्माको अपरोक्ष सम्यक् देखा चाहै तो पूर्वोक्त स्थानो में सुख पूर्वक दर्शन

होगा अन्यत्र नहीं तिस समय विचरते हुये दत्त आवत भये अरु कहा सर्व जगत् रूपी भूषणों विषे मैं एक स्वर्ण रूप आत्माहों कपिलने कहा जो तू ही सर्व है तो सुनाता किसको है दत्तने कहा आपही वक्ता श्रोता तथा वक्तव्य रूपहों अरु इनते अतीत भी हों यह वचन सुनकर राजा स्वरूप विषे लीन भया अरु कपिल दत्त भी अपने आत्मस्वरूपके चिंतन में लीन भये कोई काल पीछे दत्तबो लत भये अरु हँसे कहा बड़ा आश्चर्य है कि मुझ चैतन्य स्वरूपमें मनका लीन होना तथा लीन न होना तथा उदय होना तथा सम होना यह सब मनकी अवस्था है इन अवस्थाके साक्षी भूत मुझकी नहीं है अरु इन अवस्थाके होने मिटनेसे मेरीहानि लाभ नहीं है हेकपिल जीव ईश्वर ब्रह्मकी मुझ चैतन्यने संज्ञावांधी है जीव ईश्वर ब्रह्मने आयकर मुझ चैतन्यकी संज्ञा नहीं बांधी कपिलने कहा हे राजन् ब्रह्म यज्ञकर स्वभाविक ब्रह्म यज्ञ आन प्राप्त भयाहै राजाने कहा करना न करना मुझ विषे नहीं पर करताहों कपिलने कहा हे दत्त तेरा रूप क्याहै दत्तने कहा नामरूप मुझमें नहीं जो तू स्वरूपते अज्ञातहै तो सहस्र वर्ष पर्यंत नाम रूपको कहोंगा तो तुझको क्या लाभहै स्वरूप जानाहै तो तूष्णी हो कपिलने कहा तूष्णी अतूष्णी जानना न जानना मन वाणीका धर्महै मुझ चैतन्य को इनके व्यवहारमें तुल्यताहै दत्त तूष्णी भया राजाने कहा तूष्णी मतहो सर्व रूप तेराहै तू सर्वका रूपहै कछु कहो अरु कछु सुन कपिलने कहा वचन बुद्धि तकहै बुद्धि नहीं रही वचन कैसे करों दत्तने कहा तू चैतन्य बुद्धिके अधीन नहीं उलटा बुद्धि आदिक जड तुझ चैतन्यके अधीनहैं कपिल तूष्णी भया पुनः स्कंद आवता भया अरु कहा हेसभा कछु कहो जामे कहना नहीं क्यामैं चैतन्य अवाङ मनसगोचर अरु वाङ्मनसगोचरहों राजाने कहा तू कौन है स्कंदने कहा वहीहों जो तू है तुझको कौन कहे जो तू कौनहै राजा तूष्णी भया कपिलने कहा हे दत्त तू कहांसे आयाहै अरु कहां जावेगा अरु तेरे माता पिता कौनहैं तेरा गृह कौनहै दत्तने कहा जहाँसे तू आयाहै तहाँसेही मैं आयाहों जहाँ तू जावेगा वहांही मैं जावोंगा जो तेरे माता पिताहैं सोई मेरेहैं जो तेरा गृहहै सोई मेरा है कपिलने कहा तेरा गोत्र कौनहै दत्तने कहा मैं अगोत्रहों परंतु जो तेरा गोत्रहै सोई मेरा गोत्रहै हे कपिल तू अपनी उपमा

159

सर्वमें जान ले आना जानादिक शरीरका है तथा शरीर पंचभूत रूपहै तथा सर्व शरीरोंके माता पिता प्रकृति पुरुषहैं तथा चैतन्यही सर्व शरीरोंका गोत्रहै सारांश यह कि चैतन्य दृष्टी कर वा मायादृष्टी कर वा पंचभूत दृष्टी कर वा पंचभूतोंका कार्य रूप दृष्टी कर जो तुझका प्रकरण है सोई सर्व जगत्का प्रकरणहै अन्यथा नहीं जो एक स्वप्ननरका हालहै सोई सर्व स्वप्ननरोंका हालहै स्वप्नदृष्टा दृष्टिसेभी सर्वका हाल एकही है अन्यथा नहीं कपिलने कहा मुझमें नाम रूपके अभावका अभावहै दत्तने कहा नाम रूपमें भेद मत जान नाम रूपभी तूही है कपिल तूष्णी भया अरु सर्व निर्विकल्प होगये कोई काल बीता तो स्कंद बोले आत्मज्ञानका साधन प्रणवके अर्थरूपका चिंतन वा अंतर प्रणवका मानसी उच्चारण अधिकारी जनोंने करना कपिलने कहा सर्व वचनोंकी समाप्ति प्रणवमेंहै प्रणवते उपरांत वचन नहीं प्रणवका जो उच्चारण श्रद्धा पूर्वक सदा कर्ता है मानो चारों वेदोंका पाठ नित्य प्रति तिसका होता रहताहै काहेते चारोवेद प्रणवरूपहैं अरु एकअक्षरका छंदहै ॥ इसीते इसके उच्चारणते शुद्धि अशुद्धिभी नहींहोती तथा सर्व स्त्री पुरुष चारों वर्णाश्रम प्रणवके अर्थ चिंतनके तथा प्रणवके मानसिक वाचिक उच्चारण करने के अधिकारी हैं दत्तनेकहा हे कपिल प्रणवका माहात्म्य ऐसेहीहै परन्तु प्रणव शब्दमात्रहै तथा परतंत्रहै तथा जड़है आत्मा अधिष्ठानमें जैसे घट पटादि सर्व नाम रूप द्रश्य कल्पित हैं तैसे प्रणवभी कल्पित है आत्मा विषे भेदनहीं जैसे स्वप्नमें घट पटादि स्वप्नदृष्टामें कल्पित हैं तैसे स्वप्नका प्रणवभी स्वप्नदृष्टामें कल्पितहै न्यूनाधिक भावनहीं आत्मातेही सतहै आत्मापृथक् सर्व प्रणवादि मिथ्यामायामात्रहैं हे कपिल मन वाणीकी क्या ताकत है जो आत्माबिना एकाक्षरका अर्थ तथा उच्चारण चिंतन करसके संतों का पद बुद्धिते परे है बुद्धिमान संत पदको क्याजाने काहेते बुद्धिमान बुद्धिके अधीनहै संत बुद्धितेपरे पदविषे स्थितहैं हे कपिल वचन मेरा ज्ञानीसुने तो तिसको दृढ़ ज्ञानहो भक्तसुने तो तिसको भक्तिहो अज्ञानीसुने तो तिसको भक्ति ज्ञान प्राप्तहो स्कंदनेकहा जोतू ऐसाहै तो मुझको क्यासुखहै हे दत्त जिस में जोगुण दोष है सो उसीको सुख दुःख कहतेहैं अन्यको नहीं दत्तने कहा वचन मेरा वहीहै जामें वचननहीं परकहोंहों सर्व जगत्की उत्पत्ति पालन संहा-

रादि सर्व व्यवहार तथा इस संघातका व्यवहार मायाकर कर्त्ताहुयाभी मैं चैतन्य निर्विकार सर्वते अतीतहों जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्वस्वप्न व्य-
वहारकर्ता भी निर्विकार सर्वते अतीत है जैसे नट सर्वस्वांग करताभी अपने नटत्वभाव निश्चयको नहींत्यागता इसीते सर्वस्वांगकर्ता
भा सर्वस्वांगोंते अतीतहै काहेते स्वांगोंके अभिमानते रहित होनेते पराशरने कहा हे मैत्रेय वह संत अनेक वचन कहते भये तू कछु
नहीं कहता मैत्रेयने कहा कहनामेरा वहांहीं योग्यथा अब क्याकहों पर मैं संत असंत दोनों नहीं कहे कौन अरु सर्व मैंहीं कहताहों यह
तुमको भ्रांति है जो वह संत कहतेथे तहांभी मैंहीं कहताथा तथा सुनताथा अबभी मैंहीं कहता सुनताहों आगेभी मैं चैतन्यहों पीछेभी
मैंहों उर्द्ध अर्द्ध दशोदिशा मैंहींहों पराशरने कहा सतसंग कर मैत्रेयने कहा तुझके सतसंगते मैं नहींरहा जैसे पारसके संगते लोहा भाव
नहींरहता इसते परे और कौन सतसंग है यही परमसुख है पराशरने कहा जो आप न रहा तो सुख क्या आपेतकही सुख है मैत्रेयने
कहा परिछिन्न आपाअहंकार का न रहना अरु सर्वरूपहोना यही आपा न रहना है पर ब्रह्मयज्ञकहो पराशरने कहा अबतक अज्ञानमें
तू बंध है ब्रह्मते भिन्न क्याहै जो कहों ब्रह्मको अपना आत्मा जानना यही ब्रह्मयज्ञ है पर ब्रह्मयज्ञ सुन स्कंदने कहा मैंने सुनाथा कपिल
परमहंस हैं पर तुझको स्वरूपकी अप्राप्तहै काहेते सर्वब्रह्म तू बीच जुदा कहांसे रहताहै कपिलने कहा तैंने सत्य कहा अज्ञान
ज्ञानकी मुझ चैतन्य में समाईनहीं दत्तने कहा मुझस्वप्रकाश चैतन्यकर तुम ज्ञानी अज्ञानी आदिकोंकी सर्वकी स्फूर्ति
होती है जैसे रज्जुकरही सर्पादिकोंकी स्फूर्ति होतीहै कपिलने कहा हे स्कंद स्वरूप तेरा क्या है शरीरके वा मनादिकोंका
साक्षी आत्मा स्कंदने कहा शरीर अरु आत्मा दोनोंके अहंकार ते नम्रहों काहेते अवाचपद होनेतें ताते तूभी देहाभिमान
रूपी पहरावे ते रहितहो कपिलने कहा हे दत्त जहां मैं तू जगतादि शब्द नहीं सो कौन है दत्त तूष्णी भया काहेते
वचनकी आगे ठौर नहीं तिस समयमें लोमसऋषि आवत भया अरु कहा मैं चैतन्य कालका भी काल हों यह सब
प्रजा मुझ चैतन्य रूपकालके मुखमें महाप्रलयमें आन पड़ती है जैसे समुद्रमें नदियां आन पड़ती हैं मुझहीसे प्रगट होती

140

हैं अरु मुझ चैतन्य में स्थित हैं पर मैं चैतन्य आत्मा एकसा हों दत्तने कहा इस तेरे कथन चिंतनका दृष्टा मैं हों लोमशने कहा दृष्टा दृश्य दर्शन तीनोंके दृष्टाका दृष्टा कोई नहीं यह अनुभवसिद्ध है तू कैसे दृष्टाका दृष्टा भया है दत्तने कहा हे लोमश तैंने जो कथन चिंतन करा कि मैं त्रिपुटीका दृष्टाहों परकहो यह चिंतन किसने करा लोमशने कहा मनने करा दत्तने कहा लोमश तैंने आपको मन रूप मानके त्रिपुटीका आपको दृष्टा मानाहै मैंने भी कहा जो मैं दृष्टाका दृष्टा हों यह भी मनका चिंतन है मैं चैतन्य अवाङ्मनसगो चर वस्तु हों आदि अंत मध्यकी मुझमें समाई नहीं रोमश ने कहा और किस में समाई है दत्तने कहा पूछे तिसीमें है रोमशने कहा हे बुद्धिखोये स्वप्नसृष्टी की आदि अंत मध्य स्वप्नदृष्टा मेंहीं समाई है कहो अन्य किसमें है दत्त तूष्णी भये तिससमय सप्तऋषि आवत भये अरु कहते भये हे मित्रो आत्मसुख सतसंगमें आत्म निरूपण परस्पर कर होताहै तूष्णी होनेसे क्या प्रयोजन है काहेते सम्यक् आत्म अपरोक्ष विद्वान पुरुषोंसे सत उपदेश द्वारा अनेक मुमुक्षु पुरुषोंका कल्याण होताहै ताते आत्मबोधका कारण भगवान-की भक्ती करे क्या भगवानको पूर्ण जाने दत्तने कहा भगवानकी भक्ति ते वर्तमान विद्वानोंकी भक्ति श्रेष्ठ है विद्वानोंके संग विना स्वतः दासत्व अहंकार रूपी मलीनताको त्याग नहीं कर्त्ता इसी ते स्वरूपते अप्राप्त रहताहै अपनेते भिन्न परोक्ष ईश्वरकी भक्ति कर्नें से शांति नहीं होती अरु विद्वानोंके संगते शांति विचारसे होती है अरु विद्वानोंके संगते निरंहंकार विचार द्वारा वैरागादि पूर्वक भक्तिको प्राप्त होताहै भक्तिनाम आप सहित सर्व भगवान है निरंतर देहाभिमान रहित पूर्वोक्त भक्ति रूप उपासनाके अभ्यासते इसी जन्ममें वा प्रतिबंधके वशते भावी जन्ममें स्वरूपकी प्राप्ति होती है अरु भगवान विश्वेश्वरको निज आत्मा जानता है सप्तऋषियों ने कहा शरीरतेरानाशीहै विष्णु सों समता कैसे कर्ता है दत्तने कहा जैसे मेरा शरीर नाशी है तैसे विष्णुका शरीरभी नाशी है हे रोमश ऋषि हे कागभुशुंड तुमने अनेक ब्रह्मांडोंकी उत्पत्ति तथा संहार ब्रह्मा विष्णु शिव सहित होते तुमने देखेहैं सतकहो विष्णु आदि शरीर नाशी हैं कि नहीं दोनोंने कहा दृष्टमान शरीर मायामात्रहै किसाका

शरीर अविनाशी नही किंतु सर्वका नाशी है अनेक बार ब्रह्मा विष्णु महेशादिक शरीर उत्पन्न होते मिटजाते हैं जल तरंगवत्
एक रस केवल साक्षी चैतन्य आत्माही है अन्य दृष्टमान मायाका कार्य स्थित नहीं सप्तऋषियोंने कहा वैराग बिना विज्ञान नहीं
मिलता दत्तने कहा परिछिन्न अहंकार संतोंके संग विचारकर त्यागना यही वैराग है पुनः दत्तने कहा हम नहीं शेष भगवान हैं
पर जब हम नहीं तो वैराग करनेकी आवश्यकता कहाँ है आप ना रहना यही वैराग है जब आप नहीं तो वैराग भगवानसों क्या प्रयो-
जन है शेष अवाचपद है तिस अवाचपद चेतनकरही सर्वकी सिद्धि होती है उनोने कहा विष्णु ईश्वर है हम नहीं दत्तने कहा तुम
नित्य सुख चैतन्यसे पृथक् ईश्वर क्या वस्तु है कहो हे ऋषे यह आत्माही ईश्वर है तिस समय प्रत्यक्षादि षट् प्रमाण रूप
सिद्ध आवत भये अरु कहा सर्व वस्तुओंकी सिद्धि हमसे होती है दत्तने कहा तुम्हारी सिद्धि किसकर होती है जिस चैतन्य साक्षी
आत्माकर तुम्हारी सिद्धि होती है तिसीकर सर्व वस्तुकी सिद्धी होती है प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जब नेत्र मूंदे तब रूपकी सिद्धि नहीं
होती नेत्र खुले रूप मालूम हुआ ताते नेत्र करहीं रूपका ज्ञान होता है आत्माकर नहीं तद्वत सर्व प्रमाणोंमे जान लेना दत्तने कहा
हे सिद्धो आत्मा साक्षी नेत्रोंका नेत्ररूप है श्रोत्रका श्रोत्ररूप है इसी प्रकार सर्व इंद्रियोंमे जोड लेना सारांश यहकि आत्मा पूर्ण है
तथा सर्वका स्वरूप है ताते आत्मा चेतन्य ही नेत्रादि इंद्रियोंमे स्थित हुआ रूपको देखता है जब नेत्र मुंद जाते हैं तब अंधकारको
प्रकाशकर्त्ता है आत्माकी ज्ञानरूप दृष्टी किसी कालमेंभी रुक नहीं सक्ती नेत्रादिक इंद्रिय नष्ट होवें चाहे रहें जैसे राजाका हुकुम मंत्री
द्वारा प्रजामे प्रवर्त होता है परंतु मंत्री अरु प्रजा राजाकेही गुलाम हैं जैसे स्वप्नदृष्टाकी ज्ञानरूप दृष्टी स्वप्न पदार्थोंसे रुकती नहीं काहे
ते स्वप्नको कल्पित होने ते अरु स्वप्नदृष्टाको स्वप्रकाश होने ते सिद्धोनें कहा न तुम न हम न जगत् केवल चैतन्य मात्र हम हैं दत्तने
कहा तुम हँसो सिद्धोंने कहा हमारे आत्म स्वरूपमें हँसना रोवना दोनों नहीं अरु हँसना रोवनाभी हमही हैं कुमार सिद्धने कहा जब मैं
योग करों हों तब अपने स्वरूपको देखोहों दत्तने कहा जब तू स्वरूपके देखनेवाला हुआ तब स्वरूप तुझ ते भिन्न भया हे बुद्धिखोये

जो कुछ तू योग विषे देखता है सो दृश्यकोही देखता है ताते योग तेरी दृश्य भया तू द्रष्टा भया पर बालक है सतसंगकर जो निर्मल होवे कुमारने कहा ठीक मैं बालक हों काहेते मन वाणी शरीरकर सर्व लीला कर्ताभी मैं असंग चैतन्य हर्ष शोकको नहीं प्राप्त होता इसीसे बालक हों पर योगके बल ते जो मैं चाहों तो इस शरीरका त्यागकर अन्य शरीरमें प्रवेश करों किसीको वर शाप देवों तो होसक्ताहै अरु आयुको अधिक करसक्ताहों अरु सर्व प्रकारकी सामर्थ्य योगते हो सक्तीहै ज्ञानते क्या प्राप्तिहै दत्तने कहा हे मूर्ख यह बात कहनी तुझको सभामें लज्जा नहीं आती काहेते योगी एक शरीर को त्यागके अन्य शरीरमें प्राप्त होताहै अरु अनेक प्रकारकी तकलीफपाताहै ज्ञानी इसी शरीरमे स्थित हुआ हुआ सुख पूर्वक ब्रह्मासे लेकर चीटी पर्यंत आपको पूर्ण जानताहै अरु सर्वका भोगता एक कालमें हीं होता है अरु सर्व जगत् पर आज्ञा चलाने वाला होताहै तथा सर्व रूपभी आपहोताहै सर्वते अतीत भी आपही होताहै सर्व शक्तिमान होताहै सर्व शक्तिरूपभी आपहोता है सर्व व्यवहार कर्ताभी आपको अकर्ता जानता है जिस अवस्थाको सम्यक् आत्म अपरोक्ष विद्वानपुरुष प्राप्त होताहै तिस अवस्थाको स्वरूप अज्ञात वर शापादि पूर्वोक्त सामर्थ्य योगीको स्वप्नेमे भी नहीं प्राप्त होती कुमारने कहा योगके बल ते जो चाहों तो आकाशमें जावों दत्तने कहा पक्षी आकाशमें उडते फिरते हैं क्या सिद्धीहै कुमारने कहा योगी एक एक श्वासमें अमृत पान कर्ता है अन्य नहीं अरु सोहं जाप कर्ता है सुख पाताहै दत्तने कहा हे बालक ज्ञानीको लज्जाहै अपने सुख रूप आत्मा ते भिन्न योगादिकों ते सुख चाहे जैसे गुडको लज्जाहै जो अपने ते पृथक् चणकादिकों ते मधुरता चाहे योगी जिस चित्तकी एकाग्रता रूप योगते सुख मानताहै अरु योग विना आपको दुःखी मानता है ज्ञानी योग अयोग दोनोको अपनी दृश्य मानताहै यह सभ मन के ख्याल हैं योग रूप मनके ख्याल ते मैं चैतन्य प्रथमही सुख रूप सिद्ध हों सुख रूप अपनी सिद्धी वास्ते मैने योग क्यों करनाहै जैसे कोई भी अपने शरीर की प्राप्ती वास्ते योगादिक साधन नहीं कर्ता काहेते योगादि करने ते शरीर प्रथम सिद्धहै प्राणोंके रोकनादिक रूप योगते क्या सुखहै आपते अप्राप्त होना आशा मुक्तकी प्राणों ते चाहनी केवल विचार हीनताहै दूसरे सिद्धने कहा योग नाम

जुडनेकाहै यह जो सनकादिक ब्रह्मादिक स्वरूप में लीन होते हैं सो योगते रूप ज्ञान को पातेहैं दत्तने कहा जिस स्वरूपमे ब्रह्मादिक लीन होते हैं तिस वस्तु को ज्ञानी अपना आत्मा जानता है हे सिद्धो मिथ्या मतकहो ज्ञान योगका क्या संयोग है योग साधन रूपहै ज्ञान फल रूपहै ज्ञानमे विछुरना मिलना दोनों नहीं योग कर्ता के अधीनहै तथा क्रिया रूपहै कपिलने कहा आत्माके सम्यक् अपरोक्ष ज्ञानरूपी योगते सर्व पदार्थोंका जानना रूप योग हो जाताहै केवल क्रियारूप योगते सर्व पदार्थोंका जानना नहीं होता काहेते अधिष्ठानके ज्ञानते ही सर्व कल्पित पदार्थोंका ज्ञान होताहै योगते नहीं काहेते योग आत्म अधिष्ठान विषे आप कल्पितहै अन्य पदार्थवत् कल्पितके ज्ञान ते अन्य कल्पित का ज्ञान नहीं होता अधिष्ठानके ज्ञानतेही कल्पित का ज्ञान होताहै जैसे एक कल्पित स्वप्न पदार्थके ज्ञानते अन्य स्वप्न कल्पित पदार्थका ज्ञाननहीं होता किंतु स्वप्नद्रष्टाके ज्ञानते सर्व स्वप्न कल्पित पदार्थोंका ज्ञान होताहै जैसे रज्जुके ज्ञानते सर्प दंड मालादिकों का ज्ञान होताहै कल्पित सर्पके ज्ञानते कल्पित दंडादिकों का ज्ञान नहीं होता यह नेमहै स्कंदने कहा आत्माके जाननेके अनेक साधनहैं योगभक्ति ज्ञानपर आत्मा इनो पदोंते अतीतहै यह सब बुद्धिका विलासहै रोमशऋषिने कहा हे सिद्धो योग मुझते भयाहै पर मैं चैतन्य योग वियोग दोनोंनहीं योगते शरीरके अंतर बाहर सर्व अंग दीखते हैं पर स्वरूपते अप्राप्त होताहै दत्तने कहा जब सर्व ब्रह्महै तो भिन्न बाते कौनहै जो जुडे कुमार तूष्णी भया दत्तने कहा हे कुमार तुमको लज्जा नहीं आती जो संतोंकी सभामें अयोग वचन करेहै कुमारने कहा क्या कहों तू रूप मेराहै दत्तने कहा कहो मैं चैतन्य मनकी एकाग्रता रूपयोग वियोगका साक्षी स्वप्रकाश हों सिद्धोंने कहा तू कौनहै दत्तने कहा तुम्हारे ध्यान अध्यानका तथा तुम्हारी सिद्धि असिद्धि का द्रष्टाहों सिद्धोंने कहा तुमको भस्म करा चाहिये दत्तने कहा प्रथमे तुम अपने अहंकारको भस्म करो जो तुम्हारे अंतर शत्रुहैं मुझ भस्मको भस्म क्या करोगे हे सिद्धो मैं चैतन्य तुम्हारा आत्माहों अपने आत्माको भस्म कैसे करोगे सिद्ध तूष्णी भये दत्तने कहा तूष्णी मतहोवो यह सब कौतुक तुम्हाराहै तुम कौतुकीहो जैसे स्वप्नसृष्टी सर्व स्वप्नद्रष्टाका कौतुकहै स्वप्नद्रष्टा कौतुकीहै सिद्धोंने

142

कहा तूष्णी अतूष्णी आदिक भी कौतुक है दत्तने कहा हे सिद्धो यह सुख ज्ञानते प्राप्त होताहै रोमशने कहा तुझको ज्ञानते सुख नहीं अपने आनंदते आनंद अपने प्रकाशते प्रकाशहै वृत्ति रूप ज्ञानभी अज्ञान रूपहै तू ज्ञान अज्ञानते रहितहै राजाने कहा तुमको लज्जा नहीं आती जो रहित अरहित भी तूही है रोमशने कहा जब मैं हींहों तो लज्जा कासोंकरों लज्जा इच्छा संशय ज्ञान ध्यान निश्चय अनिश्चय बंध मोक्ष हर्ष शोक मान अपमान राग द्वैष ग्रहण त्यागादिक मानने केवल मनके धर्महैं अरु मैं चैतन्य मनादिकोंके धर्मों सहित मनादिकोंका साक्षी हों साक्षके व्यवहारकी मुझ साक्षीको क्या लज्जाहै जैसे सूर्य प्रकाशकको प्रकाश्य जगत्‌की लज्जा आदिक व्यवहारोंसे क्या लज्जाहै हे दत्त मैं चैतन्य निर्लज्ज हों तूभी निर्लज्जहो सारांश यहकि आपको सत् चित् आनंद जान जो लज्जारूपी द्वैतते छूटे दत्तने कहा मुझ चैतन्य में बंधन होतो छूटों मैं निर्बंद्धहों तिस सभामें हे मैत्रेय यह निश्चय भयाकि अस्ति भाति प्रियरूप ब्रह्मात्मा हमहैं मैत्रेयने कहा हे पराशर तिस संतोंकी सभामें और कोई था कि नथा पराशरने कहा एते कहनेते तुझको निश्चय नभया तो बहुते कहनेते क्या लाभहोगा तुझको ज्ञान न भया एता उपदेश मेरा अकार्थ गया मैत्रेयने कहा मुझ चैतन्य में निश्चय धर्म नहीं निश्चय कैसे करों जो शिष्य गुरु रूप अरूप मुझ में नहीं अरु मुझते भिन्न कौनहै जिसका मैं निश्चय करों किन्तु कोईनहीं पराशरने कहा भय मतकर जोतू सर्व है तो निश्चयादिभी रूप तेराहै मैत्रेयने कहा वह कहो जामें विकार न होवे निश्चयादिभी विकारहै पराशरने कहा यही चिंतन कथन करो मैं निर्विकार चैतन्य साक्षी आत्मा हों मैत्रेयने कहा जो मैं ऐसेहों तो चिंतन कथनसे क्या गुणहै जैसे कि कोई अपने नामको अरु नाम अनुसारी अर्थको कथन चिंतन हरवक्त कर्ता रहे तो क्या गुणहै उलटा विकल बाजताहै पराशरने कहा हे मैत्रेय आप सहित सर्वको ब्रह्मरूप जान मैत्रेय ने कहा इस चिंतनते क्या गुणहै यह सब मनका मननहै मैं चैतन्य अवाङ्मनस गोचरहों पराशरने कहा शरीर नाश होय तो होय पर इस निश्चयको त्यागियोमत मैत्रेयने कहा मुझमें गृहण त्याग नहीं स्वतः होय सो होय पराशरने कहा हे मैत्रेय यह आनंद कहन मात्रते नहीं निश्चयते है मैत्रेयने कहा वह शिष्य नहीं जो गुरूके उपदेशते केवल

देहाभिमान त्यागे द्वैत बनी रहै देहाभिमान सहित द्वैत दृष्टी त्यागे अरु गुरूके वाक रसनाते सुनकर अमृतकी न्याई अचवे परा-
शरने कहा कहो सर्व रूप मेराहै मैत्रेयने कहा जो मैं हों वो कहनेसे क्या प्रयोजनहै पर ब्रह्मयज्ञ कहो उस सभामें जो संत थे तिनोने और
क्या कथन करा पराशरने कहा उनके वचन सुनेते तुझको क्या लाभहै जो तू आपको न जाने मैत्रेयने कहा तेरे कहनेते आश्चर्य मान होताहों
जो कछु मुझ चैतन्यते भिन्न होय तो तिसको जानो जब मुझमें जानना नहीं तो क्या जानों पराशरने कहा हे मैत्रेय सो अरुअयंपद तुझमे नहीं
सो अयंपद तुझने सिद्ध करेहैं राजानेकहा हेदत्त जिसकोचाहना स्वरूपके पावनेकी हो सो कैसे पावे दत्तने कहा प्रथमे निष्काम कर्मसे अंतः
कर्ण की शुद्धी करे निर्गुण वा सगुण उपासनादि कर अंतःकर्णकी चंचलता दोषको दूर करे वैरागादि साधनों सहित हुआ हुआ शास्त्रो
क्त रीति कर गुरूकी शरणागत होवे पुनः गुरू उपदेशते अपने आत्माको ब्रह्मरूप अरु ब्रह्मको अपना आत्मारूप सम्यक् अपरोक्ष
जाने जैसे महाकाश घटाकाश रूपहै अरु घटाकाश महाकाश रूपहै हे राजन् अपने स्वरूपके पावनेमें देहाभिमानही अवर्णहै जैसे
सूर्यके दर्शनमें वादलही अवर्णहै हे राजन् जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिमें तथा भूत भविष्यत वर्तमान कालमें मन वाणीका गोचर मन वाणी
सहित जितनाक प्रपंचहै सो सर्व तुम साक्षी चैतन्यकी दृश्य अनित्यहै तू तिस सर्व जड दृश्यके न्यूनाधिक भावके प्रकाश करने
वाला चिद्घन देवहै तुझको कोई नहीं जानता तू सर्वको जानताहै इसीते तू चैतन्य स्वप्रकाश रूपहै अज्ञानी अनित्य दृश्यमेंहीं
मग्नहै विज्ञानी अपने आत्म स्वरूपमें मग्नहै पर मुझके स्वरूपमें ज्ञानी अज्ञानी दोनों नहीं राजाने कहा तू कौनहै दत्तने कहा तुझके
हृदय विषे तथा ब्रह्मा विष्णु शिवादिकोंके हृदय विषे तथा सर्व प्राणीमात्रके हृदय विषे मनादिकोंका साक्षी रूपता
करके स्थितहों साक्षीमेभी त्रिपुटी होतीहै तिसका प्रकाशक त्रिपुटी ते परे अवाचपदहों जहाँ बुद्धि नहीं तहां रूप
मेराहै राजाने कहा जहाँ एक, अनेक, मैं, तू नहीं वही रूप मेराहै दत्तने कहा आपा अहंकारको त्याग करे जो अवशे
षहै सो आत्मा का स्वरूप है राजाने कहा जिसमें शेष अवशेष दोनोंनहीं वही अवशेष है कपिलने कहा यहभी अहंकार जो है सोई है

राजाने कहा हे कपिल तुझे बुद्धिनहीं जो सर्व अवशेष है तो अहंकार कहांहै अहंकारका नाश अवशेषते होताहै कपिलने कहा जो वचन चिंतन में आताहै सोई अवशेष है नहींतो अवाचपद में शेष विशेष कहाँ है राजाने कहा जिसमें वचन मौन दोनोंनहीं वही अवशेषहै कपिल तूष्णीभया अवशेष नाम जिसकर विधिनिषेधी सिद्ध होतो है अरु जिसमें विधिनिषेध समाप्ति होती है अरु जो विधिनिषेधीका अवधीभूतहै तिसका नाम अवशेष है रोमशनेकहा फुर्णा अफुर्णा रूप अवशेष वशेष मनका धर्महै आत्मा इन मनके धर्मों ते अतीत है राजाने कहा वही मैं अवशेषहों अरु सर्वपदों ते अतीतहों दत्तनेकहा जामें अवशेष वशेष नहीं सो क्याहै राजाने कहा वही अवशेष है रोमशने कहा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुरीया अवशेष है सुझ चैतन्य तुरीया अतीत अवाचपद में अवशेष कहांहै राजानेकहा जैसे तुरीयातीत अवाचपद नाम है तैसे अवशेष नाम है जो तुम कथन चिंतन मनका करोगे तिनका जो साक्षी है सोई अवशेष है अरु सर्वके साक्षीका साक्षी और कोई नहीं सिद्धोंनेकहा अवशेष पद योगते प्राप्तहोता है राजाने कहा योगते अवशेषपद होताहै यह किसने जाना जिसने जाना वही अवशेष है जो अवशेष नहींहोवे तो योगको कौन सिद्धकरे पुनः मीमांसा आवतभया अरु कहा कर्म करनेसे अवशेष की प्राप्ति होती है राजाने कहा हे मीमांसा जो कर्म उपासना का फलहै सो सभी अनित्य है हां कर्म उपासनासे अन्तःकर्णके दोषोंकी निवृत्तिहोती है सो दोषभी अनित्य हैं इसीते दूर होते हैं अरु जहाँ कर्म उपासना का फल नहीं अरु जिस चैतन्यकर मन शरीरका धर्म उपासना कर्म सिद्धहोते हैं अरु जो कर्मउपासनाके आरम्भ में तिनका साक्षी आदिमें स्वतःसिद्ध है अरु कर्म उपासनाके समाप्ति का जो अधिष्ठान साक्षी अवधीभूत है वही अवशेषहै सोस्वप्रकाश सर्वकी आदिसिद्धि है पीछे होनेवाले कर्म उपासनाते तिसकी कैसे प्राप्ती होगी किंतु नहींहोगी मीमांसा तूष्णीभया विशेषक आवतभया अरु कहा अवशेष कालते भयाहै राजानेकहा सुषुप्ति में काल कहांहै अरु अवशेष आत्मा कालके भावाभावको अनुभव करनेवाले तेही कालहोता है अवशेष आत्मा स्वतःसिद्ध है उत्पत्ति नाश तिसका नहीं यह सर्व धर्म मनादिक द्रश्यके हैं पुनः न्यायनेकहा सर्व जगत्के कर्त्ता ईश्वरमें अवशेष

कहाँ है राजाने कहा जो अवशेष आत्मा न हो तो सर्वजगत् को ईश्वर कर्त्ता है यह कथन चिंतन धर्म मन वाणी सहित धर्माधर्मी कैसे सिद्ध होवें जब यह कथन चिंतन नहींथा तो भी अवशेष आत्मा सिद्ध है अरु जब नाशभया तब नाशका साक्षी रूपकर अवशेष आत्मा सिद्ध है ताते सर्व ब्रह्म रूप अवशेष आत्मा ते यह नामरूप जगत् होताहै हे न्याय तिसीका नाम ईश्वर कहैं तो ठीक है नामांतरका भेदहै न्यायने कहा जबलग अवशेष विशेषको नत्यागे सुखस्वरूपको नपावेगा राजाने कहा जो मैं चैतन्य आत्मा सुख स्वरूपको सुख पावने सों क्या प्रयोजन है सुखरूप अपने ते पृथक् जितनेक सुख पावनेके समाधि आदिक साधनों मे प्रवृत्ति है सो भ्रमसे है जैसे जलको तथा अग्नि अग्निको शीतल उष्ण होनेकी इच्छा भ्रमसोंहै न्यायने कहा तू सर्व ते ऊंचहै राजाने कहा मैं चैतन्य आत्मा ऊंच नीचते रहित एक रस समहों न्याय तूष्णी भया पातंजल बोला हेराजा तू कौनहै राजाने कहा मैं चैतन्य आत्मा योग वियोगके कौतुक देखनेवाला अवशेष रूपहों याज्ञवल्क्यने कहा अनहद शब्दविषे अवशेष कहां है राजाने कहा अवशेष आत्मा इंद्रिय द्वारा बाहरका कौतुक देखनेहाराहै सोई अवशेष आत्मा अंतर इंद्रिय विना सोहं ध्वनि आदि कौतुकको देखने नाम अनुभव कर्नेवालाहै सारांश यहकि अनाहद शब्दके भावाभावके जाननेवालाहै जो अवशेष नहीं हो तो अनाहद शब्दके भावाभावकी सिद्धि कैसे होवे याज्ञवल्क्यने कहा योग विना सुख नहीं अरु सर्व अंग शरीरके देखे नहीं जाते राजाने कहा सुखरूप में योग सों क्या प्रयोजनहै अरु जब शरीरसहित सर्व नाम रूप प्रपंचको मृगतृष्णाके जलवत् मिथ्या सम्यक् अपरोक्ष जाना अरु पूर्वोक्त प्रपंचका अपनेको सम्यक् अपरोक्ष अधिष्ठान जाना यही जगत् रूप अंगोंका देखनाहै और कोई हाड मांसादि अंगोंको योग कर देखना बुद्धि हीन पुरुषोंका कामहै जब यह आपहै तो योग सों क्या प्रयोजन है याज्ञवल्क्यने कहा जब तूहै तो ज्ञान सों क्या प्रयोजनहै राजाने कहा मुझ चैतन्य अवाचपदमे ज्ञान अज्ञान तत् जन्य बंध मोक्षादि प्रपंच अत्यंताभावहै परंतु मुमुक्षुको ज्ञान निर्क्लेशहै अरु ज्ञानरूपी विचार कर वस्तुका सम्यक् अपरोक्ष स्वरूप जानाजाताहै योगते नहीं अरु योग सिद्ध

हुयेभी योगीको भी विचारकी अपेक्षा अवश्य होती है ताते गौरवताके दोषते प्रथमही वस्तु विचार करने योग्यहै अरु सम्यक् अपरोक्ष स्वरूपका जाननेवत् जानना यही राजयोगहै हठयोग हठीयोंके वास्ते है विचारशीलोंके वास्ते नहीं याज्ञवल्क्य तूष्णी भया तब सांख्य आयकर कहा जो लों नित्य अनित्य का विचार नहीं करे तौलौं आत्मसुखते अप्राप्तहै राजाने कहा जिसकर नित्य अनित्यका अंतर विचार सिद्ध होताहै अरु जो विचारके आदि अंत मध्यमे साक्षीरूपताकर जो स्वस्थित सुखरूपहै सोई मेरा रूपहै तिस नित्य सुख रूप आत्मा की प्राप्ती वास्ते नित्य अनित्य का विचार भ्रमसे है अन्यथा नहीं सांख्य तूष्णी भया पुनः व्यास आयकर कहा जब मैं चैतन्य ही हों तो नित्य अनित्य सों क्या प्रयोजन है मुझ चैतन्य ते अवशेष भिन्न नहीं जो भिन्न होवेगा तो जड़ सिद्ध होगा हे राजन् जहां मैं तू अवशेष तीनों नहीं कहो सो मैं हों राजाने कहा यदि मैं चैतन्य सर्वात्मा हों अहं त्वं आदिभी मैहीं हों व्यासने कहा वारंवार उसका नाम लेनेसे क्या प्रयोजन है राजाने कहा विलासमात्र है नाम लेना न लेना मुझमें तुल्य है दत्तने कहा जो कछु कथन चिंतनभें आवे है सो अवशेष है जहां यह नही सो रूप मेरा है राजाने कहा वही अवशेष है पराशरने कहा हे मैत्रेय मैंभी तिस सभामेंगया अरु कहा हे रूप मेरे जिसने अवशेष थापा है सो अव शेष कैसे होता है राजाने कहा किसने थापा है मैंने कहा तुम चैतन्यने थापा है राजाने कहा इसीते मैं चैतन्यही अवशेष हों हे मैत्रेय राजाने अपने स्वरूपको सम्यक् अपरोक्ष जाना था तिसको कौन अपने निश्चयते चलायमान करे राजाने कहा हे संतो सर्व पदोंते अवशेषको ऊपर राखो दत्तने कहा सर्वपदोंके कथन कर्णेवाला शास्त्र तथा पद स्वप्नवत् मूल हैही नहीं तो अवशेष मुझ अवाच में ठौर कैसे पकडेगा अरु अवाच चैतन्य अवशेषको कहां राखेगा राजा तूष्णी भया हे मैत्रेय उस राजाने किंचित् काल सतसंग किया अरु अपने स्वरूपको पाया अरु मैं तुझको अनेक प्रकार उपदेश करोहों पर तुझको कछु प्रवेश न भया हे मैत्रेय इस समयको दुर्लभ जान अपने सम्यक् स्वरूपके जानने वास्तेही यह मनुष्य शरीर है नहीं तो अकार्थ है मैत्रे-

यने कहा हे गुरु जितनाक नाम रूप प्रपंच है सो सब अकार्थ है अर्थरूप मैं चैतन्य आत्माही हों जैसे सर्व स्वप्नप्रपंच अकार्थ है स्वप्नद्रष्टा अर्थ रूप है पराशरने कहा तेरा रूप क्या है मैत्रेयने कहा मैं रूप अरूपते रहित हों पराशरने कहा हे मैत्रेय एक समय निदाघ राजाने ऋषभदेव पै प्रश्न किया हे प्रभो मुझको संसार समुद्र ते पार करो ऋषभदेवने कहा संसारसमुद्र मेरी दृष्टिमे है नहीं तुझे नौका बनाकर कैसे पार करों हे मैत्रेय जैसे मैं तुझको बहुतकाल उपदेश कियाहै तुझको प्रवेश नहीं भया तैसे ही ऋषभदेवने निदाघको उपदेश किया पर ताको कछु प्रवेश न भया हे मैत्रेय जबलग यह आप विचार न करे तबलग गुरू शास्त्र क्या करें हे मैत्रेय जो देहाभिमान रूपकीचडमे फँसे हैं अरु मन विषयोंकी इच्छारूप जेवडेसे बांधा है तिसको कौन छुड़ावे ताते अपना विचार आप करे जो अपने स्वरूपके अज्ञान ते वंध मोक्ष भ्रांति दूर होवे अन्यथा नहीं हे मैत्रेय बहुरि निदाघने कहा हे गुरो आज मुझको रात्रिमें स्वप्नहुंआ था क्योंकि शरीर मेरा विनशा है अरु यमदूत मुझको धर्मराय पै ले गये आगे धर्मरायने कहा तू कौन है अपने भले-बुरे कर्म प्रगटकर मैंने कहा मैं आपको नहीं जानता धर्मरायने कहा जो तू आपको नहीं जानता तो शासना अपने करेहुये कर्मोंसे तुझको होगी पर उपदेश तुम्हारा संस्कारोंके वश ते स्मरण हुआ अरु मेरी रसना ते यह निकसा कि हे धर्मराय मैं सत् चित् आनंद सर्व मनादिकोंका साक्षी आत्माहों देहादिक संघात मैं नहीं यह मायामात्रहै बहुरि धर्मरायसैन करीकि इसको परमसुख देवो यह दुःख लायक नहीं काहेते इसकी अपने स्वरूपमें अहंप्रत्ययहै देहमें नहीं यह वृत्तांत होते नेत्र खुले देखा तो न धर्मराय है न यमहै न यमलोक है मैं अपनी शय्या पर आप स्थितहों हे मैत्रेय आत्मनिष्ठाका महान माहात्म्यहै जो यमलोकमे भी सत् चित् आनंद आत्मा मैं हों इतने कहनेसे दुःखते छूटा जो साक्षात् सम्यक् अपरोक्ष अपने स्वरूपका बोध होवे तो क्या बात है ताते तू सम्यक् आत्माको जाननेवत् जान बहुरि हे मैत्रेय ऋषभदेवने कहा हे निदाघ जैसे तुझको स्वप्न आया अरु अनेक प्रकारका प्रत्यक्ष वृत्तांत देखा पर जब जागा तब भ्रम जाना तैसेही जब तू अपने स्वरूपके अज्ञानरूपी निद्रामें सोयाहै तब अनेकप्रकारका बंध मोक्षादि जग

त् तुझको भासताहै जब सम्यक् अपरोक्ष बोधरूपी जाग्रत् तुझको होगी तब जानेगा कि यह जगत् भ्रममात्रहै निदाखने कहा योग करों तो स्वरूपमें जाग्रत् होवों ऋषभदेवने कहा तेरी बुद्धि हँसने योग्यहै मैं और कहताहों तू और समझे है ताते कैसे अहंकारते छूटे हे मूर्ख योगनिद्रा हो मैं अहंकारको कहेहैं हे राजन् ज्ञानरूपी खड्गले जो मैं देह नहीं आत्माहों मैं अहंकाररूपी फांस जीवके गलेमें पड़ीहै तिसको काट नाम जीवत्व ईश्वरत्व ब्रह्मत्व प्रपंचत्व तिसमें बंध मोक्षादि मानना केवल मनका मननहै मैं चैतन्य मन वाणीते अगोचरहों यही फांसका काटनाहै इस फांसके काटेते कालते अभय होवेगा नहीं तो काल तुझे दुःख देवेगा हे राजन् शुद्ध रूप विचार सतका तब हाथ आवे जब ताली वैराग्यकी होय अरु वैराग्य यही है जो अस्ति भाति प्रियरूप आत्माहै अन्य कछु नहीं न होयगा न हुआ है इस निश्चयका नाम वैराग्यहै निदाखने कहा जिनके ज्ञाननेत्र खुलेहैं तिनकी क्या पहँचानहै ऋषभदेवने कहा जबलग तेरे नेत्र न खुले तबलग नजान सकेगा जैसे सोया पुरुष जागे विना जाग्रत्पुरुषको नहीं जानता जिनका देह अभिमान सम्यक् मिटाहै आत्माको सम्यक् अपरोक्ष जानाहै तिनको ग्रह वन तुल्यहै जो प्रारब्धकर प्राप्त होवे हर्ष शोकते रहित तिसी पर प्रसन्नहैं ग्रहण त्यागकी कल्पना मनमें वास्तव नहीं व्यवहारमें ग्रहण योगको ग्रहणकरतेहैं त्यागने योगको त्यागतेहैं हँसने स्थान में हँस्तेहैं रोने स्थानमें रोतेहैं सारांश यहकि जैसे देशकाल होवे तिसके अनुसारहीं चेष्टा करते हैं पर अपने सुखस्वरूप आत्माते पृथक् जगत्को जानते नहीं निदाखने कहा अहंकारके त्यागका उपाय अतीत होनाहै ताते मैं अतीत होताहों ऋषभदेवने कहा गृहस्थ त्याग कर अतीत होनेसे अहंकार नाश नही होता उलटा वृद्धिको पाताहै सबको अनुभव सिद्धहै कोई विरला निरहंकार होताहै अरु प्रयोजन सूक्ष्म अहंकारके त्यागनेकाहै स्थूलका नहीं काहेते सूक्ष्म अहंकार त्यागेतेही आवागमन मिटताहै ताते तू सूक्ष्म अहंकार त्याग जो सर्वत्यागी होवे अरु कई अहंकारके त्यागने वास्ते योगाभ्यास कर्ते हैं पर त्यागा नहीं जाता उलटा बंधजाताहै काहेते अहंकारके त्यागनेका मार्ग नहीं जाना अरु कदाचित्त लौकिकगुरुसे अहंकारके त्यागनेका प्रश्न कर्ताहै तो गुरु कहताहै

तीर्थकरना व्रत नेम करना दानकरना तिसते तिसके मन विषे अहंकार उलटा दृढ होताहै जब दृढ अहंकार हुआ तब बुद्धि क्षीण होती
है जब बुद्धि क्षीण हुई तो आवागमनको प्राप्त होताहै अरु अपने स्वरूप ज्ञानते दूर जाय अंधेकूपमें पड़ताहै तिसको परमेश्वर
निंकासे तो निकसे अन्यथा नहीं हे राजन् दो प्रकारका भजनहै एक निष्काम अरु सकाम सकामते स्वर्गादि सुख पाताहै अरु
निज स्वरूपते अप्राप्त रहताहै निष्कामते अंतःकर्णकी शुद्धिसे ज्ञानद्वारा मोक्षरूप आत्माको सम्यक् अपरोक्ष जानताहै आप
सहित सर्वको ब्रह्मरूप जानना यही परमभजनहै निदाखने कहा हे गुरो सूक्ष्मअहंकारते कैसे छूटों ऋषभदेवने कहा तेरी क्या
शक्तिहै जो सूक्ष्म अहंकारते निकसे मरीचि आदि लेकर सर्व ऋषि चाहना सूक्ष्मअहंकारके त्यागनेकी राखतेहैं परंतु किसी
एकका पूर्व महान् पुण्यप्रतापते सूक्ष्म अहंकार नाश होताहै सूक्ष्म अहंकार अथाह समुद्रहै तिसका तरना अतिकठिनहै जिसके
सूक्ष्म अहंकारहै तिसका भ्रांतिरूपभी जन्ममरण दूर नहीं होता जप तपादिकोंते दूर नहीं होता परंतु सम्यक् विचारसे दूर होताहै निदा
खने कहा जब सर्व अस्ति भाति प्रियब्रह्मरूप आत्माहै तो सूक्ष्म तथा स्थूल अहंकार कहांहै मधुरता शीतलता द्रवताते फेन बुद्बुदे
तरंग क्या जुदेहैं किंतु नहीं ऋषभदेवने कहा जीव आवागमनमें बंधहै तू कैसे जीवको ब्रह्म कहताहै निदाखने कहा हे गुरो जगत् स-
हित जो तुम्हारा हमारा कथन चिंतनहै सो सर्व रज्जु सर्पवत् मिथ्याहै तिसते जो रहितहै तिसको जीव ईश्वर ब्रह्म क्या कहें अवाच पद
है ऋषभदेवने कहा आपको अवाच पद जानना यहभी सूक्ष्म अहंकारहै तिससमय अष्टावक्र आवत भये अरु कहा हे राजन् मनको
वशकर जो अहंकार तेरा नष्ट होवे राजाने कहा जब सर्वरूप आत्माहै तो अहंकार अरु मन कहां है अरु कौनहै जो मनको वश करे
राजाने कहा हे अष्टावक्र तू कौनहै कहा मैं ब्रह्महों ऋषभदेवने कहा ब्रह्म एकहै कि अनेक अष्टावक्रने कहा तेरी बुद्धि हँसने योग्यहै जो
ब्रह्महै तो एक अनेक क्याहै तूभी कहो मैं पूर्णब्रह्महों ऋषभदेवने कहा जब कामादि पांचोंका त्यागन करे तब सुख नहीं पाता
अष्टावक्रने कहा जब तूही चैतन्यहै तो चार अरु पांच क्या ऋषभदेवने कहा रूप तेरा क्याहै कहा जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिते परे

तुरीया मेरा रूपहै तीनकी अपेक्षासे तुरीयाहै मैं चैतन्य तुरीयातेभी अतीतहों मुझमें गिनती नहीं दत्तने कहा मैं चैतन्य देश काल वस्तुते अतीतहों अष्टावक्रने कहा देश काल वस्तु किसमेंहैं दत्तने कहा स्वप्नवत् देश काल वस्तु मुझ चैतन्यमें कल्पित प्रतीत हो ते भी स्वप्न द्रष्टावत् मैं चैतन्य अद्वितीय हों कल्पित प्रपंचका मुझ चैतन्य अधिष्ठानके साथ क्या संबंध है जो संबंध है तो कल्पित तदात्म्य संबंध है मैं पूर्ण हों अष्टावक्रने कहा जहां अतीत कहना है तहां द्वैत है जहां पूर्ण है तहां अपूर्ण भी है तेरा वचन हँसने योग्य है जब सर्वात्मा ही है पूर्ण अपूर्ण अतीत न अतीत भी प्रत्यक् आत्मा ही है दत्तने कहा निर्हंकार होना भी अहंकार है कहो निरहंकार कैसे होवों अष्टावक्रने कहा ऋषभदेवसे पूछ. जो अपने शिष्यको ऐसा भय दिया है जो स्वतःसिद्ध प्रथम प्राप्त आत्मस्वरूपको भी जान नहीं सक्ता दत्तने कहा हे ऋषभदेव मैं तेरा शिष्य होता हों उपदेश कर ऋषभदेवने कहा हे दत्त चौबीस गुरु ते तुझको निश्चय न भया तो मुझ ते कैसे होगा दत्तने कहा मैं चैतन्य आपही गुरु हों आपही शिष्य हों कहे तो शिष्यसहित तुझे भस्म करौं ऋषभदेवने कहा जब सूक्ष्म अहंकार नाश भया तब आपते आप भस्म होयगा पर अहंकार तब नाश होय जब जाने सर्वशिव हैं जब सर्वशिव है तो स्थूल सूक्ष्म अहंकार कहां है दत्तने कहा जब सर्व शिव हैं तो कैसे जाना जावेगा जो सर्व शिव है तथा अहंकार नाश भया वा नहीं काहेते सर्व शिव है अरु अहंकार नाश भया है इस चिंतनको चिंतन करनेवालेको तथा चिंतनयिको शिव होनेते ताते अवाचपद है अष्टावक्रने कहा. मन वाणीका वाच्य भी आत्मा ही है अरु मन वाणीका अवाच भी आत्मा ही है जैसे स्वप्नद्रष्टा मन वाणीका वाच्य स्वप्नभी आप है अरु अवाच्य भी आप है इसी ते अद्वैतहै वशिष्ठने कहा मुक्त हुआ चाहे योग करै अष्टावक्रने कहा सत् कहो योग कौन करै सत् अरु असत्के योगका योग नहीं काहेते आत्माते भिन्न सर्व असत् है अरु आत्मा सत् है सो कैसे योग करनेके योग्य होवे तमप्रकाशकी नाईं दोनोंका संबंध नहीं वासिष्ठने कहा तुम बालक हो योग किया नहीं इसते तुम्हारा मन शुद्ध हुआ नहीं अष्टावक्रने कहा विछोड़ा हो तो मिलाप करना।

मिलापका मिलाप क्या करना है ताते सदा योग है अरु आत्मामें विकाररूप संसार कदाचित्त भी है नहीं ताते संसारका सदा वियोग भी है कहो आगेही स्वतःसिद्ध योग वियोगको मैं अब नवीन क्या करौं जो मन वाणी शरीरके कर्तव्यसे सिद्ध होता है सो अनित्य है सो अनित्य देहरूप संसारभी नित्यप्राप्त है अरु नित्य ब्रह्मरूप आत्माभी नित्य प्राप्त है वा दुःखकी निवृत्ति सुखकी प्राप्ति वास्ते योग करना है सो सुखरूप आत्मा नित्यप्राप्त है अरु संसाररूप दुःखकी निवृत्तिभी नित्यप्राप्त है ताते कल्पित दुःख की निवृत्तिरूप भी आत्मा ही है सो आत्मा अपना स्वरूप है स्वरूपकी प्राप्ति वास्ते योगका कछु काम नहीं सो कहो दोनों में किसकी प्राप्तिवास्ते यत्न करना ताते तेरा योग निष्प्रयोजन है तुम पद्मादि आसनोंका योग लिये शिष्योंको उपदेश करते हो अरु प्राणोंका रोकना कहते हो मैं कहताहूं अपनी रुचिके अनुसार आसन करे वा न करे लंबा होय क र सोयरहे वा वैठरहै वा चले वा खड़ा रहै अरु प्राणोंको भी सुखेनहीं आने जाने देवे रोके नहीं अरु मनको भी पीड़न क्यों करे पर मन वाणी सहित मन वाणीके गोचर अगोचरको शिवरूप आत्मा जाने यह जानना ही योग्य है करना कछु नहीं काहेते जो कछु है आगेही सिद्ध है अरु जो कहें है लंपका को छेदन कर बढाके योगी जब खेचरी मुद्राकर्ता है तब अमीरसपीता है हे साधो सो अमीरस यहहै कि जब योगी प्राणोंको खैंचकर दशवें द्वार में रोकता है तब शरीर अग्निकी न्याई उष्ण रूप हो जाताहै तिस उष्णताते शीश में जो मेध मज्जा रुधिर है सो वर्फ की न्याई जमा रहता है सो प्राणोंके रोकनेकी उष्णताते पूर्वोक्त रुधिर मज्जा आदि नीचे गिरता है तिसको योगी अमृत जानकर पीताहै ताते अज्ञानी है काहेते अंतर बाहर एक ब्रह्महीहै सोई भया अथाह समुद्र तिसको त्यागकर एक बूंदपर निश्चय करे है इसीते अज्ञानी है वशिष्ठने कहा तैंने संसारको भ्रष्टकिया है दत्तने कहा मैं चैतन्य नाम रूप संसारते भ्रष्ट हों नाम अतीत हों अरु योगी को योग्य है जो सोवे नहीं तथा वचन न करै आसन करै प्राणोंके मार्गको देखता रहै इत्यादि अनेक साधन कर्ता रहै पर यह नहीं जान ता जो निर्विकार शिवात्मामें विकार मिलावना आत्मघात है पंचतत्त्व ही रज्जु सर्पवत् मिथ्याहैं एक प्राणरूप पवनको क्या चलै है कपिल

ने कहा जो ईश्वर आत्मा ते कछु भिन्न जाने सो योग करै जिसने सर्व ईश्वर आत्मा जानाहै सो चुप रहे दत्तने कहा वचन औ तूष्णी दोनो मुझके स्वरूपमें नहीं अरु मैं सर्व रूप हों ताते दोनो सम हैं अष्टावक्रने कहा न कहोंहों न तूष्णी होता हों अरु आपही कहता हों अरु आपही तूष्णी होता हों सारांश यहकि द्रष्टा दर्शन इत्यादि त्रिपुटी भी मैं चैतन्यही हों अरु त्रिपुटी रहित भी मैं ही हों स्वप्नद्रष्टावत् किसी पदमें भी बंध मान नहीं हों तिस समय नारद आते भये बंसुरी विषे नारायण नारायण गाते आये सबने कहा तूष्णी होवो नारदने कहा जहां संत इकट्ठे होतेहैं तहां आत्मनिरूपण कर्त्ते हैं तिसते मुमुक्षुओंको परमार्थ प्राप्त होताहै तूष्णीते क्या सिद्ध है दत्तने कहा स्वतः हीं नारायण है तो कहनेसे क्या लाभ है नारायणको तैंने भुलाया है अरु नारायण का अरु तेरा वियोग होगया है तू नारायणको ढूंढता फिर हमारे स्वरूप में भुलावना चिंतना संयोग वियोग दोनों नहीं नारदने कहा वैकुंठ में भी इस सभाकी चर्चा हुई थी सो संतोंके दर्शन वास्ते विष्णु भी आते हैं दत्तने कहा असत मत कहो तेरे वचनते लोगहँसैंगे व्यापक विष्णु चैतन्य आत्मा विषे आवना जावना कहा है हम विष्णुके मिलनेकी इच्छा नहीं रखते काहेते विष्णु हमारा आत्मा है हम विष्णुके आत्माहैं अपने आत्माके मिलने जुदाहोनेकी इच्छा कोई नहीं कर्ता तिस समय विष्णुने आयकर कहा जिसने मुझ व्यापक चैतन्य विष्णुको व्यापक जानाहै सो अचिंत मेरा रूपहै तिस विषे अरु मेरे विषे कछु भेद नहीं दत्तने कहा तुमको जाने विना प्रथम क्या तेरा रूप नहीं क्या घटाकाश को महाकाशजाने विन प्रथम घटाकाश क्या महाकाश नहीं है नारद परमेश्वर आपकहे हैं सर्व विष्णुहै तू आपको तिसते भिन्न नारद दासजाने है जब सर्वविष्णु है तब नारद कहां है नारदने कहा जब विष्णुही है तो नारदभी विष्णुही है दासस्वामी भी विष्णुही है जड़ भरथ ने आयकर कहा सर्व जड़भरथ है विष्णुने कहा न जड़भरथ न विष्णु एक मैं चैतन्य अद्वैतहों परकहो जड़भरथ शब्दका अर्थ क्याहै कहा कि जड़ नाम अफुर चैतन्यका है भर नाम आनन्द पूर्णका है थकारका सत अर्थ है ताते सत् चित् आनंद जड़भरथका अर्थहै जड़भरथ ने कहा हे सभा एकसमय मैं विचरताहुआ पर्वत में गया तहां एकयोगी को देखा मैंने नमस्कारकरी अरु प्रश्नकरा कि हे योगी तेरा स्नान

क्याहै कहा निरअहंकार रूपी जलसे स्नानकर जीवत्वरूपी मैलको धोया है मैंनेकहा भस्मतेरी क्याहै कहा अपने नित्य सुख चिद् रूप आत्माते पृथक् प्रतीतीरूपी काष्ठको निजस्वरूपके सम्यक् ज्ञानरूपी अग्निसे जलाकर भस्मी लगाई है मैंने कहा आसन तेरा कौन है कहा सर्व मायासे लेकर देहपर्यंत द्रश्यजगत्की उत्पत्ति स्थिति संहारका आसन नाम आधार मैं चैतन्यहों मुझ चैतन्य का आधार कोई नहीं इसीते स्वयंप्रकाशहों जैसे फेन बुदबुदे तरंगादिकों की उत्पत्ति स्थिति संहार जल आसन है जैसे स्वर्ण का आसन भूषण है वा तरंगादिकों का आसन जलहै इत्यादि अनेक दृष्टांत हैं वा सर्व कार्य वर्ग में कारण स्थितहोता है ताते सर्व कार्य कारण नामरूप प्रपंच मेरा आसनहै वा अचल स्थितिही मेरा आसन है मैंनेकहा आना जाना तेरा कहां से हुआ है कहा आकाशकी न्याईं पूर्णहों मुझ चैतन्य में आना जाना नहीं जैसे स्वर्ण का भूषणों में आना जाना नहीं जैसे रज्जुका सर्पादिकों में आना जानानहीं मैंनेकहा प्राण अपानका इकट्ठा करना क्याहै कहा एकजीव एक ईश्वर दोनों को एकजाना है जैसे घटाकाश अरु महाकाश एकहै यही प्राण अपानो का इकट्ठा करना है मैंने कहा इडा पिंगला सुष्मणा का कैसे अभ्यास किया है कहा इडा जीव पिंगला ईश्वर सुष्मणा ब्रह्म यह मुझ चैतन्यते प्रकाशराखे हैं मैं स्वयंप्रकाशहों मैंनेकहा धारणाकहो कहा सर्व मैंहों मैंने कहा सोहंका अर्थ क्याहै कहा ब्रह्मासे लेकर चींटीपर्यंत अंतर वाहर पूर्णहों मैंनेपूछा कि नासिकाअग्रदृष्टी क्याहै कहा मायाकर कल्पित प्रपंचकी उत्पत्तिते पूर्व जो मैं चैतन्य अवाचपदहों सो अवभी वहीहों वा नाशनाम अभाव का है सो भाव पदार्थों की तथा मनकी कल्पनाके प्रथम निर्विकार स्थितहों यह नासादृष्टि मेरीहै मैंने पूंछा कि त्रिपुटी क्या है कहा सत्त्व रज तम इस त्रिपुटी का साक्षी चैतन्य मैंहों मैंनेकहा योगीका शरीर कभी गिड़ता नहीं यह क्या जानना कहा प्रकृति पुरुषके संयोगकर जगत्की उत्पत्ति करनेवाला जो चैतन्य योगी है सो अशरीर होनेते गिड़तानहीं वा जैसे देहीका यहदेह शरीरहै तैसे पूर्वोक्त मुझचैतन्य योगीका मायाशरीर है सो माया अपने देहादिक कार्यकी अपेक्षासे अगिड है इस ते योगीका शरीर अगिडकहा है वा शरीर नाम स्वरूप का है सो पूर्वोक्त चैतन्य योगी का स्वरूप अगिड है वा पंच

भूत रूप देह ते अतीत हों मैंने कहा मैं तेरा शिष्य होता हों कहा आगेही सर्व दृश्य मुझ दृष्टा गुरूकी सेवक है अब क्या शिष्य होगा पुनः मैंने कहा चौका काहेका किया है कहा चतुष्टय अंतःकर्णका चौका किया है नाम मायामात्र जाना है मैंने कहा चूल्हा रोटी करनेका तेरा कौन है कहा अहं त्वं वा जीव ईश दोनो ईंटा बनाकर मैं ब्रह्मात्मा हों यह रोटी कर्ता हों सारांश यहकि जीव भाव तथा ईश भाव त्यागके अवाचपद में स्थिति करी है मैंने कहा अन्न तेरा क्या है कहा ज्ञान विज्ञान दोनो मेरे अन्न हैं पूछा खाना तेरा क्या है कहा विज्ञान मैंने कहा ईंधन तेरा क्या है कहा सर्व भोगोंकी अचाहना ईंधन किया है मैंने कहा भगवानको भोग क्या लगाता है कहा देह अभिमान प्रत्यक् आत्मा भगवानको भोग लगाकर स्वरूप हुआहों सारांश यह कि मैं देहादि संघात नहीं किंतु मैं प्रत्यक् आत्माहों मैंने कहा सोना तेरा क्या है कहा सर्व दृश्यमान रूप मेरा है जैसे स्वप्नदृष्टा सर्व स्वप्न सृष्टीमें शयन कर रहा है नाम व्याप रहा है मैंने कहा तू मेरा गुरू है कहा मैंने गुरू शिष्य भावको त्यागा है पुनः ऐसे दुःखको मुझ चैतन्यमे मत चितव उसने पूछा तेरा नाम क्या है मैंने कहा जडभरथ उसने कहा मेरे साथ तेरा संग नहीं होगा काहेते जड मृतकको कहे हैं मैं चैतन्य जीवता हों तू वाके संग रहो जो जड भावको न त्यागे सारांश यह कि जो आपको देहादिक जड संघात आपको माने यथा योगही संग चाहिये जड चैतन्यका क्या संग है जब तू अपने जड भावको त्यागे मैं अपने चैतन्यपनेको त्यागों तब एकता हो अन्यथा नहीं हे सभा अमृतरूप तिसके वचन सुनकर मुझका जो जड भरथपनेका अभिमान था सो निवृत्त भया एतेमे वामदेव आवत भया अरु कहा अस्ति भांति प्रियरूप नारायण आत्माही है हे मित्रो नारायणते भिन्न जो तुमने निश्चय किया है तिसका त्याग करो दत्तने कहा नारायणका रूप क्यां है कहा अंतर साक्षी रूपकर जो मनादिकोंको प्रकाश करै अरु जो मायाकर एकसे अनेक भया है अरु वास्तव ते एकही है इंद्रजालीवत् दत्तने कहा मुझे चाहना एककीभी नहीं अनेकको क्या करोंगा कपिलने कहा जो सर्व तूही है तो एक अनेकभी तूही है पुनः दुर्वासा आया पर अहंकार रूपी अग्निमें जले था दुर्वासाने कहा सर्व भजन गोविं-

दका करो नहीं तो सर्वको भस्म करोंगा जानते तुम नहीं हो मैं रुद्र हों दत्तने कहा रुद्र रुदनको कहे हैं ताते रुदनकर
दुर्वासाने कहा हे दुष्ट मैंने सुना है जो तैंने सर्व संसारको भ्रष्ट किया है पहले तुझे भस्म करोहों दत्तने कहा घटके आदि माटी
अंत माटी मध्य माटी अपने फूटनेमें घटको क्या भय है जैसे तरंगके आदिभी जल है अरु मध्यभी जल है अरु अंतभी जल है
तरंगके निज परिछिन्न स्वरूपके फूटनेमे क्या भय है तैसेही इस पंचभूत रूपी देहके आदिमें भी चैतन्य आत्मा है अंतमेंभी चैतन्य
आत्मा है अरु मध्यमें भी चैतन्य आत्मा है शरीरके भस्म होनेसे क्या भय है मैंने तुझ सहित सर्व नाम रूप प्रपंचको
ऐसा भस्म किया पुनः वह भस्मभी नहीं मिलती जैसे स्वर्ण तथा जलादि सम्यक् द्रष्टीवान पुरुषने भूषणोंको तथा फेन
बुद्बुदे तरंगादिकोंको भस्मी कियाहै नाम अत्यंताभाव जानताहै तैसेही अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते पृथक् नाम रूप प्रपंच
का सम्यक् अपरोक्ष बोधकर ऐसा भस्म कियाहै मानो तिसका अत्यंताभाव जानाहै यह निश्चय जिसको है सोई नाम रूपते भृष्टहै
दुर्वासाने कहा तुम सभी शिष्यमेरे होवो नहीं तो शाप देवोंगा विष्णुने कहा सर्व उपाधियोंका मूल दत्तहै तिसको शापदे दुर्वासाने
कहा हे मित्रो तुम कर्म करो भृष्ट मत होवो दत्तने कहा हम अकर्म हैं कर्म कैसे करें कर्म देह मनादि संघात केहैं सो स्वतः सिद्ध कर्म
संघातसे होवें करनेसे नहीं दुर्वासाने कहा हे विष्णु कर्मोंकर जगत्का ठाटहै जो तैंने यह जगत्का ठाट रखनाहै तो कर्मोंकी प्रधानता
राखो विष्णुने कहा स्वप्न प्रपंचका कौन कर्मोंते ठाटहै निद्रारूप अविद्याते ही ठाटहै जहां अविद्याहै तहाँ कर्म आपसे आपहै
प्रधानताकरनेसे नहीं परंतु कर्मकांड उपासनाकांड ज्ञानकांड अधिकारी काल अवस्था भेदते स्व स्व फलको सम्यक् देतेहैं ज्ञान
कोई जगत्के व्यवहारका बाधा कर्नेवाला नहीं किंतु कर्मादि वस्तुका सम्यक् स्वरूप बोधन करे है ज्ञानी कर्म कर्ताभी अकर्ताहै
अरु अज्ञानी कर्म अकर्ताभी कर्ताहै ताते सर्वको अपना स्वरूप जान जो शांतिहो दत्तने कहा कर्म रूप जगत् मुझ चैतन्यते उत्पन्न
होताहै अरु मुझ मेंहीं लीन होताहै पर मैं चैतन्य ज्यों कात्यों निर्विकार हों स्वप्नद्रष्टावत् दुर्वासाने कहा सर्वको भस्मकरे विनान

जावोंगा दत्तने कहा जिनोने आपा अहंकार प्रथम भस्म कियाहै सोई दूसरेको भस्म कर सक्ताहै अन्यनहीं अरु जो तुझते भय राख ताहोवे तिसको भस्मकर मैं भयनहीं राखोहों अरु दूसरा मुझ चैतन्यते भिन्न तुझते आदि लेकर सर्व जगत् रज्जुसर्पवत् मिथ्या प्रतीतमात्रहै कल्पित पदार्थ अधिष्ठानको कैसे भस्म करैंगे उलटा अधिष्ठानके ज्ञानते अधिष्ठानमें कल्पित पदार्थ भस्म नाम निवृत्त होजातेहैं ताते अपने भस्म होनेका फिक्र कर नहीं तो भस्म होजावेगा तुझके वचनेका उपाय यहीहै जोमैं ब्रह्म स्वरूप आत्माहों यही कथन चिंतन कर ब्रह्मात्माते आपको भिन्न मानेगा तो क्षणमात्रमें भस्म होजावेगा नाम मिथ्या होजावेगा दुर्वासाने कहा हे जड भरथ तैंने जड़ पदका नाश करके बहुरि साथ क्यों राखताहै जड भरथने कहा जैसे तू पूर्णहोकर खोटको संग राखेहै हे दुर्वासा जोमैं चैतन्य इस जड दृश्य वर्गको संगनाम स्फुर्ण नहीं करों तो इसकी स्फूर्ति कैसे होवे काहेते जडको तो जड स्फुर्ण नहीं करता दूसरा यह जड दृश्यका उपादान कारण जो मायासों भी जडहै मुझ चैतन्य अवाचपदमें माया विना वचन विलास नहीं होता ताते वचन विलास कर्नेवास्ते मायाको संग राखोहों स्वतः नहीं दुर्वासाने कहा वो सभा मैं नहीं पावता जो तुम्हारी सभामें आयाहों काहेते जो मार्ग तुम्हारा भृष्टहै दत्तने कहा ठीक कहा तैंने जन्म मरण रूप संसार मार्ग हमारा भृष्टनाम नष्ट भयाहै अरु स्वरूप सम्यक् अपरोक्ष जाननेवत् जानाहै तुझ अज्ञानीका जन्म मरन संसार नष्ट नहीं भया ताते तूं अभृष्टहै एते में मीमांसा आता भया अरु दुर्वासा प्रसन्न भया अरु कहा हे मीमांसा तू आगे सन्मुखहो मैं सहायता करोंगा मीमांसाने कहा कर्मविना कार्य सिद्ध नहीं होता दत्तने कहा कार्य कारणते रहित मैं चैतन्य आत्मा स्वतःसिद्ध स्वयंप्रकाशहों मुझको कर्मोंकी अपेक्षा नहीं जैसे सूर्य अरु स्वप्नद्रष्टा अपने कार्य नाम प्रकाशमें जग रूप कर्मकी अपेक्षा नहीं राखते जगत् कोटिमेंभी कहो तो कर्तासे कर्म सिद्ध होताहै कर्मसे कर्ता सिद्ध नहीं होता यह सर्वको प्रसिद्धहै जैसे नेत्र रूप कर्तासे नील पीतादि रूप कार्यकी सिद्धि होतीहै रूपसे नेत्र सिद्ध नहीं होते हे मीमांसा मन वाणी शरीरसे कर्म होतेहैं मुझ चैतन्यमें मन वाणी

शरीरादिकही नहीं तो कर्म कहां हैं मीमांसाने कहा तुम कहो शरीर होते कर्मोंते छूटना न होगा ताते स्वरूप प्राप्तिवास्ते कर्म करो दत्तने कहा अकर्म रूप आत्माके बोधसे कर्मोंते छूटताहै शरीर होतेही ताते अकर्म रूप आत्माकी प्राप्ति वास्ते कर्म है जब स्वरूप जाना तो कर्मसों क्या प्रयोजनहै मीमांसाने कहा हे दत्त बीज अरु वृक्षमें क्या भेदहै दत्तने कहा यहां यह दृष्टांत नहीं लेना साध्यकी प्राप्ति हुये साधनोंकी कछु अपेक्षा नहीं जैसे भोजनकी सिद्ध हुये तिसी कालमें रसोईके साधनोंकी अपेक्षा नहीं है हे मीमांसा किसी पुरुषने किसी देवस्थानमें जानाहै अरु तीन मंज़िलों ते आगे देवस्थानहै जब एक मंज़िल चलकर दूसरी मंजिलको पहुँचताहै तो प्रथम मंजिलके कर्तव्यते रहित होताहै जब तीसरी मंज़िलको पहुँचताहै तब दूसरी मंज़िलके कर्तव्यते छूट जाताहै तैसेही जब चतुर्थी मंजिलको नाम देवस्थानको पहुँचताहै परंतु तीन मंजिलोंके करेबिना कृत्यकृत्य नहीं होता तब पिछले सर्व मार्गके पूर्व करे अनुभव कर्तव्यते कृत्यकृत्य होताहै तिसते आगे कर्तव्य नहीं पुनः पिछले मार्गोंका तथा मार्गोंके सुख दुःखका तथा मार्गोंमें स्थित रमणीक अरमणीक पदार्थोंका स्मरण तो होवैहै पुनः यत्न नहीं होवैहै तैसे कर्म उपासना वृत्ति ज्ञानरूपी तीन मंजिलोंते परे ब्रह्मरूप आत्मदेवहै तिसकी प्राप्तीवत् प्राप्तीते एक कर्म क्या तीनों कांड निष्प्रयोजनहैं पूर्वोक्त दृष्टांतवत् तैसे स्वयं स्वरूप आत्मा देवस्थानहै तिसकी प्राप्तिमें कर्मकांड उपासना ज्ञानकांड तीन मंजिलेहैं जब निष्काम कर्म कर अंतःकर्णकी शुद्धि रूपी पहिली मंजिल पहुंचा तो तिसते निष्कर्तव्य हुआ फल की प्राप्ति होनेते तैसेही सगुण वा निर्गुण उपासना करनेते अंतःकर्ण निश्चलता रूप दूसरी मंजिल पहुँचताहै पुनः तिस्ते निष्कर्तव्य होताहै तैसेही सम्यक् ज्ञानकर अज्ञानकी निवृत्ति रूप तीसरी मंजिल पहुँचताहै तब तिसके यत्नते रहित होताहै यह नहीं कि पीछे लौटकर फेर यत्न कर्ताहै किंतु नहीं कर्ता काहेते तत्तत् प्रयत्नका फल प्राप्त होनेते तिसते पश्चात् सब दुःखकी हानि अरु परम आनंदकी प्राप्ति रूप मोक्ष रूप देव स्थानको प्राप्त होताहै यह व्यवस्था सब विद्वानोंके अनुभव सिद्धहै ताते स्वरूप प्राप्ति पश्चात् तीनोकांड निष्फलहैं मीमांसाने कहा

150

कर्मोंसे जगत् होताहै तथा उत्तम सुखरूप लोकोंकी प्राप्ति होतीहै कपिलने कहा कर्म सहित जगत्की चैतन्य आत्माते स्वप्नदृष्टा ते स्वप्नवत् उत्पत्ति होतीहै दूसरा जिसको लोकोंमें जानेकी इच्छाहो सो कर्म करो जिसको इच्छा नहीं सो मतकरो परंतु कर्मकर्ता कौनहै यह विचार अवश्य कर्तव्यहै मुमुक्षुको ॥ मीमांसाने कहा हे साधो कायिक वाचिक मानसिक तीन प्रकारके कर्म हैं आत्मा नात्माका विचार मानसी कर्महै विचारना न विचारना यह भी मानसी कर्महै जो कछु कथन करोगे वा न करोगे सो वाणीका कर्म है अरु जो कथन चिंतन करोगे वा न करोगे सो मानसी कर्महै अरु जो खान पानादिक शयन जन्म मरणादि चेष्टा करोगे वा न करोगे सो शारीरक कर्महैं कहो किसकालमें अकर्म भया सारांश यह कि यह देहहीं कर्म रूपहै कर्मते कर्म अतीत कैसे होताहै दत्तने कहा जो शरीररूप होवेगा सो कर्म रूपभी होवेगा जो शरीरतेही रहित अशरीरी आत्मा पूर्वोक्त तीन प्रकारके कर्मोंका साक्षी कर्म रूप कैसे होवेगा जैसे देही देह रूप नहीं होता तैसे कर्म रूप संसारते मैं प्रत्यक् आत्मा कर्मका प्रकाशक भिन्नहों कर्त्ताके अधीन कर्म है ताते जडहै प्रसिद्धकर्त्ता कर्म भिन्न भिन्न होते हैं एक रूप नहीं ताते कर्मोंका सारकर्ता है कर्ता कर्म करो वा न करो हे मीमांसा तू चैतन्य सर्वका कर्त्ता होकर कर्म रूप क्यों होताहै मीमांसाने कहा कर्म विना चंडाल होताहै ऋषभदेवने कहा चंडाल आत्माते कब भिन्नहै जो कर्मके त्यागते चंडाल होताहै तोमैं भी चंडाल हों चंडाल नाम ब्रह्म रूप आत्मा काहै काहेते कर्म रहित आत्माहीहै अन्य नहीं ताते आत्मा चंडाल हुआ मीमांसाने कहा इनोने संसारको भ्रष्ट किया है दत्तने कहा ठीक कहा तैंने अपने स्वरूपते भिन्नको मिथ्या जानाहै हे मीमांसा जो स्वरूप ते अप्राप्त है वही भ्रष्टहै पर कहो कर्म स्वप्रकाशहै कि पर प्रकाशहै मीमांसाने कहा यह दोनो कथन चिंतन मन वाणीका कर्म है जड भरथने कहा यह मन वाणी का कर्म है यह कथन चिंतन अंतर जिसने जाना सो आत्मा स्वप्रकाश अक्रिय है कर्म रूपनहीं पराशरने कहा हे मैत्रेय मीमांसाका प्रयोजन यहीथा जो सर्व पालना कर्मोंको करे काहेते देहाभिमान स्थूल अहंकारते कर्म नहीं होते सूक्ष्मते होतेहैं काहेते स्थूल शरीरते भिन्न आत्माको कर्मी भी मानताहै काहेते जो शरीर रहित हुआ ही यह जीव कर्मोंका फल स्वर्गादिकों मे जायकर भोक्ता

है इन शरीर सहित नहीं परंतु आत्माको असंग अक्रिय नित्य मुक्त इत्यादि विशेषणों युक्त विद्वानवत् नहीं जानता इसीते भावी जन्मको
पाताहै कर्मों रहित होना अत्यंत कठिनहै मैत्रेयने कहा सर्व कर्मोंकी आत्मामें अरतीयोंको पालना मीमांसा अनुसार बनतीहै परंतु आत्मा
विषरती आत्मा कर संतुष्ट आत्माचारी क्या करे पराशरने कहा हे मैत्रेय वचन ते निश्चय जायतो निश्चय नहीं कपटहै शरीर नाश होय तो
होय पर निश्चय न त्यागे इसी बात पर एक कथा सुन कर्म भूमि भरतखंड विषे एक राजाथा अरु स्त्री वाकी गर्भवानथी जब दश मास बीते तब
पूर्व अनेक जन्मोंके पुण्यके प्रताप ते तथा सम्यक् प्रतिबंधकके अभावते तथा पूर्व जन्मों विषे करे जो श्रवण मनन निदि ध्यासन ज्ञा-
नके साधन अनेक जन्म संस्कारोंके वशते तथा पूर्व करीयां सगुण वा निर्गुण अनेक प्रकारकी उपासनाके बलते गर्भ मेंहीं भयाहै सम्यक्
अपरोक्ष ज्ञान जिस बालकको सो पूर्व करे वेद अध्ययनके संस्कार की प्रगटताते गर्भमेंहीं वेद उचारण कर्त्ता भया तिसकी अत्यंत धर्मात्मा
माता सूक्ष्म दृष्टिसे वेदध्वनि सुनकर प्रश्नकिया कि हे पुत्र तू कौन है पुत्रने कहा मैं सत् चित् आनंद आत्मा हों माताने कहा तू पिताके
शुक्रते उत्पन्न भया है पुत्रने कहा हे माता जो पिता माताके शुक्रते उत्पन्न भया है सो यह जड शरीर है मैं शरीर नहीं केवल चैतन्य
मात्र अरूप हों अज अक्रिय अविनाशी आत्मा हों भूत भविष्य वर्तमान एकसा पूर्ण हों माता पिताके शुक्रते कैसे होवों माताने कहा
मुझते अपकर्म कछु नहीं हुआ तू पिताके शुक्रते क्यों मुकरताहै पुत्रने कहा मैं शुक्रते मूलही नहीं काहेते यह शरीर काष्ठकी पुतरी
की न्याई नाम रूपात्मक जड़ है अरु मैं चैतन्य नामरूपते रहितहों हे माता जो नाम रूप शरीरते रहित होवे कैसे कहिये अमुकेका
पुत्र है तुझकी दृष्टि शरीरपर है पर इसको स्वप्न मृगतृष्णाके जलवत् जान माताने कहा पिताके शुक्रते मुकरता है तो शास्त्रते भ्रष्ट
होवेगा पुत्रने कहा सतकहा तैंने जो नाम रूप स्वरूप नहींराखत सो शास्त्र जगत्ते भ्रष्ट है हेमाता शास्त्र तिसको दंड देताहै जिसने आ-
पको शरीर माना है जिसने इस मलीन शरीरका अभिमान सम्यक् त्यागके अपने आत्मस्वरूप को जाना है तिसपर शास्त्रकीविधि नहीं
माताने कहा हे पुत्र तू कौन है देवता कि पिशाच कि मनुष्यादिक वा कोई और है पुत्रने कहा हे माता पूर्वोक्त शब्द अरु शब्दों के

अर्थते रहितहों अरु सर्वका प्रकाशकहों अरु सर्वरूपभी मैं चैतन्य हींहों स्वप्नद्रष्टावत् माताने कहा जो तू ऐसाथा मुझके उदर में क्यों आया पुत्रने कहा हे माता तू विचारके नेत्रोंसों अंध है क्या आदिमैं चैतन्यतेरे उदरमें नथा जो अब आयाहों मैं चैतन्य आकाशकी न्याईं सर्व व्यापकहों मुझ में आना जाना नहीं सत् चित् आनंद आत्मा मेरा स्वरूप है मुझको आत्मदेव कहे हैं जन्म मरण का कारण जो देहाभिमान पूर्वक कर्मों का सेवन है तिनते अतीतहों मेरी नमस्कार मुझको है माताने कहा योगकर जो मलीनताते छूटे पुत्रने कहा योगका मुझ चैतन्य में वियोग है जो मुझ चैतन्य में मलीनता होवे तो तिसके दूरकरने वास्ते योगादि करों पर मुझ में मलीनता हैनहीं ताते योगसों क्या प्रयोजन है जैसे आकाश में मलीनताहो तो यत्नभी करे जो नहीं तो कछुनहीं मैं चैतन्य आत्मा नित्यमुक्त हों तुझे इस भ्रमने आच्छादन किया है जो अपने नित्य मुक्त नित्यप्राप्त आत्मस्वरूप पावनेवास्ते योग ध्यानादिकहैं सो भ्रम है सत् चित् आनंद आत्मा रूप मेरा स्वतः प्रकाशमान है करना कछुनहीं जोकरे सो भ्रमी है हे माता मुझ स्वरूप असंग चैतन्य का किसी वस्तुके साथ योगनाम जुड़नानहीं अरु कोई वस्तु मुझ चैतन्यके साथ जुड़ती नहीं आपसों आप असंगरूपहों किससों जुड़ों मुझसों कौनजुड़े अरु सर्व से अयत्नहीं जुड़भी रहाहों अजुड़भी रहाहों अरु सर्व मुझसे अयत्नहीं जुड़रहे हैं यत्ननहीं जैसे स्वरूपसेही असंग आकाश किसवस्तु से जुड़े नामसंबंधकरे वा न करे अरु कौन वस्तुहै जो तिससे जुड़े अरु न जुड़े किंतु कोई नहीं अरु सर्ववस्तु से जुड़भीरहा है अजुड़भी रहाहै अरु सर्व वस्तु तिससेभी जुड़रही है जैसे स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्न पदार्थों से अयत्न जुड़भी रहा है अजुड़भी रहाहै अरु कल्पित सर्व स्वप्नपदार्थ स्वप्नद्रष्टासे अयत्न हीं संबंध पार हे हैं यत्न नहीं माताने कहा कर्मों विना सुख नहीं पुत्रने कहा हे माता जिसके आदि अंतमें दुःख है मध्यमें सुख कैसे होगा हे माता यह सर्वनाम रूप संसार कर्मरूप है अरु अनादि कालका तुझको प्राप्तहोता चलाआता है आजतक इस संसार रूप कर्म से तुझको सुख न हुआ तो आगे कैसे सुख होगा किंतु नहीं होगा उलटा जन्म मरनादि दुःखहै ताते तू आपको अ

कर्म रूप आत्मा जान माता तूष्णी भयी पुत्रने कहा तूष्णी मतहो जो तुझको निश्चय होय सो कहो अरु सुन हे माता यह कोटानकोट ब्रह्मांड मुझ चैतन्यते प्रगट पड़े होते हैं पुनः मुझमें लीन हो जाते हैं जल तरंगवत् मैं ज्यों कात्यों एक रस निर्विकार हों सोई चैतन्य तेरा स्वरूप है माताने अहा अंतर से वाहर आओ संतके दर्शनसे कल्याण होता है पुत्रने कहा मुझ व्यापक चैतन्यमें अंतर वाहर आना जाना नहीं यह सर्व दर्शन मेरा हैं अरु मैं चैतन्य सर्वका दर्शन नाम अधिष्ठान हों विना सतविचारके अज्ञान नाश नहीं होता सत विचारसतसंग से होताहै अरु सतसंग निर्अहंकारसे होती है नहीं तो सब काम अकार्थ जान ताते सूक्ष्म स्थूल कारणका अहंकार मनते त्याग पीछे जो शेषरहै सो तेरा निर्विकल्प स्वरूप है माताने कहा मेरा शरीर स्त्रीका है अरु मैं कछु वेद पुराण पढ़ी नहीं अरु न मैं सत संग किया है अरु न कोई मुझसे विशेष साधन होवे है काहेते वहु कुटुंबी गृहस्थ होनेते ताते हे पुत्र ऐसा कछु उप देश कर जो कृतार्थ होवों पुत्रने कहा हे माता मुझ में पुत्र बुद्धि त्याग जो कहों सो सत जान हे माता अपने आत्म स्वरूप बोध में स्त्री अरु पुरुष की अपेक्षा नहीं किंतु यथार्थ ब्रह्मवेत्तावक्ता चाहिये अरु सम्यक् मुमुक्ष चाहिये अरु प्रतिबंधका भावभी चाहिये तो अवश्यमेव आत्मबोध होता है काहेते ब्रह्मासे लेकर चीटी पर्यंत ब्रह्मात्मा सर्वका अपना आपहै जो सम्यक् अपरोक्ष जानेवत् आत्माको जाने सोई रूप होताहै क्या स्त्री क्या पुरूष ताते हे माताहो मैं अहंकार भ्रम त्याग शेष अवाङ्मनसगोचर स्वरूप तेरा है हे माता जो मन वाणीके कथन चिंतनमें आताहै सो वाणी मन सहित सर्व तुझ चैतन्य दृष्टा की दृश्य है जैस स्वप्न में जो कछु प्रतीत होता है सो सर्व स्वप्न चैतन्य आत्माकी दृश्यहै ताते तू आपको दृष्टा स्वरूप जान देह मनादिक पंच भूत रूप संघात आपका स्वरूप मत जान काहेते दृश्य दृष्टा रूप नहीं होती दृष्टा दृश्य नहीं होता यह नेम है हे माता दुःख रूप देहादिकों विषे भ्रमसे आत्माध्यासकी निवृत्ति वास्ते अरु सुखरूप आत्माकी भ्रमसे प्राप्ति वास्ते अनेक उपाय शास्त्रोंमें कहेहैं परंतु सतसंग द्वारा दृष्टा दृश्य का विवेचन हीं मुख्येनही सम्यक् अपरोक्ष आत्मवोधका कारण है अन्यनहीं काहेते दृष्टा दृश्य दोहीं पदार्थ हैं दृष्टा

152

अपना स्वरूप है जो जो दृश्य है सो मायामात्र मिथ्या है माताने कहा हे पुत्र द्रष्टा दृश्य भाव द्वैत में है अरु मैं अद्वैत हों जब अस्ति भाति प्रिय रूप सर्व मैंही हों तो द्रष्टा दृश्य का भेद कहां है पुत्रने कहा हे माता जब सर्व तू ही है तो द्रष्टा दृश्यका भेद भी तू ही है तिसी समय जैसे सूर्य पूर्व दिशाते उदय होताहै तैसे माताके उदर ते बालक बाहर निकसा सो सुनकर राजा आवतभया अरु देखा तो रानीको पुत्र जन्मका हर्ष किंचित्‌भी नहीं अरु न शोकहै एकसी स्थितहै सोदेख आश्चर्य मान भया अरु कहा हेरानी तैंने कौन समतारूप अमृत पानकियाहै जो तू सुख दुःख विषे समहै रानीने कहा हेराजन् मैं चैतन्य आप अमृत स्वरूपहों मुझ सत् चैतन्य अमृतते भिन्न सर्व असत् जड़ दुःखरूप मृत्युहै राजाने कहा तू इस देहते भिन्नहै तो पुत्र कौनहै अरु मैं क्याहों रानीने कहा न तू न मैं न पुत्र एक सत् चित् आनंद साक्षी आत्मा मैंहों जब सर्व मैं चैतन्य आत्माहों तो मैं पुत्रादि सर्व जगत् मैंहींहों राजानेकहा यहविचार तुझे किसते प्राप्तभया है रानीने कहा विचार अरु विचार करनेयोग्य अरु विचारकर्त्ता इत्यादि त्रिपुटियां स्वप्नवत् सर्व मायामात्र हैं मैं चैतन्य स्वप्नद्रष्टावत् आत्मा सर्वसे असंग सर्वका प्रकाशक आप स्वयं प्रकाशहों ताते मुझ चैतन्य द्रष्टाको विचार पूर्वोक्त दृश्यसे कैसे प्राप्तहोवेगा हे राजन् असली विचारें तो स्वप्नद्रष्टाही स्वप्नसृष्टी रूप होताहै तैसे अस्ति भाति प्रियरूप मैं चैतन्यआ-त्माहीं सर्वरूपहों राजानेकहा हे पुत्र तू धन्य है जो तेरे संगते रानी अरु मैं अपने स्वरूपको प्राप्तभये हैं पुत्रने कहा हे पिता तू स्वरूपते आगे कब भिन्नथा जो अब पायाहै तू आपसोंआप है राजाने कहा तृष्णा पिशाचकी न्याईं मनको पकड़ा है जब यह नाश न होय आत्म सुख कैसे प्राप्तहोय पुत्रनेकहा तृष्णा का क्यारूप है राजानेकहा अप्राप्त भोगोंकी इच्छा अप्राप्तके नाशके अभाव की इच्छा पुत्रनेकहा सो इच्छा किस में उठेहै राजाने कहा अंतःकर्णमें पुत्रने कहा वचन तेरा हाँसी योग्यहै जो इच्छा अंतःकर्ण में है तो तुझे क्या पहुँचता है जो नाशकरें तू चैतन्य इच्छाते रहित इच्छाका साक्षीहै ताते तू इच्छाके त्याग का त्यागकर राजानेकहा राज्यछोड़ के अतीतहोता हों पुत्रने कहा हे राजन् अतीतहुयेभी पुनः सतसंगद्वारा आत्मा का सम्यक्‌ अपरोक्ष बोधहुये विना शांति न होगी ताते आत्मबोधकी

प्राप्ति सुखका हेतुहै कोई राज्यछोड़ वन में जाना सुखका हेतुनहीं ताते चलो ऋषभदेवके आश्रम में एकट्ठे संतभये हैं तहां आत्म निरूपणरूप ब्रह्मयज्ञहोता है राजा रानी अरु पुत्र तीनो तहां पहुँचे अरु सर्वसंतोंको नमस्कारकरी मीमांसा आगे कहताथा कि सर्वकर्म रूपहै दत्तने कहा ठीक यह सर्वजगत् कर्मरूप है परन्तु कर्मका कर्त्ता कर्मते पृथक् मानना चाहिये बालकने कहा हे मीमांसा कर्म कासों होत है अरु कामें लीनहोता है मीमांसानेकहा कर्म किसीते नहीं स्वप्रकाश हैं बालकहँसा कहा हेबु द्धिखोये एती धूमधाम काहेको तैंने डाली है स्वप्रकाश पूर्ण है कि ऊर्ण मीमांसाने कहा पूर्ण बालकने कहा पूर्ण विषे कर्तव्य नहीं तो कर्म कहां है मीमांसा तूष्णी भया पिताने कहा हे पुत्र तू सबते उच्चभया पुत्रने कहा ऐसे कहनेको अग्निविषे जलायदे ऊंच नीचादिक सर्व रूप मेराहै कासों ऊंचहों कासों नीच हों जनकने कहा हेबालक तुझे पूर्ण ब्रह्म देखोंहों बालकने कहा जो मैं ब्रह्महों तो ब्रह्मका द्दष्टा कोई है नहीं स्वयं है तैंने कैसे जानाहै मैं पूर्णब्रह्महों दत्तने कहा नामतेरा क्याहै कहा मैं अनामहों दत्तने कहा अपना स्वरूप कहो बालकने कहा रसना नहीं क्या कहों दत्तने कहा तूष्णी हो बालकने कहा हे दत्त तू विचार कर एते वचन जोमैं कहेहैं क्या रसनासे कहेहैं रसनादि इंद्रियोंकी क्या ताकतहै मुझ चैतन्यकी ताकत विना वचनादि करें दत्तने कहा जिसने स्वरूप अपना जानाहै तिसने सुख नहीं कहा बालकने कहा मुझके स्वरूपमें सुख दुःख दोनों नहीं मुझको बोलनेसे कछु हानि नहीं तूष्णीसे लाभ नहीं पर निर्वाण वहीहै जामें निर्वाण भी निर्वाणहै दत्तने कहा तेरा स्थान कौनहै बालकने कहा आकाशकी न्याई सर्वमें पूर्णहों यहभी द्वैतहै जब सर्व में चैतन्यहीं अस्ति भाति प्रियरूप आत्माहों तो पूर्ण कहां मैंहों हेवदत तू अहंकारको त्याग जो परम पदपावे दत्तने कहा मुझमें अहंकार है नहीं तो क्या त्यागों सुखको सब चाहतेहैं अरु दुःखको नहीं चाहते परवह धन्यहैं जो सुख दुःखकी प्राप्ति विषे आपको सुख दुःखते असंग जानते हैं हे बालक आत्मा स्वतः प्रकाश रूपहै कहनेते नहीं होता बालकने कहा जब ऐसाहै तब आपको पापी क्यों मानताहै दत्तने कहा पुण्यवान होनेकी इच्छा सभकर्ते हैं पर धन्य वहहै जो आपको पापी मानतेहैं सर्व सेर कहातेहैं पर धन्य वहीहै जो पाउ

कहाताहै परंतु इस पंच भूतक संघातमें पापरूप अहंकरनेते पापी होताहै निर्अहंकार पुण्य रूपहै वा सर्व जगत्को महाप्रलयमें पात्
नाम अपनी माया रूप देहमें लीनकरे निश्चय करके सो शवलब्रह्म पापीहै वा निश्चय करके सुषुप्ति में जो अपनी अविद्या रूप देह में
सर्वको लीनकरे सो पापीहै अविद्या उपहत चैतन्य साक्षीहै उपाधि रहित शुद्ध चैतन्य पुण्यीहै वालकने कहा स्वरूपके पावनेका उपाव
कहो दत्तने कहा स्वतःसिद्ध सम आत्माकी प्राप्ति विषे उपाय क्या कहों निदाघने कहा समता असमताकरना मुझ चैतन्य मेंहै नहीं
यह मनका धर्महै पराशरने कहा हे मैत्रेय सभ तूष्णी भये नाम अफुर स्वरूप में स्थित भये कोई काल पीछे उत्थानहोकर कहने
लगे जो कोई वासना नत्यागे बंधहै वालकने कहा वासना न त्यागे तो बंध किसको होताहै अरु त्यागे मुक्ति किसकी होतीहै दत्तने कहा
मनही वासनाको ग्रहण कर्त्ताहै अरु मनहीं त्यागता है ताते मनहीं का बंध मोक्ष होताहै मनहीं वासना ग्रहण करो वा त्यागो आत्मा
दोनों अवस्थाका साक्षीहै ताते वासना ग्रहण त्याग जन्म बंध मोक्ष भी आत्मा में नहीं पर धर्म भ्रमसे आपमें बंध मोक्षकी कल्पना कर्ता
है दत्तने कहा वासना सेही जीवहै नहीं शिवहै वालकने कहा वासना त्यागे शिव होताहै तो शिव होना वासनाके आ
धीन हुआ स्वतःसिद्ध न हुआ शिव अरु वासना का संबंध कछु नहीं वासना अंतःकर्ण मेंहै आत्मा अंतःकर्णते अतीत
है हे दत्त कहो वासना त्यागे आत्मा बड़ा होता है न त्यागे क्या छोटा होता है जड भरथने कहा विना वासना त्यागे मन शुद्ध नहीं
होता वालकने कहा जिसमे मन न होय सो कहो क्या करे जड़ भरथने कहा तैंने जाना है जो मुझमे मन नहीं यही मन है इस जाननेके
त्यागको त्यागकर वालकने कहा आत्माका जानना न जानना मनका धर्म है इस मनके व्यवहारके द्रष्टा मुझ चैतन्यको क्या जानने
न जाननेमे हानि लाभ है जड़ भरथने कहा अज्ञान अंधेरी निशिकी न्याई है ज्ञान सूर्यकीनाई है एता भेद है वालकने कहा
मैं आकाश चैतन्य दोनो ते परे हों वा दोनोंका आधार हों राजाने कहा जो तैंने जाना है तो तुझको सुख है न औरको कहने
ते क्या लाभ है वालकने कहा हे पिता सम्यक् अपरोक्ष आत्मज्ञानियोंके वचन तेही मुमुक्षुको बोध होता है विना कहे बोध

नहीं होता ताते विद्वानपुरुषोंका कहना श्रेष्ठ है न तूष्णी जड़ भरथने कहा हे बालक तू कहांसे आया है अरु कहां जावेगा बालकने कहा मैं चैतन्य देश काल वस्तु ते अतीत हों आना जाना मुझ में नहीं शरीरादि संघातमें है जड़ भरथने कहा तू कौन है बालकने कहा तुम क्या जानो नाम रूप विषे तैंने दृढ दृष्टि करी है जो मैं जड़ भरथ हों इस दृष्टीको त्यागे तब जाने जड भरथने कहा जिसमें यह विचार है कि मैं मन देहादिक संघात नहीं किंतु मैं ब्रह्म हों सो ब्राह्मण हो भावे चांडाल हो मेरा गुरू है हे बालक जो आपही स्वतःसिद्ध है तो सतसंग ते क्या लाभ भया बालकने कहा इसते अधिक लाभ क्या होगा जो भ्रमको भ्रम जाना स्वतःसिद्धको स्वतःसिद्ध जाना नहीं तो भ्रमको अभ्रम अरु अभ्रमको भ्रमरूप जानता है तिस समय ब्रह्मा हंस आरूढ आवत भया विष्णु देखकर हँसा अरु कहा हे ब्रह्मा देख तेरी सृष्टिको इन्होंने उखाड़ा है ब्रह्माने कहा मनुष्य शरीरका फल यही है जो अपने स्वरूपको सम्यक् जानना विष्णुने कहा तेरे प्रारब्धादि कर्मोंकोभी नहीं मानते ब्रह्माने कहा प्रथमे मनने प्रारब्धादि कर्म मानेथे अब मन नहीं मानता तो केवल मनका मनन भया चेष्टा मन देहादिक संघातकी जैसे आगे होतीथी तैसे अब होतीहै आत्मा आदि अंत मध्य मन देहादिक संघातकी चेष्टाका साक्षी है विष्णुने कहा इस बालकके माथेपर तैंने क्या लिखा है ब्रह्माने कहा यह जगत् सहित तू मैं बालक सर्व स्वप्नवत् आकाशरूप हैं आधार विना आकाशमें कैसे लिखना होता है अरु जो लिखा है तो यही लिखा है प्रत्यक् आत्मा मन देहादिक संघात ते भिन्न है संघात रूप नहीं [illegible]कने कहा जब सर्वात्मा है तो संघात क्या तिसते भिन्न अभिन्न क्या है ब्रह्माने कहा प्रथमे नेति नेतिकर स्थूल सूक्ष्म कारण समष्टी व्यष्टी शरीरोंको निषेधकर प्रत्यक् आत्माको तिनके निषेधकी अवधि भूत तथा तिनके आदि अंत मध्य साक्षीरूपकर बोधन जिज्ञासू को करना जब सम्यक् जाना पीछे सर्व अस्ति भाति प्रियरूप ब्रह्मात्मा है यह विधिरूप उपदेश करना जैसे प्रथमे तरंगादिकों ते भिन्न जलको बोधन करके पीछे मधुरता द्रवता शीतलता रूप सर्व तरंगादिक जलही है मरीचिने कहा हे

ब्रह्मा ब्रह्मा नाम तेरे किस अंग काहै ब्रह्माने कहा सर्व अंग मेरे हैं मैं चैतन्य अंगीहों काहेते सर्व अंगोंका मैं चैतन्य आत्मा स्वरूप होने
ते मरीचि कहा चाहता हों जो मनको वश करों संध्यासमय खिडजाता है मनवशका उपायकहो ब्रह्माने कहा मन तेराहै मनके वश
का उपाय क्या कहों परकहो मनका रूप क्याहै मरीचिने कहा मनका रूप नही देखा ब्रह्माने कहा जब तैं मनका रूप नहीं देखा
तो वश कैसे करेगा पर हे मरीचि अपने सत् चित् आनंद रूप आत्मा ते पृथक् जो कछु मनादिक प्रतीत होतेहैं सो मृगतृष्णाके ज-
लवत् जान पुनः संकल्प विकल्प रूप मनके प्रतीत हुया भी तुझ चैतन्य अधिष्ठान को खेद न होवेगा तातपर्य यह कि अपने सम्य-
क् अपरोक्ष आत्मा स्वरूपको जानना ही मनके वशका उपाय है वा मनादिक सर्व दृश्य जातको अस्ति भाति प्रियरूप ब्रह्मात्मा
सम्यक् अपरोक्ष जानना यह परम मन वशका उपाय है वा मन देहादिक संघात रूप ब्रह्मांडको अपनी दृश्य जाननी अरु
आपको मनादिकोंका द्रष्टा चैतन्य जानना दृश्यका धर्म द्रष्टाको नहीं पहुँचता यह बात ठीक जाननी यह पूर्व ते भी
मनवश करने का उत्कृष्ट उपाय है हे मरीचि योग भी मन वश करनेका उपायहै पर जब लग योगहै तबलग मन वशहै
योगके पूर्व उत्तर संकल्प विकल्प मनका स्वभाव वैसे का वैसाही रहता है जैसे वानर सर्व अंगों के बंधने से चेष्टा नहीं
कर्ता जब खुला तो पूर्ववत् स्वभाव होता है मरीचिने कहा मैं अपने स्वरूपको नहीं जानता जो जानता तो मनवश का
उपाय न पूछता ब्रह्माने कहा उपाय मन वशका यही जान जो यह पंचतत् रूप संघात स्थूल सूक्ष्म कार्य भी मैं नहीं अरु
इनका कारण शरीर अज्ञान भी मैं नहीं इनका साक्षी भूत मैं चैतन्य आत्मा हों अब कहो रूप तेरा क्या है मरीचिने कहा नाम रूप स्वरूप
मेरा नहीं नाम रूप स्वरूप ते अरूपहों ब्रह्माने कहा बाहरते मत कहो अंतर मन ते जान जो तुझको सुख होवे देहाभिमानही अ-
पने स्वरूप ज्ञान में प्रतिबंध है मरीचिने कहा हे ब्रह्मा यह संघात है तो अपने स्वरूपका ज्ञान है जो यह नहीं होय तो
कौन जाने मैं आत्माहों ब्रह्माने कहा जब शरीर गिडता है तब सभी अंग वैसेही होते हैं आत्माकी शरीरके अधीन स्थिति

होवे तो उसवक्त क्यों नहीं हलता चलता मरीचिं ध्यानके बल से सभ अंगोंके अंतर बाहर देखा जो यह शरीर अपने अंगों सहित मलीन जड़ दुःख रूप है मैं शरीरकी तथा शरीरके अंगों की मलीनता तथा जडता देखने वाला शुद्ध चैतन्य शरीर ते भिन्न हों जो मैं चैतन्य न होंवो तो शरीर की मलीनता जड़ता कैसे अनुभव होवे मरीचिने कहा हे ब्रह्मा मैं शरीर कब हूं नहीं पर कहो मैं कौनहों ब्रह्माने कहा जिसने सभ अंग शरीरके तथा शरीरको तथा मनादिकोंको देखा नाम जाना वही तेरा रूप है मरीचि स्वरूप विषे लीन भया पराशरने कहा हे मैत्रेय संतोंका यह स्वभावहै जिस मार्ग द्वारा जिज्ञासू स्वरूपको पहुँचे तिसी मार्गसे पहुँचा देना तिस समय एक राक्षस आता भया अरु कहा सभको खांवोहों अरु आप होंवोहों सारांश यह कि सर्व नामरूप प्रपंचको अपने आत्म स्वरूप अधिष्ठानमें कल्पित जानोहों नाम अत्यंताभाव जानोहों पुनः कल्पितका अत्यंताभावभी आत्म स्वरूप अधिष्ठान जानोहों दत्तने कहा जब तैंने सर्वको नहीं खाया तब कौनहै जब खायगा तब कौन होयगा राक्षसने कहा तूही कहो स्वप्नद्रष्टा निद्राकर अपनेमें कल्पित स्वप्नसृष्टीको लीन करा वा सत्य जाना तो क्या होताहै औ विचार कर असत् कल्पित जाने वा उदय करे तो क्या रूप होताहै दत्तने कहा एकसाहै राक्षसने कहा हे बुद्धिखोये तद्वत मैं चैतन्य आत्मा एकरसहों पर नहीं जानता था कि कोई मेरे वचनका श्रोताहै तुझ सहित बालकको खावोंगा अरु आप होवोंगा बालकने कहा सर्व अंग तेरेहैं किसको खावेहै जो अपने अंगोंको खावे तो कौन तुझको वर्जित करेगा राक्षसने कहा यही खावोहों न तू न मैं न दत्त न यह जगत् केवल मैं चैतन्य आत्मा हों बालकने कहा राक्षस तुझको क्यों कहतेहैं राक्षसने कहा जैसे लकडी अग्निके संबंधते राख होतीहै पुनः राख लकडीका काम नहीं देती तैसे नाम रूप सर्व संसार लकडीको विचार रूप अग्निसे राख नाम मिथ्या जानाहै पुनः मिथ्या सम्यक् जाना संसार जन्म मरनका कारण नहीं होता पर कहो हे बालक तेरा नाम क्या है बालकने कहा नाम मेरा सुराट नाम स्वप्रकाश स्वरूप है राक्षसने कहा कौन ठौर तैंने प्रकाश किया है बालकने कहा आपही प्रकाशकहों अरु आपही प्रकाश्य हों अरु आपही प्रकाशने योग्य हों

मुझ मे द्वैतनहीं राक्षसने कहा मैं कौन हों बालकने कहा में हों तिस समय कल्याण स्वरूप शिव आते भये अरु कहा हे राक्षस तुझे खांवो हों राक्षसने कहा मैं राक्षस नहीं चैतन्य रूप शिवहों अपने को आप मार वा न मार बहुरि निदाखकी तर्फ मुख कर शिवने कहा हे निदाख तुझे त्रिशूल से मारोंगा निदाखने कहा त्रिगुणात्मक रूप कार्य कारण आपा अहंकार सहित संसारको ज्ञानाग्निसे भस्म कर नाम मिथ्या जानकर त्रिगुणातीत आपभयाहों शिवनेकहा बाहरसे मतकहो निदाखने कहा तुम अंतर्यामी होकर देखो अंतर बाहर निदाख नहीं तूही है तो निदाखका क्यों नाम लेते हो शिवने कहा निदाख भस्म भया तो पीछे अवाचपदहै हे निदाख इस निश्चयका शरीर नाशपर्यंत त्याग नकरिओ आत्माको सम्यक् अपरोक्ष जानेते काल शास्त्र सहित हमतीनोदेवतादिकके भय ते रहित होता है शिवने कहा हे विष्णो आप कौन हो विष्णुने कहा तू ही है तो काको पूछे है शिवने कहा जो तू रूप मेराहै तो विष्णुपने का अहंकार त्यागेगा तो मुझ चैतन्य से अभिन्न होवेगा विष्णुने कहा आगे भिन्नहोवों तो अब अभिन्न भी होवों पर स्वरूपविषे भिन्न अभिन्न दोनों नहीं; जानताथा जो तू पूर्णहै तब तुझको मनदेकर शिवभयाहों पर देखातो ऊर्ण है काहेते ऊर्णमेंही मिलाप भिन्न होता है भेटपूर्ण में नहीं शिवने कहा यह पूर्ण ऊर्णादि कथन चिंतन केवल मन वाणीका मनन कथनहै मैं चैतन्य मन वाणीते अगोचरहों विष्णुने कहा जो तू मन वाणीते अतीत है तो मुझको संदेहवान कैसे देखा शिवनेकहा तुझसहित सर्वदृश्य मुझ चैतन्यकर प्रकाशमान है तुझको देखा नामप्रकाशा तो क्या हानि है राक्षसने कहा न विष्णु न शिव न जगत् न राक्षस निरूप मैं अवाचपदहों यह सब कहनमात्र है विष्णुने कहा शीशतेरा अभी चक्र सों काटोंहों काहेते तू अभिमानी है राक्षसने कहा मैंने देहाभिमान रूप शीश अपना आत्म विचाररूपी हाथसों काटा है अरु अशरीर भयाहों बहुरि काटनेते क्याभय है हे विष्णु तेरा देहाभिमानरूप शीश काटा है वा नहीं जो काटाहै तो मुझका शीश कैसे काटेगा अरु तैंने शीशबिना मुझका शीश कैसेजाना अरु जो कहे नहीं काटा तोभी मुझ अशीशका शीश कैसे काटेगा वा देह अभिमान सहित तेरे लाखों यत्नोंसेभी अभिमान रहित मुझका शरीर नहींकटेगा जैसे सोयापुरुष जाग्रत पुरुषके शीशादिक नहीं काटसक्ता वा स्वप्न

नर स्वप्रद्रष्टा का किंचित्मात्र भी अपकार नहीं करसक्ता हे विष्णु जो तू कहै तेरा देहाभिमान रूपी शीश नहीं गिरा तो मैं हाज़िरहों शीश मेरा काट विष्णुने कहा सर्व मैंहों तैंने आपको राक्षस माना है तिसको त्यागकर यही शीश काटनाहै जैसे तरंगभाव त्यागे शेष जलहै राक्षसने कहा जो तरंगभाव नहीं त्यागे तो भी जल है विष्णुने कहा जब जलही है तो जलने आपको तरंग मानना यही भूल है राक्षसने कहा भूल अभूलादि मनका धर्महै मुझ आत्म भूल अभूलके साक्षीकी भूल नहीं पर कहो मन कैसे जीताजावे विष्णुनेकहा आत्मबोधविना मन नहीं जीता जाता अरु मन जीते विना आत्मबोध नहीं होता ताते मनजीतने का अरु आत्मबोधका यत्न एककाल में हीं करो क्या आत्मा नात्मा का सम्यक् सतसंग सतशास्त्र विचार करो दोनों सिद्धहोंयगे जैसे प्रातःकाल ज्यों ज्यों सूर्य उदयहोता है त्यों त्योंहीं एक काल मेंहीं अंधेरा निवृत्त उदय होता जाता है अरु प्रकाश उदय होता जाताहै राक्षसने कहा तैंने हमारे कुलको क्यों नाश किया है विष्णुने कहा मैं किसीको नाश नहीं करता किंतु आप अपने शुभाशुभ कर्तव्योंके अधीन जीव सुख दुःख पातेहैं पुनः विष्णुने कहा हे सभा कथा श्रवणकरो जिस कथाके श्रवणते हम लोगोंका अभिमान दूर होजावे मच्छ अवतार ने जलजंतुओंकी बोली मेंहीं जलजंतुओं को ज्ञान उपदेश कराथा पुनः तिन्होंने अपनी बोली में आत्म निरूपण कराथा सो मैं अन्तर्यामी रूपकर जानता भयाहों सो तुम सुनो एक मच्छीने अन्य मच्छीयोंसे कहा फांस कालका हमें कभी दुःख नहीं दे सक्ता जो तृष्णा प्रारब्धसे अधिक की न करें काहेते ईश्वरने हमारे प्रारब्ध जलमें सवालादिक ही किया है तिसको त्याग कर मांस आटा खानेके लोभ से मृत्यु होतीहै इसीते बंधहै यह तृष्णाही शरीरधारीको काल है अरु तृष्णा देहाभिमानसे होती है अरु देहाभिमान अपने स्वरूपके अज्ञानते होताहै सो अज्ञान स्वरूप ज्ञानते नाश होताहै कहो ज्ञान कैसे होवे अन्य मछली ने कहा देह अरु देहधारीके विवेचनसे ज्ञान होताहै मगरने कहा देहधारी जीव है मछलीने कहा जीव का रूप क्या है कृष्ण कि श्वेत मगर ने कहा

रूप नहीं देखा मछलीने कहा रूप नहीं देखा तो नाम कैसे राखा कहा सुनकर कहोंहों मछलीने कहा हे बुद्धिखोये जब सुन कर आपको तैंने जीव निश्चयकरा तो जीवका सत् चित आनंद स्वरूप है यहभी शास्त्रसे सुना होगा वा आगे सुनेगा तो आपको सत् चित् आनंद न माना जीव माना यामें कारण क्या मगरने कहा सत् चित् आनंद अरु जीव दोनो मन वाणीका कथन चिंतन मात्र हैं यामें क्या विशेषता है इस कथन चिंतन की पहँचान करनेवाला मेरा स्वरूप अवाच पद है इस निश्चय ते देहाभिमान रूपी फाँसगलेमें पर्डाहे सो काटी जावेगी अन्य मच्छीने कहा इस शरीरते आपको भिन्न कैसे जाने का हेते चिरंकाल यांसो बंधहे वडी मच्छीने कहा पुष्पके तोडनेमें ढील है परन्तु परमेश्वर रूप आत्माके पावनेमें ढील नहीं मूल शरीर का अहंकार है जब अहंकार नाश भया तो आपते आपहै मगरने कहा अहंकार आपको कहें हैं क्योंकि मैं हों जब आपागया तो जीव काको मिला अरु शरीरते भिन्न किसने जाना आपको त्यागकर दूसरेको शिरपर धरना क्या प्रयोजनहे एते में वधिकने जाल डाला मछलीने कहा हे मगर शरीरके लेनेवाला आयाहै कहो अब क्या करें देहाभिमान त्याग कर भगवानकी शरण होंय मगरने कहा यम शिरपर खड़ाहे तू शरण चिंतन करे है पर कहो भगवान् पूर्णहै जब पूर्ण है तो आपही भगवान है जब आपही है तो काकी शरण जावे अरु वधिक कहां है एते वचन कहकर स्वरूपसे लीन भये किसीकविद्या निमित्त कर वधिक तिन जलजंतुओंकी बोली जान ताथा सो वधिक तिनके वचनको सुनकर जाल प्रथिवी पर गेरदिया अरु मगर सों प्रश्नकिया कि तेरे वचन मुझको अमृत समान भयेहैं तुझके घातका मैंने त्यागकिया पर कछु वचन कहो मगरने कहा हे वधिक तू काको जलसे पकडे है शरीरके आत्माको शरीर तुम्हारा हमारा मायाके कार्य पंचतत्त्वोंका दृश्य मात्र एक सरीखा है आत्मा भी तुम्हारा हमारा संघातका साक्षी एक रूप है हे वधिक जो उत्पत्तिवान वस्तुहै सो अवश्य काल रूपी वधिकने नाश करना है अरु जो वस्तु नाश होगी पुनः तिसकी उत्पत्ति भी होगी ताते यह अर्थ अपरिहार होनेते शरीरके नाशकी क्या चिंताहै आत्मा अविनाशी है यह भी अपरिहार अर्थ है ताते दोनों प्रकार से मंगलहै हे

बधिक इस संघातरूपी समुद्रमें आत्मा विचाररूपी जालसे अपने मनरूपी मच्छीको पकड़ जो शांतिवान होवें बधिकने कहा मनका रूप कहो मगरने कहा मनका रूप संकल्प विकल्प है अरु संकल्प विकल्पके अनुभव करनेवाला तू चैतन्य असंग है विचारकर देख इस शरीर विषे वधिक नाम किसका है यह शरीर पंचभूतोंका परिणाम अन्नका विकार है आत्मा शरीरते रहित इसका साक्षी है बीचमें व्यर्थ तैंने आपको वधिक माना है इस वधिकपनेके अहंकारको त्यागका त्यागकर पीछे अवाचपद है यह वचन सुनकर वधिक स्व भावको त्यागत भया अरु परमार्थको पहुँचा पुनः मेढक आवत भया अरु कहा मैं निशि दिन ओंकार शब्द करो हों इसके भजन ते जो चाहों सो प्राप्त होत है ताते तूभी सुख चाहोतो ओंकारको रटन करो मगर मच्छने कहा मैंने आगे इस जालको वडे यत्नसे काटा है अब मुझको पुनः जालमे मत डाल काहेते मुझ चैतन्य निष्कर्तव्य विषे कर्तव्यका अरोपन बुद्धिकी हीनता है अबतक मैंने ओंकारको नहीं जाना पर कहो ओंकारकाको कहैं है अरु अर्थ तिसका क्या है मेढकने कहा ओंकार ते सर्व जगत्की उत्पत्ति होती है ब्रह्मा विष्णु शिव ओंकारकी तीनमात्राते क्रमसे उत्पत्ति भयेहैं तैसेही अकार उकार मकार मात्राते स्थूल सूक्ष्म कारण जगत् भयाहै सारांश यहकि सत्त्व रज तम देवता विषय इंद्रियादि त्रिपुटी तीनमात्रा रूपहीहैं मगरने कहा हे बुद्धिखोये अर्ध मात्रारूप तुरीय ब्रह्मात्मा अद्विती यको त्यागकर त्रिपुटी रूप अपनी दृश्य विषे क्यों लागिये मेढकने कहा यहभी ओंकारहै मगरने कहा जब मैं चैतन्य मन वाणीको ताकत देताहों तब मन वाणी ओंकारका जप चिंतन करे है नहीं तो नहीं ताते मुझ चैतन्यते ओंकार प्रकाश राखतहै काहेते शब्द जड़ रूप होनेते जो जड़है सो अनित्यहै जो ओंकार जड़ न होता तो मुझ चैतन्यकी दृश्य न होता मेढ़कने कहा द्रष्टा तू अरु दर्शन अंतःकर्णकी वृत्तियां अरु दृश्य ओंकार तैसेही द्वैत अद्वैत एक तूहीहै ताते यह सभ ओंकार ही भया मगरने कहा ऐसा कछु कहो या में ओंकार नहोवे मच्छीने कहा यह सर्व त्रिपुटी रूप ओंकार है अरु ओंकार प्रकृति रूपहै अरु प्रकृतिही परिणामकर शरी र रूप भईहै अरु मैं चैतन्य इस शरीरते मुक्त हों ताते कैसे ओंकारका रूप भया किंतु ओंकारते भिन्न हों पुनः जोकने आयकर क

हा भिन्न अरु अभिन्न तथा भिन्नाभिन्न तीनों मेरेमें नहीं प्रकृति ओंकार तथा शरीर मुझ चैतन्य कर सिद्ध होतेहैं तिनमें मैं तीनोंका लोंविषे एकसाहों ओंकार कहनमात्रहै चैतन्यते पृथक् ओंकार चार पदों वालाहै आत्मा में एक कहना भी नहीं बनता तो चार कैसे कहैंगे मेंढ़क तूष्णी भया मच्छीने कहा हे जोंक तू सदा रुधिर पान करेहै तुझसे संवाद करने योग्य नहीं जोंकने कहा सत् चित् आनंदरूप शुद्ध आत्मा विना जोकछु त्वंपद तत्पद असी पदादिक प्रतीतहोते हैं सोई भया रुधिर विचार कर- ताको पानकरोहों नाम स्वप्नवत् मिथ्याजानो हों जो तैंने कहा तुझसे संवाद करने योग्य नहीं तो मैं आपविना कछु और नहीं देखा सं वाद किससों करों अरु कौन करे कछुआने कहा जोलौं सर्वओरते षट् इंद्रियोंका संकोच नकरे स्वरूपका पहुँचना कठिन है मच्छीने कहा सर्वोपरि आत्मा स्वरूप पूर्णहै कहो किस ओरते इंद्रियोंको संकोचे जो नेत्रको संकोचे तो अंधाहोय कानको रोके तो वहराहोय इत्यादि अन्य इंद्रियोंमें भी जानलेना हे कछुआ जब सर्वरूप अस्तिभाति प्रियरूप आत्माहीहै तो षट्ओरकहांहै कछुआ हँसा अरु कहाकि जब सर्व आत्माहीहै तो षट्ओरभी आत्माहीहै विष्णुनेकहा हेसभा इस प्रकार तिन जलजंतुओंकी चर्चाहुईथी सो मैंने तुम्हारेआगे निवेदनकरदिया॥

इति पक्षपातरहितश्रीअनुभवप्रकाशस्यचतुर्थःसर्गः ॥ ४ ॥

पराशरने कहा हे मैत्रेय ऐसेही एक और कथा सुन एक काल विषे भारतवर्ष में विद्वान् पक्षपात रहित धर्मात्मा जगत् हितकारक स्त्री पुरुषमिलके आत्मविचार करतेभये औ मैंभी वहीं था अन्तर्दृष्टिबोलीहै निर्मलदृष्टिवाली सभा असत् जड़ दुःखरूप कल्पित नाम रूप वाहर दृश्यकी दृष्टी से दृश्यांतर सच्चिदानंद यह बुद्धि आदिकों का प्रकाशक आत्माका सम्यक् अपरोक्ष नहीं होता जैसे पुरुषको कल्पित सर्प दंड मालादि वहिर्पदार्थोंकी दृष्टीसे अंतर रज्जुका अपरोक्ष ज्ञान नहींहोता विचारें तो रज्जु ज्ञानपूर्वकही सर्पादिकोंका ज्ञान होता है ताते वहिर्नामरूप दृष्टि त्यागके अंतर मनादि दृश्यके साक्षीको निजात्म रूप जानो शांतिबोली मुझ शांतरूप अस्ति भाति प्रियरूप पद में अंतर वाहरका विभाग नहीं जैसे भौतिकप्रपंच में मायाका वा भूत भौतिकों का अंतर वाहरका विभाग नहीं तथा

भूषणोंमें स्वर्ण का अंतर बाहर विभागनहीं औ जो विभागवान परिच्छिन्न वस्तु होती है सो अनित्य जड़ दुःखरूप होती है ताते अस्ति भाति प्रियरूप सर्वात्मा शांतरूप द्रष्टाको जो जाने तो शांतिहोवे तिस समय वैराग्य मनुष्य मूर्त्तिधार कर आय बोला हे साधो वैराग्य विना सुखनहीं वैराग्य यही है कि शांति अशांति अंतर बाहर वृत्ति आदि नामरूप प्रपंचकी निजात्म सत्ताते पृथक् सत्ताका अत्यंता भाव अनुभव होना इसीका नाम वैराग्य है जैसे पृथ्वीआदि भूतोंकी सत्ताते भिन्न शरीरकी सत्ताका अत्यंताभाव है वा वैराग्यनाम त्याग का है वैराग्यवान् का नाम वैरागी त्यागी है वा विशेष कर रागका नाम वैराग है औ विशेषकर रागवानकानाम रागी गृही है सो दोनों प्रकार सेही वैराग्यका अर्थ आत्मा मेंहीं घटै है अन्य दृश्यपदार्थ में घटैनहीं काहेते मन वाणी सहित मनवाणी के विषय दृश्य प्रपंचके अत्यंताभाव वाला निजात्माही वैराग्यवान् है अन्य नहीं तथा अस्तित्व स्फुरणत्व प्रियत्व आत्माने अत्यंत असत् जड़ दुःखरूप नामरूप अनात्मा दृश्य प्रपंचके साथ ऐसा रागकिया है जो दृश्यनाम रूपको सच्चिदानंद सरीखा अपना रूप कर दिखायाहै जैसे जलको दूध अपना रूप कर दिखाता है इसते दूध औ आत्मा परमरागी है तथा जैसे आकाशचारी भूत भौतिक प्रपंच साक्षात्कार आकाशका तिरस्कार करे तोभी विनाबुलाये मानके सर्वके व्यवहारका निर्वाहक आकाश अवकाशदेनारूप परमप्रीति करेहै अरु सर्वमाहिं भी अति अलिप्तहोके परमत्यागी है तैसे यह सुख दुःख का अस्तिभाति प्रियरूप साक्षी आत्मा का जड़ नामरूप सर्वजगत् तिरस्कार करे तो भी विनाबुलाये मानके आत्मा सर्वको चैतन्यता देके चैतन्यसरीखा करेहै इसते सर्व का अति प्रियतम है अरु मनादि सर्व जगत्के माहि भी अलिप्तहोनेते परमवैरागी नाम त्यागी है वा शांति अशांति अंतर बाहर काम क्रोधादि वृत्तियोंके भावाभावको निज सन्निधीमात्रसेही सिद्धकर्ता है अरु इन गुणों ते उल्लंघित वर्तता है इसीते आत्म गृही अरु संन्यासी है ताते पूर्वोक्त वैराग्यवान् आत्माही तुम्हारा हमारा तथा ब्रह्मासे लेकर चींटी तक सर्व जगत्का निज स्वरूप है पुनः क्रोध अभिमानी देवता मनुष्य मूर्ति धारकर सभामे आय बोला हे प्रियवरो गुरूके उपदेशसे प्रथम यह वृत्ति

रूप क्रोधका साक्षी आत्मा अक्रोधी है कारण असत् जड दुःखरूप नामरूप देहादि म्लेच्छ, सच्चिदानंद शुद्ध आत्माको निजरूपवत् निजरूपकर देखे है तोभी आत्मा क्रोध नहीं कर्ता इसते अक्रोधी है औ उलटा सत्ता स्फूर्ति देता है औ गुरु उपदेश पीछे देहादि नाम रूप जगत्का अत्यंताभाव जानना रूप हिंसा कर देता है ताते यह आत्मा अति क्रोधी है वा जाग्रत स्वरूपको ब्रह्मांडको सुषुप्तिमे लयरूप हिंसा करे है औ जाग्रत स्वप्नमे पुनः सुषुप्तिमे लीन हुये जगत्को उदय करे है ताते अक्रोधी है वा गुरुउपदेशसे देहाभिमान रूप क्रोधका नाशरूप हिंसा कर्ता है याते क्रोधी है औ आत्मा पूर्ण होने ते क्रोधमेभी स्थित है जैसे सर्व देहोंका देही आत्मा है तैसे क्रोधरूप देहोंकाभी देही आत्मा है याते क्रोधरूप देहवाला आत्मा क्रोधी है वा आत्मा अद्वितीय होनेते स्वतःही द्वैतका हिंसन नाम अत्यंताभाव है यातेभी आत्मा अतिक्रोधीहै औ वृत्तिरूप क्रोधमे आरूढ हुआ आत्माही विचारे विना प्रिय लगनेवाले बुरे कामोंते क्रोधसे निवृत्त होवेहै इसते आत्मा अतिक्रोधीहै औ वृत्तिरूप क्रोध, क्रोधी आत्माको हिंसन नहीं करे है हे साधो वृत्तिरूप क्रोध तो निज इष्टके साधक सत् संभाषणादि जो सद्गुण तिनके शत्रु मिथ्या भाषणादि असुरोंके नाश वास्तेहै तथा शरीरकी रक्षावास्ते है कोई परस्पर लड़ाई भिड़ाई वास्ते नहीं सत्तापूर्वक क्रोध व्यवहार परमार्थका साधक है औ असत्यता पूर्वक रूप वृतिरूप क्रोधही अनर्थक है यही त्याज्य है परंतु पूर्वोक्त रीतिसे अतिक्रोधी आत्मा तो अपना स्वरूप है सो न ग्राह्य है न त्याज्य है देहवत् अपना रूप होने ते ॥पुनः लोभ अभिमानी देवता मनुष्य व्यक्तिधारकर आय कहा हेनिर्लोभ पक्षपात रहित सभा मैं आभास अंतःकर्णरूप जीव का अतिशयलोभ करके शब्दादि विषयों का लोभ अनर्थका कारण है वही त्याज्य है सत्ता पूर्वक शरीरका निर्वाहिक लोभ त्याज्य नहीं औ निजात्मा तो परमलोभी है अर्थ यह है कि सर्वका अत्तानाम भोक्ता है ब्रह्मासे लेके चीटींके शरीर मे एक सरीखा स्थित हुआ २ सर्व शब्दादि विषयोंका रसिक नाम अनुभवकर्ता नाम भोक्ता है इसीते यह ब्रह्मात्मा मनका साक्षी आत्मा अति लोभी सर्वका भोक्ता हुवा२ भी वास्तवते अवाङ्मनसगोचर होनेते अति लोभीहै हे मित्र गणो स्थूल शरीर रूप स्थूल भूतों ते परे नाम

सूक्ष्म भूमि आदि सूक्ष्म भूत रूप इंद्रिय मनादि सूक्ष्म सृष्टि है तिसते परे नाम सूक्ष्म व्यष्टि अहंकार रूप समष्टि अहंकार रूप महत
त्व है तिसते परे नाम सूक्ष्म सर्व नाम रूप जगत् का उपादान रूप कारण प्रकृति माया अज्ञान है इसते परे नाम प्रकृति अज्ञान औ अज्ञान
का कार्य पचीस प्रकृति रूप प्रत्यक्षादिं प्रमाणों का विषय भूत यह संघात औ मनादि सूक्ष्म सृष्टिका साक्षी आत्मा ही है यही सर्वकी
काष्ठा अवधि रूप है सुषुप्ति मे अज्ञानका ज्ञान होने ते इसते परे और कोई पदनहीं जो माने सो अनुभव वेद शास्त्र संप्रदाय से वाहरहै
तात्पर्य यह हैकि तिसका मानना प्रमाण शून्य वंध्या पुत्रवत् अप्रमाणहै ताते यह अलोभी आत्माको त्रिगुणातीत जानके भ्रम सिद्ध
जो बंध मोक्षके कर्तव्य ते निष्कर्तव्य होवो पुनः मिथ्यादृष्टी आय कहती भई है धर्मात्माहो नामरूप वर्णाश्रमी देहवान् सुखी दुःखी
हूं तथा कर्मकांडी उपासक ज्ञानी अज्ञानी बंध मोक्षवान् हूं तथा त्यागी गृहीहूं परिछिन्न जीव तुच्छ हों मरण जन्म धर्मा हों
खाता पीता सोता लेता देता गमनागमन करता हूं देखता सुनता स्पर्शकर्ता सूंघता संकल्प विकल्पादिवानहों इत्यादि
माया तत्कार्य रूप आपको जानना यह सर्व मिथ्या दृष्टी है औ पूर्वोक्त माया तत्कार्य धर्म धर्मी रूप अनात्म पदार्थ
किसी दृश्य पदार्थ को अपना स्वरूप नहीं जानना किंतु अपने मनादियोंके साक्षी आत्माको सम्यक् सच्चिदानंद रूप
मानना यही सत् दृष्टी है अन्य सर्व मिथ्यादृष्टी है इस सत् दृष्टीसे ही मिथ्यादृष्टी नाश होती है पुनः अहंकार आय कहा हे सज्जनो अहं
कार कहीं न कहीं करना होगा देह आदि संघातमे अहंकार अनंत जन्मोका कारण है औ सच्चित प्रियरूप आत्मामे अहंकार मोक्षका
कारण है दोनों मध्ये जो आपको अच्छा लागे जिसमे अहंकार करो नारायणी बोली हे संतो यह शरीर मल नरक सम्यक् विचारे तो
दोनोमें किंचित् भेद नहीं सम है परंतु वाहर के मलको अपनेते अति भिन्न जानता है औ अति ग्लानि करे है तैसेही इस शरीर रूप
मलते आपको भिन्न जानता नहीं देखो यह शरीरतो निज भिन्न माता पिता कामल है अपना नहीं औ लोकमे प्रसिद्ध है अपने मलते
ग्लानि कम हुआ कर्तीहै औ दूसरेके मलते ग्लानि अधिक हुआ कर्ती है यह आश्चर्य देखो यह शरीर रूप दूसरेके मलमे ग्लानि नहीं

159

औ अपने मलमे ग्लानि है चाहिये दोनों मलोंको ग्लानि पूर्वक आपते अतिभिन्न मानना वा अभिन्न मानना एक मलको आपते भिन्न औ एक मलको अपने आत्माते अभिन्न मानना यह हिसाव वाहर वात है कारण दोनो मल तुल्य हैं हे पक्षपात रहित अकृतिम प्रीति करने वालो मित्रवरो यह सुख दुःख का प्रकाशक ब्रह्मात्मा तो स्वतः ही मायातत्कार्यमलते रहित है मलते भिन्न जानो, चाहे न जानो पुनः लक्ष्मीने आयकहा हृदयरूप आकाशके चंद्रमा रूप प्रिय मोद प्रमोदादि वृत्तियोंका यह साक्षी आत्मा ब्रह्म, जीव,ईश्वर,खुदा,गाड, परमात्मा घट पटादि सर्व शब्दोंका लक्ष्य है वाच्य किसी शब्दका नहीं अवाङ्मनसगोचर होनेते औ वाच्य लक्ष्यभी समान वुद्धिवाले मुमुक्षुके ज्ञान लिये है वास्तवते आस्तित्व स्फुरणत्व प्रियत्व रूप सर्वात्माही तुम्हारा हमारा तथा ब्रह्मासे लेके चीटी तक सर्वका अनुभव स्वरूप आत्मा है पुनः मन मनुष्य विग्रह धारकर सभामे आय बोला हे सत्वक्ताहो वायुसे भी मैं अत्यंत चंचल हों जैसे वायु की चंचलतासे आकाश निर्विकार है और है भी आकाशके माहि तैसेही मैं अनेक प्रकारोंका संकल्प विकल्प तथा कभी बहिर्वृत्ति जाग्रत् कभी अंतरवृति स्वप्न अफूर्वृत्तिसे सुषुप्ति रूप चंचलता करूंहों कभी सात्विकी कभी राजसी कभी तामसी वृत्ति अपनी करूं हों कभी मैं धर्माधर्म वंध मोक्ष लज्जा धैर्य्य सुखी दुःखी काम क्रोध लोभ मोह अहंकारादि तथा ज्ञान अज्ञान शांति दांति वैराग त्याग ग्रहणादि संकल्पमैं हीं धारों हों यह सर्व नाम रूप जगत्की उत्पत्ति स्थिति लय मेरेही संकल्प हैं हे साधो समष्टि व्यष्टि संकल्प स्वरूपसे फुरणा एकही जानना जैसे राजाका संकल्प औ राजाके नौकरका संकल्प एक रूपही है संकलपत्वरूपमें भेद नहीं यह जगत् गारामट्टी लेके नहीं वनाया व्यष्टी वा समष्टी संकलपसेही हुआहै स्वप्न जगत्वत् हे मित्रगणो न कोई दुःख रूप पदार्थ है नकोई सुखरूपहै सुखरूप पदार्थ मे दुःख औ दुःख रूप पदार्थ में सुखरूपता जैसे मैं दृढ चिंतन कर्ता हों वैसेही आगे भासताहूं ताते संकलपमात्रही जगत्का रूप है अन्य नहीं जो अन्य रूप होता तो सुषुप्तिमे मुझके अज्ञान मे लीन होनेसे भी भासता औ भासता नहीं ताते संकलपते अन्यनहीं हे सज्जनवरो ब्रह्मा विष्णु रुद्र रूप होकर मैंही महानुभाव हुआहूं चीटी आदिहोके तुच्छ हुआहों परंतु यह खेल सब

मेराही है हे साधो चक्षु आदि अध्यात्म, औ रूपादि विषय अधिभूत, औ सूर्यादि देवता अधिदेव हैं शांतात्मा ब्रह्मा विष्णु शिवसे आदिलेके चीटीतक इतना त्रिपुटी रूप जगत् मुझ मन काही स्वरूप जानो जिनको तुम ईश्वर मानते हो सोतो त्रिपुटी रूप जगत्को टि में हैं औ मुझ मनमे सच्चिदानंद साक्षी आत्माका प्रतिबिंब जीव है सो कर्ता भोक्ता है बिंन नहीं पूर्वोक्त जीव भी जगत् कोटि मुझका स्वरूप है हे साधो जीवभाव ईश्वरभाव ब्रह्मभाव जीवेश्वरका भेद अभेद भाव सगुण निर्गुण भाव दैवी आसुरी भाव इत्यादि न्यूनाधिक कल्पना मेरी है इस कल्पना ते यह आत्मा रहित पूर्ण है जैसे घटाकाश ब्रह्म लोका दि पवित्र स्थानों में तथा तामे रहनेवाले विष्णु आदि शरीरोंमे तथा मलनादि स्थानोंमे तिनमें रहने वाले जीवोंमे एक सरीखा निर्विकार सबको अवकाश समही देताहै तैसे मुझ मनका सच्चिदानंद साक्षी आत्मा वैकुंठादि स्थानोंमे स्थित विष्णु आदि शरीरों में तथा नरकादि स्थानोंमे स्थित जीवोंमे एक सरीषा पवित्र निर्विकार असंग हुआ सर्वको समही सत्ता स्फूर्ति प्रदानकर्ता है औ मेरे पूर्वोक्त अनेक प्रकारोंके कटाक्षोंसे हर्ष शोक नहीं होता समही रहताहै हे अधिकारी जनो जो तुम अविवेकसे इस मनके साक्षी आत्मा ते सच्चिदानंद रूप पृथक् ईश्वरको मानोगे तो मुझ जगत् कोटीमेही रहोगे कारण सच्चिदानंदते भिन्न मेरा स्वरूपहै आगे आप मालि कहो पार्वती बोली हे सम्यक् पक्षपात रहित सज्जनों शास्त्रों में जहां कहां कवि लोगोंने स्त्रीका निषेध कराहै परंतु पक्षपातरहित विचार देखें तो यद्यपि स्त्रीमें दशगुणाअधिक काम लिखाहै तथापि स्त्रीसे पुरुष अधिक कामातुर होताहै प्रत्यक्ष देखनेमे आताहै औ स्त्री धै र्यवान देखनेमे आतीहै कारण पुरुषकी इंद्रियमे वायु भरके खड़ी होजातीहै स्त्रीकी नहीं होती इसीते स्त्री कामसे व्याकुल नहीं होती देखो पुरुषही स्त्रीकी प्राप्ति वास्ते द्रव्य दूती आदि अनेक उपाय विशेषकर कर्ताहै देखनेमे आताहै स्त्रीनहीं और स्त्रीते अधिक पुरुष मे कामातुरता देखो पुरुष तो पांच २ विवाह कर्ताहै वृद्धहोकेभी औ एक पुरुष अनेक स्त्रीसे शादी कर्ता है और स्त्रीबाल विधवा भी वृद्ध अवस्था तक कामातुर नहीं होती और पुरुषही छल बल द्रव्य कपट मंत्र वसीकरन औषधि आदि करता है तात्पर्य यहकि

160

अनेक रीतिका लोभादि देके बाल विधवास्त्री से भोगेच्छा कर्ते हैं स्त्री कैसीभी कामातुर हुईहुई पूर्वोक्त उपाय आदि बहुत कमकरैं हैं और स्त्रीको काम विषय मेभी पुरुषते लज्जा ज़ियादा देखनेमे आतीहै इत्यादि अनेक रीतिसे पुरुषमे कामातुरता और स्त्रीमे अकामा तुरतादि विषम भाव देखनेमे आतेहैं विस्तार भयते लिखें नहीं ताते पुरुषही निज स्त्रीको तथा परस्त्रीको परमदुःखका कारण है पलो सापलासी करके निज स्त्रीको गर्भाधानकरे हैं सो स्त्री विचारी दशमास पेटमे रखके अनेक दुःख पावेहै पुनः जन्म मरणका पुनः पालनका पुनः सगाई विवाहका पुनः संततिके अभावका पुनः निर्धनताका पुनः पापी लुच्चादि होनेका पुनः संततीकी संतति नहो नेका पुनः संततिके संततिके विवाह होने न होनेका तथा रोगादिकोंका इत्यादि दुःखोंकर मग्न हुई स्त्री यह उत्तम जन्म दुर्लभ जन्म व्यर्थ चला जानेमे पुरुषही कारण हुया तैसेही उत्तम परस्त्रियोंकोभी यह पुरुषही द्रव्यादि देकर तिनके जतमतको विगाडके अपने सहित दुःखके परमभागी होजाते हैं ताते अतिशयकर पुरुषही निंदनीय है यद्यपि स्त्री पुरुषके संयोग विना जगत्का खाता उठजाता है तथापि मुमुक्ष स्त्रियोंके लिये पुरुष, कालानाग, वा घोरा है इसते भद्र मुमुक्षु स्त्रीयोंने पुरुष की लिखी हुई मूर्ति वा काष्ठकी मूर्तिका दर्शनभी नहीं करना स्व निवास स्थानमेंभी उत्तम स्त्रियोंने लेखक दंपती मूर्तियोंका दर्शन कदाचित्त स्वप्नमेभी नहीं करना वल्कि राधाकृष्णादि आपसमे हास विलास करनेवाली मूर्तियोंका निज निवासस्थानमे लेख नहीं कर्ना कारण दर्शनसे कामाग्नि प्रज्वलित हृदयमे उत्पन्न होती है औ आश्चर्य देखो पुरुष तो अनेक स्त्रियोंको विवाहकर्ता है तोभी पामर स्वभावसे वाज नहीं आता औ स्त्री बालविधवा होजाती है जो पुरुष तिसको नहीं बिगाडे तो ब्रह्मचर्य तिसका पूर्ण हो जाता है परंतु येन केन उपायसे पुरुष स्त्रीका ब्रह्मचर्य भंग करदेता है बल्कि निज लडकेकी विधवा वा सधवा बहू से वा पिताके दूसरी शादी मांसी से तथा भगिनीसेभी दुष्ट पुरुष मिलजाते हैं इसमे पुरुषकाही अपराध है, स्त्रीका नहीं कारण पहले पुरुषकाही चित्त निजसंबंधी स्त्रीयोंसे बिगडता है पीछे लिहाजलोभादि निमित्तोंसे विचारी स्त्रीभी बिगड जाती है पुरुष तो शास्त्र संस्कार

और दुःखदाई संसारके व्यवहारोंमे निवृत्ति रहना और केवल अन्न वस्त्रसे ही संतोष होजाना औ संतान की उत्पत्ति आदि पीडा तें छूट जाना इत्यादि सुखरूप अवस्था तुम्हारी कहां और पशु धर्मादि संसारमे मरण तक लिप्त रहना सधवा की अवस्था कहां दिन रात्रिका भेदहै औ पुनः वाल अवस्था कि विधवा स्त्रीने लडका गोदमे लेना जन्म मरण छुटनेका साधन वैधव रूपी चिंतामणिको त्यागके जन्म मरण रूप संसारकाँचमणी रूप गढे में गिरनाहै ताते हे मेरी सखियांहो इस अमौल्य उत्तम वैध-व्यको निर्लज्ज कूकरोंवत् पशुधर्ममे मत खोवो पशु धर्म तो तुमको तथा पुत्रादि सामग्री अनंत योनियोंमे पीछे हुयेहैं आगे होवेंगे परं-तु यह स्त्रीका वैधव्य जन्म निर्विघ्न वीतनाहीं दुर्लभहै नहीं तो रंडीपनाहै हे प्राणप्रिय विधवा स्त्रियो तुम्हारे माता सासु सुसरे जेठ जिठा-नी देवर दिवरानी आदि निजस्थानोंमें विषय संवंध तथा विषय की वातें करें तिनस्थानोंमे तुमने निजशयन वैठनका स्थान नहीं करना कारण देख सुनके विषयोंके संस्कार मनमें पैदा होते हैं हे शीलवंत स्त्रियो यह पशु धर्मतो तथा वाल वच्चे आदि संसार तो हर योनि-योंमें मिल सक्ताहै इसमे क्या वड़ाईहै यह मोक्षद्वार मनुष्य तनु मिलना दुर्लभहै यही कालहै काम क्रोधादि शत्रुओंको जीतनेका और यही काल हारहोनेकाहै मन जीते सब जगत् जीता मनहारे जगहार और पशु धर्मादि विषयमे जो तुमको आनंद आताहै सो इन विषयोंमे नहीं जैसे अस्थि चाभनेमे जो कूकरको रस आताहै सो रस अस्थि में नहीं औ जैसे जहां २ मधुरता चनकादियोंमे मालूम होतीहै तहाँ २ सक्कर कीहै तैसे जहां २ विषय इंद्रियके संवंधसे आनंद भान होताहै तहां २ आत्म आनंद है सो वुद्धिके प्रकाशक आत्मा तुम अस्तित्वमात्रहो इसीपर एक कथाहै एक कालमें नारद अभिमानकर पूर्ण हुवा चला जाताथा एक जंगलमे पशु आपसमें निज वोलीमें आत्मनिरूपण कर्तेथे नारद सुनकर स्थित होगये इतनेमें भैरवका वाहन श्वान वोला हे प्रियवर गणो मुझको यह मनुष्य नीच कहतेहैं परंतु विचारकर देखो तो यह देहाभिमानी मनुष्य कुत्ते सेभी अति नीचहैं कारण कुत्ता निमकहलालहै तथा अल्पनिद्रा वालाहै तथा संतोषी है तथा मान अपमानमें सम रहताहै तथा समय अनुसार स्त्रीभोग कर्ता है तथा निज मालिकको भूलता नहीं तथा निज

161

द्वारा धर्माधर्मकोभी जानता है औ विशेषकर स्त्री जानती नहीं इस तेभी पुरुषही बेईमान है स्त्रीके धर्म अर्थ काम मोक्षके विगाडने वा लाहै औ स्त्री में पुरुष से लज्जा अधिकहै पहले पुरुषको विषयकी वात कदाचित्त भी नहीं कहेगी कामातुर हुआ पुरुष ही अनेक ढंगर चताहै औ स्त्री तो साधु ब्राह्मणको ईश्वर उत्तम बुद्धि करके दर्शन करने आती है औ यह तिनमे भोग बुद्धि करें हैं औ अनेक प्रकार की वात चीतकर तिनका मनभी विषय लंपट कर देवे हैं ताते पुरुष को ही धिःकारहै हे मेरी प्यारी सज्जनिया हो यह पुरुष तुम्हारे दुःखका हेतु है भ्रमसे तुमने सुखका हेतु माना है ताते स्वप्नमे भी पुरुष की इच्छा मतकरो देखो पुरुष तो कामातुर हुआ साठ सत्तर वर्षका भी पुनः स्त्रीभोग की इच्छा कर विवाह करता है ताते ऐसे कामातुर अजितेंद्रिय असंतोषी पुरुष की इच्छा मत करो हे विधवा भगिनीयां हो विधवा स्त्रीतो संन्यासीके तुल्यहै जैसे संन्यासी जितेंद्रिय ब्रह्मचर्य रूप अष्टप्रकार स्त्रीके मैथुनसे रहित हुवा निज शील सहित निर्विघ्न आयु व्यतीत करते हैं ज्ञान विना उत्तमान उत्तम ब्रह्मलोकादि उत्तम गति पाते हैं तैसेही विधवा स्त्री भी ब्रह्मचर्य रूप अष्ट प्रकार का जो पुरुषके विषय संवंध की वातों को भीन श्रवण करना औ पुरुष की प्राप्ति का स्मरण भीन करना औ पुरुषके विषय संवंधका गीत भीन गाना औ पुरुषकी प्राप्तिका चिंतन भीन ही करना औ पुरुषके साथ एकांत वात भी नहीं करना औ पुरुष की प्राप्तिका विधवा स्त्रीने दृढ संकल्प नहीं करना औ अष्टम पुरुषके साथ निज अंग नहीं लगाना इस अष्टप्रकारके मैथुनतो विधवा स्त्रीरहित हुई उत्तम नाम सम्यक् संन्यासी तुल्य गतिको पाती है ताते हे मेरी प्राणांत प्रिय विधवा स्त्रियां हो सर्व प्रकारसे निर्दयी कपटी दुःखदायी आदिदूषण युक्त पुरुषका नाममात्रभी सुनके ग्लानि करनी जिसते इस दुःख स्वरूप स्त्री पुरुषके व्यवहार ते मन हट जावे आगे सुख होवे विचार देखो जो पतिमे सुख होता तो पतिवालीयां स्त्री दुःखी न होतीं औ धन गृह पुत्रादिकोंमें सुख होता तो धनी गृही पुत्रवती दुःखी न होती हे प्रिय दर्शन विधवा स्त्रियो जो तुम अपने जतमत में रहोगी तो तुम्हारा तेज बलकर योगीराजवत् उभय लोक जीत लेवोगी यह वैधव्य नहीं मानो विचारो तो उत्तम गतिका साधनहै और विचार रूपी नेत्रोंको खोल देखो कहां यह अवस्था जो शरीर वस्त्र मन आत्मा पवित्र रहना

मालिकसे द्रोहनहीं कर्ता इत्यादि अनेक गुण कूकरोंमें हैं परंतु देहाभिमानी पुरुषोंमे तिसते विपरीत गुण होनेते अतिनीचहैं हे साधो नीच उच्च व्यवहार सद्गुण असत् गुणों निष्ठहै देह जाति आत्मा निष्ठ नहीं ताते तुम आपमें पशुत्व धर्म मानके निजमे नीच बुद्धि मत करो किंतु अतिकामी क्रोधी लोभी अहंकारी द्रोही विश्वासघाती दंभी कपटी अन्यायकारी अधीर्जी परस्पर मित्रोंमे विरोधकर्त्ता मातृ पितृ गुरु वड़ भ्रातृ अभक्त झूठा अजितेंद्रिय और निर्दोषमे दोष आरोपी इत्यादि अनेक अपगुण विशिष्ट पुरुषही नीच और पशुत्व धर्मवाला कूकर शूकर है परंतु देह अभिमान रहित सच्चिदानंद मनादि दृश्यके द्रष्टा आत्मनिष्ठावान् हम नीच औ पशु नहीं तिस समय देवीका वाहन सिंह आयकर कहता भया हे अंतर्यामिको अपना आत्मा सम्यक् अपरोक्ष ज्ञानवान सज्जनो! अज्ञान तत्कार्य पशुओंको अपने अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते पृथक् सम्यक् विचार रूप पंजेकर पूर्वोक्त पशुओंको अत्यंताभाव वा सम्यक् मिथ्यत्व निश्चयरूप हनन करके जो अद्वैत निश्चयरूप भक्षणकरे सोई सिंह है पुनः गजेंद्र आय बोला हेसत्य वक्ताओ श्रोत्रादि इंद्रियरूप हस्तिनिओंका यह जीव इंद्रहै सो इस संसाररूप वन में निज पत्नियों से क्रीड़ाकर उन्मत्त होताभया औ अति काम क्रोध लोभरूपी तृष्णाकर व्याकुल हुआ अति देहाभिमान रूपी तालावविषे अतिस्नेहरूप जल पीनेलगा तहां महा-मोहरूप पुत्र, लोक, धन, ईक्षणा निजतांतुसहित अज्ञान रूप ग्राहने भ्रांतिहोजानी यह पकड़लेना है अर्थ यह कि मैं जन्म मरण सुख दुःख बंध मोक्ष धर्मवालाहूं ऐसेस्वस्वरूपको न जानके मानता भया पुनः श्रद्धा भक्ति सहित ईश्वरके आगे सच्चे मनसे कर्म उपासना रूप प्रार्थना से शुद्ध अचल उपदेशयोग्य मन होता भया पुनः विष्णुरूप ब्रह्मनिष्ठगुरूने "तत्त्व मस्यादि" महावाक्यों का ततत्वं पद शोधनद्वारा अखंडअर्थ प्रत्यक् आत्मा का अनुभवरूप चक्र से वासनारूप तंतुसहित अज्ञान तत्कार्यरूप ग्राहको मारके निज शिष्यके जन्म मरण बंध मोक्षादि सुख दुःखरूप बंधन दूर करते भये सो मैं जीवन्मुक्तहोकर विचरता विचरता तुम्हारी सभामें स्थितहों यही गजेंद्रके प्रकरण का तात्पर्य है पुनः शीतलादेवी कर बोधित देवी का वाहन गर्दभ आयकर कहा हे साधो

162

श्रद्धा गुरू भक्ति सेवापूर्वक श्रवण मनन निदिध्यासन तथा तत् त्वं पदार्थ का शोधनसे उत्पन्न संस्कार विशिष्ट शीतलादेवी रूप बुद्धि तिस बुद्धिरूप शीतलाकी ब्रह्माकार वृत्तिरूपवाहन मैं गर्दभहों औ यह बाहर पशुगर्दभ तो देहाभिमानी अज्ञानी पुरुषोंको उपमा बोधनकरे हैं ताते जो दुराचारी अन्याई अजितेंद्रिय परद्रोही अनम्र अशांत औ सद्उपदेश श्रवणको विस्मृति असारग्राहीआदि अवगुण विशिष्टही गर्दभ है औ सत्संभाषणादि धर्मानुष्ठान पूर्वक श्रवण मनन निदिध्यासन से मनादियों का मैं सच्चिदानंद साक्षी आत्माहूं इस दृढ़ निश्चयवान् पुरुषही ब्रह्मरूप देव है अन्य सर्व गर्दभ पशु हैं पुनः वाराह भगवान् संबंधी शूकर सभामें आय बोला है सर्व में आत्म उपमा दर्शक सभा सु नामश्रेष्ठ कल्याणका है कर नाम करने का है कल्याण को जो करे सो सुकर कहिये औ वैराग्यादि दैवीगुणों में भी पुरुषको कल्याण कारितारूप सुकरता घटेहै औ परमकल्याण तो निजसम्यक् अपरोक्ष बोधद्वारा सच्चिदानंद आत्माही करेहै ताते सच्चिदानंद आत्मा का नाम सुकर है ताते मुझपूर्वोक्त शूकर को निज मनादि दृश्यका साक्षी चिंतनकरो कारण मनतो कोई न कोई चिंतन करेगाही औ एक काल में दो चिंतन नाम संकल्प होतेनहीं क्रम से होवैंगे अरु मैं सच्चिदानंद आत्माहों इस चिंतन का नामहीं ब्रह्माकार वृत्तिहै अन्य अनात्माकार वृत्तिको त्यागके आत्माकार वृत्ति करो वस्तुते ब्रह्माकार अरु अनात्माकार वृत्तियोंके प्रकाशक आत्मा तुमको दोनोंवृत्तियां सम हैं हे साधो सम्यक् जाननाही कर्तव्य है और कछु कर्ना नहीं इतने में हयग्रीव भगवानकर उपदेशित अश्वने आयकर कहा हे सम्यक् दर्शियो नस्वंजानाति इति अश्व अर्थ यह कि जो अपने स्वरूप को सम्यक् नहींजानता है सोई अश्वनाम घोड़ा है ताते अज्ञानीरूप बंध मोक्ष ज्ञान अज्ञान तथा देहाभिमान जन्म मरण राग द्वेष सुख दुःखादिरूप पुरुषोंके अधीनहोके खेदपाता है ताते निजस्वरूपको जानने सेही अश्वपना निवृत्तहोके देवभाव होता है पुनः गणेशका वाहन मूषाने आय कहा हेधर्मज्ञपुरुषो तत्त्वमस्यादि महावाक्योंते उत्पन्नभई ब्रह्मात्म अखंडाकारवृत्ति रूप मूषा सो चक्षु मनादि इंद्रियरूप गणोंका स्वामी सच्चिदानंद आत्मा पूर्वोक्त निजवाहन वृत्तिरूप

मूसे में आरूढ़ होके माया तत्कार्यरूप दृश्य को अत्यंताभाव निश्चयरूप छेदता है ताते मुमुक्षुजन सतसंभाषणादि धर्मानुष्ठान पूर्वक ब्रह्मविद्या गुरुमुखसे श्रवण मनन निदिध्यासन द्वारा"अहं ब्रह्मास्मि" इस वृत्ति रूप मूषाकी उत्पत्ति लिये ही सर्व कर्म औ उपासनाकांडके अनुष्ठान का फलहै औ कोई वैकुंठादि लोकोंकी प्राप्ति कर्म उपासनाके सेवनका फल नहीं हे साधो गणेशका मूषा वाहन है इस कथा का पूर्वोक्त प्रकर्णमें ही तात्पर्य है अन्यथा मानोगे तो शास्त्रको अनुभव विरुद्ध कथन करने ते निष्फलता होवेगी तिसीसभामें मनुष्य आकृति धारके नंदीगणने आयकहा हे मित्रवरो पंचभूतों की सात्विकी सांझी अंशरूप गौते मुझ अंतःकर्ण रूप बैल नंदीगणकी उत्पत्ति है सो मैं शिवका वाहनहों अर्थ यह है कि अंतःकर्ण उपहित चैतन्य ही चक्षु आदि इंद्रिय देवनका देवनाम प्रकाशक है सोई शिव नाम कल्याण रूप है औ अंतःकर्ण रूप हिमांचलकीबेटी "तत्त्व मस्यादि" महावाक्यों ते उत्पन्न होने वाली"अहं ब्रह्मास्मि"यह ब्रह्म विद्या रूप वृत्ति गौरी अर्द्धंगीहै तात्पर्य यहहै कि सम्यक् तत्त्ववेत्ताकी सर्व चेष्टा में ब्रह्माकार वृत्ति वनी रहती है सो ब्रह्मवेत्ताका नामही शिव है अज्ञानी लोग अशिववत् अशिवहैं तैसे"हीनहिंसायां"जो मन वाणी शरीर कर सर्व सुख दुःखादि अवस्थामे सर्व जीवोंविषे आत्म उपमा दर्शन रूप साधनसे परप्राणीको पीडनरूप हिंसाते लज्जाय मान हो सोही हिंग लाजहै इस पूर्वोक्त हिंगलाजके स्पर्शनरूप धारणते अवश्य कल्याण होगी तैसेही मनुष्य शरीररूप पुष्कर रूप तीर्थ मे मन मुमुक्षु रूप जीव ब्रह्मा चक्षु आदि इंद्रिय रूप देवतान सहित विष्णु रूप आत्मा नात्माका सम्यक् विवेक रूप यज्ञ कर्ता भया तिसमें जीव रूप ब्रह्माकी अनादि स्त्री प्रवृत्ति रूप बुद्धि सरस्वती किसीक निमित्तसे क्रोधको होयके निज पति पास बुलाई भी नहीं आती भई अर्थ यहकि वैरागवान् विवेकी अशास्त्री प्रवृत्ति को प्रियनहीं लगता इसीते जीवरूप ब्रह्माने पूर्वोक्त यज्ञकी सहायक निवृत्ति रूपप्रिय गायत्री स्त्रीको अंगीकार कर्ते भये पश्चात् निर्विघ्न विवेकरूप यज्ञ पूर्ण होता भया औ तैसेही मुमुक्षु ओंने निज शरीर में ही त्वं पदके वाच्यार्थ जीवको राम जानना औ त्वं पदके लक्ष्य अर्थको कूटस्थ मन साक्षी ईश्वर जानना सोई जीवका रामेश्वर स्वरूप है तैसे ज्वाला एव मुखी ज्वालामुखी ज्वाला नाम प्रकाश स्व-

रूपही है प्रधान जिसका ऐसी जो प्रत्यक् आत्मसत्ता बुद्धि साक्षीहै सोही मुमुक्षुने ज्वालामुखी जाननी तैसेही ब्रह्मात्म एकत्व ज्ञान द्वाराही सच्चिदानंद निज स्वरूप हरिको प्राप्त होताहै ताते ज्ञानका नाम हरिद्वारहै तैसे वेदरूप नर्मदाके किनारे नाम वेदका सारभूत अकार उकार मकार अर्ध मात्रा यह चार मात्रा रूप ओंकारको मुमुक्षुने जानना जिन आकारादिवाचक मात्रोंका वाच्य ध्याता ध्यान ध्येय जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर औ समष्टि अभिमानी विराट् अभिन्न विश्वादि जीव इत्यादि अनेक त्रिपुटी रूप वैदिक लौकिक वाच्य जगत् है जाग्रत् आदि अनेक त्रिपुटीके प्रकाशक वाचक अर्ध मात्रा का वाच्य तुरीय प्रत्यक् आत्मा है इतना ही व्यवहार परमार्थ का स्वरूप है सो वाच्य वाचक भावसे सर्व ओंकार रूपहीहै ताते मुमुक्षुने पूर्वोक्त ओंकारकी यात्रा करनी नाम निज शरीरमेंही विवेचन सम्यक् करना जिससे मरण रहित दर्शनका फल हो तैसेही मुमुक्षु रूप भगीरथके अष्टांगयोग तथा आत्मा नात्माका सम्यक् विवेक सांख्ययोग यत्न रूप तप स्याते अंतःकर्ण रूप हिमालयते ब्रह्माकार वृत्तिरूप ज्ञानगंगा उत्पन्न होतीहै पुनः ब्रह्मरूप समुद्रमें एक रूप हो जातीहै औ मनोनाश वासना क्षय वा उपरति वैराग्य ज्ञान रूपी गंगासे जब मिलतीहै तब जीवन मुक्तिरूप त्रिवेणी हो जातीहै औ पूर्वोक्त ज्ञान रूप गंगामे जो स्नान कर्त्ताहै पुनः जन्मको नहीं प्राप्त होता तैसेही इस मनुष्य शरीर वा अंतःकर्ण रूप उत्तराखंडमे अस्तितत्व स्फुर-णत्व प्रियत्व रूप सुख दुःखादि मन सहित मनके धर्मोंको जो अनुभव कर्त्ताहै सोही केदार और बद्रीनाथहै इत्यादि बहिर कथा ओंका अर्थ अंतर अध्यात्ममें निज बुद्धिसे जोड लेना ताते सत् संतोष ब्रह्मचर्य अहिंसा शांति दांति वैराग्य आदि तीर्थोंमें स्नान करके पुनः गुरुद्वारा वेदांत श्रवण मनन निदिध्यासन पूर्वक ब्रह्मात्मा निज स्वरूपका सम्यक् अपरोक्ष जिस दिन यह मुमुक्षु करेगा तिसी दिन भ्रमरूप जन्म मरण रूप संसार निवृत्त होगा अन्य संसार रूप जन्म मरण के दूर करनेका कोई उपाय नहीं चाहे सर्व विद्वान शास्त्रोंमें खोज देखो आगे जो इच्छा हो सो करो गौरीके शापसे सनत्कुमार उष्ट्रकी संततिमें उष्ट्र ज्ञानवान् हुये थे तिनमे

एक उष्ट्र आय कर कहा हे नीतिज्ञ सभा उ इति वितर्कें ष्ट्र नाम टरनेकाहै अर्थ यह कि माया तत्कार्यसे जो सम्यक् आत्मानात्माके विचारसे निज स्वरूपसेही असंग रहे तिसका नाम उष्ट्रहै जैसे आकाश स्वरूपसे भूत भौतिक प्रपंचते असंग रहताहै सो उष्ट्र नाम पूर्वोक्त रीतिसे सच्चिदानंद आत्माहै जैसे स्वप्नमें उष्ट्रादि रूप स्वप्नद्रष्टाही होताहै तैसे सर्व रूप आत्माही होनेते इसतेभी उष्ट्र आत्माही है जैसे उष्ट्र सकंटक और निष्कंटक वृक्षको खाताहै तैसे मैं द्वैत अद्वैत् द्वंद्व रूप संसार वृक्षोंको निजात्मामें अत्यंताभाव वा मिथ्यत्व निश्चय सम्यक् ज्ञान रूप भक्षण कर्ताहों हे साधो हीरे मोती आदि नगोंसे जडित पलँगमें तथा मंदिरमें शयन किया तो क्या हुआ न किया तो क्या हुआ अरु राजलक्ष्मी भोगी तथा देव ऐश्वर्य भोगा तो क्या हुआ न भोगा तो क्या हुआ तैसे निर्द्धनी हुआ तो क्या हुआ जो सधनी हुआ तो क्या हुआ कारण गुजर सबकी तुल्यहै ॥ जिमि गुजरी तिमि गुजरी चार दिना गुजरान जिमि कीती तिमि कीती ॥ काहेते सर्व स्वप्नवत् मिथ्या है कोई पदार्थ सत् नहीं इसीते इनके गृहण त्यागमें शांति नहीं होती वैकुंठादिकों में भी इस वर्तमान जगत्वत्ही व्यवहार है न्यूनाधिक कछु नहीं ताते शांति रूप एक आत्माही है अन्यनहीं—पुनः शृगाल आय सभामें बोला हे नीतिज्ञ सभा शृक नाम मालाका है अल नाम पूर्णकाहै जो इस नाम रूप अनंत ब्रह्मांड रूप मणियोंमें तागेवत् पूर्ण होवे इसका नाम शृगाल है वा सूतकी मालावत् आपही मणि औ तागा रूप होवे तिसका नाम शृगाल है सो मैं सच्चिदानंद शृगाल तुम्हारे मनादिका अपरोक्ष अवेद्यत्व सदा साक्षी रूप कर हाजिर हुजूर हों जब मुझ निजात्माको जानोगे तो भ्रम सिद्ध बंध मोक्षादि जगत्से छूटोगे ॥ पुनः वानरने आयकर कहा हे साधो शास्त्रमें मन औ वानर की उपमा तुल्य कही है परंतु मन भूतोंका कार्य्य होने ते जड है औ मैं तो इस वानर शरीरका तथा मनका प्रकाशक होनेते समता नहीं तैसेही नर नाम पुरुषकाहै पुरुष नाम पूर्णात्मकाहै वा विकल्प नाम वेदानुकूल तर्कसे दृश्य द्रष्टाका सम्यक् विवेक कर भूमाको निज स्वरूप संशय रहित अपरोक्ष जानता है सोई वानर है वा पूर्वोक्त वानर ते भिन्न सर्व दृश्य रूप माया स्त्रीहै ताते भिन्न मुझ भूमाको अपना

आप जाने विना सुख तुमको नहीं होगा आगे आप मालिकहो पराशरने कहा हे मैत्रेय इसप्रकार सर्व सभा परस्पर नमस्कार करके आप अपने वांछित स्थानको जाते भये ॥

इति पक्षपातरहितश्रीअनुभवप्रकाशस्य पंचमःसर्गः ॥ ५ ॥

पराशरने कहा हे मैत्रेय तूभी आत्मदर्शीहो मैत्रेयने कहा देखना दूसरेका होताहै मैं आत्मा आगे आत्माको कैसे देखों जो जो देखने में सुनने में सूंघने में स्पर्श में रसलेने में वाक् उच्चारणमें मनके चिंतन में ग्रहण त्यागमें इत्यादि मनकर वाणी शरीरकर आता है सो सो दृश्य जड़ अनित्य होताहै ताते सर्वका दृष्टा मुझ आत्माका अन्य दृष्टा नहीं पराशरने कहा हे मैत्रेय अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जगविध्वंसप्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चितघनविशुद्धानंद ब्रह्मात्मा अपना स्वरूपको सम्यक् अपरोक्ष हस्तामलकवत् जाननेवत् जानना इसीका नाम आत्मदर्शी है इसीपर एक कथा सुन एक आत्मदर्शीनाम मुमुक्षुने गुरूसे प्रश्न कियाकि हे गुरो तुम्हारी कृपाते देवतोंको भोग प्राप्तहै सो मुझको भी प्राप्तहै काहेते षट् विषय अरु षट् विषयोंके ग्रहण कर्नेवाले षट् इंद्रिय तथा इंद्रिय विषयके संयोग वियोग जन्य सुख दुःखका अनुभव भोग अरु भोगोंके साधन विषय इंद्रिय ब्रह्मासे लेकर चींटी तक समहीहै न्यूनाधिक नहीं विचारे विना न्यूनाधिक भास्ती हैं सम्यक् विचारे नहीं तो न्यूनाधिकता देखकर तप्त रहतीहैं अधिककी प्राप्तिकी इच्छा होतीहै न्यूनमें अहंकृति होतीहै सर्व प्रकार सम वस्तु मे दोनोंनहीं इसी विचारसे शांति मनमें होतीहै अन्यथा नहीं मैंने सर्व कर्तव्य जगत्के स्वभाव शरीरका जानाहै जो दृष्टिमानहै सो असत् भ्रम समझाहै पर यह नहीं जानता किमैं कौनहों कहांते आयाहों अरु शरीर त्यागकर कहां जावोंगा अरु मूलमेरा क्याहै जो मैं आत्मा होवों तो शरीर विषे क्यों आवों अरु कारण मेरा उत्पत्तिका क्याहै वासुकर्णने कहा हे पुत्र मूल तेरा वहहै जाते सर्व जगत् प्रकाशमान् भयाहै न तू कहींसे आयाहै न कहीं जायगा आकाश की न्याईं पूर्ण अचल स्थितहै आवागमनका तुझ विषे मार्ग नहीं उत्पत्ति नाश होना

धर्म शरीरका है अरु शरीर शुभाशुभ कर्मोंते होवेहै कर्म चाहनाते होवेहै अरु चाहना अज्ञानते होवेहै अज्ञान अपने स्वरूपके अन पछा-
ननेते होवेहै औरको अपनेते भिन्न थापकर अरु मुक्तिका सहायक मानकर ईश्वरमेरी मुक्त करेगा आपको अर्थी औरको दाता जानना यही
अज्ञान है नहीं तो वेद कहेहै मैं एकही ईश्वर अनेक रूप हों जैसे स्वप्नद्रष्टा एकही अनेक रूप होता है ताते यह सृष्टी ज्योति-
रूप ईश्वरही है जैसे सूर्यकी किर्णा सूर्यरूप हैं जब सर्वरूप ईश्वरही पूर्ण हुआ तो आपको तिसते भिन्न शरीर वा जीव मानना
केवल अज्ञान है एकको भला अरु एकको बुरा ईश्वररूप आत्माविषे कैसे गनिये मूल विषे मनुष्य पशु स्थावर जंगमादि विचार-
वानको सम है भेदनहीं व्यवहारक जो लघु दीर्घ नीच ऊंचादि भेद भासता है सो फल कर्मोंका है अरु अपने मूलके अज्ञान ते
भासता है जैसे वृक्षके शाखा पत्र फल फूलका जो भेद भासता है सो मूलके अज्ञान ते भासता है जैसे स्वप्न पदार्थोंका जो भेद
भासता है सो स्वप्नद्रष्टाके अज्ञानसे भासता है स्वप्नद्रष्टा दृष्टी ते नहीं हे पुत्र इंद्रियोंका असज्जन रीतिसे पालना जीवको नरक
लेजाता है जौलौं संग संतोंका नहो त्याग नहीं होता अपने स्वरूपका पहँचानना जो मुक्त है सतसंगते प्राप्त होता है हे पुत्र जो
कछु मन वाणीसे कथन चिंतन नाम रूप होता है सो केवल आभासमात्र जान ताते जो असत होइ तासों प्रीत मूल अज्ञान है आत्मदर्शीने
कहा हे प्रभो सर्व स्वभाव पंच इंद्रियों संयुक्त यह पंचभूतरूप शरीर सहित सर्व नाम रूप जगत् मृग तृष्णाके जलके तरंगकी न्याई
है मूल इन सर्वका चैतन्य आत्मा है सो आत्मा कैसा है पाप पुण्यते पवित्र अरु सर्व वस्तु विषे स्थितभी अलिप्त कर्मोंविषे बंध
नहीं होता मरण जीवन अरु बंध मोक्ष ते अतीत है तत्त्वोंते आदिलेके सर्व वस्तु तिस आत्माको नाश नहीं करे हैं तात्पर्य यह कि
नाम रूप जगत् असत् है अरु आत्मा सत है दोनोंको स्वभाव अन्यथा नहीं होता ताते हे गुरो उत्पत्ति होकर जो विनशे है पुनः
कर्मोंमें बंध होवे है सो कौन है व्यासकर्णने कहा हे पुत्र स्वप्न प्रपंचविषे जैसे उत्पत्ति विनाश कोई कर्मोंमें कोई मुक्त कोई सुखी कोई
दुःखी होता है इत्यादि अनेक प्रकारकी जो प्रतीति होती है सो केवल निद्रारूप अविद्याकर है वास्तवते स्वप्नद्रष्टामें नहीं तैसेही

अपने स्वरूप अधिष्ठानके अज्ञानते विषमता भासती है वास्तव ते नहीं आत्मदर्शीने कहा नारायणादि नामभी नाशरूप होवेंगे वा नहीं व्यासकर्णने कहा नाम शब्दमात्र है आकाशका गुण है ताते नाशी है परन्तु नामी नाशी नहीं काहेते नाम रूपका तथा तिनके नाशकाभी आत्मा स्वरूप होनेते हे पुत्र नाम रूप जगत्की बुद्धिते नाम रूपका अधिष्ठान आत्मा बुद्धि नहीं होती पर इस भेदके पावने निमित्त गुरू पूर्ण अरु शिष्य श्रद्धावान चाहिये अरु संतोंके संगते अचेत न होइ तो पावे हे पुत्र यह सर्व स्तुति चैतन्य आत्माकी है अरु स्तुति ते अतीत है उपजने विनशनेका इस बुद्धि आदिकोंके साक्षी आत्मामें मार्ग नहीं अरु नकभी इसको किसीने देखा है स्वयंप्रकाश होने ते जैसे स्वप्न पुरुष स्वप्नद्रष्टाको कभीभी स्वप्न नर नहीं देखसक्ते इस चैतन्य ते भिन्न कौन है जो देखे इस पुरुषको विचार करा चाहिये इस जड संघातकी चेष्टा कौन करावे है जिस चैतन्य कर यह संघात चेष्टा कर्त्ता है वही मेरा रूप है नाम रूप व्यवहार जगत्का है जो परंपरा विचारें तो नाम रूप भी आत्मरूपहै भिन्न नहीं काहेते कल्पित नाम रूप जगत्की निवृत्ति अधिष्ठान् आत्मरूप है हे पुत्र तुझे जो आत्मदर्शीकहे हैं सो कौन से अंगको कहेहैं काहेते सर्व अंग आप अपने नाम राखते हैं पुनः तिनका भी सूक्ष्म विचार करें तो निकसता भी कछु नहीं जैसे केलेके पत्ते निकासते जावो तो शून्य ही शेष रहता है ताते नाम रूप केवल कहनेमात्र है हे पुत्र उत्पत्ति नाश शरीरका धर्म है क्षुधा तृषा प्राणोंका धर्म है हर्ष शोकादि मनका धर्म है जैसे पुराने वस्त्र उतारके पुरुष नवीन ग्रहण कर्त्ता है पर पुरुष नित्यहै वस्त्र अनित्य हैं तैसे देह अनित्य है अरु देही नित्य है आत्मा देहाभिमान त्यागके पूर्ण होताहै जैसे बूंद वा नदियां अपना नाम रूप अहं त्यागके समुद्ररूप होतीहैं जब शरीर त्यागता है पीछे भला बुरा रह जाताहै हे पुत्र जैसे नदीते थोडा जल निकास कर अपवित्र ठौर डाला कोई तिसको अंगीकार नहीं कर्त्ता अरु अपवित्र नाम राखे है जब पुनः नदीसे मिला पवित्र होताहै अपवित्र उसका नाम नहीं रहता तैसे सत् चित् आनंद रूप आत्मा समुद्रके अज्ञानते आपको भिन्न मान कर अल्प जीव जानना अरु अपवित्र शरीरको अपना आप परिछिन्न मानना यही अपवित्रता है जबलग

असत जड दुःख रूप शरीरादि कोंमें अहंकृति है तब लग अपने स्वरूप समुद्रते भिन्न है जब शरीरादिकों में सम्यक् विचारसे अहंकृ
ति नरही अरु आत्म स्वरूप सम्यक् अपरोक्ष जाना पूर्ववत् सत् चित् आनंद रूप आत्मा समुद्रहोताहै आत्मदर्शीने कहा हे गुरो
तुम्हारे वचनते मैं आपको पूर्ण ब्रह्मात्माजानता हों पर शुभाशुभ शरीरके स्वभाव मुझे प्राप्त होतेहैं तिन विषे सम कैसे होवों मैं देखो
हों शुभ विषे प्रसन्न अशुभ विषे अप्रसन्न होतहौं जो मैं पूर्ण आत्मा हों तो न होना चाहिये व्यासकर्णने कहा हे पुत्र तू आपही
कहताहै मैं देखों हों शुभाशुभ विषे हर्ष शोक होता हौ इसमें यह सिद्ध हुआ तू हर्ष शोकके देखनेवाला है हर्ष शोक किसी
औरको होताहै तुझको नहीं यह हर्ष शोकादिक मनादिक संघातके धर्म हैं ताते इनकी बासनाके त्याग विषे दृढ हो ब्रह्मा
विष्णु शिवादिक तुझे उपदेश करें अरु आप देहादिकोंकी वासना न त्यागे स्वरूपकी पहँचान रूप मुक्ति कठिन
है भावे जेती शुभ कर्म करने विषे तथा विद्या पढ़ने विषे अवधि (आयु) वितावे जाकी जगत् असत सों प्रीति है विषयोंते
अघावत नहीं ताको दोनों लोककी अप्राप्त होतीहै जो चाहनाते अचाहहै सो मुक्त है हे पुत्र सर्व श्रवण मनन निदि
ध्यासनादि साधन मनकी शुद्धी वास्तेहैं जब मन वश भया मानो राज्य त्रिलोकीका भया तुझे किसी अन्यने बंधन नहीं किया तुझ
चैतन्यने आपही देहाभिमान कर आपको आप बंधन कियाहै जब तू आप सम्यक् देहाभिमान त्यागे मुक्त हुआ हुआ मुक्त होवेगा
अरु अवने स्वरूपका बोध सत्संगते होताहै ज्ञान विज्ञान स्वरूप पावने तकहै आगे नहीं ताते आपको नित सुख चिद
रूप जान जो कर्म शरीरके बंधनते छूटे स्वरूपका जानना अति कठिनभीहै अरु अति सुगमभीहै जिसने इंद्रिय मन नहीं जीता
अरु देह विषे अहंकार पूर्वक वासना नहीं त्यागी तिसको कठिनहै जिसने पूर्वोक्त मन इंद्रिय जीत पूर्वक सर्व वासना त्यागीहैं ति-
नको सुगमहै बुद्धिवानकों सेनहीं वहुतहै मूर्ख सारी आयु सतसंगमे बितावे तोभी कोराका कोरा रहजाताहै जैसे गंगामें पत्थर कोरेके
कोरे रहजातेहैं ताते इस शरीर सहित जगतको स्वप्नवत् मिथ्या जान अरु आपको शरीर मनादि संघातका द्रष्टाजान जो कालके

166

भयते छूटे आत्मदर्शीने कहा संसारको मैंने असार जानाहै पर कहो मैं कौन हों व्यासकर्णने कहा तू संसारके असार जाननेवालेका अनुभव करनेवालाहै तुझका अनुभव करनेवाला कोई नहीं यह जगत् तरंग तुझ चैतन्य समुद्रते भयाहै तुझही विषे लीन होताहै पर तू चैतन्य एक रसहै जगत् रूप कर्मते अतीतहै जो दृष्टमानहै तिन सबका तू जीवन रूपहै जैसे तरंगादिकोंका समुद्र जीवन रूपहै पर तैंने आपको भुलाय कर शरीर मानाहै इसीते तू अनेक भ्रमोंमे बंधमान भयाहै मुक्त रूप तू मुक्तीको भ्रमकर चाहताहै अपनी पहँचानकर जब तू आपको सम्यक् जानेगा तो बंधकी निवृत्ति मोक्षका प्राप्तिकी इच्छा न करेगा उलटा बंध मुक्तको भ्रमरूप जानेगा हे पुत्र तीर्थ यात्रा जप तप नेम योग यज्ञ व्रत पूजादि साधन तब तकहैं जब तक साध्य रूप ब्रह्मात्मा सम्यक् अपरोक्ष नहीं हुआ जब हुआ तो साधनोंसे क्या प्रयोजनहै जैसे लड़कियां तब लग गुडियोंसे खेलेहैं जब लग पति नहीं मिला जब मिला तो गुडियोंसों खेलनेका क्या प्रयोजनहै कछु नहीं अरु जो सत् चित् आनंद रूप ईश्वरकी प्राप्तिवास्ते अपने स्वरूपकी पहँचानका उपाय सत संग सहित सतशास्त्रके विचारको त्यागकर अन्य साधनमें प्रवृत्ति कर्तै हैं तो जैसे कोई गंगाके किनारे जायकर गंगाजलको त्यागकर और जल पीवे अरु स्नान करे ताते आपको पहँचान अरु असत् कर्मोंका त्यागकर आत्मदर्शीने कहा हे पिता मैनें जगत्को मृगतृष्णाके जलवत् जानाहै वासों मन नहीं बांधता अरु शरीरको मिथ्या जानकर इनके पालनेकी इच्छाभी नहीं कर्त्ता अरु षट् इंद्रियोंको ठग जानकर उनकी चाहना पीछेभी नहीं दौरता अरु चाहनाते अचाह होकर अपने स्वरूपको पहँचानना परमार्थ है यह निश्चयकिया है जबतक आपको सम्यक् नहीं जाना तबतक हर्ष शोकादि रूप द्वैत में बंध है पर आपको कैसे पहचाने कौन वस्तु है जासों आत्मा निश्चयकरों अरु वह कौन भजन है जिससे वाको प्राप्तहोवों मैंने सुनाहै जो रूप नहींराखत अरूपको कैसे देखिये अरु ठौर वाकी कौन है अरु यह संसार क्षणविषे उत्पत्ति विनाश होनेवाला है इसते कैसे छूटों व्यासकर्ण हँसा अरु कहा हेपुत्र हर्ष शोक बंध मोक्ष धर्म अधर्म राजा रय्यत चंद्र सूर्यादि अनेक प्रकारका स्वप्न मैं निद्राकर जगत्भासे है पर

जब जागा तब तिसकी रेखाभी नहींमिलती तैसे जाग्रत् जगत्भी जबलग अज्ञान है तबलग अनेक भाँतिका जगत् प्रतीतहोवे है जब सम्यक् अपने स्वरूपको पहँचानकरेगा तो नानारूप भासतेभी एकरूप जानेगा तुझमनादिकोंके साक्षी चैतन्य विना और दूसरा कौन चैतन्य है जो तुझको जाने काहेते ज्ञानरूप तूही चैतन्य है अन्य नहीं आत्मदर्शीने कहा हे पिता मैंने जाना है कि मन इंद्रियोंके वश सहित स्वरूप का पावना सतसंगते है पर यह पराधीन तुच्छ अल्पबुद्धिजीव कैसे ईश्वरहोता है व्यासकर्णने कहा ईश्वर का स्वरूप क्याहै आत्मदर्शीने कहा सत् चित् आनंदरूप ईश्वरका है संतने कहा सोई सत् चित् आनंदरूपता इस बुद्धि आदिकोंके साक्षी आत्मा में घटे तो तदरूपताहुआ वा नहींहुआ जैसे दाहकता उष्णता प्रकाशकता महान अग्नि में है सोई चिनगारे में है महानता तुच्छता अग्निमें नहीं काष्ठमें है जहाँ काष्ठ वहुत है वहां अग्निमहान प्रतीतहोती है जहां काष्ठ थोड़ा है वहां अग्निकी तुच्छता प्रतीतहोती है इसीरीति से समुद्रजलका अरु बूंदजलका तथा महाकाश घटाकाशादिकों का भी दृष्टांत अपनी बुद्धि से विचारलेना हे आत्मदर्शी सारग्राही को तो इस बात में विरोध नहींपड़ता विवादीका इस विषय में अधिकारही नहीं काहेते यह धन सरलबुद्धिवालोंका है अन्यका नहीं आत्मदर्शीने कहा यह प्रत्यक्आत्मा सत् चित् आनंदरूप कैसे है गुरुनेकहा तीनो कालों विषे तथा जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तथा सत्व रज तम जड़आदि परस्पर भावाभाव होते भी यह प्रत्यक् आत्मा अवाध्य है इसीते सतहै तथा मनादिक सर्व संघातसर्व व्यवहारको स्वयंरूपताकर जाने है याते चैतन्य है अरु परमप्रेमका असपदहोनेते आनंदरूपहै हे पुत्र ईश्वरव्यापक है राजाकीन्याई किसी देशमें सभालगाकर वैठानहीं सर्वके हृदय में ईश्वर साक्षी रूपताकर स्थित है अन्य रीतिसे नहीं यह वेद महात्मा पुकारे हैं इसरीति से सत् चित् आनंदरूप आत्माते पृथक् ईश्वरका स्वरूप सिद्धनहीं होसक्ता जो भिन्न सिद्ध करोगे तो असत जड़ दुःखरूप सिद्धहोगा काहेते देश काल वस्तु भेदवान पदार्थ अनित्य होता है हे पुत्र यह विचार भी रहने दे परंतु जिसको तू जानता है चाहे वह वस्तु सतहो वा असत हो पर तिसके जाननेवाला तू

भिन्न है ताते तू आपकों मनादिकोंका साक्षी दृष्टा जान चाहे तू ईश्वर रूप हैं वा अनीश्वर रूप है हे पुत्र आपको बुद्धिमान जानके वि-
षयोंमें लीन होताहै स्वरूप का विचार नहीं कर्ता पर यह नहीं जानता चारो वेद षट् अंगों सहित पढ़े अरु आत्म स्वरूप नहीं जानता
तो अपंडितहै अरु जो एक अक्षर पढना नहीं जानता पर गुरु आदिकीकृपाते अपने स्वरूपको सम्यक् अपरोक्ष जाना तो वह पंडित
है हे साधो शास्त्ररूपी सडकोंमें यह पाटी लिखराखी है कि सर्व कर्म कांड अंतःकर्णकी शुद्धि परहै औ अनेक प्रकारकी उपासना सगुण
वा निर्गुण मनकी निश्चलता अर्थ है औ ज्ञानकांड अज्ञान रूप आवर्ण की निवृत्ति पर है औ बंध मोक्षादि जगत् भ्रममात्र है औ
ब्रह्मात्मा त्रिकालाबाध्य स्वरूप हैं यही सर्व शास्त्रोंका तात्पर्य है देहाभिमानहीं मूढता का सूचक है अपने समुद्र स्वरूप को
भूलकर तरंग जानना जैसे लिखारी कलमको कानमे रखके अन्यस्थान में ढूंढे तो कैसे मिले जब शुद्ध आवे तव पावे तैसे आपको वि-
सार कर और ते मुक्त चाहे है यह नहीं जानता कि मैं आपमुक्त रूप हों ताते जिनके ज्ञान नेत्र खुले हैं अरु शरीरादिकोंके अहंकार
ते अनहंकार हुये हैं सो आपको शुद्ध जानते हैं अपने संकल्पते अनेक प्रकारकी देहों विषे तू आवे है तेरी चाहे विना तुझको को
ऊभी देह विषे नहीं ल्यावता जैसे पक्षीको कोऊभी दूसरा जाल विषे बंधन नहीं कर्ता लोभसे आपही होताहै (शंका) शास्त्र मध्ये कौन
शास्त्र श्रेष्ठ है (उत्तर) हे पुत्र जिस शास्त्र कर इसको अपने ब्रह्मात्मा स्वरूप का सम्यक् धर्म पूर्वक शम दमादि सहित सम्यक् अपरो-
क्ष बोध होवे सोई शास्त्र श्रेष्ठ है चाहे संस्कृत हो चाहे भाषा हो चाहे फारसी हो चाहे बंगाली हो चाहे अंगरेजी हो चाहे अरवी हो
चाहे गीतहो चाहे इतिहास कथा हो वोई परमविद्या है सर्वशास्त्रों का परंपरा वा साक्षात् अपने सत् चित् आनंद रूप आत्माके
बोध में तात्पर्य है अन्य में नहीं और शास्त्रों मे धर्म अर्थ काम मोक्षके प्रतिपादक वाक्य मिले हुये हैं वेदांत शास्त्र विषे केवल
मोक्ष उपाय कथन कराहै इसी पर एक कथा सुन हे पुत्र पूर्व एक सत्यव्रत राजा हुआ है तिसने विष्णु की आज्ञाते अनेक
अश्वमेध यज्ञ कियेथे अरु नित्त प्रति ब्राह्मणोंको भोजन देताथा अरु स्वर्णके पात्र देताथा अरु प्रातःकाल रोज अनेक गौ

दूध देने वाली शास्त्र विधि पूर्वक दान देताथा अरु अनेक अश्व रत्नजडित अरु अनेक हस्ती इत्यादि अनंत सामग्री अर्थियोंको देताथा अरु कभी भी कठोर वचन मुखसे नहीं कहताथा सत्यवादी वेद आज्ञाकारी ऐसा राजा होता भया अरु ब्रह्मा पूर्वकाल में यज्ञ कर्त्ता भया तिस यज्ञमे ऋषीश्वर मुनीश्वर देवतादि अरु सर्व पृथिवीके राजा तथा महादेव आवत भये राजा सत्यव्रतभी तिस यज्ञ मेथा महादेव से प्रश्न किया हेत्रिलोकीनाथ मेरे मन में एक संशय है आप अनुग्रह करके दूर करो हे महादेव तीस सहस्र वर्ष आयु मेरी वीतीहै अरु वीससहस्र वर्ष मेरे पिताको शांत हुये हुये हैं मैं उसकी ठौर राज्य सिंहासन पर बैठ कर राज्य करोहों अरु शास्त्र आज्ञा अनुसार राज्य कियाहै तप दानादिक यथाशक्ति कियाहै पर अबतक मेरे मनको शांति नहीं हुई जहां मन चाहता है तहां जाताहै चाहनाते अचाह नहीं होता हे भक्तवत्सल मैं जाना चाहता हों कि मैं कौनहों महादेव सुनकर ब्रह्मा विष्णु इंद्रादि देवतोंकी ओर देखा सर्व राजेके उत्तर देनेके विचार में पड़े किसीने उत्तर नहीं दिया यह लीला ब्रह्मा देखकर हँसा अरु कहा हे राजन् तू धन्यहै तैंने जो पूछाहै सो देवता ऋषीश्वर मुनीश्वरादि सभी इस आत्मज्ञानकी प्राप्तिकी इच्छा करेहैं पर नहीं जानते किसीएक अधिकारीको प्राप्त होताहै सर्वको नहीं मैंने इस आत्मज्ञानको चारों वेदोंमें गुह्य छिपा हुआ देखाहै अरु वेदांत शास्त्रमें वेदोंमेंसे लेकर इकट्ठा कर जमा कियाहै ताको उपनिषद बोलते हैं जो ब्रह्मात्म ज्ञानके प्रतिपादक वाको अति प्रगट कर्नेते संसारका मूल उखड जाताहै बंध मुक्त तप दान पाप पुण्य नरक स्वर्ग गुरू शिष्य दास स्वामी भावादिक मर्यादा उठ जातीहै काहेते ज्ञानके अधिकारी धर्मात्मा पुरुष विरले हैं अन्य अधिकारी आत्मज्ञानके प्रतिपादक वाक्य सुनके विषयों में उलटा संशक्तीको प्राप्त होतेहैं अरु पूर्वोक्त संसार तारक मर्यादाको कपोलकल्पित ज्ञानकर उठा देतेहैं ताते गुह्यहै परंतु यह त्रिनेत्री महादेव ज्ञानके समुद्रहैं अरु अतिकृपालु हैं इसीते तेरे प्रश्नका उत्तर देवेंगे दयाके समुद्र भोलेनाथ महादेव कहते भये हे ऋषीश्वरो मुनीश्वरो सत्यव्रतके प्रश्नका उतर कहोंहों ईश्वर कहते भये

हे राजन् मन वाणीका गोचर जो यह नाम रूपात्मक संसारहै सो केवल मनोमात्रहै काहेते जब मन सुषुप्ती मूर्छामें अपने उपादान कारण में लीन होताहै तो संसारकी गंध भी नहीं प्रतीत होती जो संसार मनोमात्र नहोता तो सुषुप्तीमें मनके लीन हुये संसार पुरुषको भासता जो नहीं भासता ताते जानीताहै संसार मनोमात्रहै अन्य इसका स्वरूप नहीं तैंने जो आपको सत्यव्रत मानाहै सो शरीरके अंगोंके भिन्न भिन्न नामहैं सो कौनसी वस्तुका नाम सत्यव्रत तैंने मानाहै जैसे विचारे यह शरीर असत्है तैसे जगत्को जान परंतु तू सत् चित् आनंदरूप आत्मा जाग्रतमें मनका फुर्णा रूप संसारके सद्भावको अरु सुषुप्ति में मनका अफुर्णा रूप संसारके असदभावको अनुभव करनेवाला अनभइया असंसारी द्रष्टा पुरुषहै जो तू संसार रूप होता तो मनादिक संसारके भावाभावको कैसे जानता जो जिसको जानताहै सो तिसते भिन्न होताहै जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्न प्रपंचके भावाभावको अनुभव करनेवाला स्वप्न प्रपंचते भिन्नहै ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वके हृदयमें ईश्वर साक्षीरूप कर समव्यापक है अरु इस मन बुद्धि देहादिक संघातको तथा संघातके फुरने आदि धर्मोंको संघातके धर्मोंके न्यूनाधिक भावाभावको काल विवधान रहित एक रस जो जानता है सोई तेरा स्वरूप है अरु जो देश देशांतरकी अंतर मनमें कल्पना होती है पुनः लीन होजाती है तिस दोनोप्रकारकी कल्पनाको जो जानता है सो तू है अपने क्रोधादिक कार्य सहित सत्व रज तम गुणोंकी अंतर प्रवृत्ति निवृत्तिको जिसकर अनुभव होता है सो निर्विकार साक्षी आत्मा तेरा स्वरूप है अरु तूही आत्मा जागृत स्वप्न सुषुप्ति आदि प्रपंचका द्रष्टा है आगे तुझ चैतन्य आत्माका द्रष्टा कोई नहीं तू चैतन्य स्वयंप्रकाश स्वरूप है यह जो घट बढ़ दृष्टि आवे है सो स्वभाव पंचभूत रूप दृश्य शरीरादिकों के हैं तुझ द्रष्टा चैतन्यका नहीं जैसे अनेक रूपता स्वप्नकी स्वप्नद्रष्टामें स्पर्शै करे नहीं जैसे अनेक रूपता इंद्रजालकी हैं इंद्रजालीको स्पर्श करे नहीं कार्य कारण भावते रहित तू चैतन्य अद्वैत आत्मा है बंध मोक्षादि कल्पना केवल मनका मनन है तुझका नहीं काहेते जब मन

आपको बंध अज्ञानी सुखी दुःखी जन्म मरणवान मानता है तबभी तू चैतन्य आत्मा इस व्यवहारका साक्षी रहता है जब विचार द्वारा अज्ञानकी निवृत्तिसे आपको मोक्षरूप सत् चित् आनंदरूप आत्मा मानता है तबभी तू साक्षी रहता है तद्वत और व्यवहार भी जान लेना ताते बंध मोक्षादि मनकी कल्पना है वास्तव ते नहीं जो वास्तव व्यवहारिक वस्तु होती है सो अविचारसे तौ उत्पन्न नहीं होती अरु विचारनेसे निवृत्ति नहीं होती जैसे घट पटादिक पदार्थ हैं जो अब विचार अरु विचारसे उत्पत्ति नाश नहीं होते सारांश यह कि ज्ञान अज्ञानसे जो उत्पत्ति नाश वस्तु होती है सो भ्रममात्र होती है जैसे निद्रा दोषकर स्वप्नद्रष्टाके अज्ञानसे तथा निद्राकी निवृत्तिरूप स्वप्नद्रष्टाके जाग्रतरूप ज्ञानसे स्वप्न प्रपंचकी उत्पत्ति नाश होती है ताते मिथ्या है स्वप्नद्रष्टाकी यह रीति नहीं जिस अधिष्ठान वस्तुके अविचार अरु विचारसे बंध मोक्षादि प्रपंच भान होता है तथा निवृत्ति होती है सो वस्तु सत है हे राजन् बंध मोक्ष मनका फुर्णे अफुर्णे ते प्रथम तू चैतन्य स्वतःसिद्ध है अरु मध्यमें बंध मोक्षादि मनके फुरणेका साक्षी है अरु बंध मोक्षके अभाव माननेका अवधिरूप अधिष्ठान है इसप्रकार सर्व पदार्थ परस्पर भावाभावरूप हैं तथा परस्पर व्यभि-चारी हैं तू चैतन्य साक्षी आत्मा सर्वमें पूर्णभी है तथा तुझ चैतन्यकरही सर्व देह मनादिक जड़ पदार्थोंकी चेष्टा होवे है अरु देहा-दिक अपनी प्रतीति कालमेंही हैं अन्यकालमे नहीं अरु तू चैतन्य सर्व कालमें एक रस निर्विकार मन वाणी ते अगोचर है अरु सर्व मन वाणीका गोचर प्रपंच तुझ चैतन्यकी दृश्य है तू एकही द्रष्टा सूर्यवत् प्रकाशमान है अरु तुझ चैतन्य विना और कछुनहीं तू नाम रूप स्थावर जंगमरूप जगत्ते अतीत है तथा कर्म जालते रहितहै न्यूनाधिक जो प्रतीत होवेहै सो स्वभाव माया का है मूढ़ोंकी दृष्टी में है आत्म विद्वानपुरुषों की दृष्टी में नहीं जैसे स्वर्ण माटी जलादि स्वरूपके अज्ञात पुरुषोंको तरंगभूषण घटादिकों में अनेकता भान होती है जल माटी स्वर्णके सम्यक् विद्वानपुरुषोंको नहीं हे राजन् उत्प-त्ति नाशादिक षट्विकार देहके हैं तुझ चैतन्य आत्माके नहीं हर्ष शोकादिक मनके धर्मोंतेरहित नित्यमुक्त हैं आवागमन का तुझ

में मार्गनहीं है राजन् जप दान तप यज्ञादिकों का फल यही है जो अपने स्वरूपको जान कर्म शरीर मनादि संघातकर्त्ता है मान आपलेता है आगे फल तिन कर्मोंका अनेक देहों में सुख दुःख भोगता है जितने मूर्ख कर्म अधिक करते हैं उतनाहीं अहंकार तिन को अधिक होता है इसीते आत्मस्वरूपको पातेनहीं ताते सर्वपदोंते अचाहते अचाह होवे चाहना अपने स्वरूपके पहचानने की करे निजस्वरूप अपरोक्षहुये ब्रह्म की जिज्ञासा भी न रहेगी कतकरेणुवत् हे प्रियपुत्र! सर्व दुःखों का मूल अहंकार पूर्वक देहादि कों की वासना है अरु सुखों का मूल आपकी पहँचान है सो आपको सर्व मनादिकों का द्रष्टाजानना मनादिकोंको दृश्य मिथ्या जानना शरीरादि संघातकी जैसे अज्ञात काल में चेष्टाहोती है तैसे ज्ञातकाल में होती है दृष्टिभेद है वा आपसहित सर्वको अस्ति भाति प्रियरूप आत्माही है यह निश्चय परम निर्विकल्प अवस्था है एकआत्मा अद्वितीय विना और कछुनहीं जब ऐसे जाना आप होता है सर्व कर्मोंके फल का दाता होता है राजावत् जो देखे सुने सूंघे स्पर्श रस लेवे है सो आपही कर्त्ता भोक्ताहोवे है अरु कर्त्ता भोक्तापनेते अतीतभी आपहीहोवे है जाने है मैं चैतन्य साक्षीको न किसीने उपजाया है अरु न मैं किसीते उत्पन्न भयाहों न मैं इस शरीरविषे कर्मों कर आयाहों काहेते मैं व्यापक आत्मा शरीरकी उत्पत्ति से प्रथम स्थितहोनेते जैसे घटकी उत्पत्तिते प्रथमहीं आकाश स्थित है इसविचारके निश्चयते शरीररूप संसार में रहताभी पद्म कमलवत् संसारकी मलीनतारूप वंधनते मुक्तरहता है यह आप ऊपर अपनीदया है कर्म देहादिकों से स्वभावक पड़ेहोते हैं तिनमें अहंकार आपको नरक में गेरेहै जो अहंकार नहीं करते तो क्या निर्वाह नहींहोता किंतु होताहै जो नारायणादि नामोंको जपते हैं अंतःकर्णकी शुद्धीको पाते हैं परन्तु आत्मसुखते अप्राप्त होते हैं काहेते मुझ नारायणविषे अरु अपने विषे भेद समझते हैं इसीते दीन रहते हैं जब अपने आत्माको मेरारूप अरु मुझ नारायणको अपना रूप जाने तो कर्मजाल संसारते मुक्तहोय जैसे घटाकाशको महाकाश रूप अरु महाकाशको घटाकाश रूपता निहसंग बनसक्ती है जैसे मृगकी नाभि में कस्तूरी है तिसको न जानके तिसकी प्राप्ति वास्ते वन

वनमें ढूंढता फिरता है तैसे तू चैतन्य आत्मा नित्य मुक्त स्वरूप है भ्रमकर आपको न जानके आशा मुक्तकी औरोंसे करे है अरु अनेक कर्म उपासनादि भ्रमसे क्लेशसहारे है गुरु शास्त्र ईश्वर मेरी मुक्त करेगा तो होगी यह नहीं जानता कि मुझ नित्यमुक्त चैतन्य साक्षी आत्माकी स्वप्नवत् गुरु शास्त्र ईश्वरादि सर्व संसार कल्पना है मैं नहीं कल्पों तो कहां है आपको शरीर मानके आप बंधनमें पडाहे अरु भोगोंकी चाहना कर्त्ता है यह नहीं जानता कि मैं चैतन्य ही सर्व जड पदार्थों में स्थित हुआ २ सर्वका भोक्ता हों तथा सर्वका कर्त्ता हों वास्तवते मैं चैतन्य माया कर कर्त्ता भोक्ता हुआ २ भी वास्तवते अकर्ता अभोक्ता हों ताते हे राजन् देहाभिमानके त्यागका त्याग कर देख जो शेष है सो तेरा स्वरूप है जो जो मन वाणीका कथन चिंतन है तिस तिस कथन चिंतनका तू साक्षी हुआ २ तिस तिस कथन चिंतनते अतीत है आपको जीव मानकर चाहना मनकी तथा शरीरकी विषे बंध भया है अरु मूल अपना बिसारा है सुखरूप तू आपहै अरु अन्यते सुख चाहता है कैसे प्राप्त हो जब तू अपने सम्यक् स्वरूपको जाने तब सब भ्रममात्र बंधनोते मुक्त होवे अथवा आपको बीचमें उठादेवेकि मैनहीं सर्व भगवत ही है कर्त्ता भोक्ता सुख दुःख बंध मोक्षादि सर्व ईश्वरही है इस निश्चयते भी सर्व बंधनो ते मुक्तहोताहै करने अकर्नेकी स्वइच्छा ते छूटकर सदा भगवत्की इच्छामें रहे आपको शुभाशुभ में तप्त न करै जो शुभाशुभ कर्म करे सर्व भगवतको अर्पण करे अरु आपको बीचभूल कर भी न ल्यावे जो इच्छा भगवतकी होगी सोई होगा अन्यथा नहीं हेराजन् ज्ञान वा भक्ती वा कर्मपर निश्चय एक पर दृढ राखे ऐसे न करे कभी आपको जीव बंध मोक्षवान् मानके यह चिंतन करना कि हम भजन ईश्वरका करेंगे तो बंधनते छूटेंगे ऐसे न जानना कभी आपको सर्व कर्मों ते तथा बंध मोक्षादि संसारिक धर्मों ते मुक्त मानना यह कैसे है जैसे कोई नदीपार हुआ चाहै अरु दोनवकापर पगराखे वह डूबे गाही ताते एक निश्चय करना चाहिये सत्यव्रतने कहा हे गुरो जो सर्वात्माही है तो पाप पुण्य स्वर्ग नरकादिकोंको क्यों प्राप्त होता है महादेवने कहा हे राजन् निर्संशय तू सर्वात्मा ही है आवागमन मलीनता शुद्धता बंध मोक्षादि संसारधर्मोंते मुक्त स्वतःसिद्धहै कोई यत्न से नहीं न तुझ

170

चैतन्य साक्षी आत्माका नाश है न जन्महै न आनाहै न जानाहै काहेते तू देश काल वस्तुके परिच्छेद ते रहित पूर्ण सदानिर्भय स्थित है आपको भुलायकर जीव माना है इसीते पुण्य पापादिकों में भ्रमसे बंधनमें पड़ाहै वास्तवते नहीं अरु भ्रमसे अनेक शरीरोंमें अभिमान पूर्वक सुख दुःख पावेहै कल्पित बंध मोक्षको सत्यमान कर मूल अपना बिसाराहै हे राजन् जैसे स्वर्ण भूषणों में व्यापक है पर विचारकरे से भूषण कहन मात्रहै स्वर्णही है तैसे अस्तिभाति प्रियरूप तूही आत्मा अद्वैतहै नामरूप सर्व जगत् कहनमात्रहै वा आपको ऐसे जान जैसे इक्षु विषे मधुर रस दूध विषे घृत पृथिवी जल विषे तथा तिनके कार्यों विषे अग्नि व्यापकहै जैसे पृथिवी अप तेज वायु महाभूतों विषे तथा तिनके कार्यों विषे आकाश व्यापक है तैसे तू आकाशकी न्याई सर्वका द्रष्टा सर्वमे सत् चित् आनंद रूपकर व्यापकहै काहेते जहां तू चैतन्य नहीं तहां किसी पदार्थकी स्फूर्ति नहीं जो तूहै तोहीं सर्व भान होतेहैं आपको शरीरादिक मानना भ्रमतेहै शरीर रूप जगत् कैसाहै नेत्रके खोलने मीटनेसे उत्पत्ति नाश होताहै सारांश यह कि मनके फुर्णे अफुर्णेसे उत्पत्ति नाश होताहै बुद्धिवान वही है जो शरीर सहित जगतको मिथ्या स्वप्न इंद्रजालवत् जाने अरु आपको सत्यरूप आत्मा जाने हे राजन् यह बुद्धिआदिकोंका साक्षी आत्मा सर्व जगत्का जीवनरूपहै काहेते असत् जड दुःख रूप इस शरीर सहित संसारको अपने स्वरूपसे सत् चित् आनंद करेहै जैसे तरंगादिकोंको जल मधुरता शीतलता द्रवता रूप करेहै जैसे चणकादिक पदार्थोंको गुड मधुर कर्ताहै तैसेही आत्माका बल नियंत्रता निर्मलता सर्व वस्तुपरहै जब सर्व ब्रह्मात्माहीहै तो अपने सत् चित् आनंद साक्षी आत्माते परमेश्वरको भिन्न मानना अरु आपको दास मानना अखंडको खंडन करनाहै दूसरा सत् चित् आनंद रूप आत्माते भिन्न परमात्माको माने तो परमात्मा असत् जड दुःख रूप अनात्मा सिद्ध होगा अरु परमेश्वर इस पर अत्यंत कोप करेगा काहेते मुझ ईश्वरको इसने असत जड़ दुःख रूप अनात्मा जानाहै ताते इस ज्ञानते इसका अनिष्ट होगा काहेते कोई मनकर किसीका बुरा चिंतन वा कथन कर्ताहै तो वह दरयाफ्त कर तिसपर महानरंज होताहै तैसेही अंतर्यामी परमात्माको पूर्वोक्त प्रकारसे असत जड दुःखरूप अनात्मा चिंतन कथनते क्यों न

कोप करेगा अपनी हानि समुझके हे राजन् कौन बुद्धिमानहै जो घटाकाशको महाकाशते भिन्न माने तथा तरंगोंको अरु भूषणोंको तथा घटादिकोंको जल स्वर्ण मृत्तिका ते भिन्न माने हे राजन् तू मनादिकोंका साक्षी आत्माहै तुझको कभी जन्म मृत्यु नहीं सदा जैसेका तैसा समानहै अरु यह मन वाणीका गोचर दृष्टमान संसारभी तूहीं है काहेते तुमहींते प्रगट होताहै अरु तुझहींमें लीन होताहै अरु तुझ हींमें स्थितहै ताते तुझका रूपहींहै जल तरंगवत् अस्ति भाति प्रिय रूप तुझ आत्माबिना और कछु नहीं सम्यक् विचार देख बुद्धिसे अरु इन विद्वानोंसे पूछ देख मैं सत कहताहों कि असत हे राजन् वेदांत सिद्धांत तो यहीहै अरु सर्व विद्वानोका अपने स्वरूप विषयमें यही अनुभवहै आगे जो तेरी इच्छाहै सो कर जैसे पंचभूतोंका कार्य घट पटादि सर्व पंचभूतरूपहैं तैसे यह नामरूप प्रपंच अ स्ति भाति प्रियरूप तूही आत्मा है जब तैंने सम्यक् आपको जाना सर्व जगत्को प्रकाश अपना जानेगा जैसे घटने जब अपना स्वरूप पंचभूतरूप जाना तो सर्व जगत्के पदार्थोंको अपना स्वरूपही जाने है कि मैंही सर्वरूप हों ऐसे जानेगा हे राजन् जिसने चाहना बंध मुक्त मनकी ते दूर निराश भया है अरु आपको सम्यक् अपरोक्ष जाना है सो ब्रह्मादि शरीर त्रिते संयुक्त संसाररूप पुतरी घडी घडीमें अनेक खेल खेले है तिसका आपको दृष्टा माने है कर्ने अकर्ने सुख दुःख बंध मोक्षादि संसार सर्व धर्मोंमें लिप्त नहीं होता जैसे सूर्य सर्व जगत्के व्यवहार सिद्धकर्ता हुआभी अलिप्त रहता है हे राजन् जो तैंने मन वाणीकर माना है सो तेरा स्वरूप नहीं तू इस मानने ते भिन्न है अरु शरीर प्रारब्धको सौंप सूर्यरूप आपकी जगत् किरणा जान ब्रह्मात्म अपने स्वरूप समुद्रके जगत् तरंग जान यह जो तुझे भ्रम बुद्धिमे करा है कि मुक्त मेरी और कोई करेगा तिस भ्रमको त्यागकर नित्य मुक्त नित्य शुद्ध अक्रिय अविनाशी सर्वमे आकाशवत् व्यापक आपको जान अपने अहंकारसे तू आप बंध है अरु अपने ज्ञान पछानने ते आप मुक्त है इतनाहीं बंध मुक्तका स्वरूप है अपने स्वरूपका सम्यक् अपरोक्ष जाननाहीं बंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्तिका उपाय है अन्य नहीं जो सची बंध मोक्ष होती तो स्वरूपके पहँचानने ते दूर न होती सम्यक् स्वरूप विज्ञानी पुरुष आपको बंध मोक्षते

रहित मानते हैं ताते मिथ्या है इस आत्मा ते भिन्न जो इसकी मुक्त करेगा सो आपही अनात्मा बंध है मुक्त कैसे करेगा हे राजन् देहाभिमान साथही कर्म धर्म भक्ति उपासना संसार है जब देहाभिमान त्यागा मुक्त भया अहंकारका नाम बंध है अहंकार मुक्तसे मुक्त है ईश्वरकी प्राप्ति अरु मुक्तका पावना अपना पछानना है परमेश्वर अरु अपने बीच बीच देखेगा तो दुःख ते न छूटेगा सर्वको आपसहित सर्व ब्रह्मरूप आत्मा जान बढघट नीच ऊंच स्वरूपसे नहीं देख व्यवहारमें जिस वर्णाश्रममें स्थित है तिसीके अनुसार पंगती बेटी लेनदेनादि व्यवहार करे कोई व्यवहारको एकमेक कर्णेसे एकता नहीं होती किंतु ज्ञानदृष्टिसे सर्व प्रकार एकता है जैसे सर्व पदार्थोंमें गुण दोष जुदे जुदे हैं जिस स्थानमें घट चाहिये तिस स्थानमें पट नहीं चाहिये जिस स्थानमे पट चाहिये तिस स्थानमे घट नहीं चाहिये इत्यादि सर्व पदार्थोंमें जान लेना परंतु पंचभूत रूपताकरके सर्व पदार्थ सम हैं जैसे अनेक ओषधियोंके अनेकगुण जुदे जुदे हैं अरु अनेकही पुरुषोंको रोग होते हैं यह नहीं कि एक रोगपर सर्व ओषधी चलें परंतु जल सर्वमें एक है हे राजन् अंतर कामक्रोधा दिकोंका तथा वाहिर शब्द स्पर्श रूप रस गंधादिकोंका जो ज्ञान होता है सो ज्ञान स्वरूप तूही आत्मा है इस सर्व पदार्थोंके न्यूना धिक व्यवहारके परिमाण करनेवाले ज्ञानते पृथक् कोई इस शरीरमें ईश्वर प्रतीत होता नहीं ईश्वरको पूर्णहोने ते इस शरीरमेंभी ईश्वर का स्वरूप मानना पड़ेगाही कोई इस ज्ञानते भिन्न ईश्वरका स्वरूप सिद्ध होता नहीं जो भिन्न होगा तो जड़ अज्ञान रूप सिद्ध होगा ताते अज्ञानसे लेकर देहतक अंतर वाहर सर्व पदार्थोंका परिमाण करनेवाला अंतर्ज्ञान स्वरूप कोई वस्तुहै तिसको ईश्वर कहो चाहे आत्मा कहो चाहे खुदा कहो चाहे कोई और नाम राखो चाहे दृष्टा कहो हे राजन् जो तू और कछु नहीं जानता तो यह निश्चयकर जो अंतर अज्ञान देहतक मनादिकोंके व्यवहारकी न्यूनाधिक भावाभावको परिमाण कर्त्ता हैं सो वस्तु संसार तथा संसारके धर्मोंते रहितहै सो सम्यक् स्वरूप मैं हों इसमें संशय नहीं चाहे संसार वस्तु सतहो चाहे असत हो चाहे जीव शीवका भेदहो चाहे अभेद हो हे राजन् मुक्त जो तू चाहे है यही तुझमे बंधनका कारण है काहेते तू आप मुक्त रूप है

अरु मुक्तकी इच्छा कर्त्ता है हे राजन् मनका संकल्प विकल्प स्वभाव है कभी आपमें बंधका संकल्प कर लेताहै कभी मुक्त का संकल्प कर लेताहै अरु तू दोनों संकल्पोंका द्रष्टाहै ताते बंध मोक्ष कछु वस्तु नहीं केवल मनका फुर्णा है अरु मनका बंध मोक्ष भ्रम मात्र माननेका अभ्यास चला आताहै ताते सर्व बंध मोक्षादि चाहनाते अचाह हो मनके पीछे मत पड़ देह वासना पूर्वक बंध मोक्षादि वासना त्याग इनते विपरीत वासनाका प्रथम अभ्यास ग्रहण कर पीछे तिनको भी त्यागका त्याग करना काहेते जैसे मनका अभ्यास दृढ़ होताहै तैसेही आगे भासताहै ताते पूर्वते विपरीत यह अभ्यास कर कि मैं नित्य मुक्त सत् चित् आनंद आत्मा हों अरु सर्व मनादिकोंका साक्षी हों अरु बंध मोक्षादि सर्व संसारके धर्मोंते अतीत हों अरु स्वभावसेही निर्विकार निर्विकल्प हों अरु आकाशकी न्याई असंग पूर्णहों भ्रम मात्र बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते मुझ चैतन्यको किंचित् मात्रभी कर्तव्य नहीं इस मन वाणीके गोचर संसारते अगोचरहों इत्यादि अनेक विशेषण अपने आत्मस्वरूपके चिंतन कर्णे यह देहादि वासनाते विपरीत वासना है इस पूर्वोक्त दृढ़ निरंतर अभ्यासते वही रूप होवेगा काहेते विपरीत स्वरूप भी भृंगीकीड़ा अभ्यासके बलते उलट कर तद्रूप होताहै तू तो पूर्वही वही रूपहै तुझके तद्रूप होनेमे क्या आश्चर्य है इसीका नाम अहंग्रेउपासनाभी है इसीको अभेद भगती भी कहते हैं हे राजन् चाहना बंध मुक्तकी कभी भी नकरियो काहेते बंध मुक्त तेरे अज्ञानते भयेहैं अपने में कल्पित बंध मोक्षादि पदार्थोंके पीछे मत फिरियो यह भ्रमियोंका व्यवहार है तुझ चैतन्यते ऊंच कोऊपद है नहीं जिसवास्ते यत्नकरे अरु वह तेरी मुक्ति करे ऐसा कोई नहीं तू आपको आप बंध जाने है नहीं तो वेदांत शास्त्रके अनुसार विचार देख तू चैतन्य निर्बंध नित्यमुक्त रूप है अरु सर्व जगत्का प्रभु प्रकाशक है ऐसे होयकर आशा अपने ऊपर भलाई की औरोंसे राखे सो अविद्याते है नहीं तो असत जड दुःख रूप अनात्म पदार्थ तुझ करही सत् चित् आनंद रूप आत्मा प्रतात होते हैं ताते तेरीही सर्व पर भलाई है तुझपर कोई भलाई नहीं कर सक्ता राजा महादेवके ज्ञान रूप अमृत व-

वचन को धारके अज्ञान तत्कार्य मृत्यु ते रहित होता भया सर्व लोग महादेवके यथार्थ वचन सुनकर स्वरूप में लीनभये अरु सभाके लोग आप अपने वांछित स्थानको जाते भये व्यासकर्णने कहा हे आत्मदर्शी जो उपदेश महादेवने राजा सत्यव्रतको किया है अरु राजा अपने स्वरूप विषे लीन भया है तू भी तिसी निश्चयको धारण कर हे आत्मदर्शी जो पुरुष बुद्धिके श्रवणसों पूर्वोक्त वचन सुनेगा निश्चय स्वरूपको पावनेवत् पावेगा अरु वंध मोक्षादि संसार भयते रहित होवेगा मैत्रेयने कहा हे पराशर देव पूजने योग्य कौन है अरु पूजन तिसका कैसे होता है हे मैत्रेय हस्त पादादिसंयुक्त ब्रह्मा विष्णु शिवादिक भी देव नहीं सूर्य्य चंद्रमा वायु अग्नि पृथिवी इंद्र यम कुवेरादिकभी देवनहीं न तू न मैं देवहों न ब्राह्मणादि वर्ण न आश्रम न मन इंद्रिय देहादिक देवहैं किंतु सर्वके हृदय विषे वर्तमान कालका ज्ञाता अकृतम अनादि सत् चित् सुख रूप अस्तित्व मात्र देवहै हे मैत्रेय अहं यहदो अक्षर जबलग कथन चिंतन नहीं करे तवलग भविष्यत अहंपना है जब अकार कथन चिंतनके आरंभ करतें ही आकार भूत में गया अरु हकार भविष्यतमें है मध्यके कालमें अहं कथन चिंतन नहीं है सो काल निर्विकल्पहै इसीप्रकार सर्व पदार्थ भविष्यतके भूतकाल होते चले जाते हैं यही इनमें मिथ्यत्व है परंतु पूर्वोक्त रीतिसे वर्तमान काल निर्विकल्प है तिस निर्विकल्प वर्तमान कालका ज्ञाता अति निर्विकल्प निर्विकार है सोई देवहै सोई अपना स्वरूप है हे मैत्रेय भूत भविष्यतकाल तथा भूत भविष्यत काल में होनेवाले पदार्थ सर्व वर्तमान कालके ज्ञाता देव सेही सिद्ध होवे हैं परंतु अपने स्वरूप का सुखेन बोध वास्ते तथा अपने स्वरूपके निर्विकल्पताके बोध वास्ते वर्तमान काल का ज्ञाता कहा है दृष्टा दृश्यके मिलाप विषे जो आनंद रूप अनुभव है सो देव है तथा अंतर दृष्टा दर्शन दृश्यके मिलाप वियोगको तथा दृष्टा दर्शन दृश्य को तथा दृष्टा दर्शन दृश्यके न्यूनाधिक भावाभावको जो पहँचान कर्ता है अरु आप पहँचान करना रूप अभिमानते रहित है अरु आप पहँचान नाम ज्ञान स्वरूप है अरु मनादिकों से जो पहँचान कराजावै नहीं उलटा मनादिकोंके न्यूनाधिक भावाभावको पहँचान करे

सोई स्वयंप्रकाश सबका अपना आप स्वरूप देव है इष्ट अनिष्टके संयोग वियोग ते जो आनंद उदय होता है जिसकर विषय आनंद का अनुभव होता है अरु आप आनंदरूप है सो देव है जो दृष्टा दर्शन दृश्य इस त्रिपुटीके उदयहोने से जो प्रथम त्रिपुटी का प्रकाशक है तथा त्रिपुटीकी जो समाप्ति को प्रकाशता है अरु आप सर्वको प्रकाशताहुआ भी निर्विकल्प है स्वप्न दृष्टावत् सो देव है अंतर सत असत नाम भावाभाव पदार्थ जिसकर सिद्ध होते हैं तथा जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तथा तिनमें वर्तने वाले मनादि जगत् जिसकर सिद्धहोता है अरु जो आप किसी मनादिकों से सिद्ध नहीं होता सोई सबका अपना आप स्वरूप देव है यह सकारवस्तु है यह निराकार वस्तु है यह वस्तु जाननेमें आती है यह नहीं यह त्यागकरने योग्य है यह नहीं इत्यादि अंतर जिसकर मनके मननका व्योरा पड़ता है सोई देव है हे मैत्रेय जो मनादिकों का साक्षी है सो देव है हृदय देशते प्राणवायु उठकर नाशिकासे द्वादशअंगुली वाहर जाता है तिसको प्राण कहते हैं तथा सूर्य्य अग्नि कहते हैं तैसेही सो वायु वहां लौटकर हृदयदेश को प्राप्तहोती है तिसको अपानचन्द्रमा वोलते हैं जब प्राण अपने प्राणत्व भावको त्यागा पुनः अपानहुआ नहीं तिस देश काल को परि-माण करनेवाला सो देव है तथा प्राणोंकी समाप्तिको तथा अपानके अनुदयको संधि में निर्विकल्प स्थितहुआ हुआ तिनसंधियों विषे स्थित पदार्थोंको जानता है सो देव है तथा प्राण अपानको तथा तिनके न्यूनाधिक भावको जो जानता है सो देव है तैसे वाहर से उठकर अपानवायु अपने अपानभाव को त्यागा अरु जबलग प्राण उदय भये नहीं तिस देशकालको तथा तिन देशकाल में होनेवाले प्राण अपानादि, पदार्थोंको संधिमें स्थित निर्विकार निर्विकल्प रूप जो वस्तु प्रकाश करै है सो देव है तैसेही जब हृदयसे प्राण उदय होते हैं तिन देश काल सहित प्राणोंके उदयको तथा तिनके गमनके आरंभको तथा तिनके गमनको जो अनुभव कर्त्ता है सो देव है तथा प्राणों सहित प्राणोंका मध्य कंठादि देशकाल को तथा प्राणोंसहित प्राणोंके नासाग्रंत देशकालको जो जानता नाम परिमाण कर्त्ता है सो देव है तैसे अपानके उदयको तथा अपान गमनारंभको जो जानता है सो देव है तथा

अपान गमनके मध्यदेशकाल को तथा अपानोंकी हृदय में अंत समाप्ति देश कालको असंगहोकर जो प्रकाशकरता है सो देवहै तथा जाग्रत्के उदयको तथा स्वप्नके अनुदयको जो जानताहै सो देवहै तथा स्वप्न जाग्रत्के अनुदयको सुषुप्तिके उदयको जो जानताहै सो देवहै तथा सुषुप्तिके अनुदयको तथा जाग्रत् स्वप्नके उदयको जो जानताहै सोदेवहै तथा शुभसंकल्पके उदयको तथा अशुभसंकल्पके अनुदयको जो जानता है सो देवहै तथा शुभसंकल्पके अनुदयको तथा अशुभ संकल्पके उदयको जो जानता है सो देव है तथा शुभ अशुभ संकल्पके उदय अनुदय देश कालको जो संधिमें स्थित हुआ जानताहै सो देवहै सो यही देव ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यंत सर्वका अपना आप स्वरूपहै इसके जाने ते बंध मोक्षते छूटताहै इस पूर्वोक्त देवको सम्यक् अपरोक्ष जाननाहीं यही देवकी पूजाहै इस बुद्धि आदिकोंके साक्षी देवको जो सम्यक् अपना आप नहीं जानता सो सकारोंकी पूजा करे सो बालक क्रीडा है पूज्य पूजक पूजा इस त्रिपुटीका इसी देवसे प्रकाश होताहै अरु यह त्रिपुटी इस देवते कछुभी भिन्न नहीं स्वप्न दृष्टावत है मैत्रेय इस देवको किसी साधन कर नहीं पावना अपना आप होनेते अपने स्वरूपको अवाङ्मनसगोचर जानना यही इस देवका पूजनहै हे मैत्रेय मनके संकल्प करके रचित जो देवहै सो देव नहीं सर्व संकल्पते रहित अरु सर्व संकल्पोंका साक्षी देवको सम्यक् निज स्वरूप जानना यही देवके आगे पूजाहै देश काल वस्तु भेद रहित पूर्ण जानना यही पुष्पहैं शब्दादि ग्राह्य जड़ विषय अरु श्रोत्रादिक ग्राहिक जड इंद्रियोंके संयोग वियोग विषे जो अनुभव सतरूपहै तिसको अपना आप स्वरूप जानना यही इस देवकी पूजाहै ऐसा पदार्थ कोई नहीं जो इस मनादिकोंके प्रकाशक देवसे असत न होवै अरु ऐसाभी पदार्थ कोई नहीं जो इस आत्मदेव कर सत न होवै तात्पर्य यह कि तिस अस्ति भाति प्रिय देवते भिन्न करे नामरूप असतहैं मिले हुये सतहैं जिसते यह सर्व है अरु जो यह सर्वरूपहै अरु जो सर्वते अतीतभीहै अरु जो सर्वके मध्यमे नित्य स्थित हुआ हुआ सर्वकी चेष्टाका कारणहै अरु इसका कारण कोई नहीं स्वप्न दृष्टावत् संसार रूप नटनीको माया विशिष्ट स्फुरण रूप चैतन्य प्रेरताहै तेरा स्वरूप देव निर्विकार निर्विकल्प साक्षीवत् स्थितहै हे मैत्रेय तिस देवका तीन कांडोंकी रीतिसे पूजन

है इस सुखरूप मनादिकोंके साक्षी देवके सम्यक् दर्शन वास्ते अरु अंतःकर्ण रूप आदर्शकी मलीनताके दूर करने वास्ते देव अर्पण निष्काम कर्मकी श्रद्धा शम दमादि साधन पूर्वक अनुष्ठान रूप पूजाहै दूसरा पूजन यह है कि अंतःकर्णकी चंचलताके दूर करने वास्ते चित्तादिकोंके पहँचान करनेवाले देवका ध्यान करना रूप उपासनाहीं पूजाहै वा अपने सहित सर्व जगतको सत् चित् सुख हरि रूप जा नना नाम भावना करना यह दूसरी अहंग्रे उपासना ध्यान रूप पूजाहै वा सम्यक् अवाङ्मनसगोचर करके निजांतर ज्ञानरूपदेवका सत संभाषणादि साधन पूर्वक ध्यानरूप देवकी पूजाहै पूर्वोक्त ध्यानका विषय देव सम्यक् मैं चैतन्यहों सोई भया ज्ञान तिस सम्यक् ज्ञान करके देवकी पूजा होतीहै सारांश कि पुष्प हैं हे मैत्रेय अवाङ्मनसगोचर करके वा अस्ति भाति प्रिय रूप करके निज स्वरूप बुद्धिमें जच जाना यही ज्ञानहै अरु जचे से विना गुरुवाक्से वारंवार अहंरूप करके निरंतर भावना करना यही अहंग्रह उपासना है सर्वका करता भी अकर्त्ताहै सर्व विषे सर्व प्रकार सर्वदा काल सर्वसे असंग सर्वका प्रकाशक सर्वरूप स्वप्नदृष्टावत् अद्भुत रूप चैतन्य देव अप्रा आप साक्षी भूत सम्यक् जानना मन वाणी शरीरके न्यूनाधिक व्यवहारमें अन्यथाभाव कदापि न होना तात्पर्य्य यह कि संघातमें अध्यास न होना यही देवकी पूजाहै अंतर ज्ञान स्वरूप देवका वाहिरधूपदीपादिकों करके क्लेश रूप पूजन नहीं होता किंतु क्लेश विनाहीं संघातके कर्त्तव्यमें अपनेको अकर्ता साक्षी मानना यही ईश्वर देवकी परमपूजाहै हे मैत्रेय अपना अहं परिछिन्न भाव त्याग करने से ही पूर्ण भावको प्राप्त होता है पूर्ण होने वास्ते यत्न नहीं काहेते आगेही यह आत्मा पूर्ण है भ्रांति कर अपूर्णथा जैसे [illegible] परिछिन्न अहंकार त्यागा पूर्ण महाकाश हुआ हे मैत्रेय जो शास्त्र रीति अनुसार जो कुछु आन प्राप्त होवै सो हेयोपादेय बुद्धि रहित होकर निजदेवको भोग लगाना आप तिस भोगका भी साक्षीभूत रहना यही पूजन है यथा प्राप्त समभाव रूप जल विषे स्नान कर सर्व नाम रूपात्मक दृश्यका सम्यक् दृष्टा रहना दृश्य रूप कदाचित्त भी न होना यही देवका पूजन करो इन अविद्यक स्वप्न पदार्थोंमें हेय उपादेय बुद्धि न करनी देवका पूजन है मृत्यु आवे तो देवपूजन है जीवन होतो देवपूजन है दारिद्र होवा राज्यहोपरका

हे मैत्रेय यह आत्मदेव मनका अपना आप स्वरूप होनेते किंचित्मात्र भी स्मरण करनेते यत्नविना सबको शीघ्रही हाजिर हजूर होताहै ताते ऐसे कृपालुदेवका पुरुषोंने श्रद्धापूर्वक अवश्य मेव पूजनकरना क्या अवश्यमेव आप सहित सर्वको अस्ति भाति प्रियरूप देवको जानना पराशरनेकहा हे मैत्रेय तू अपना अनुभव कहो तुझको क्या निश्चय है मैत्रेयने कहा श्रोत्रादिक इंद्रिय अध्यात्म तथा चक्षु आदिक इंद्रियोंके सूर्य्यादिक देवता अधिदैव तथा तिन चक्षुआदिक इंद्रियोंके रूपादिक विषय अधिभूत रूप संघात है सो मैं नहीं काहेते मायारूप पंचभूतोंते इससंघात की उत्पत्ति होनेते इसीते जड़ है तथा क्षणभंगुर है इसीते अनित्य है यह आप अपने कार्य में प्रवृत्ति निवृत्ति करतेहुये भी आपको तथा परको तथा अपने कार्य्यको तथा अपने प्रकाशकको जानतेनहीं इसीते जड़ हैं एकरस नहीं रहते इसीते अनित्य हैं देश काल वस्तु भेदवाले हैं इसीते दुःखरूप हैं अन्यकी सहायता विना जो सत् चित् आनंद रूप प्रत्यक् आत्मा पूर्वोक्त त्रिपुटीको प्रकाश नाम अनुभव करनेवाला है सोई स्वयंप्रकाश हमारा स्वरूप है जैसे दीपक कर घट पटादिक पदार्थ भासते हैं तैसे अंतर मुझ चैतन्य अनुभवकरही सुख दुःखादि सर्वपदार्थ भासते हैं जो मैं इनको नहींप्रकाशों तो इन सुख दुःखादिकों का व्यौरा कैसे होवे काहेते मुझ नित्य सुख चिदरूप आत्माते भिन्न मनादिकों को जड़ होनेते ताते व्यवहारक जाग्रत सत घट पटादि तथा प्रतिभासक असत स्वप्न रज्जु सर्पादि भावाभाव पदार्थों को मैं चैतन्य तुल्यही प्रकाशताहों मुझको पक्षपात नहीं जैसे इंद्रजाल कर रचित जलसंयुक्त असत् घट विषे तथा साक्षात् सतघटविषे सूर्य्यका प्रतिबिंब समही पड़ता है न्यूनाधिक भावनहीं तथा जैसे सूर्य मृगतृष्णाके जलको तथा गंगादिजलको समहीं प्रकाशता है तैसे मैं चिद्घन देव जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुरीया समाधि आदि सर्व पदार्थोंको समहीं अनुभव कर्ता हों जैसे स्वप्नके सत असत पदार्थोंको स्वप्नद्रष्टाही प्रकाशकर्ता है अब मैं विषय इंद्रियके संयोग वियोग विषे संघात विषे अहंकार पूर्वक जैसे मैं सुख दुःख पाताथा तथा तपायमान होता था तथा हर्ष शोककर्ता था भ्रमकर सो अब मेरे शांत होगये हैं काहेते भ्रमरूप संघातविषे अज्ञान पूर्वक अहंकारका अभाव होनेते अब मैं चैतन्य मनके

फुरनेरूप विक्षेप ते तथा मनके अफुर्णे रूप समाधि ते असंग हों यह मैं हों यह मैं नहीं यह पर है यह अपर है यह मेरा है यह नहीं यह मेरा शत्रु है यह मेरा मित्र है यह उदासीन है यह मुझ अस्ति भाति प्रियरूप सर्वात्मा में भ्रमरूप मनकी कल्पना थी सो अब शांत होगई है यह दृश्य आदि अंत मध्य एक रस नहीं इसीते मिथ्या है मैं चैतन्य आदि अंत मध्य एक रस हों इसीते सत हों पावने योग पद मैंने पाया है अब मैं जीवताही मृतक भया हों अरु मृतक हुआही जीवता हों अब मैं स्वराज भया हों सम शांत सुखरूप मैं पूर्वभी था अबभी मैं हों परंतु मध्यमें भ्रांतिकर औरका और जानता था सो भ्रांति मेरी दूर हुई है पूर्ववत् सोभायमान भया हों अब मैं अस्ति भाति प्रियरूप आत्मा किस नाम रूप पदार्थकी इच्छा करों अप्राप्त वस्तुकी इच्छा होती है मैं आगेही सर्वमें प्राप्त हों वा मुझको सर्व प्राप्त हैं हेयोपादेय फाँसी ते मैं रहित भयाहों ताते मैं अमृतरूप हों जो हेयोपादेय बुद्धि सहित है सो जीवताही मृतक है बुलाये खेंचे बिना मैं सर्वको प्राप्त होता हों सर्व व्यवहार राजसी तामसी सात्विकी इस संघातसे कर्ता हुआ भी अकर्ता निर्लेप हों अरु सर्व संघातकी मैं चैतन्यही चेष्टा कराता हों जैसे वायु सर्व वृक्षोंकी चेष्टा कराता है जैसे आकाश मुष्टीमें नहीं आता तथा दीपककी प्रभा बांधनेमें नहीं आती तैसे मैं कालकाभी आत्मा कालकर नष्ट नहीं होता उलटा कालकी उत्पत्ति लीनता मुझ चैतन्यसेही होती है जो जावे सो जावे अरु जो आवे सो आवे न मुझको सुखकी इच्छा है न दुःखकी इच्छा है काहेते अज्ञानपूर्वक अहंकाररूप देहमें पिशाच था सो सम्यक् आत्म बोधरूप मंत्रकर शांत होगया है तथा तिस अहंकारके कर्तृत्व भोक्तृ-त्व पुत्ररूप कार्यभी शांत हुये हैं अब मैं चैतन्य सर्वकर्ताभी अकर्ता हों स्वप्नदृष्टावत् आत्मा अल्प बुलानेसेभी प्रत्यक्ष होता है काहेते अपना आप होने ते जैसे अपना शरीर भांगादि निमित्तसे भूल जावे पुनः स्मरण होवे चिरकाल बांधवके मिलेने की न्याई जैसे अपना शरीर मानो अल्प बुलाने में प्रगट होता है तैसे मैं बुद्धि आदिकों का साक्षी आत्मा सर्व नामरूप देह मनादि पदार्थों विषे व्यापक हों जैसे मिरच विषे तीक्ष्णता व्यापक होती है जैसे चंद्रमा विषे तथा बरफ विषे शुक्लता शीतलता व्यापक होती है

जो पावनाथा तथा जो जानना था तथा जो देखना था तथा जहां पहुँचनाथा तथा जो जो बंध मोक्ष वास्ते कर्तव्य करना था तथा जिसका अंतकरना था तथा जिसवास्ते कर्म उपासना तथा श्रवण मनन निदिध्यासन समाधि आदि करने थे तथा जो भ्रमकी निवृत्ति करनीथी तथा जो जन्म मरन रूपी भयको दूर कर निर्भय होना था तथा जो मनुष्य शरीर की स्फलता कर्णीथी तथा जो कछु भोगोंकी सीमाको भोगना था सो सर्व हो चुका है तथा धर्म अर्थ काम मोक्ष जो होने थे सो सर्व हो चुके हैं अब हम सर्व कामों से निपट कर पांउ पसार कर निश्चिंत सोवेंगे मुझ चैतन्यको समाधि असमाधि समहै जैसे स्वप्नद्रष्टाको स्वप्ननरोंकी समाधि असमाधि समहै पुनः मैत्रेयने कहा हे गुरु कल्पतरु तथा कामधेनु गौ स्वर्ग में बोलते हैं जो स्वर्ग मे कल्पतरु तथा कामधेनु गौ होवें तो पुण्यों की न्यूनाधिकके अनुसार सुखोंकी तारतम्यता होती है सर्व जीव अधिक सुखकी इच्छा करे हैं ताते न्यून सुख वाले देवता इंद्रादिकोंके ऐश्वर्य की कल्पतरुके नीचे इच्छा करैंगे तथा इंद्र ब्रह्माके ऐश्वर्य्य की इच्छा करैगा त्योंही तिनका संकल्प भी सिद्ध होना चाहिये जो सिद्ध न होगा तो कल्पतरु का महत्व जो शास्त्रोंने कथन कराहै सो असंगत होगा अरु यह बात विद्वानोंके अनुभव में जचे नहीं जो तिनका संकल्प सिद्ध होगा तो कर्मों की व्यवस्था विगड जावेगी जो कहो कल्पतरु के पास कोई देवतादि जाने नहीं पाता तो कल्पतरु निकम्माही हुआ पराशरने कहा हे मैत्रेय कल्पतरु नाम है शुद्ध मनका शुद्ध मनमें जो इच्छा होती है सोई पुरुषको पूर्ण होती है सिद्ध योगीवत् वा सम्यक् अपने स्वरूपका अपरोक्षबोधहीं कल्पतरु कामधेनु गौ है जिसकी प्राप्ति से सर्व कामनाकी पूर्णता वा सर्व कामनाकी कल्पतरु सहित सर्व जगत् की निवृत्तिता फल पुरुषको प्राप्त होता है वा सम्यक् संतोष विचार पूर्वक स्वधर्मानुष्ठान रूप तपहीं कल्पतरु है अन्यनहीं वा कल्पतरुके फल अरु फूल अन्य वृक्षों ते अति मधुर सुगंधीवान होवेंगे तथा तिसकी आकृति अन्य वृक्षोंसे सुंदर होगी यही तिस में विलक्षणता है अन्य नहीं तथा कामधेनु गऊ अन्य गऊसे सुंदर स्वभाववाली तथा सुंदर आकृति दूधको अधिक देने वाली होगी मैत्रेय-

ने कहा दुःख रूप संसार बंध की निवृत्ति अरु परम सुखरूप मोक्षकी प्राप्तिका प्रधान साधन कौन है पराशरने कहा हे मैत्रेय सम्यक् अपरोक्ष सत् चित् आनंद स्वरूप निरावर्ण शम दमादिक साधन पूर्वक् निजात्म बोधही प्रधान साधनहै अन्य शमादिक साधन नहीं और शम दम समाधि प्राणायामादि तथा कर्म उपासनादि अनेक साधन निजात्मबोधकी उत्पत्ति वास्तेहैं जैसे अंधकारमें चिंतामणि पड़ी होवे परंतु मणिकी प्राप्तिवास्ते अरु अपने भयादि कार्य सहित अंधकारकी निवृत्ति वास्ते केवल दीपककाचसानाहीं है अन्य जपतपादि साधन नहीं परंतु दीपकके चसानेके अनेक साधनहैं जैसे काष्ठादि भोजनकी सिद्धी वास्ते अनेक साधन हैं भी परंतु प्रधान अग्निही साधनहै हे मैत्रेय जैसे सूर्य्य बादलोंकर पुरुषोंको ढका प्रतीत होताहै अरु किसी रीतिसे बादलोंके दूर होनेसे सूर्य स्वयंप्रकाश कर पुरुषको स्फुरण होताहै तैसे अज्ञान रूपी बादल दूर होनेसे आत्मा स्वयंज्योति रूप कर तुझको प्रतीत होवेगा हे मैत्रेय जैसे प्रतिबिंबको घट जल संबंधी निज विक्षेपोंके दूर करनेवास्ते अरु निर्विकार निज भावकी प्राप्ति वास्ते निज बिंब स्वरूपका सम्यक् जाननाहीं प्रधान साधनहै अन्य नहीं जैसे वायु करके विक्षेपवान जो तरंगहै तिसके विक्षेपकी तथा गमना गमन रूप जन्म मरनकी निवृत्ति अरु अगाध समुद्रकी प्राप्तिका प्रधान साधन मधुरता शीतलता द्रवतारूप निज जल स्वरूपका सम्यक् जाननाहै वा जैसे स्वप्ननरोंको स्वप्न क्लेश रूप जन्म मरणादि दुःखोंकी निवृत्तिवास्ते तथा सुखकी प्राप्तिवास्ते निज स्वरूप स्वप्नद्रष्टाका सम्यक् जाननाहीं प्रधान साधनहै अन्य नहीं हे मैत्रेय सत् चित् आनंद स्वरूप निजात्माको अज्ञान कर असत जड़ दुःखरूप आपको मानताहै अरु ज्ञानकर अज्ञान तत्कार्य्यकी निवृत्ति नाम मिथ्यत्व वा अभाव निश्चय होतेही कतकरेणुवत पीछे ज्ञानकी निवृत्ति नाम मिथ्यत्व वा अभाव निश्चय होताहै हे मैत्रेय सच्चिदानंदरूप आत्माते जो पृथक् प्रतीति होताहै सो जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति मरन समाधि आदि सर्व प्रपंच स्वप्न भ्रांति रूपहै स्वस्वरूप अज्ञान कालमेंही भ्रांतिके विषय जाग्रतादि पदार्थ सत्यवत् नाम जाग्रतवत् भान होतेहैं सम्यक् अपरोक्ष अस्ति भाति प्रियरूप निजा-

177

त्माका बोधरूप जाग्रतके होयां नामरूप स्वप्न प्रपंचका अत्यंत असत् हो जावेगा हे मैत्रेय स्वप्न प्रपंच प्रतीति होतेभी स्वप्नद्रष्टा निर्विकारहै जैसे स्वर्णमें नामरूप भूषण प्रतीति होतेभी केवल कहनमात्रहै तैसे अस्ति भाति प्रियरूप आत्मामें नामरूप जगत् प्रतीति होताभी कहनमात्रहै हे मैत्रेय इस संघात कायारूप काशीमें तू प्रत्यक् चैतन्य इस देहरूप काशीका प्रकाशक विश्वेश्वर बंध मोक्षते रहित कांशी प्रकाशकहै अरु इस क्षेत्र रूप द्वारका का प्रकाशक तू साक्षी चैतन्य क्षेत्रज्ञ रूप कृष्ण है हे मैत्रेय गोकुल मथुरा वृंदावन द्वारकावत् सुषुप्ति स्वप्न जाग्रत तुरीय तुझ क्षेत्रज्ञ रूप कृष्णके क्रीडाके स्थान हैं तुरीय रूप वृंदावन में "सर्वं मिद महंच वासुदेवः" इसप्रकार सर्व वृत्तियां रूपी गोपी आप अपने संसारिक शब्दादि विषय रूप पतियोंको तथा विषयजन्य पुत्र रूपी सुखोंको त्यागकर तुम क्षेत्रज्ञ रूप कृष्णको ही आश्रयण कर्त्ती हैं वा विषय इंद्रियोंके संबंध रूप पतियोंको अरु विषयजन्य सुखरूपी पुत्रोंको त्यागकर वा विषय इंद्रिय संबंध रूप पतीते तथा अंतःकर्ण अविद्या रूप माता ते उत्पन्न भई जो वृत्तियां तिनमें जो सत् चित् आनंद रूप क्षेत्रज्ञ कृष्णका प्रतिबिंब रूप आभास सोई भये पति तिनको तथा विषय वा विषयजन्य सुख सोई भये पुत्र तिनको त्यागके नाम मिथ्या जानके तुझ क्षेत्रज्ञ कृष्णको प्राप्त होती हैं नाम "सर्वं मिदमहंच ब्रह्मैव" इस प्रकार सर्व तुझ क्षेत्रज्ञ ब्रह्मको ही विषय कर्ती हैं अरु तू क्षेत्रज्ञ कृष्ण तिन सर्व वृत्तियां रूप गोपियोंको प्रकाशता है यही रासक्रीडा है हे मैत्रेय इस पंचकोश रूप अनित्य जड दुःख रूप स्वभाव वाले संघात ते अविवेकी को नित्त सुख चिद रूप आत्मा भिन्न प्रतीत होता नहीं परंतु विवेकी भिन्न जानता है जैसे बालक तुश सहित तंदुलोंको तथा इक्षु रसको तथा दूध घृतको तथा जल दूधको तथा लवण जलको तथा देहि देहको तथा प्रकाश प्रकाशकको तथा आत्मा नात्मादिक पदार्थोंको एक रूप जानता है परंतु विवेकी बुद्धिमान भिन्न भिन्न स्वभाव वाले पदार्थोंको एक रूप प्रतीति होते हुये भी एक रूप नहीं मानते ताते तू हे मैत्रेय बुद्धिमान हो मूर्ख मतहो जैसे लालादि पुष्पोंके संबंधसे स्फटिकमणि लालादिरूप प्रतीति होतीहुई भी

विवेकी लालादि रंगरहित केवल शुद्ध स्फटिकमणि जाने है अरु अविवेकी लालादि रंगों सहित जाने है जैसे लालादि रंग रूप वस्त्र भासता भी है परंतु विवेकी वास्तवते शुद्ध वस्त्रमें लालादि रंग आगंतुक देखता है सत नहीं जैसे जल लवणादि अनेक रूप भान होताभी वास्तवते विवेकीकी दृष्टीसे शुद्ध शुक्क रूप है तैसे पंचकोश रूप तीन शरीर रूप आत्मा प्रतीति होताभीहै परंतु विवेकी वास्तवते अपने आत्मस्वरूपको असंग निर्विकार निर्विकल्प जन्मादि विकार रहित स्वभावसे ही जानता है अविवेकी ऐसे नहीं जानता इसीते जन्मता मर्ता है हे मैत्रेय आत्मा भिन्न भिन्न जो प्रतीत होताहै सो उपाधिते प्रतीत होताहै वास्तवते नहीं आकाशवत् हे मैत्रेय अस्ति भाति प्रिय रूप आत्मा सर्वत्र व्यापक है भी परंतु जहां स्पष्ट अंतःकर्ण होताहै तहां ही सत् चित् आनंद साक्षी विशेष रूप करके भान होता है तहां हीं इस जड संघातकी चेष्टा होती है जैसे उष्णता प्रकाशकता दाहकता सूर्य्यरूपता सर्वत्र व्यापक है भी परन्तु जहां दर्पणादि स्वच्छपदार्थ होते हैं तहां सर्वलोगोंको प्रसिद्ध एक आभास दूसरा समान (तेज) द्विगुण प्रकाश होता है हे मैत्रेय जैसे राजाका हुक्म अपनी सर्व प्रजाके ऊपर होता है तथा राजा प्रजासे भिन्नही होता है तैसेही देह इंद्रिय मनादि जड़ प्रजाको यह साक्षी आत्माही अपनी महिमा में स्थित हुआ हुआ निज सत्ता स्फूर्ति देकरही चेष्टा करावे है तथां आत्मा देह इंद्रिय मनादि प्रजाते भिन्न है तथा देह इंद्रिय मनादि प्रजाके कर्त्तव्यों ते अकर्त्तव्य है जैसे चन्द्रमा बादलोंके चलनेसे चलता बालकोंको प्रतीतहोता है परन्तु विवेकीकी दृष्टिसे चन्द्रमा अचल है हे मैत्रेय यावत्मात्र मन वाणी का गोचर नाम रूप प्रपंच है तथा सुख दुःख है सो सर्व मनोमात्र है काहेते जब मन सुषुप्तिमें लीनहोता है तब सर्व नाम रूप प्रपंचकी लेशभी नहीं पाती जो प्रपंच मनोमात्र न होता तो सुषुप्ति में प्रतीतहोता अरु प्रतीतहोता नहीं ताते मनोमात्रही कल्पना है आत्मातो सर्वदा एकरस सुषुप्तिमें भी है परन्तु सुख दुःख रूप प्रपंच नहीं ताते यह सिद्धहुआ कि आत्मा सुख दुःख रूप प्रपंच ते रहित निर्विकार है हे मैत्रेय नामरूपसंसार को दधिरूप जानो मनको मंथारूप जानो ब्रह्माकारवृत्तिको रज्जुरूप जानो अरु सत् चित् आनंद निजरूप प्रत्यक् आत्मा को घृतरूप जानो

इसप्रकार अभ्यास करते करते तुझको अपनास्वरूप साक्षात्कारहोगा पुनः नाम रूप प्रपंच रूप छाँछ में तू प्रत्यक् चैतन्यरूप माखन पड़ाभी कदाचित्त भी एकरूप न होवेगा हे मैत्रेय जैसे भीती में वा खंभे में वा अन्यत्र कहीं वस्त्रादिकों में चित्रेलेने लिखी जो अनेक प्रकारकी मूर्त्तियां वशेश हैं सो यद्यपि मूर्खोंको मूर्त्तिही सन्मुख दीखती हैं थंभ भीती वस्त्रादि आधार सन्मुख नहींदीखता परन्तु विचारें तो आधार दर्शन पूर्वकहीं सर्व मूर्त्तियों का दर्शन है जो आधारको अदृश्य माने अरु मूर्त्तियोंको प्रत्यक्ष माने तो दृष्ट विरोध है तथा विद्वानोंके अनुभव से विरुद्ध है तैसेही यह नाम रूप भूत भौतिक कारण कार्य्य रूप प्रपंच वा अंडज जरायुज स्वेदज उद्भिज रूप मूर्त्तियांहीं मनरूप चित्रेलेने अनंत चिद सुखरूप आत्मारूप आधार मेंही लिखी प्रत्यक्ष दीखती हैं अरु नित्य सुख चिद्रूप मूर्त्तियों के आधार परमेश्वरको अविवेकी दूर मानते हैं परन्तु यह नहीं जानते कि आधार दर्शन पूर्वकही इस नामरूप मूर्त्तियोंकी प्रतीतिहोती है अन्यथा नहीं तात्पर्य्य यह कि पहले आधारहोता है पीछे मूर्त्तियां लिखीजाती हैं यह नहीं कि आधारको परोक्षमाने अरु मूर्त्ति-योंको अपरोक्ष माने यह मूर्खों की दृष्टी है ताते आधारही अपरोक्ष है मूर्त्तियांनहीं जो मूर्त्तियों की अपरोक्ष प्रतीति होती है सो आधार दर्शन पूर्वकही प्रतीति होती है ताते आत्मा रूप आधार सर्व से पहले सिद्ध है हे मैत्रेय इसी पर एक कथा सुन एक समय मैं वन विषे विचरताथा तिस वन विषे एक महान अद्भुत बँगलाथा तिसमें बहुत तपस्वी सिद्ध बैठेथे अरु आपस में सिद्धाइयोंकी वातें कर्तेथे जो पूछें सिद्ध कौनथे सो पंच ज्ञानेंद्रिय पंचकर्मेंद्रिय पंचप्राण चतुष्टय अंतःकर्ण तथा पंच महाभूत तथा तीन सत्व रज तम गुण तथा देश कालादि अनेक प्रकारके भिन्न भिन्न स्वभावों वाले बैठेथे मैंने पूछा हे मित्रो तुम क्या कर्तेहो उन्होंने कहाकि इहाँ तप करके अपने अनंत चिद सत् रूप आत्म स्वरूपको सिद्ध कराहै वा कर्ते हैं वा करेंगे तिन्होंके मध्य में प्रथमे मैंने ज्ञानेंद्रियोंको कहाकि हे ज्ञानेंद्रियो तपस्वी सिद्धो तुम शब्द स्पर्श रूप रस गंधके अपरोक्ष सिद्ध करने के साधन हो तुम साधन द्वारा आत्माहीं शब्दादिकोंको सिद्धकर्ता है जैसे मंदिर वाहिर धरे पदार्थोंको मंदिर भीतर सचक्षु

पुरुषही वारीद्वारा अपरोक्ष सिद्धकर्ता है बारियां नहीं ताते तुमसे साक्षात् शब्दादि कभी अपरोक्ष नहीं हो सक्के तो आत्माको कैसे अपरोक्ष करोगे भला जो तुम किसी रीति से अपरोक्ष सिद्ध कर्तें हो तोभी शब्दादिकोंकोही अपरोक्ष सिद्ध कर्तें हो शब्दादि कों ते रहित जो अवाङ्मनसगोचर आत्मा है तिसको तुम कोटि जन्मों में कोटि तरहके तपसे कैसे जानोगे किंतु सर्वथा नहीं जानोगे जो आत्मा शब्दादि रूप होवे तो तुम जानो अन्यथा कैसे जानोगे तैसेही मैंने कहा हे कर्मेंद्रियो सिद्धो तुम तो प्रसिद्धहीं वाक् उच्चारण ग्रहण त्याग गमनागमन मल मूत्रका त्याग एता बन मात्रही व्यवहार सिद्ध कर सक्ते हो अन्य नहीं यह बात प्रसिद्ध है ताते तुम्हारा कहना भी निष्फल है जो हम आत्माको अपरोक्ष कर्तें हैं तैसेही मैंने प्राणोंको कहा हे प्राण अपान समान उदान व्यान सिद्धो तुमभी जड़ वायु होनेते श्वासो श्वासादिक ही प्रसिद्ध क्रिया कर्तें हो अन्य नहीं जो आत्मा श्वासों श्वासादिक क्रिया रूप होवे तो तुम आत्माको ग्रहण करो अन्यथा नहीं तैसेही मैंने चतुष्टय अंतःकर्ण से पूछा है हे मन बुद्धि चित्त अहंकार तपस्वी सिद्धो तुमभी संकल्प विकल्प निश्चय अनिश्चय चिंतन अचिंतन अहंपण तथा न अहंपण केवल इनहीको तुम सिद्ध करसक्के हो पूर्वोक्त संकल्पादिकों ते रहित जो नित्य सुख चिद रूप प्रत्यक् आत्मा है तिसको तुम कैसे सिद्ध करसक्के हो जो आत्मा संकल्पादि रूप होवे तो तुमसे ग्रहण होवे सो आत्मा संकल्पादिकों ते रहित है ताते तुम कोटि जन्मो में तपस्या करने से भी आत्मा को न सिद्ध कर सकोगे उलटा तुम अपने धर्मों सहित मनादि आत्मा करकेही सिद्ध होते हो तुम जड़ आपको तथा परको भी नहीं जानसक्के तो अन्यको कैसे सिद्ध करोगे ताते तुम संकल्पादिकों केही सिद्ध कर्तें हो अन्य को नहीं इसते तुम निष्फलही अहंकार कर्तें हो कि हम आत्मा जानते हैं हां तुम आत्माके साक्षात् करनेके साधन परंपरा हो यह वात तो ठीक है आत्माते तुम्हारी उत्पत्तिसे पहले सुषुप्तिमें स्वतःसिद्ध है तथा तुम्हारा सुषुप्तिमें लीन हुआ पीछे स्वतःसिद्ध है वर्तमानमें तुम्हारा साक्षी आत्मा हुआभी तुम नहीं जानते तो सुषुप्ति आदिकोंमें कैसे जानोगे हे मनादिको सिद्धो जैसे सूर्यही नेत्रोंमें

स्थित होकर अपने आपको देखता है तथा अन्य पदार्थोंकोभी प्रकाशता है नेत्र निमित्तकर जो नेत्रोंको सूर्य्यके देखनेकी ताकत होवे तो अंधकारमेभी किसी पदार्थको प्रकाशे किंतु नहीं प्रकाशता तैसे आत्माही तुम मनादिकों विषे स्थित होकर तुमकोभी तथा अन्य सर्व पदार्थोंको प्रकाशे है तथा तुमसेविनाभी सुषुप्तिमें तथा समाधिमें स्वयंप्रकाश रूपताकरके समाधि सुषुप्तिमें होनेवाले पदार्थोंको प्रकाशे है तैसेही मैं सत्वादि गुणोंको कहा हेसत्वादि गुणो तुम्हारी प्रवृत्ति निवृत्ति मनको हर्ष शोक कर्ता है तुम सर्वके द्रष्टा आत्माको तुम्हारा असर नहीं पहुँचता सत्वगुण होनेते चित्त विषे शम दमादि तथा जाग्रत अवस्थाकी प्रवृत्ति होती है रजोगुणके होनेते भोगादिकोंकी तथा स्वप्नअवस्थाकी कामना करके चित्त चंचल होता है तमोगुणके होनेते क्रोधादि पापकर्म करकें तथा सुषुप्ति अवस्थासे चित्त स्तब्धभावको प्राप्त होता है इत्यादि काम तुम गुण सिद्ध करसक्ते हो अन्य नहीं आत्मा पूर्वोक्त इन गुणों ते परे है ताते तुम्हारा कहना निष्फल है जो हम आत्माको अपरोक्ष सिद्ध करतें हैं तैसेही मैंने कहा हे पंचभूतो तुमभी मायाका कार्य्य हो तथा असत जड़ दुःखरूप हो तथा शब्द स्पर्श रूप रस गंध गुणोंवाले हो तथा तुम कार्य कारणरूप हो ताते माया ते परे तथा कार्य्य कारण भाव ते रहित निर्गुण प्रत्यक् आत्माको कैसे अपरोक्ष सिद्ध करसक्ते हो किंतु नहीं करसक्ते हो तैसेही मैंने अज्ञान सिद्धको कहा हे अवर्ण विक्षेप शक्तिवाले अज्ञान सिद्ध ज्ञान रूप प्रकाशते विलक्षण अज्ञान रूप अंधकार होता है प्रकाश स्वरूप आत्माके तू सन्मुखहीं नहीं होसक्ता तो आत्माका दर्शन कैसे करेगा उलटा तुम ज्ञान अज्ञान दोनो भाई आत्मा करकेही अपरोक्ष सिद्ध होते हो जो तुम दोनो आत्माको तथा पदार्थोंको निरावर्ण सर्व अपने कार्य मनकी तरफसे करसक्तेहो स्वयंप्रकाश आत्माकी तरफसे तो नहीं करसक्ते हो जैसे बादल मनुष्योंकी तर्फसे सूर्यको आच्छादन निरावर्ण करसक्ते हैं सूर्यकी तर्फसे नहीं ताते तुम्हारा वृथा अभिमानहै कि हम आत्माको अपरोक्ष सिद्ध करतें हैं तैसेही मैंने शब्दादिक गुणोंको कहा हे भूतोंके पुत्ररूप शब्दादिक गुणो जब तुम्हारे आप अपने आकाशादि पंच भूतरूप पिता तथा पंचभूतों का अज्ञान रूप परपिता तुम्हारा पितामह आत्माको

नहीं अपरोक्ष करेगा तुम कैसे करोगे किंतु नहीं करोगे ताते यह जगत् मूर्तियां भी अपरोक्ष सर्वके अनुभव सिद्ध हैं अरु इनका आधार अधिष्ठान रूप चिद सुख नित्य आत्मा भी अपरोक्ष ही मानना चाहिये हे मैत्रेय अनित्य जड दुःख रूप जो जाग्रत स्वप्न समाधि सुषुप्ति आदि कार्य कारण भाव नाम रूप चित्र रूप दृश्य प्रपंच में क्या स्थित होना है जिसमे यह भासमान चित्रहैं तिसी मे स्थित हो जो निर्भय होवें अन्यथा नहीं धन्य वही हैं जो शरीर कर तथा मनकर तथा वाणी कर व्यवहार कर्तें भी विचार से इस दृश्य रूप जगत्को साक्षीकी न्याई देखते हैं हे मैत्रेय जैसे भारवाही बैलादिक पशुओंको नफे टोटेका हर्ष शोक नहीं होता चाहे चंदन कस्तूरी स्वर्णादिक उत्तम पदार्थ लादो चाहे मलीन पदार्थ लादो तिसके अभिमानी पुरुष स्त्रियोंको नफे टोटेका हर्ष शोक होता है अभिमान रहित को हर्ष शोक नहीं तैसे मन इंद्रियादिक पशु शुभ कृत्यकरें अथवा अशुभकृत्यकरें यह अभिमान नहीं कर्तें अरु तू चिद सुख नित्य असंग अक्रिय आकाशकी न्याई आत्मा अभिमान क्यों कर्ताहै अभिमान कर्नें ते दुःख होगा हे मैत्रेय जैसे नगर मे कुम्हारके गधोंकी उत्पत्ति नाश में कुम्हार को ही सुख दुःख होताहै अभिमानी होने ते स्वमहिमा स्थित राजाको नहीं जो राजा हर्ष शोक करेगा तो मूर्ख बाजेगा तैसेही इस देह रूप नगर मे इंद्रिय रूपी गधोंके जन्म मृत्यु रूपी इष्ट अनिष्टकी प्राप्ति निवृत्ति में मन रूपी कुम्हार ही हर्ष शोक वालाहै तू सम्यक् विचार देख तू चैतन्य राजा स्वमहिमा में स्थित हर्ष शोक का भागी कहांहै जबर्दस्ती करे तो तेरी इच्छाहै ॥

इति पक्षपातरहित श्री अनुभवप्रकाशस्य षष्ठःसर्गः ॥ ६ ॥

मैत्रेयने कहा हे भगवत् अमायक निर्बैव आत्माते यह जगत् कैसे उत्पन्न होताहै कोई प्रत्यक्ष दृष्टांत कहिये पराशरने कहा हे मैत्रेय जैसे आकाश निरावैव पूर्णते वायु उत्पन्न होतीहै जानी नहीं जाती कि किस रीतिसे उत्पन्न हुईहै पुनः तिसीमें लीन होजातीहै और स्वप्नदृष्टाका दृष्टांत अनुभव सिद्धहै मैत्रेयने कहा मुझको शिष्यकरो पराशरने कहा शिष्य नाम सेवा करनेवालेकाहै सो इंद्रिय मनादि मुझकी सेवा कर्त्तें हैं इसीते मुझके शिष्यहैं मैत्रेयने कहा मुझको उपदेश करो पराशरने कहा उपदेष्टा और उपदेश और

उपदेश करनें योग्य त्रिपुटी मुझमें है नहीं काहेते उनका साक्षी होनेते परंतु उपदेश यहीहै जो जान आप सहित सर्व हरिहै उपदेश तो इसको वीथियोंके तृणभी कर रहेहैं सारग्राहीको॥संतनने तो उपदेशका गिरमिटही ले रक्खाहै संतविना उपदेश किसीको लगताभी नहीं काहेते निष्काम होनेते सर्व बातोंका सार निकासके यथार्थ उपदेश कर्ते हैं इसी पर एक कथा सुन स्थूल समष्टी अभिमानी वैराट् भगवान व्यष्टी अभिमानी विश्व नाम जीवको उपदेश कर्ता भयाहै वा प्रतिबिंबी रूप जीवको बिंब रूप ईश्वर उपदेश कर्ता भया तिस स्थानमें संत आप अपना पक्षपात रहित संभाषण भी कर्ते भये हैं विश्वने कहा हे भगवन् आपके हजारों शीश हस्त पादादि अवैव शास्त्रमें तुम्हारे कहे हैं औ यह मनुष्य व्यक्ति तुम्हारी हमारी एक सरीखी है इसके तो हजारों हस्त पादादि अवैव तो बन सक्ते नहीं जो तुमको आकाशवत् निरावैव पूर्ण माने तोभी अवैव बन सक्ते नहीं औ जो स्थूल ब्रह्मांड रूप तुम अपना शरीर कहो तो शीश आपका आकाश पाद पाताल अग्नि मुख दशो दिशा भुजा इत्यादि तुम्हारे अवैवोंका शास्त्र वर्णन करेहैं सो भावना मात्र चित्तके ठहराने वास्ते प्रतीक् उपासना है कोई विचारे तो अवैव मालूम नहीं होते जो माने तो अग्नि पातालादियोंते प्रजाकी उत्पत्ति हमको नहीं प्रतीति होती सर्व वैराट् रूप वैश्वानर कहा हे विश्व जैसे तुम इस देहके देही हो तैसे मैं ब्रह्मांड रूप देहका देही हूं अनंत जीवोंका समुदाय रूप ही ब्रह्मांड है जो तुम्हारे अनंत व्यष्टी जीवोंके हस्त पादादि अवैवहैं सो सर्व मेरे अवैव हैं जैसे एक एक वृक्षके अवैवों सहित अवैवीका वृक्षाकाश अभिमानीके जो अवैवहैं सोई सर्व वनाकाश अभिमानीके अवैवहैं जैसे स्वप्नमें जो व्यष्टी स्वप्ननरोंके हस्त पादादि अवैव हैं सोई सर्व अवैव समष्टी वैराट् स्वप्नद्रष्टाकेहैं अन्य कोई व्यवस्थाहै नहीं जैसे स्वप्नमें चार वर्णाश्रम तथा वेद पदार्थ प्रतीति होते हैं परंतु विना हुये पदार्थका ज्ञान होता नहीं काहेते पदार्थको अपने ज्ञानमें निमित्त कारण होनेते औ जाग्रतके वर्णाश्रम तथा वेद स्वप्नमें हैं नहीं काहेते जो जाग्रतमें देश काल वस्तुहै सो स्वप्नमें तिसते देश काल वस्तु विलक्षणहै ताते स्वप्नमें किसी रीतिसे सत वा मिथ्या नवीन वर्णाश्रम वेद उत्पत्ति होते हैं सो तुम विचार देखो स्वप्नके वैराट्

स्वप्नद्रष्टाके किस अवैवसे किस वर्णाश्रम औ वेदकी उत्पत्ति माने सो तुमही पक्षपात रहित विचार कर कहो यह सर्वके अनुभवकी बातहै काहेते जो स्वप्नमें स्वप्ननरोंके मुख हस्त ऊरू पादादि अवैव हैं सोई अवैव स्वप्न वैराट् स्वप्नद्रष्टाके हैं औ जो हिंदू समाजके सर्व शास्त्र अनुकूल वर्णाश्रमकी उत्पत्ति माने भीतो "ब्राह्मणोस्यमुखमासीत" ब्राह्मण इसका मुख है नाम प्रधान है पंचमीके अभाव होनेते उत्पत्ति नहीं बनती तैसेही राजन्यादि पदोंका अर्थ भी जानलेना जैसे स्वप्नमें वर्णाश्रम तथा वेदादिपदार्थोंकी उत्पत्ति माने तो स्वप्ननरोंके देहमें मुखादि अवैवोंसे हीं वर्णाश्रमकी उत्पत्ति माननी होवेगी काहेते स्वप्नद्रष्टाको निरावैव होनेते तिसको मुखादि अवैव बनते नहीं औ शब्दादि लेन देनादि क्रियागुण विना और किसी वर्णाश्रमकी तो उत्पत्ति मुखादि अवैवोंसे देखनेमें आतीनहीं दृष्टकल्पनाके अनुकूलहीं अदृष्टकल्पना करीजाती है अन्यथा नहीं करीजाती औ शास्त्र में भी समष्टी व्यष्टीकी सर्वप्रकार से व्यवस्था तुल्यकही है जो पिंडे सोई ब्रह्मंडे जो खोजे सो पावे ताते व्यष्टीके दृष्टांतसे समष्टी वैराट्में दार्ष्टांत जोड़लेना इसवास्ते पक्षपातरहित धर्मात्मा सत्यवक्ता पुरुषों ने बेटी पंगती लेन देनरूपी व्यवहारकी सुखपूर्वक सिद्धिके लिये तथा संकरवर्णकी निवृत्तिके लिये तथा धर्मके न्यूनाधिककी उत्कर्षता औ अधर्मकी न्यूनाधिककी अपकर्षताके लिये तत् तत् धर्माधर्म संबंधी पुरुषोंकी सात्विकी राजसी तामसी स्वभावोंके अनुसार उत्तम मध्यम निकृष्ट अधम चारप्रकारकी संज्ञा ईश्वरने वा पूर्वोक्त सज्जन पुरुषोंने बाँधीहै हां मनके चिंतन पूर्वक अरु मुखसे शब्दउच्चारण पूर्वकही उत्तमादि संज्ञा कल्पना करीजाती है इसते मुखादि अवैवोंते वर्णाश्रमकी उत्पत्ति कही है नहींतो और किसीभी समाजके शास्त्रोंमें ईश्वरके मुखादि अवैवोंते वर्णाश्रमरूप जगत्की उत्पत्ति नहींकहीं हां ईश्वरकी इच्छाते जगत्की उत्पत्ति बनती है अरु सर्वशास्त्रों में कही भी है सो इच्छा अन्तष्कर्ण में है मुख में नहीं वा इच्छा माया में है ताते सर्व सम्मत सिद्धांतही ठीकहोता है ईश्वरके मुखादि अवैवोंते वर्णाश्रम रूप जगत्की उत्पत्ति सर्वसंमत सिद्धांत नहीं किंतु आप अपने घरके सिद्धांत थापनाकरे हैं किसको सतकहें किस

को असत कहें समाज अनुसारी शास्त्रोंमध्ये अनादिपक्ष माननेवालों में तो वर्णाश्रमरूप जगत्की उत्पत्ति ईश्वरते वा जीवते वनतीही नहीं सादिमें बनेहै सोभी मुखादि अवैव देहमेही बनेहैं देही में वनतेनहीं देहीको निरावैव होनेते तैसे ईश्वर देहीकी यहकार्य्य कारण रूप माया देह है सो मायाके सत्व रज तमादि मुखादि अवैववत् अवैव हैं सो मायाके सत्वादि गुण रूप मुखादि अवैवों की प्रधानता अप्रधानताते तत् तत् संबंधी पुरुषों की भी प्रधानता अप्रधानता संज्ञा करीगई है सो अदृष्ट वा संगतके प्रतापते सात्विकी ते तामसी राजसी होता है तामसी ते राजसी सात्विकी होता है मायारूप उपाधिके धर्म माया उपहत ईश्वर में वर्त्तते हैं इसते ईश्वरके मुखादि अवैवों से वर्णाश्रम रूप जगत्की उत्पत्ति कही है अन्यथा कहेंगे तो निरावैव पूर्ण आकाशवत् ईश्वरके कौन मुखादि अवैवहैं किंतु कोई नहीं जैसे निरावैव पूर्ण आकाशके किस अवैवते वायु उत्पन्न होतीहै तद्वतहीं ईश्वरभी निरावैव पूर्ण सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै तिसके मुखादि अवैव वनते नहीं जो ईश्वरको सगुण मानो वा निर्गुण मानो तो पूर्व कही व्यवस्थाही ठीक मालूम देतीहै आगे ईश्वर जाने क्या तदबीरहै परंतु उत्तमादि व्यवहार देश काल वस्तुओंमें देखनेमें आताहै क्या जाने यह उत्तमादि व्यवहार ईश्वरने स्थापन कराहै वा जीवोंने कराहै वा अनादिहै वा सादि है परंतु यहभी देखनेमें आताहै कि देश काल वस्तुओंमे उत्तमादि व्यवहार तत् तत् देशनिवासी पुरुषोंने कराहै वा आप अपनेसमाजिक पुरुषोंने सर्व देश काल वस्तुओंमें उत्तमादि व्यवहार स्थापन कराहै काहेते जिन देश काल वस्तुमे हमारे समाजिक पुरुषोंने उत्तमादि व्यवहार कराहै सो अन्य समाजिक पुरुषोंने नहीं करा जो अन्य समाजिक पुरुषोंने जिन २ देश काल वस्तुओंमे उत्तमादि व्यवहार कराहै सो हमारे समाजिक पुरुषोंने नहीं करा इसी रीतिसे सर्वमे जान लेना इस रीतिसे सर्व देश काल वस्तुओंमे उत्तमादि व्यवहार जीवोंने मनके चिंतन पूर्वक वाणीसे बांधाहै परंतु सत संभाषणादियोंकी न्यूनाधिक प्रयुक्त उत्तमादि व्यवहार सर्व देशमें सर्व समाजोंमे समहै इसी रीतिसे तो सर्व वर्णाश्रमोंकी उत्पत्ति मुखसेही वनसक्तीहै इन उत्तमादि पुरुषोंकेही पर्याय शब्द ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र संज्ञा हैं और इनहीं पुरुषोंमें हिंदुओंके

समाजमें गृहस्थ प्रथम विद्या पढ़ने तक ब्रह्मचर्य रखनेते ब्रह्मचारी संज्ञा औ पुनः गृहस्थ करनेते गृहस्थी संज्ञा और वनमें तप करनेते वानप्रस्थ संज्ञा और सर्वको त्याग करनेते संन्यस्त संज्ञा बांधीहै यह चार वर्णाश्रमोंकी संज्ञा सर्व देशों विलायतोंमें आप अपने समाजमें मुसलमान औ अंगरेजादि अच्छे पुरुषोंने निज निज देश भाषाके अनुसार कल्पना करी हुईहै परंतु नामांतरका भेदहै स्वरूपसे भेद नहीं और आप अपने समाजमें बेटी पंगती खान पानादि व्यवहार भिन्न भिन्न करनेसे वा एकमेक करनेसे तो उत्तमादि संज्ञा पुरुषोंको प्राप्त नहीं होती किंतु उत्तमादि संज्ञा तो गुणों प्रयुक्तहै जाती समाजके अनुसार उत्तमादि संज्ञा नहीं प्राप्त होती किंतु धर्म अधर्मकी उतकर्षता अपकर्षताके अधीन है यह नहीं कि ब्राह्मणसे क्षत्रिय नीच है औ क्षत्रियसे वैश्य नीच है औ वैश्यसे शूद्र नीच है सो नहीं किंतु नीच कर्म कर्नेसे नीच कहाता है ऊंच कर्तव्य करनेसे ऊंच कहाता है भले बुरे कर्तव्यके अधीनसे ऊंच नीच हो जाता है नीच ऊंच होजाता है यह प्रकरण शास्त्रोंमें भी लिखाहै औ प्रत्यक्ष देखने में भी आताहै औ सर्व पुरुषतो एक कामको नहीं करसक्ते औ सर्व कामोंको एक पुरुष भी नहीं करसक्ता ताते अनेकही काम हैं अनेकही पुरुष हैं इसवास्ते जुदे २ कामोंके अनुसारी पुरुषोंकी जुदी जुदी संज्ञा बांधे विना व्यवहार सुख पूर्वक सिद्ध होता नहीं इसवास्ते शास्त्र अध्ययन पूर्वक तथा शास्त्रोक्त कामोंके अनुष्ठान पूर्वक पक्षपात रहित औ अमर्यादा बाहर लोभरहित उपदेशक पुरुषोंको ब्राह्मण संज्ञा करी गई है काहेते पक्षपात रहित उपदेशक पुरुषोंविना प्रजाके कल्याणकी उन्नत्ति नहीं होती वैसेही पक्षपात रहित धर्म पूर्वक युद्धमें उत्साही तथा अदालती प्रजापालक पुरुषोंकी क्षत्रिय संज्ञा करीहै काहेते ऐसे शूरमों विना प्रजाका कल्याण होता नहीं काहेते प्रजाको चौरादि लूटलेवें औ व्यापार कर धन संग्रह करनेकी जिन पुरुषोंकी बुद्धिहै तिनकी वैश्यसंज्ञा करीगई है इन विना भी प्रजाका कल्याण नहीं होता काहेते अन्य देशकी वस्तुओंको इस देशमें इस देशकी वस्तुओंको अन्य देशमें लेजाने विना प्रजा सुखी नहीं होती तैसे ही काष्ठ, लोहे, कपडे, दर्जी धोबी, नाई, सोनी, आदि जो पूर्वोक्त तीन बुद्धि रहित तिनकी शूद्र संज्ञा करीगई है इन विना प्रजाका कल्याण नहीं होता काहेते

182

मकानादियों विना प्रजाको सुख कैसे होगा किंतु नहीं होगा इन मध्ये जो नीच कामोंको करेगा सो नीच होगा अन्यथा नहीं जीवोंके जीवन वास्ते काम अनंत है धर्मपूर्वक तिन कामोंको कर्नेते नीच नहीं होता जो जाति वा समाज नीच हो तो जज्जके वेटेको जज्जी अधिकार लायकी विना मिलना चाहिये पंडितके वेटेको पढ़े विना पांडित्यताका अधिकार नहीं मिलता ताते कर्महो प्रधानहै इसीवास्ते "स्वस्वकर्मन्यभीरता सं सिद्धीलभ्यते नरः" आप अपने धर्म पूर्वक नाम सचावट पूर्वक व्यवहार कर्ते अंतष्कर्ण की शुद्धी सर्व जीवोंकी होती है औ इन में कोई नीच होता तो तिसके चित्तकी शुद्धी नहीं होनी चाहिये ताते कर्त्तव्योंके अधीनही उत्तमादि व्यवहार रखने ते प्रकाकी उन्नति तथा कल्याण होता है काहेते नीचकर्म करनेसे नीचपद मिलनेका भय होने ते ऊंच काम करने ते ऊंचपद मिलनेते इस संकेतसे सर्व जीव सर्व विद्यामें प्रपन्न शील रहते हैं आलसी नहीं होते आलसही बुद्धिकी क्षीणताका कारण है आलससेही सर्वकाम विगडते हैं एतेमें परशुराम आयकर बोले हे सद्सभा इन अधिकारी पुरुषोंको कामादि क्षत्रिय नाम शूमोंनें इक्कीस २१ को चारबार गनने ते चौरासी ८४ होता है सो चौरासीलक्ष योनियोंमें इन कामादियोंने अस्मदादि जीवोंको निक्षत्रायण नाम जीताथा सो अब माया ततकार्य ते परे नाम तिस माया तत्कार्यका सच्चिदानंद स्वरूपसे जो मनादियोंका साक्षी है सोई मेरा स्वरूप राम है इस दृढ निश्चयवान मुमुक्षु वा आत्मज्ञानीरूप परशुरामने अब कामादिक्षत्रिय नाम शूमोंको चौरासीलक्ष योनियोंमें जो शत्रु थे तिनका निक्षत्रायण कर्ता भया नाम जीतता भया है वा पूर्वोक्त लक्षणयुक्त जो मुमुक्षु परशुरामको ब्रह्मवेत्ता गुरुके इक्कीसवार नाम जाती विजाती स्वगत भेद रहित वा देशकाल वस्तु भेद रहित जो सच्चिदानंद ब्रह्म एक है सोई बुद्धि आदियोंका ईश नाम नियामक तू चैतन्य सत सुखरूप है इस नववार उपदेश ते मुमुक्षु निक्षत्रायण नाम अज्ञान ततकार्यका अत्यंताभाव वा मिथ्यत्व निश्चयकर्ता है यही अंतर परशुरामके निक्षत्रायणका अर्थ है पुनः दशरथके पुत्र राम आयकर सभामें बोले कि हे पक्षपात रहित सभा रामनाम है सर्व नाम रूप वाङ्मन सहित वाङ्मनसगोचर दृश्यमें जो अस्ति भाति प्रियरूप आत्मा रम रहा है

नाम पूर्ण होरहा है तिसका नाम राम है तिस अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष मनादियोंका साक्षी रामको जो अपना स्वरूप संशय रहित जानता है सोई योगी ज्ञानी है सो अज्ञानरूपी समुद्रको ज्ञानरूपी सेतु बनाके अज्ञान तत्कार्य जो काम क्रोधादि राक्षस तिनको स्वस्वरूप ते पृथक् सत्ताका अत्यंताभाव वा मिथ्यत्व निश्चयरूप धनुषसे मारकरके निष्कर्तव्यता बुद्धिरूप सीता सहित प्रारब्ध-रूपी पुष्पकविमानपर बैठकर इस संघातरूप अयोध्यामें जीवन मुक्तिरूपी तख्तमें स्थित होते हैं सोई पुरुष राम तुमने जानने पुनः राम कहते भये हे जगत् हितचिंतक सद्सभा सर्व स्त्रीमात्रमें प्रकृतिरूप सीताको भावना करे अरु सर्व पुरुषमात्रमें सच्चि दानंद आत्मा ब्रह्मराम भावना करे वा आप सहित सर्व स्थावर जंगम स्थूल सूक्ष्म मूर्ता मूर्ती नाम रूप जड़ चेतन सर्व सृष्टी में केवल सच्चिदानंद हरि भावना करे जो सर्व दर्शन हरि काही सर्व देश में सर्वकाल में सर्व वस्तुमें इनको होता रहेगा काहेते परो क्ष वा अपरोक्ष जड वा चैतन्य हस्त पादादि अवैवों सहित वैकुंठादि देशनिवासी वा इंद्यक (इस) लोक निवासी ब्रह्मा विष्णु शिव राम कृष्ण नरसिंहादि मूर्तियों में वा अन्य मूर्तियों में ईश्वर भाव वा देवभाव तुम्हारी भावना मेंहीं सिद्ध है नहीं तो तिन में निज ईश्वर भावकी स्फूर्ति नहीं कि हम में ईश्वर भाव करो वा न करो औ संघात औ संघातके सर्व धर्म सामग्री सर्व दृष्टमान प्राणी मात्र में समही होनेते तथा अंतर्यामी मन्नादियोंका साक्षी आत्मा भी सर्व संघातों मे समहीं होनेते घटादियोंमें आकाशवत् ताते माया तत्कार्यविषे जिस किसी व्यक्ती में ईश्वरभाव कल्पना है सो पुरुषकी भावनाके अधीन ईश्वरता है व्यक्ति के स्व रूप से नहीं सो माया में वा मायाके कार्य पंचभूत व्यक्तियों मध्ये किसी में भी ईश्वरताका अंगीकार है तो शास्त्र प्रमाण से केवल पुरुषकी भावनाके अधीन ईश्वरता है और कोई नियामक नहीं काहेते निर्गुण निराकार ईश्वरको ध्यान कर्त्ताका निजा त्मा होनेते ध्यान में आता नहीं जो ध्यान में आता है सो माया वा मायाका कोई न कोई कार्यही होवेगा इसवास्ते एक मूर्त्ति मेंभी ईश्वरता शास्त्र प्रमाण से भावनाके अधीन है औ सर्व सृष्टि में भी ईश्वरता शास्त्र प्रमाण से भावनाके अधीन है जो एक मूर्त्ति में शास्त्र

प्रमाण से ईश्वरभाव से पवित्रता मनकी होगी तो सर्व सृष्टी में शास्त्र प्रमाण से ईश्वरभाव से पवित्रता क्यों नहोगी किंतु तिसते भी अधिक होगी जैसे तुमको धातु पाषाणादि एक मूर्त्ति में ईश्वरभाव करके मंदिर में दर्शन कर्नें से पवित्र होता है तथा तिसकाल में तुम कोई भी असत संभाषणादि तथा काम क्रोध दंभ कपट द्रोहादि पाप कर्म नहीं कर्त्तें तैसे जब तुम स्थावर जंगमोंके देह रूपी मंदिरों मे शास्त्र प्रमाण से ईश्वर भाव करोगे एक तो तुमको पवित्रता की अत्यंत उत्पात्ति होगी दूसरा मन वाणी शरीर से किसी से भी तुम द्रोहादि तथा अनिष्ट संपादनादि नकरोगे जो द्रोहादि तुम किसी से करोगे तो तुम्हारा सांगोपांग सर्व में ईश्वर भावही नहीं सिद्धहोगा जो किसी एक दृढ़भावनामें गोलमाल कहोगे तो सर्व भावनामें गोलमालहोगा काहेते सर्वभावना में शास्त्र प्रमाणहोनेते तथा अंतःकर्ण का धर्मरूप होनेते समहीं है एक भावना माननी एक न माननी यह सिद्धांत घरके हैं भावनाके दृढ़ अदृढ़ का भेदहै स्वरूप से नहीं आगे जो इच्छा हो सोई कीजिये यह पक्षपातरहित रामके वचन सुनके सर्व सभाके लोग श्लाघा करते भये एते में कृष्ण आयकरबोले हे सर्वमें आत्मोपम् दर्शी अधिकारी जनो अज्ञान तत्कार्य मन्नादि यह संघात समष्टी व्यष्टी क्षेत्र है इस क्षेत्रके न्यूनाधिक भावाभावको तथा इसके धर्मोंको जो चैतन्य जानता है तिसकानाम क्षेत्रज्ञ है सो क्षेत्रज्ञहीं तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत्का स्वरूप है इस क्षेत्रज्ञ को अपना आप स्वरूप जाननेंते सर्व अत्यंत दुःखोंकी निवृत्ति होती है इस क्षेत्रज्ञ का और कोई क्षेत्रज्ञ है नहीं इसीते स्वयंप्रकाश स्वरूप है हे साधो जैसे कपड़ेकी गिरनी में एक अंजन से आगे हजारों कला जुदे जुदे कामकीं चलती हैं तैसे एक क्षेत्रज्ञ रूप अंजनकरके देहरूप गिरनी में इंद्रिय प्राण मन्नादि जुदी जुदी आप अपने कामकीं कला चलती हैं ताते हे सम्यक्दर्शी जनो यह स्वयंप्रकाश क्षेत्रज्ञहीं ब्रह्मा विष्णु शिवादियों का तथा तुम्हारा हमारा सर्व जगत् का स्वरूप है इसीके जानने से मोक्ष होती है एते में नरसिंह आयकर बोले हे सतसंभाषणादि दिव्य गुणवान् सज्जनलोगो अज्ञानरूप जीव हिरण्यकशिपुको जानो विषयबुद्धि तिसकी स्त्री जानो मोक्षरूप आत्म दृढ़ निश्चयरूप प्रह्लाद जानो काम क्रोध लोभ

वा सत्वादि तीनगुण वा जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति वा स्थूल सूक्ष्म कारण वा कायिक वाचिक मानसिक भिन्न भिन्न क्रिया वा पृथिवी अप तेज अध्यात्म आधिदैवक आधिभौतिक वा द्रष्टा दर्शन दृश्यादे त्रिपुटीरूप त्रिलोकीका राजा जीवरूप हिरण्य-कशिपु होता भया नाम इनका अभिमानी होता भया विषय इंद्रियके संबंध जन्य सुख को यज्ञ कहते हैं "यज्ञंवै विष्णु" पूर्ण वस्तुका नाम यज्ञ है भूमामेंही पूर्ण वस्तु सुखरूप है इसवास्ते सुखको यज्ञकहा है तिस यज्ञको जीवरूप हिरण्यकशिपु देहरूप स्वर्ग में सुख दुःखके अनुभवरूप भोगको भोगताभया नाम तिनके धर्मों में तदात्म अध्यास कर्त्ता भया निश्चय रूप प्रह्लाद सत्संगके प्रतापते विष्णु व्यापक चैतन्य जो जीवरूप प्रतिबिंबका स्वरूप बिंबहै तिसका भजन कर्ता था नाम अपना स्वरूप जानताथा परंतु सगुण भक्तिकी उत्कर्षता दिखलाने वास्ते सगुण मूर्तिका निश्चय कर्त्ताभया तात्पर्य्य यह कि अंतष्कर्ण रूप जलादियोंमें आत्मा रूप सूर्यका प्रतिबिंब पड़ताहै तिसका आगे दिवालरूपी इंद्रियादिकोंमेंभी पड़ताहै सो सर्व प्रतिबिंबादिकोंका स्वरूप चैतन्य आत्मा रूप बिंब सूर्यहीहै इस्ते प्रतिबिंब जीवरूप हिरण्यकशिपु रूप विद्वान अपने बिंब स्वरूप आत्म सूर्यको अपरोक्ष जानताहै और देहाध्यास रूप निश्चयको प्रह्लादके पढानेवाला पंडित जानना मोक्ष निश्चय प्रह्लाद रूप मुमुक्षु जीवरूप हिरण्यकशिपु रूप राजाते वा प्रारब्धसे वा कुसंगमे भया जो देहमें पीडारूप डंड तिससे मोक्ष निश्चय रूप प्रह्लाद न चलाय-मान् हुआ तथा इंद्रिय रूप दैत्योंने शब्दादि विषय लोभ रूप भय देनेसेभी चलायमान न हुआ तात्पर्य यह कि गुरु शास्त्र स्वअनुभवते भया यथार्थ निश्चयको मुमुक्षु जन अनेक भयानक रोचक वाक्य सुनके निश्चयको त्यागते नहीं वही मुमुक्षुताका दृढ़ निश्चय रूप प्रह्लादके प्रतापते अंतःकर्ण रूपी थंभेसे नृसिंह रूप बोध उत्पन्न हुआ तात्पर्य यह कि वीर्य औ नादी ते दो रकमकी सृष्टि होती है माता पिताके सकाशते वीर्यसृष्टी होतीहै और गुरुके सकाशते नादी सृष्टी होतीहै काहेते प्रथम अज्ञान कालमें मैं वर्णी आश्रमी हूं तथा मल मूत्रका शरीर रूपहीं मैंहूं तथा मैं सुखी दुःखी रूपहूं तथा मैं कर्ता भोक्ता जन्म मरण मानहूं तथा मैं गमनागमन वा

नहूं तथा बंध मोक्षवान् हूं तथा क्षुधा पिपासावान हूं इत्यादि देहाध्यासको लिये निश्चय होताहै अरु जो निश्चय अंतर दृढ़ होताहै सोही पुरुषका शरीर नाम स्वरूप होताहै अंत वही रूप होताहै औ कदाचित्त पूर्व संचित पुण्योंके वशते सतगुरूके उपदेशके सकाशते पुनः यह निश्चय होताहै कि यह अज्ञान तत्कार्य असत जड़ दुःख रूप जो समष्टी व्यष्टी संघात रूप स्थूल सूक्ष्म कारण जो देहहै सो देह रूप संघात अपने धर्मों सहित में नहीं औ मेरा नहीं यह पंचभूत रूपहै वा माया रूपहै औ मैं इनका साक्षी घट दृष्टाकी न्याई सत् चित् आनंद रूप अवाङ्मनसगोचर आत्मा हूं यह पूर्व देह रूप निश्चयको नाश करता तिसते विलक्षण उत्तर कालमें आत्मरूप निश्चय शरीर उत्पन्न होता है वही तिसकी गति होतीहै सो आत्म निश्चय नृसिंह रूप बोध जगत् सहित जीवत्वरूप हिरण्य कशिपुको मारा नाम मिथ्यत्व निश्चय वा अत्यंत अभाव निश्चय किया किंचित् काल पीछे नृसिंह रूप बोध आपभी शांत हो जावेगा जैसे अग्नि काष्ठादि तृणोंको जलाके आप भी शांत होजातीहै तात्पर्य यह कि नर नाम देह बुद्धि त्यागके सिंहनाम आत्मा नात्मा विचारते आत्मबुद्धि होनी यह नृसिंह शब्दका अर्थ है औ इंद्रिय रूप देवता बोध रूप नृसिंहकी स्तुति कर्तें हैं हे देवात्म तुझ चैतन्य सत सुख साक्षीकी सत्ता स्फूर्ति करके ही हम जड मन इंद्रियादि संघातकी चेष्टा होतीहै हम वाङ्मनसगोचर दृश्यकी तुझ अवाङ्मनसगोचर दृष्टासेही सिद्धी होतीहै हम असत जड दुःख रूपभी तुझ सत् चित् आनंदसेती सत् चित् सुख सरीखे होरहे हैं इत्यादि ताते हेनर बुद्धिरहित आत्म रूप सिंह बुद्धिवान् अधिकारी जनों तुमभी जीवत्व रूप हिरण्यकशिपुको मारके बुद्ध्या दियोंके साक्षी नृसिंह आत्माको अपना आप स्वरूप जानो तिसते पृथक् सर्वको अनित्य जानो एते में काम क्रोध लोभ मोह अहं कारादि मनुष्य मूर्ति धारकर तिस सभामें आते भये औ कहते भये हे प्रजा हमारा सज्जन लोगोंकी रीतिसे अनुष्ठान कर्ता कदाचित्त भी राजादि दंडका अधिकारी नहीं देखनेमें आता उलटा धर्मात्मा वाजता है अधर्म रीतिसे हमारा अनुष्ठान कर्ता ही राजादि दंड पाता देखा है अन्य नहीं दृष्ट कल्पनाके अनुसार ही अदृष्ट कल्पना करी जाती है काहेते पक्षपात रहित न्यायकारी पुरुषोंका

संकेत रूप कायदा जैसे इस भारतवर्षमें है तैसेही अन्य देशोंमें भी है तैसेही उम्मेद है कि परलोकमें भी होगा जो अन्यथाहै तो अन्याय है न्याय नहीं जो शास्त्रों में हमारात्याग लिखाहै तो दुःखदायक अधिक अंशका त्याग लिखाहै समानका नहीं सामान्यते हमारा त्याग हो ही नहीं सक्ता काहेते ज्ञान इच्छा यत्न इन पूर्वक ही सर्व जीवोंका प्रवृत्ति निवृत्ति रूप संघातका व्यवहार होता है शरीर होते कामादि कैसे त्यागे जावेंगे शरीरका कारण होनेते जो इससे अन्यथा मानोगे तो संसार खाताही उठ जावेगा काहेते समूह अंतष्कर्ण की वृत्तियाँ रूप इच्छा का नाम कामहै तिन काम रूप इच्छाओंके मध्यमें स्त्रीके भोगनेकी इच्छाका नामभी काम है सो स्त्रीसंभोग काम गृहस्थ विमुख संन्यासी को नहीं चाहिये गृहस्थीको तो मना नहीं अधर्म से भोग मनाहै जो धर्म से स्त्री संभोग मना हो तो आप लोगोंका दर्शन कहां से होगा हां अधिक निज स्त्री से भोग करनेते और तो कोई दोष है नहीं परंतु शरीर में नाताकती वीर्य क्षीण संतति का संशय औ शरीरमे रोग आदि परमदोषहैं इसवास्ते मर्यादा से अधिक का त्याग है तैसेही पूर्व तथा वर्तमानमें भी किसी हेतुसे वरशाप लोगोंको ज्ञानी लोक भी देते सुनते देखते हैं सो क्रोध मोह नाम राग द्वेष विना यह हो नहीं सक्ता यह कायदा ही है जो निज अनिष्ट संपादन कर्ता पै द्वेषरूप क्रोध करना ही परता है कदाचित् सात्विकादि हेतुते कोई पुरुष द्वेष रूप अनिष्टकर्ता पुरुष पै क्रोध नहीं भी कर्ता परंतु हमेशः का नेम नहीं यह अनुभव सिद्ध बात है तैसे ही मन वाणी शरीर से वा धनादिसे सेवक पुरुष पै पूर्व तथा अवभी ज्ञानी भी प्रसन्न होते सुनते देखते हैं किसी रीति का राग रूप मोह विना दूसरे पै प्रसन्नता होती नहीं यहभी अनुभव सिद्ध है तैसेही लोभ अनेक रीतिका है किसी न किसी निज प्रयोजन रूप लोभको लियेही पुरुषोंकी प्रवृत्ति निवृत्ति रूप अनेक रीतिके व्यवहार में प्रवृत्त होते हैं प्रयोजन विना मूढ पुरुष भी निज कार्य में प्रवृत्त नहीं होता ऐसा नहीं मानोगे तो संसार खाता ही उठ जावेगा इत्यादि तैसे ही अहंकार विना शरीर की रक्षा होती नहीं तथा खान पानादि व्यवहार भी सिद्ध होता नहीं काहेते अहं पूर्वकही त्वं आदि व्यवहार होता है औ जबलग शरीर है तब

185

तक अहं त्वं व्यवहार होता ही रहेगा अन्यथा नहीं यह बात सर्वको अनुभव सिद्ध है ग्रंथ विस्तार भय से विशेष लिखा नहीं ताते "अतिसर्वत्रवर्जयेत्" इस न्यायते मर्यादासे अधिक ही कामादियोंका त्याग है ताते हे अधिकारी जनो आप अपने वर्णाश्रमके अनुसार धर्मपूर्वक लक्षों तरहके विषय इंद्रिय संवंधजन्य सुख दुःखको तथा काम क्रोधादियोंको भोग भोगो नाम अनुभव करो तुम किंचित् मात्र भी दंडके अधिकारी इस लोक में तथा परलोक में नहीं होगे परंतु सज्जन पक्षपात रहित पुरुषोंके संकेत धर्मरूप कायदेको उल्लंघन करोगे तो इसी लोकमें पकड़े जाउगे आगे जो इच्छा होय सो करो एतेमें वैरागादि दैवी गुण मनुष्य आकृति धारकर आते भये अरु कहते भये हे गुरु शास्त्रमें श्रद्धावान संतो वैरागादि गुणभी शरीररक्षा पूर्वकही धारण करने चाहिये काहेते शरीरकी अरामदारीसेही सर्व धर्मार्थ काम मोक्ष चारों पदार्थ सिद्ध होते हैं अन्यथा नहीं " अतिसर्वत्रवर्जयेत् " देखो अति यज्ञ दानादि शुभ कर्म करने ते वलि पातालको जाता भया औ युधिष्ठिर वनवासको जाता भया है ताते अति कोई बातभी करनी नहीं जिन जिन कामोंसे पापरूप दुःख भविष्यत वा वर्तमान कालमें होवे तिन तिन कामोंका त्याग करना रूप वैराग चाहिये काहेते सत्वगुणका कार्य चित्तकी एकाग्रतापूर्वक जो जो मन वाणी शरीरसे लौकिक सुख वा परलौकिक सुखवास्ते शुभ कार्य करोगे तो अत्यंत वह कार्य फलवान होवेगा सो चित्तकी एकाग्रता सत्वगुणके अधीन है काहेते सत्वगुणके एकाग्रता कार्य होने ते सो शास्त्री वा अशास्त्री साधनोसे अत्यंत पीडित शरीरमें विशेष सत्वगुण होवे नहीं तमगुण वा तमगुणका कार्य क्रोध आलस्य अहंकारादिही होवे हैं काहेते यह मनका स्वभाव है जो जो वस्तु मनके इंद्रियद्वारा वा अंतरही सन्मुख होवे तिसके आकारही मन होजाता है सो दुःख पीड़ितकालमे दुःखही सन्मुख है सुखनहीं ताते तिस कालमें दुःखाकारही मन होवेगा सुखाकार नहीं ताते अत्यंत शरीर पीडित पूर्वक वैरागादि तपस्या करनी नहीं चाहिये यहभी नहीं कि हम अत्यंत पीडित होकर हरिको याद करेंगे तब हरि अंगीकार करेगा जो हम सुखपूर्वक हरिको याद करेंगे तो ईश्वर अंगीकार नहीं करेंगे ऐसे नहीं किंतु सच्चे दिलसे

ईश्वर प्रेम चाहते हैं शरीरका पीडन अपीडन नहीं चाहते एतेमें देवी आसुरी गुणरूपी शुभाशुभ कर्मोंके पुत्र धर्माधर्म मनुष्य रूप धारके दोनो आवत भये अरु बोलत भये हे धार्मिक सज्जन पुरुषो हम दोनोका किसीसेभी पक्षपात नहीं शुभाशुभ कर्मोंसे हमारी उत्पत्ति है ताते जो कोई हिंदू वा मुसल्मान वा कोई अन्य जाति सतसंभाषणादि शुभकर्म अरु असत् संभाषणादि अशुभ कर्म करैंगे तो तत् तत् जन्म हम धर्माधर्म कर्मकर्त्ताको पक्षपात रहित न्यायपूर्वक सुख दुःखका अनुभव रूप फल भुगावेंगे इसमें किसी हिंदू मुसल्मानका लिहाज न होगा तुम लोग प्रत्यक्ष देखो झूंठा लुच्चा पुरुष वडा कुलवान तथा धनवान भी बाजता है तो भी सर्व जगहमें तिरस्कारही पाता है और जो सच्चा ईमानदार गरीव किसी जाति काभी है परंतु वह पुरुष सर्व स्थान में सत्कार पाता है अन्य नहीं चोरी किसी जाति पंथका करेगा पकड़ा जावेगा अरु कायदे वमूजिब तिसको सजा मिलेगी अन्यथा सजा नहीं होती है जो जाति भेष प्रयुक्त शुभाशुभ कर्मोंका सुख दुःख रूप फल होता तो उत्तमता मध्यमता जातिके अधीन होती सो यह देखने में नहीं आता ताते उत्तमता मध्यमता कर्मके अधीन है देखो हजारों देशोंकी वोलियों में आप अपने शास्त्रके संस्कारोंके अनुसार ईश्वरका भजन तथा ईश्वरानिमित्त भूखे प्यासे दुःखी जीवोंको अन्न जलादि अर्पण सर्व जीव कर्तें हैं सो सर्वका भजन तथा दान ईश्वर अंगीकार कर्तें हैं यह नहीं कि एक का लेते हैं एकका नहीं जो विषमदर्शी है सो हमारा भाई बंधु जीव है ईश्वर नहीं काहेते सर्व सृष्टी ईश्वर रूपी पिताकी बाल बच्चा होनेते तथा ईश्वरको सर्वज्ञ होनेते ताते जिस जिस समाज और जातिको पुरुषोंका भजन दानादि करा हुआ ईश्वर अंगीकार नहीं करे तिसको नीच जानना चाहिये तथा राजा अपराध विना जिसको दंडदेवे नाम उत्तम जाति संज्ञक जुलमीको त्यागके तिस वदले अन्यको दंड हो तो नीच जानना चाहिये ऐसे देखने में नहीं आता किंतु आप अपने समाज शास्त्रके संकेत से सर्व संमत सतसंभाषणादि रूप धर्म पूर्वक मन वाणी शरीर से लौकिक वा परलौकिक कर्म करने से सर्वके अंतष्कर्णकी शुद्धि होती है " स्वस्व कर्मण्यभीरतासंसिद्धिंलभ्यतेनरः " ताते मन शुद्धि पूर्वकही सगुण वा निर्गु

ण ईश्वरकी उपासना होती है निश्चल मन मेंही ज्ञान होता है ज्ञान सेही मोक्ष होती है ताते सर्व जीव समही हैं व्यवहार भिन्न भिन्न है सो व्यवहार एक शरीर में भी इंद्रिय भेदते व्यवहार भिन्न भिन्न है शरीर एकही है और भिन्न भिन्न शरीरों में भिन्न भिन्न व्यवहार है यामें क्या कहना है परंतु गुण दोष प्रयुक्त उत्तमता नीचता श्रेष्ठ अश्रेष्ठ कर्तव्यके अधीन है शरीर जाति स माजके अधीननहीं ताते जिसको उत्तमता संपादन करनेकी हो सो सत संभाषणादि मुझ धर्मसे निरन्तर प्रीतिकरे अरु असत संभाषणादि अधर्मसे अरतिकरे एते में प्रयागादि तीर्थ आतेभये प्रयागनेकहा हे महाशयो तीर्थनाम पवित्रताका है सो पवित्रता मनको सतसंभाषणादि पवित्र तीर्थों में स्नान नाम धारण करनेसे होती है अन्यथा नहीं जो पुरुष जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति वा प्रियमोद प्रमोद सुषुप्ति आरंभ में वृत्ति वा भूत भविष्य वर्तमान काल वा इन जाग्रतादियों में होनेवाले स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर वा सत्व रज तम वा दृष्टा दर्शन दृश्य वा ध्याता ध्यान ध्येय प्रमाता प्रमाण प्रमेय ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयादि त्रिपुटी रूप त्रिवेणी में स्नान करता है नाम मैं सच्चिदानंद इन जाग्रतादि त्रिपुटी रूप त्रिवेणी दृश्यका मैं साक्षी आत्माहूं यह दृढ़ निश्चयरूप जल में जो स्नान करता है सो पवित्रात्मा जीवनमुक्त हम लोगोंको भी अपनी चरणधूरि कर पवित्र करता है एते में मनुष्य मूर्ति धारकर एकादशी आदि व्रत आयकर बोलतभये हे सर्व जगत्के मित्रो एक केवल व्रत है अरु एक महाव्रत है महाव्रतोंके अन्तर्भूतहीं सर्व व्रत आजाते हैं जैसे नव गनतीके भीतरही सर्व गनती आजाती है सो देश काल वस्तु भेद रहित सत्यबोलना १ चोरी मन वाणी शरीरसे न करना २ मन वाणी शरीरसे परप्राणीको पीड़ित न करना ३ निज पाखाने में पेशाब करना नाम ब्रह्मचर्य्यसे रहना ४ मन वाणी शरीरसे शास्त्र से विरुद्ध कामोंको न करना ५ यह पंच महाव्रत हैं तात्पर्य यह कि तीर्थस्थान में झूंठ नहीं बोलना अन्यत्र बोलना एकादशीके दिन सत्यबोलना अन्यत्र नहीं साधु महात्माके सन्मुख झूंठ नहीं बोलना अन्यत्र बोलना ऐसेही हिंसा आदियों में भी जानलेना किंतु सर्व कालमें सर्व देश में सर्व वस्तु में सतसंभाषणादि महाव्रत करने वा यह महाव्रत करने ॥ चारही प्रकारके मानसीताप हैं चारही तिन तापोंके दूरकरने

की मैत्रतादि औषधी हैं सारांश यह कि सर्व धनादि सामग्री से अपने तुल्य जीवों में मित्रता करनी अमित्रताजन्य तापकी निवृत्तिहोगी तैसेही अपने से अधिक सामग्रीवाले मनुष्यों में मुदता करनी जो अमुदताजन्यतापकी हानि होगी तैसे दुःखी जीवों में करुणा करनी सो अरुकणाजन्य तापकी हानि होगी तैसेही कुसंगति जीवोंमे उपेक्षा करना नाम अनिंदा पूर्वक त्याग करना सो कुसंगतिजन्य दुःख न होगा हे अधिकारी जनो पूर्वोक्त नव महाव्रतोंके अनुष्ठानवाले मनुष्यमात्रको जो इसी लोकमें मानसी तापोंकी हानि तथा अभय और सर्वमें सतकारादि प्रत्यक्ष फल सर्व विद्वानोको अनुभवहै अंतःकर्णकी शुद्धिभी इनहीं व्रतोंते होतीहै और परमधर्मभी यहीहै और यही पूज्यहै और महाकर्मभी यहीहैं और यही परममोक्षका साधनहैं इनहींके अंतर्भूत सर्व कर्म धर्म आचारहैं इनहींके पालनसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्षके लायक होताहै यही सर्व संमत सिद्धांतहै दृष्ट कल्पनाके अनुकूलहीं अदृष्ट कल्पना होतीहै ताते परलोकमेंभी इनही का महत्व होगा वा यह पंचमहाव्रत जानने पंच अन्न मयादिकोंशोंकोका तथा पंच पृथिवी आदि स्थूल सूक्ष्म भूतोंका तथा पंचज्ञानेन्द्रिय तथा पंचकर्मेंद्रिय तथा चतुष्टय रूप मन बुद्धि चित्त अहंकार एक सर्वका कारण माया का तथा पंचप्राण तथा पंचशब्दादि विषयादि यह पंचक मुझ सच्चिदानंद आत्माके नहीं औं मैं इनका नहीं किंतु यह माया तत्कार्य भ्रम रूपहैं मैं इनके न्यूनाधिक भावाभावका दृष्टाहूं घटदृष्टाकी न्याई इस दृढ़ निश्चयका नाम पंचमहाव्रतहै इनके अनुष्ठान करनेवाला जीवताही मुक्त होताहै एतेमे मनुष्य मूर्ति धारके सप्त समुद्र आयकर बोलते भये हे साधो इस शरीर रूप संघात रूप पृथिवीमें रस रुधिर, मेध, मांस, अस्थि, मज्जा, वीर्य रूप धातु सप्त समुद्रहैं वा जीवरूप पृथिवीमें अवर्ण विक्षेप ज्ञान अज्ञान गमनागमन निरंकुश आदि सप्त अवस्था रूप सप्त समुद्रहैं वा सर्व नामरूप प्रपंच रूप सप्त पदार्थ रूप सप्तम समुद्रहैं वा भूरादि सप्त व्याहृतियां सप्त समुद्रहैं वा सप्त स्वर रूप सप्त समुद्रहैं जैसे आकाश सप्त समुद्रोंमें व्यापकभी असंग है तैसे आत्मा सप्त व्याहृति आदि सप्त समुद्रोंमें व्यापक भी असंगहै सो पूर्वोक्त समुद्र मुझ सच्चिदानंद आत्माके नहीं अरु मैं आत्मा इनका नहीं मैं इनके सर्व न्यूनाधिक भावाभावका दृष्टाहूं

घट दृष्टाकी न्याई वा मुझ अस्ति भाति प्रिय आत्माके पूर्वोक्त समुद्र मेरेहैं मैं इनकाहूं जैसे स्वप्नसृष्टि स्वप्नदृष्टामे कल्पित होनेते
स्वप्नदृष्टाकीहै स्वप्नदृष्टा स्वप्नप्रपंचका स्वरूप होनेते स्वप्नदृष्टा स्वप्नसृष्टीकाहै यह विचार पूर्वक जो दृढ निश्चय रूप जहाजपर बैठे
कि ब्रह्मनेष्ठी ब्रह्मश्रोत्री गुरूनावकसे पूर्वोक्त समुद्रोंते पार नाम बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते निष्कर्तव्यता बुद्धि प्राप्त होगी
एतेमें वीरभद्र आयकर कहते भये हे सदा सद विवेचनीय सभा प्रपंच कारण कार्य शरीररूप संघात यज्ञशाला है जीव दक्ष प्रजापति
है चक्षु आदि इंद्रिय ऋत्विज हैं शब्दादि विषय कुंड हैं चक्षु आदि इंद्रियोंकी दर्शनादि वृत्तियां शाकल्य आहुतिकी सामग्री है विषय
इंद्रिय संबंधजन्य सुख दुःखका अनुभव जीवरूप अंतष्करण ब्रह्मा है विवेक औ ब्रह्म विद्या महादेव पार्वती हैं तिनोते वीरनाम अज्ञान
तत्कार्य निजशत्रुको मिथ्यत्व निश्चय वा अत्यंताभाव निश्चयरूप हनन करे औ दुःखरहित कल्याण स्वरूप होवे सो वीरभद्ररूप
सम्यक ब्रह्मात्मबोध होताभया तिसने पूर्वोक्त कारण कार्य संघातरूप यज्ञशाला सामग्री सहितको ध्वंस कर्ता भया नाम मिथ्यत्व
वा अत्यंताभाव निश्चय कर्ता भया हजारों युद्धादि विद्यारूप भुजा संयुक्त होने ते सहस्रबाहु कहते हैं वा हजारों बंधुरूप भुजा होने
ते सहस्रबाहु कहते हैं सो सहस्रबाहु आयकर कहते भये हे संतमंडली हजारोंही हैं वासना वा इच्छारूप भुजा जिसकी ऐसो मनरूप
अहंकार सहस्रबाहु है तिसको पर नाम परमात्मा तत्पदका लक्ष्यार्थ स (शु) नाम सोई मेरा त्वंपदका लक्ष्यार्थ प्रत्यक् आत्मा स्वरूप
राम है इस ब्रह्मात्म एकत्व ज्ञानीरूप परशुरामनेही पूर्वोक्त सहस्रबाहुरूप देह अभिमानको औ आसुरी संपदा निज परिवार सहित
मारा है नाम जगत्को मिथ्यत्व निश्चय किया है कोई मनुष्य सहस्रबाहु नहीं होसक्ता वाराह संज्ञावाले मनुष्योंमें विष्णु अवतार होता
भया है इसवास्ते विष्णु अवतारको वाराह बोलते हैं सो वाराह भगवान आते भये अरु कहते भये हे यथार्थवक्ताओ धर्म अर्थ काम
मोक्षका जाग्रत स्वप्नमें विद ज्ञाने जो वेदरूप चार ज्ञान हैं वा अंडज जरायुज स्वेदज उद्भिज चार खानिका जो जाग्रत स्वप्नमें चार
वेदरूप चार ज्ञान हैं वा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुरीयाका जाग्रत स्वप्नमें जो चार वेदरूप चार ज्ञान हैं वा समष्टी व्यष्टी स्थूल सूक्ष्म

कारण महाकारणके जाग्रत स्वप्नमें जो चार वेदरूप चारों ज्ञान हैं वा प्रमाता चेतन प्रमाण चेतन प्रमेय चेतन फल चेतन यह एकही चेतनकी उपाधि भेद ते जाग्रत स्वप्नमे चार वेदरूप चार ज्ञानरूप परमान हैं इत्यादि सभास अंतःकर्ण जीवरूप हिरण्याक्ष वा शबल ब्रह्मरूप हिरण्याक्ष सुषुप्ति रूप समुद्र में वा अविद्या रूप समुद्र में व्यष्टी अहंकार रूप वा समष्टी अहंकार रूप पृथिवीको महाप्रलय रूप माया रूप समुद्र मे वा तूला विद्या रूप पृथिवीको अज्ञान रूप समुद्र में सुख दुःख रूप भोग देने वाले कर्म जाग्रत स्वप्न मे उपराम निमित्त ते पूर्वोक्त चार ज्ञान रूप चार वेद सहित व्यष्टी अहंकार रूप पृथिवीको पूर्वोक्त सभास अन्तष्कर्ण जीवरूप हिरण्याक्ष लेके प्रवेश कर जाताहै पुनः जाग्रत स्वप्नमें सुख दुःख का अनुभव रूप भोग देने वाले अदृष्ट रूप वाराहने पूर्वोक्त समुद्रों ते वेद रूप ज्ञानोका तथा पूर्वोक्त पृथिवी का जाग्रत स्वप्नमें प्रादुर्भाव नित्य नित्य करता है वा अविवेक रूप हिरण्याक्षने पूर्वोक्त वेद रूप सम्यक् ज्ञानोको लेके अविद्या रूप समुद्र मे प्रवेश कर्ता है पुनः जीवके पुण्योंके वशते विवेक रूप वाराह अविवेक रूप हिरण्याक्षको मारके अविद्या रूप समुद्र ते उधार नाम विचार कर सम्यक् वेद रूप ज्ञानोंको प्रवर्त कर्ता है एते मे शेषनाग आयकर कहते भये हे साधो नाग नाम समष्टी व्यष्टी माया तत्कार्य का है तिसका नेति नेति इस श्रुतिने वाङ्मनसगोचर माया तत्कार्यको निषेध करने ते जो अवधिभूत अवाङ्मनसगोचर सच्चिदानंद शेष रहता है सो तिसीका नाम शेषनागहै सो पूर्वोक्त शेषनाग तुम्हारा तथा हमारा तथा सर्व ब्रह्मासे लेकर चींटी तक जीवोंका निजात्म स्वरूप है वोही इस माया तत्कार्य जगत् रूप नाग का आधार है कोई अस्मदादिमूर्तिमान इसका आधार नहीं काहेते जो जिसका स्वरूप होताहै सोई तिस्का आधार होताहै जैसे स्वप्न सृष्टि का स्वरूप स्वप्नदृष्टा है सोई तिसका आधार है कोई भी स्वप्न पदार्थ आपस मे आधार अधेय भाव नहीं जैसे भूषण तरंग सर्प दंडादियों का स्वरूप स्वर्ण जल रज्जु आदि स्वरूप हैं सोई तिनका आधार है भूषण तरंग सर्पादि आपसमें आधार अधेय भावनहीं तैसेई नाम रूप मुझ मूर्ति सहित जगत्का अस्ति भाति प्रिय रूप ब्रह्मात्मा ही स्वरूप है सोई इस्का आ-

धार है नाम रूप पदार्थ आपसमें अधारा अधेय भावनहीं पुनः रावण आयकर बोला हे विचारशील सभा यह शरीर रूप लंका देश है रजोगुण अविवेक रूप रावण है कायदे वाहर सुख दुःखके अनुभव रूप भोग विलासों में अनुराग तिसका राज्य है औ श्रोत्रजज्ञान तथा त्वाच ज्ञान तथा चाक्षुस् ज्ञान तथा रासन ज्ञान तथा घ्राणजज्ञान तथा अनुमिति ज्ञान तथा शाब्दी ज्ञान तथा उपमिति ज्ञान तथा अर्थापाति ज्ञान तथा अभाव ज्ञान १० यह उपाधि भेदते असम्यक् वृत्ति रूप ज्ञान रजोगुण अविवेक रूप रावणके दश १० शिर हैं नहीं तो अस्मदादियोंकी न्याई मनुष्योंका सम्यक् ज्ञान रूप एकही शीश है औ पांच ज्ञानेंद्रिय ५ औ पांच कर्मेंद्रिय ५ औ पांच प्राण औ चतुष्टय अंतःकर्ण औ एक प्रवृत्ति निवृत्ति रूप क्रिया यह वीस २० भुजा हैं औ मान दंभादि तथा अति कठोरतादि आसुरी गुण रूप राक्षस तिसकी सेना है औ तमोगुणरूप कुंभकर्ण तिसका भाई है औ सत्वगुण रूप विभीषण तिसका भाई है सो रजोगुण अविवेक रूप रावण विवेक रूप रामकी ब्रह्मविद्या रूप सीता हरणकर्ताहै सो विवेक रूप राम अमानित्वादि तथा अति कृपालादि दैवी गुण रूप वांदरोंकी सैना सहित तथा तत् त्वं पदका जो लक्ष्यार्थ ब्रह्मात्म एकत्व स्वरूपहै तिसी में है मनकी वृत्ति जिसकी तिस लक्ष्मण सहित नाम नवीन अपरोक्ष ज्ञान संयुक्त संसार रूप समुद्रमें विचार रूप सेतु वांधके अंतष्कर्ण रूपी अविवेक रूप रावणकी राजधानी लंकामें प्राप्त होयकर सत्वगुण रूप विभिषणकी सहायतासे तम गुण रूप कुंभकर्ण सहित तथा दंभादि आसुरीसेना सहित रजगुण अविवेक रूप रावणको विवेक रूप राम हनन कर्ता है पुनः वाङ्मनस सहित नाम रूप वाङ्मनसगोचरका सच्चिदानंद अवाङ्मनसगोचर मैं द्रष्टा आत्माहूं अपने सहित सर्व वासुदेव है वा अस्ति भाति प्रिय रूप आत्माते भिन्न सर्व नाम रूप में मिथ्यत्व निश्चय वा अत्यंताभाव निश्चय रूप बुद्धि ब्रह्म विद्या रूप सीता सहित प्रारब्ध क्षय तक शरीर रूपी अयोध्यामें जीवनमुक्तरूपी तत्परतर योगी विराजमान् होताहै परंतु हे प्रियदर्शन पूर्वोक्त राम रावण सेना सहित इनकी न्यूनाधिक भावाभाव जिस साक्षी चैतन्य सत सुखरूप आत्मासे सिद्ध

होते हैं सोई वस्तु राम तुम्हारा हमारा तथा सर्व जगत् का स्वरूप है भूर्भुवः स्वः महः जनः तपः सत तात्पर्य यहकि ब्रह्मलो-
कादि सप्तव्याहृतियां मनुष्य आकृति धारकर तिसी सभामें आयकर बोलतभई हे समदर्शियो जैसे भूर्व्याहृतिमें नाम इस पृथिवी
लोक में जो जो व्यवहार हैं सोई सोई सर्व ब्रह्मलोकादि व्याहृतियों में व्यवहार हैं विलक्षण नहीं काहेते भूत भौतिक सामग्री तुल्य
होनेते जैसे षट्प्रकार का रस तथा षट्प्रकार का कृष्णादिरूप यहां है तैसे ब्रह्मलोकादियों मेंभी है जैसे इहां शब्दादि विषय अरु श्रो
त्रादिइंद्रिय संबंधजन्यसुख दुःखका अनुभव है तथा राग द्वेष है तथा ईर्षा निंदादि है तथा खान पानादि है तथा षड्भावविकार तथा
षट् ऊर्मीसंयुक्त शरीर है तथा अपने अनुकूल में रागपूर्वक प्रवृत्ति प्रतिकूल में द्वेषपूर्वक निवृत्ति है तैसेही वहां है जैसे इहां दैवी
गुणोंकी स्तुति है तथा आसुरी गुणों की निंदा है तथा तिन गुणोंकी न्यूनाधिक्रभाव शरीरों में है तैसे ब्रह्मलोकादियों में है
जैसे इहां नदियां समुद्र तलाव पर्वत वनस्पति हैं तथा गौ बैल जमीन फल है तैसे वहां है जैसे इहां स्त्री पुरुष का व्यवहार होता है
तथा नाक कानादि अवैव स्त्रीपुरुषोंके जिस जिस स्थान में इहां शोभा देते हैं अन्यथा अशोभा है तैसेही ब्रह्मलोकादियों में
है जैसे इहां सुख दुःखके जो जो साधन हैं तैसे वहां हैं जैसे इहां पंचभूत पृथिवी आदि है तैसे वहाँ है जैसे इहां १७ तत्का सूक्ष्म
शरीर है तथा स्थूल शरीर अन्नमयादिकोशरूप है तथा कारण शरीर है तथा रज तम सत्वगुण है तथा भूल अभूल हर्ष शोका-
दि है तैसे वहां है जैसे इहां राजाकी अधीनता तथा कायदा धर्माधर्म का है तैसे वहां है जैसे इहां मनादियों का साक्षी अन्त-
र्यामी सर्व देहों में देही एक आत्मा है तैसे ब्रह्मलोकादि व्याहृतियों में है जैसे इहां शास्त्र में कर्मकांड उपासनाकांड ज्ञानकांड है
तैसे वहां है जैसे इहां ज्ञान अज्ञान है तथा जल पाषाणादियों का तीर्थों में दर्शन है तथा आपस में विवाद है तथा ईश्वरकाहीं इस
सृष्टीसे पृथक् देखने में आता नहीं हृदयदेश में मन्नादियोंके साक्षी विना तैसे ब्रह्मलोकादि व्याहृतियों में है जैसे इहां
मनुष्योंके हस्त पादादि अवैव हैं तैसे ब्रह्मलोकादियों में हैं तात्पर्य यह कि सर्व प्रकार से सर्व ब्रह्मादि लोकों में सर्व

व्यवहार इसलोकके सम हैं जैसे इहां धर्म अर्थ काम मोक्ष अरु तिनके साधन हैं तैसे वहां हैं ताते इहांही ज्ञानसंपादन करना ब्रह्मलोकादि लोगोंके जानेकी इच्छा नहीं करना काहेते अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिवास्ते इच्छा होती है सो पूर्वोक्त प्रकारसे इहां वहां भेद नहीं जो यह मिथ्या है तो वहभी मिथ्या है यह सत है तो वहभी सत है ताते मनआदियोंका साक्षी सम ब्रह्मात्माको अपना आप जानो जो शांति होवे अन्यथा नहीं होगी मूल ग्रहण ते शाखाका ग्रहण आपसेही हो जाता है पुनः राजा जनक आता भया अरु कहा हे श्रेष्ठ पुरुषो जैसा जिस वस्तुका स्वभाव है सो कोटि उपाय करने सेभी दूरनहीं होता जैसे अग्निका स्वभाव शीतल नहीं होता तैसे बुद्धि आदियोंका सच्चिदानंद द्रष्टा आत्मा स्वभाव सेहीं माया तत्कार्य में हीं होनेवाले बंध मोक्षकी कल्पना ते रहित है अरु दृश्य बंध मोक्षकी कल्पना ते रहित कदाचित् भी नहीं हो सक्ती ताते दोनो वस्तुका सम्यक् जाननाहीं कर्तव्य है करना कछु नहीं हे साधो विषय इंद्रिय संबंधजन्य सुख दुःखका अनुभव जैसे अज्ञानकालमेंभी होता है तैसे ज्ञान काल में भी होता है संघातका व्यवहार कछु अदल बदल नहीं होता केवल मनका संकल्प पूर्व से विलक्षण हो जाता है पहले मैं अज्ञानी हूं पीछे सतसंग से मैं ज्ञानी हूं इतना संकल्पमात्रही बंध मोक्ष हुआ और कछु अन्य नहीं हुआ परंतु ज्ञान अज्ञानादि सभास अंतष्कर्णकी अवस्था हैं तिन दोनो अवस्थाको अनुभव करनेवालेको निज स्वरूप जानना सम्यक् चाहिये पुनः विश्वामित्र आयकर बोले हे तपास्वियो इस मनादियोंका साक्षी चैतन्यका नाम विश्वामित्र है काहेते इस नाम रूप असत जड दुःख रूप विश्वको अपनी सत्ता स्फूर्त्ति से सत् चित् आनंद सरीखी कर देता है ताते यह आत्मा सर्व विश्वका मित्र है असंग होनेते सर्व विश्वका अमित्र भी है जैसे आकाश सर्वको अवकाश देता भी सर्व सृष्टीके व्यवहारोंके गुण दोषते असंग है जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्नसृष्टीको सत्ता स्फूर्ति देनेते विश्वका मित्र है सो स्वप्न सृष्टीके गुण दोषका नभागी होनेते असंग है इसते स्वप्न विश्वका अमित्र भी है औ बुद्धि आदियोंका साक्षी आत्मा विश्वके मित्र अमित्र भावते रहित भी है अवा

ङ्मनसगोचर होने ते और मन वाणी सहित वाङ्मनसगोचरभी आप होने ते सर्व विश्वका मित्र अमित्रभी आपही है हे साधो इस समझके समझाने वास्ते अनेक प्रकारके सत संभाषणादि परमतपस्याहै तथा मैत्रता करुणा मुदिता उपेक्षा सम्यक् धारण करना यहभी परमतपस्याहै तथा अमानित्वादि अति कृपालुआदिभी परमतप तथा सज्जन लोगोंके कायदे अनुसार चलना यह भी परमतपस्याहै तथा यथा लाभ सदा सुखी रहना राग द्वेष न करना राजयोग भजन करनादि यह पूर्वोक्त सर्व सात्विकी तप स्याहै निज शरीर पीडित कर तथा पर शरीर पीडित कर जो तपस्याहै सो तामसी राजसी तपस्याहै परंतु ब्रह्मनिष्ठ महात्माकी सम्यक् सतसंग सात्विकी सर्वते अधिक तपहै सर्व तपस्याका फल चित्तकी एकाग्रताहै चित्तकी एकाग्रतासे सर्व चित्तादियोंमे अनुगत सच्चिदानंद मन्नादियोंका साक्षी निजात्म स्वरूपका स्वयंप्रकाश रूपता करके अनुभव होताहै जैसे किसीभी साधनसे वायुस्थिर होनेते जलगत सूर्यभी स्पष्टमान होताहै ताते जिस किसी साधनसे चित्तकी एकाग्रता द्वारा जिस किसी अधिकारीको निजा- त्म स्वरूपका सम्यक्बोध होवै सोई साधन श्रेष्ठ है जैसे आंवखानेसे मतलबहै चाहे किसी वृक्षसे मिलें यह लोक पृथाका दृष्टांतहै हे संतो! बंध मोक्ष तो शास्त्रोंमे किंचित् किंचित् कामोंमे मानराखीहै ठाकुरके चरणामृतमें तथा परिक्रमामे तथा दर्शनमें तथा तुलसी रुद्राक्ष धारणमें तथा तप्त मुद्रा शरीरको लगानेसे तथा काष्ठका दंड धारनेसे मोक्ष लिखीहै तथा गंगाके एक बूंदके पान करने ते तथा गंगा यमुनादि तीर्थोंके स्नान तथा दर्शनते तथा वेल भक्षण करने ते तथा काशी मथुरादि पुरियोंमे तीन दिन वा एक दिनभी निवास करने ते तथा एक वारी भूलसे वा विलापादि कर्ता हुआभी राम हरि महादेवादि ईश्वरके नाम उच्चारण मात्रसेही मोक्ष लिखाहै और नेति धोती आदि क्रिया कर्णेसे मोक्षादि फल लिखाहै पुनः श्राद्धोंके करनेका फलभी मोक्षही लिखाहै तथा सूर्यादिके दर्शनसे तथा एकादशी आदि व्रतोंसे तथा सूर्यादियोंके स्तोत्र पढ़नेसे मोक्ष लिखाहै गोदर्शन पंचगव्य ग्रहणते वड़ा पुण्य लिखा है गोदान तो मोक्षका कारणही है कहांतक लिखें हजारों कामोंसे " पुनर्जन्म न विद्यते " ऐसा फल लिखा है परंतु सो

190

सर्व मरेपीछे होगा प्रत्यक्षनहीं ऐसेही मरे पीछे दुःखरूप बंधके कारणभी अनेक लिखे हैं पिशाच करनेकी विधि जो लिखी है सो अत्यंत कठिन है तिसते अन्यथा करने ते बंधरूप नरक लिखा है गृहस्थ विमुख सज्जन साधुओंसेभी पिशाच विधि कदाचित्तभी पालन नहीं होती तो व्यवहारियोंसे कहां होगी इत्यादि औरभी जान लेना ताते यह मालूम होता है निर्यनहीं सर्व स्त्रीपुरुष मनुष्य योनि बंध होवेंगे छूटनेका कोई उपाय नहीं अरु मोक्ष कथनवाले शास्त्रको देखे तो अनायास सर्व मोक्ष होने चाहिये काहेते ऐसा स्त्री पुरुष कोई नहीं जो मोक्षके कारण एकवारभी हरिके नाम उच्चारणादि न करे तथा बंधके कारण मलत्यागादि विधिको उल्लंघन न करे ताते सर्व बातें शास्त्रकी हैं किसको सत्त कहैं किसको असत कहैं कछु अक्ल काम नहीं कर्ती सत है तो सर्व सत हैं असत हैं तो सर्व असत हैं इसते न बंध सिद्ध होती है न मोक्ष सिद्ध होती है ताते यह सिद्ध हुआकि मोक्ष शास्त्र तो शुभकामोंमें प्रवृत्ति बोधक हैं औ बंध बोधक शास्त्र अशुभ पाप कामों ते निवृत्तिबोधक हैं काहेते भय लोभ विना शुभ अशुभ कामोंमें प्रवृत्ति निवृत्ति होती नहीं इसी बातमें बंध मोक्ष कथनवाले शास्त्रोंकी चरितार्थता है अन्यथा मानेंगे तो सर्वप्रकारसे जगदांध प्रसंग आजावेगा इसते क्या हुआ कि अशुभ कामोंसे निवृत्ति ते औ शुभ कामोंमें प्रवृत्तिते अंतष्कर्णकी शुद्धि होती है औ शुद्ध अंतष्कर्णमेही यथार्थ सर्व संमत सिद्धांत शास्त्रका पक्षपात रहित यथार्थवक्ता संतसंगसे यथार्थ अर्थ जानाजाता है अन्यमें नहीं तिसते भ्रम निवृत्तिद्वारा यथार्थ अर्थ ग्रहण ते मोक्षरूप सुख शांति प्राप्त होती है मोक्षरूप सुख शांतिका साधन सर्व शास्त्र संमत सिद्धांत पूर्वोक्त सतसंगत सहित सत संभाषणादि नवव्रतादि हैं औ देश काल वस्तु भेदादि दोष रहित पूर्ण वस्तु सम ब्रह्मात्म निज स्वरूप मन्नादियोंका दृष्टाही मोक्ष सुख शांतिरूप है तिस कारण ते बुद्धि आदियोंके न्यूनाधिक भावाभावके साक्षी ब्रह्मात्मामेंही स्थित होना चाहिये नाम मन वाणी सहित मन वाणीके गोचर का मैं सच्चिदानंद दृष्टा हूं मैं दृश्य नहीं इस दृढ निश्चयका नाम ब्रह्मस्थिति है हे साधो संसार रूप इस सभा मे मायारूप द्रौपदी का दुःशासन दुर्योधनादि अनेकवादी रूप सत्तादि अनेक युक्तियों रूप हाथोंसे माया

रूप द्रौपदी का स्वरूप नाम शरीरको निर्णय रूप नग्न कर्ते भये परंतु निर्णय रूप नग्न न होती भई भक्ति मान नाम रूप अनिर्वचनी स्वभाव होने ते तथा परमात्मा रूप कृष्णके आश्रय रूप सहायता होने ते ताते हे साधो माया तत्कार्य नाम रूप मनादियोंको निज दृश्य जानो औ अपनेको सच्चिदानंद दृष्टा जानो माया तत्कार्य निजधर्मों सहित दृश्य तुम दृष्टा असंगको स्पर्श नहीं कर्ते आकाशकी न्याई जो तुम सच्चिदानंद दृष्टा आपको नहीं मानोगे तो दृष्टा भिन्न माया तत्कार्य दृश्य मध्ये किसी न किसी पदार्थ को अपना स्वरूप मानोगे तो दृश्य संसार दुःख मय रूप ही होवोगे काहेते जो मतिहै सोई अंत पुरुषकी गति होतीहै आगे जो इच्छाहो सोईकरो एतेंमे अंतष्कर्ण रूप अहंकार मन वा समष्टी वा व्यष्टी फुर्णारूप अहंकार मनुष्य रूप धारके आयकर कहा हे संतमंडली व्यष्टी अविद्या रूप वा समष्टी अज्ञान प्रकृति माया रूप मेरी माता है औ सच्चिदानंद मनादियोंका साक्षी ब्रह्मात्मा मेरा पिता है जिन दोनो स्त्री पुरुषको शबल ब्रह्म औ अविद्या उपहत चैतन्य शास्त्रवेत्ता बोलते हैं वाशिष्ठ ते शुद्ध भिन्न होताहै इस शास्त्र प्रक्रिया ते शुद्ध ब्रह्म हमारा पितामह है औ यह नाम रूप सुख दुःखादि बंध मोक्ष रूप पंचभूत भौतक प्रपंच मेराही परिवार है औ मैं निज परिवार सहित पिताके पास नहीं रहता निज माता पासवत् पासही हमेश मैं रहताहूं पिताकेपास रहने की मेरी बहुत मरजी भीहै औमैं यत्नभी अनेक कर्ताहूं पिताके पास रहने का परंतु पिताजी पास मुझको नहीं रखते असंग निर्विकार निर्विकल्प होनेते औ मेरे माता पिताके माता पिता हैं नहीं औ मेरी माताके साथ मेरा पिता स्पर्श भी नहीं कर्ता इसीते परिवार सहित मेरी उत्पत्ति औ मरन आश्चर्य रूपहै तथा मेरे परिवार नाम रूप सुख दुःखादि बंध मोक्ष रूप पंचभूत भौतक रूप जगत्की भी जन्म मरण आश्चर्य रूपहै काहेते किसी निमित्त ते जब मैं माताकी गोद में प्रियादि वृत्तिद्वारा बैठता हूं तब मैं परिवारसहित मर्णवत् मरजाताहूं नाम माताके साथ एकरूपवत् एक रूप होजाताहूं पुनः किसी निमित्त ते माताकी गोदसे बाहरवत् बाहर आताहूं तो मैं निज परिवार सहित उत्पत्तिवत उत्पत्तिहोता हूं यह मुझकी दिन दिन प्रतिक्रीड़ा है समुद्र तरंगवत् हे साधो मेरे से तथा मेरे नाम रूप सुख दुःखादि बंध मोक्षरूप प्रपंच निज परिवारसहित

मेरी माता से मोहरूप स्नेह प्रीति हमारे पिता करतेही नहीं अरु न अप्रीति करता है अरु न परिवारसहित मुझकी उत्पत्ति मरण में हर्ष शोक करता है एकसा रहता है तात्पर्य यह कि पौत्रयों सहित हम मा बेटेके कर्त्तव्योंते अस्पर्श है जैसे वायुके चलने न चलने में आकाश एकसा है हमारा पिता मेरी माताको तथा हमारे सर्व परिवारसहित सब न्यूनाधिक भावाभाव वृत्तांतको जानता है अरु हम निज पिताका हाल कछु जानतेनहीं औ न कहसक्ते हैं औ हमारी माताभी नहीं जानसक्ती कि मेरापति कौन है औ कैसा रूप है तो हम कैसेजानेंगे जड़होनेते औ हमारा पिता हमारेमेंही रहता है औ हमारा पालनाभी करता है तो भी हम नहीं निज पिताको जानसक्ते बड़ा आश्चर्य है मेरी माता तो पतिव्रतधर्मवाली है औ हमारा पिता सदा ब्रह्मचारी है इसीते हमारी उत्पत्ति आश्चर्यरूप है मुझ पुत्रका परिवारसहित स्वभाव सर्व प्रकारसे मातापर हुआ है निज पितापर नहीं परन्तु मूर्ख निजपरिवारसहित मुझको औ मुझके पिताको एकरूप जानते हैं इसीते दुःख पाते हैं विवेकी नहीं जानते इसीते सुखपाते हैं हे महाजनो मेरे पिता तो असंग हैं परन्तु मेरी माता भी किसीको सुख दुःख नहींदेती सुषुप्ति में प्रत्यक्ष देखलीजिये ताते सर्वको सुख दुःखका कारण मैंहींहूं निजपरिवारसहित हम पिताके धनसे जीवन करते हैं अपनी पूंजी कछुनहीं पिताके धनसेही यह संसाररूप बगीचा हमने खड़ाकरा है परन्तु पिताको इसका हर्ष शोक नहीं पिता विना हम कछुभी करसक्ते नहीं जहां हम दशोदिशा जाते हैं पिता हमको आगेही लाधता है जैसे वायु जहांजावे आकाश आगेही लाधता है हे साधो जो मेरे पिताको अस्ति भाति प्रिय सर्वरूप जानता है वा मन वाणी सहित वाङ्मनसगोचर नाम रूप बुध्यादि दृश्यका अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जगद्विध्वंस प्रकाशक अवेद्यत्व सदा की अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंद ब्रह्मात्मा दृष्टाको निज स्वरूप जानता है सो मेरा बाप है तिसको माया तत्कार्य हमलोकों गति (प्राप्ति) नहीं होगी पुनः राजा प्रियव्रत आयकर सभा में कहते भये हे प्रियदर्शन सभा व्रत नाम है नेमका औ प्रिय नाम है आनंदका जो वस्तु नेमसे आनंद स्वरूप होवे तिसका नाम है प्रियव्रत सो ऐसा मन्नादियोंका तथा सुख दुःखादियोंका साक्षी प्रत्यक् ब्रह्म

त्मा रथीने अविद्यारूप वा माया रूप रथकी वृत्तिरूप नेमी नाम नेम करने वाले काहै सो पृथिवी अप तेज वायु आकाशादि पदार्थों का नेम नाम स्वभाव जो रचागया है सो कोटि उपाय से भी अन्यथा नहोना इस संकल्प वालेका नाम नेमी है तिस नेमीवृत्ति से समुद्र उपलक्षत माया वा अविद्या मे लीन सर्व समुद्रादि जगत्को प्रादुर्भाव कर्ता भया है जैसे सुषुप्ति में लीन जगत् जाग्रत स्वप्न में प्रादुर्भाव होता है जो ऐसे नहीं माने तो अनादि पक्ष में तो उत्पत्ति प्रकारही नहीं बनसक्ता जो सादि मानेभी क्या प्रियव्रत मनुष्य राजा ते प्रथम मनु आदि राज्योंके वक्त समुद्र नहीं थे ऐसे नहीं किंतु थे काहेते समुद्रादि जगत्की उत्पत्ति सद प्रकरणोंमें मनुष्य व्यक्ति राजा ते होती है ऐसा नहीं लिखा अरु योग्यता भी नहीं है जीवकी अल्प सामग्री होनेते ताते प्रत्यक् आत्मा रूप प्रियव्रतको अपना स्वरूप सम्यक् जानो जो अनेक अर्थवादोंते शांत होवोगे काहेते जो २ चैतन्यके नाम हैं सो मनुष्योंके भी नाम हुआ कर्ते हैं नामकी समता देखकर भ्रम नहीं करना दृष्टांत जैसे सहस्रवाहु एक पुरुषका नामथा तथा युद्धादि करनेकी हजारों तिसको विद्या रूप भुजा यादथीं इसते सहस्रवाहु नामथा और एक मनुष्य व्यक्ति में हजार भुजा बनतीनहीं एते में पृथुराजा सभा में आयकर कहा हे नीतिज्ञसभा अशुद्ध मन रूप वेणु राजा है नीतिको छोड़के अधर्मपूर्वक विषयों में प्रवृत्ति यह इस मन रूप वेणुकी अन्याय कारिता है असत् संभाषणादियों ते मौनी औ सत उपदेशको श्रवण कर्के मनन कर्णेवाले जो मुनि हैं तिनका विचार पूर्वक जो सम्यक् सतसंगका जो अभ्यास है सोई भया मन रूप वेणुका मथन वा ऋषि नाम है इंद्रियोंका तिनकी जो स्वस्वविषयमें सज्जन लोगोंकी रीति से धर्म पूर्वक प्रीतिका अभ्यास सोई भया मथन तिसते रज तमसे दबा हुआ जो शुद्ध सत्व गुण रूपी वा बोध रूपी पृथुराज प्रादुर्भाव होता भया तिसने विचाररूपी धनुषसे अंतष्कर्ण रूपी पृथिवींते रज तम रूप वा काम क्रोधादिरूप ५। नाम रूपादि पर्वतोंको एक तर्फ कर्ता भया नाम आत्मा नात्माके विचारसे आत्माको त्रिकाल अबाध्य सत स्वरूप सम्यक् जानता भया औ अनात्म रूप पर्वतोंको आत्माते भिन्न मिथ्यत्व निश्चय वा अत्यंता भाव निश्चय जानता

192

भया तिसते उपरांत सर्व दोषों ते रहित अंतष्कर्ण रूप पृथिवी सत संभाषणादि तथा मैत्रतादि गुण रूप रत्नोंको देती भई तथा सत्व गुणकर युक्त हुई २ अंतष्कर्ण रूप पृथिवी धर्म रूप वर्षाकर मुमुक्षुओंके व्यवहारों में सचावट रूप अन्न होताहै तिसते मुमुक्षु स्वरूपमें संशय आदि शत्रु ओंते रहित निष्कर्तव्यता रूप तख्तमें वैठके निरतशै आनंदको अनुभव कर्ता है ताते जो मुमुक्ष वोध रूप पृथुराजाको मन रूपी वेणुते पूर्वोक्त अभ्यास रूप मथन ते उत्पन्न करेगा सो परमआनंदको प्राप्तहोवेगा॥पुनः शब्दादि विषय मनुष्य मूर्ति धारकर सभामें आयके वोलत भये हे पंच परमेश्वरो सर्व लोक हमारे मे दोष अरोपण कर्ते हैं कि यह विषय वंधनका कारणहैं परंतु पक्षपात रहित होकर यथार्थ विचार देखें तो हम किसीको भी वंधनका कारण नहीं अपने को आपही वंधन कर्ता है वंदरवत् काहेते आकाशादि पंचभूतोंके हम शब्दादि पंच गुण रूप पुत्र हैं वा हम शब्दादि पंच सूक्ष्म भूत हैं प्रथम पक्षमें तो पंच ज्ञानेंद्रिय पंच कर्मेंद्रिय पंचप्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार यह हमारे भ्राताहैं दूसरेपक्षमें स्थूल पंचभूतों सहित यह हमारे पुत्र पौत्र हैं सो हम निज भ्रातानसे वा निज पुत्रन से स्वभाविक वा राग द्वैषसे आपसमें व्यवहार कर रहे हैं अनुकूलता प्रतिकूलता हम शब्दादियों से हमारे भ्राता वा निज पुत्र जोमनादि वा श्रोत्रादि इंद्रियोंको हर्ष शोक होवो वा न होवो तात्पर्य यहकि हम शब्दा दियोंमें अनुकूलता प्रतिकूलता हमारे भ्राता वा पुत्र मनने मानींहै श्रोत्रादि इंद्रियोंनेभी नहीं मानी वा मनसाथ मिलके श्रोत्रादि इं-द्रियोंनेभी मानींहै सो हमारे पुत्र भ्राता हमारी अनुकूलता प्रतिकूलताकी प्राप्ति निवृत्तिका अनेक यत्न करो वा न करो वा हम उनके उपावनको मानें वा न मानें वा हमारे माता पिता शबल ब्रह्मको अविद्या अंतःकर्ण विशिष्ट चेतनको हम पुत्र पौत्रोंके कर्तव्योंका हर्ष शोकहो वा नहो वा हम उनका कहा मानें वा न माने इन कामोंका हर्ष शोक हम लोगोंको हो वा नहो परंतु पूर्वोक्त हम लोगोंके साक्षी प्रत्यक् आत्मा तीसरेको हमारे वींच पडनेमें क्या प्रयोजनहै यह मनआदियोंका साक्षी आत्मा अपनी महिमामे रहो अरु हम अपने घरमें निज संस्कारोंसे जैसा होगा वैसा भुक्तेंगे परंतु हम लोगोंके व्यवहारोंको यह आत्मा निज धर्म मानके दुःखी सुखी होवे तो इसमे

हमारा क्या अपराधहै वा इस प्रत्यक् आत्माने हम लोगोंको अपनी क्रीडावास्ते बनायाहै हम सर्व लोक इस आत्माके खेलनेको खिलौनेहैं विरोधी नहीं अब हमसे दुःख माननेसे क्या मतलबहै अबभी हमको खेलनेके साधनहीं जानना चाहिये मिलके भोजन करे पीछे जात पूछनी नादानीका कामहै हम शब्दादि विषयोंसेही इस साक्षी आत्माके रमनेका यह नाम रूप संसार चमन शोभ रहाहै जो हम नहीं होंवे तो चमनमे वृक्षोंकी न्याईतो फेर संसार क्याहै इनहीं काता संसारहै श्रोत्रादि इंद्रियोंसे शब्दादि विषय ग्रहण वेशक करो कोई दोष नहीं परंतु जुल्मसे असज्जन पुरुषोंकी न्याई मत ग्रहण करो हम इस जीवके आनंद वास्तेही उत्पन्न हुयेहैं दुःखके लिये नहीं न्याय पूर्वक श्रोत्रादि इंद्रियोंसे शब्दादि हम विषयोंको ग्रहणकर्त्ता पुरुषको राजदंड औ अपयश होता नहीं देखा दृष्ट कल्पनाके अनुसारही अदृष्ट कल्पना होतीहै अन्यथा नहीं जिन जिन कामोंसे इहाँ दंड औ अपयश होताहै तिन तिन कामोंसेही परलोकमेभी दंड औ अपयश होता होगा श्रोत्रादि इंद्रियोंका शब्दादि विषयोंको ग्रहण करना यह स्वाभाविक धर्महै धर्मी होते धर्मका निवारण नहीं होता यह ईश्वरी नेतहै जो स्वभाविक धर्म का निवारण किसी उपायसे होगा तो जगदांध प्रसंग होजावेगा पुनः जो हमको बुरा निजबंधनका कारण जानताहै तो तिसको शपथ है शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधादि हम विषयोंको मत ग्रहणकरे हम तिसको निमंत्रण नहीं भेजते जो हमारी निंदाभी करता है पुनः हमारा ग्रहणभी करता है सो बामता सी है औ हमारे बिना किसीका भी ब्रह्मासे लेकर चींटीतक ज्ञानी अज्ञानी का व्यवहार सिद्ध होवे नहीं जो अभिमान करे विषय क्या है सो हमसे रहितहो-कर देखलेवे हे साधो महाशब्दादि विषयों का किसी भी ज्ञानी अज्ञानीके साथ पक्षपातनहीं जो श्रोत्रादि इंद्रियों से हमारा ग्रहण करे-गा तिसको जैसा हमारा स्वरूप है तैसा अनुभव होनाहीं पड़ेगा ताते शब्दादिविषय इसको दुःख नहींदेते इसके अनाचारकर्महीं इसको दुःखदेते हैं जो शब्दादि विषयोंके साथ श्रोत्रादि इंद्रियोंके संबंधजन्य दुःखों का जनक पापहोताहोवे तो किसीको भी सुख नहीं होनाचाहिये काहेते यह बात अन्यवारण होनेते जो तीनोंकालों में सुषुप्तिविना किसी भी साधनसे जो निवारण न होवे तिस

193

के भोगने से पाप नहींहोता इन विना शरीरतो रहताहीनहीं नहींतो पाप कैसेहोगा किंतु नहीं होगा परन्तु स्वस्ववर्णाश्रम अनुसार यथा योग्य धर्मपूर्वक शब्दादि विषयों में श्रोत्रादि इंद्रियों का प्रवृत्ति निवृत्तिरूप कायदेको छोड़के अकायदेसे वर्त्तेगा तो दुःखों का जनक पापहोगा अन्यथा नहीं हे साधो यह पुण्य पाप हर्ष शोक सुख दुःख बंध मोक्षादिकी पंचायत माया तत्कार्य मे हमलोग असत जड़ दुःखरूप दृश्यकोटि में वर्त्तनेवालोंकी है हम दृश्यका दृष्टा देश काल वस्तु भेद रहित सत् चित् आनंदरूप प्रत्यक् आत्माको असंगहोनेते तिसको यह पूर्वोक्त पंचायत नहीं चाहिये नाम कार्य कारणरूप अनात्माके धर्म आत्मा के नहीं मानने चाहिये काहेते आत्मा नात्मा का सम्यक् दर्शनहीं कर्त्तव्य है असम्यक् दर्शनहीं अज्ञानहै शारीरिकधर्म ज्ञानी अज्ञानीके तुल्य है संकल्प का भेदहै पुनः वामनभगवान आयकर बोले हे शांतिदा सभा वामन नाम निश्चयकर वा प्रसिद्ध जो अमन वस्तुहै तिसका नाम वामन है सो मनरहित मनादियों का दृष्टा प्रत्यक्आत्मा है कार्यसहित मूलाज्ञानरूप कश्यपकी परंपरासंतति सत्वगुण न्यूनाधिक रज तम गुण विशिष्ट तुला ज्ञानरूप वलिराजा जानना "यज्ञोवैविष्णु" यज्ञनाम विष्णुका है "विश्वप्रवेशनेपूर्णे वा" विष्णु नाम पूर्णवस्तु का है जो पूर्ण वस्तु है सोई आनंदरूप वस्तु है जो आनंदरूप वस्तु है सोई सत ज्ञानस्वरूप वस्तु है जो सत ज्ञानरूप वस्तु है सोई आनंदरूप वस्तु है ताते सो पूर्वोक्त वलिराजा असत जड़ दुःख अनात्मारूपभी परंतु कार्याध्यासके वलसे वा चिदात्म अध्यासके वलसे आपको सत् चित् आनंद आत्मा पूर्ण यज्ञप्रतीति रूपयज्ञ करता भया कैसा है वलि तीन शरीरादि त्रिक त्रिपुटीरूप त्रिलोकीका ब्रह्मात्म अपरोक्ष ज्ञानवान पुरुषरूप वैकुंठ देश छोड़के राज्य कर्ताभया औ शुद्ध अंतःकर्णरूप स्वर्गमें शुद्ध सत्वगुणरूप मुमुक्षु वा विवेक रूप मुमुक्षु इंद्र विचार कर्ता भयाकि पंच ज्ञानेंद्रिय ५ पंच कर्मेंद्रिय ५ पंच प्राण ५ औ मन बुद्धि २ पंचमहाभूत ५ औ देश औ काल २ ये चौविस भाव कार्य पदार्थ हैं एक अभाव पदार्थ है सब मिलके पचीस २५ हुये वा काम क्रोधादि पचीस प्रकृतिरूप पदार्थ जानने वेदांतोक्त वा सांख्योक्त पचीस २५ तत्वरूप पदार्थ जानने इत्यादि औ पचीसही

इनके देवता औ पचीसही २५ इनके विषय औ पचीसही २५ इनकी वृत्ति यह सर्व मिलके शत पदार्थ असत् जड़ दुःख अनात्मारूप हैं इनमें जब क्रमसे सत् चितं आनंद आत्मबुद्धिरूप पूर्वोक्त अज्ञान रूप बलिराजाका पूर्वोक्त यज्ञ पूर्ण होजावेगा तो शुद्ध अंतष्कर्णरूपी स्वर्गमेभी इसीका राज्य होजावेगा तात्पर्य यह कि दृढ अध्यास होजावेगा तब हम तिरोभाव हुये २ जन्मांतरोंको पावेंगे इसवास्ते पूर्वोक्त अज्ञानरूप बलिराजाका यज्ञ भंग करो नाम देहाध्यास छोडके आत्माको सच्चिदानंद सम्यक् निजरूप जानेंगे तब हम सत संभाषणादि देवतों सहित अंतष्कर्णरूप स्वर्गमें सुखी होवेंगे सो यह कार्य ब्रह्मनिष्ठ गुरुरूप विष्णुविना अन्यसे होगा नहीं यह विचारकर मुमुक्षुरूप इंद्र सतसंभाषणादि देवतों सहित विष्णुरूप गुरुकेपास शास्त्र रीति अनुसार जाय प्रार्थनाकर बोले हे भगवन् अज्ञानरूप बलिने सतसंभाषणादि देवतों सहित हमको अंतष्कर्णरूप स्वर्गमेसे निकासनेकी इच्छा कर पूर्वोक्त शतयज्ञ पूर्णमें दृढ प्रवृत्ति करी है और हमारे रक्षक आपही हो अन्य कोई नहीं काहेते ब्रह्म श्रोत्री ब्रह्मनिष्ठ गुरूरूप विष्णुही अज्ञान रूप तमको ज्ञान रूप दीपकसे दूर कर सक्ताहै अन्य नहीं इत्यादि प्रश्न सुनके गुरु विष्णु ब्रह्मविद्याका मुमुक्षु रूप इंद्रको उप-देश करते भये हे देवतो तत्पदका लक्ष अर्थ जो मैं सत् चित् आनंद लक्षणोंवाला ब्रह्मही तुम्हारे अंतष्कर्ण देशमे त्वंपदका लक्ष्यार्थ मनादियोंका साक्षी रूप करके स्थित हूं औ तत्पद औ त्वं पदके वाच्यार्थ अज्ञान तत्कार्यको असत् जड दुःख अनात्मा जानो इत्यादि गुरूरूप विष्णुके उपदेश ते इंद्र रूप मुमुक्षुको उत्पन्न भई जो ब्रह्मात्माको विषय कर्णेवाली अंतष्कर्णकी परमारूप वृ-त्ति औ इस वृत्ति अरुढ वृत्तिका साक्षी चैतन्य दोनो मिले हुयेका नाम बोध रूप वा मन अवतार है जैसे महाकाशका घटाकाश अव-तार होताहै सो बोध रूप वामन तूला अज्ञान रूप बालि पै जायके तीन कदम रूप पृथिवीका दान मागा तात्पर्य यहकि तीन कदम रूप सत्व रज तम त्रिगुणात्मक रूपही अज्ञान तत्कार्य जगत् है औ अज्ञान तत्कार्य को असत जड़ दुःख रूप सम्यक् जो जानना नाम मिथ्यत्व निश्चयवा अभाव निश्चय जानना है यही तीन कदमों का नापनाहै मैं सत् चित् आनंद स्वरूप आत्मा अज्ञान तत्का-

यं ब्रह्मांड रूप कार्यका मैं साक्षी हूं यही ब्रह्मांड का फोडना है काहेते आत्मा अज्ञान तत्कार्य ब्रह्मांडका साक्षी होनेते ब्रह्मांड ते वाहर है तिसका दृढ निश्चय रूप पाद ते जीवनमुक्ति रूपी गंगा उत्पन्न होती भई तिस में मुमुक्षु स्नान कर पवित्रहोते हैं तात्पर्य यहकि उपदेश ते सद्गति रूप पवित्रताको प्राप्त होते हैं इतने मे श्रोत्र मनादि इंद्रिय मनुष्य मूर्ति धारकर आय वोले हे जितेंद्रिय पूर्वक आत्मदर्शीयो शब्दाति विषयोंको ही हम श्रोत्रादि इंद्रिय ग्रहण कर सक्ते हैं शब्दादियोंते भिन्न शब्दादियोंका साक्षी प्रत्यक् आत्माको हम ग्रहण नही करसक्ते काहेते शब्दादि आकाशादि पंचभूतोंके गुण नाम पुत्र हैं औ हम श्रोत्रादि इंद्रिय भी पृथिवी आदि भूतोंके कार्य नाम पुत्रहैं ताते इनका हमाराही आपस मे संवंध है इसी तेही हमारा इनका हमेसा सुषुप्ति विना संयोग वना रहता है शब्दादियोंके अनुकूलता प्रतिकूलता दि हमारे भ्राता मनको हर्ष शोक होता है हम श्रोत्रादि इंद्रियोंको भी होतानहीं हम लोगोंके साक्षी आत्माको कहांसे हर्ष शोकहोवे गा जो आत्मा हमारे धर्मको अपना धर्म मानेगा तो तिसको भ्रांति सिद्धहोगी और हमारा बड़ाभ्राता अन्तष्करणरूप मनभी जाति गुण क्रियावान संवंधवान माया तत्कार्य पदार्थों काही सोभन असोभन चिंतनपूर्वक हर्ष शोक करता है मनादियोंके साक्षी आत्माको तो वृत्तिरूप मनादि चिंतनहीं नहीं करसक्ते क्योंकि चिंतनका भी आत्माको साक्षी होनेते जो शब्दादि विषयरूप तथा संकलपादि वा जाति गुण क्रिया संवंधादि पदार्थरूप आत्मा होवे तो हम लोगोंके विषय आत्माहोवे सो शब्दादि विषयरूप आत्मा है नहीं इसते हमारा विषयभी आत्मानहीं हमलोगतो शब्दादि विषयको विषय करकेही चरितार्थ हैं इसते आगे हम अंधहैं विधिपक्ष देखते हैं तो चक्षुआदि इंद्रियों का विषय स्वर्ण चीनी मृत्तिका तंतु स्वप्नद्रष्टा जलपंचभूतादि है भूषण खिलौने घट पट स्वप्न पदार्थ तरंग भातैका- दि पदार्थ नहीं काहेते कल्पितकी सत्ता तथा कार्यकी सत्ता अधिष्ठानकी सत्ताते तथा उपादान कारणकी सत्ताते भिन्नसत्ता नहींहोती इसते सर्वनामरूप माया तत्कार्य असत् जड़ दुःखरूप जगत्को सत् चित् आनंदरूप आत्म अधिष्ठानविषे कल्पितहोनेते सर्व प्रकार

से अस्ति भाति प्रियरूप आत्माहीं श्रोत्र मनादि इंद्रियों का विषय है कल्पित नाम रूप पदार्थ हम लोगोंके विषय नहीं औ कर्मेन्द्रिय औ प्राण हमारे आतानमें तो ज्ञानशक्ती है नहीं सो केवल वाक्‌उच्चारण लेन देन गमनागमन मल मूत्रका त्याग एतावनमात्रही व्यवहार करे हैं औ प्राणादि अन्नपानादि व्यवहार करेहै इतनी क्रियामात्र मेंहीं यह चरितार्थ हैं ताते साक्षीआत्मा अवांमनसगोचर है एते में भैरव आयकर बोले हे अभयदायक सभा जिसके भयसें इंद्र सूर्य चन्द्रमा अग्नि वायु यमादि चलते हैं नाम आप अपने व्यवहारमें नेमपूर्वक प्रवृत्ति निवृत्ति करते हैं सूर्य चन्द्रमादि ग्रहणते चक्षुमन्नादि इंद्रियोंका भी ग्रहणकरना सो ऐसा भैरवब्रह्मात्मा है औ सोचदेखतेहैं तो अभय भय जड़ पदार्थों में नहींहोता अरु चैतन्यमें भी भयदेना वनतानहीं जैसे आकाश चारभूत भौतिक पदार्थों को अवकाश देताहै है तैसे ब्रह्मात्मा सर्व नाम रूप माया तत्कार्य प्रपंचको अभयदान नाम सिद्धकरता है चैतन्य पूर्वकही जड़पदार्थोंके न्यूनाधिक व्यवहारका जैसे चलानेका संकेत करताहै तैसाही चलता है औ बुद्धिविना चैतन्यपुरुषभी कछुनहींकरसक्ता यह सर्वके अनुभव सिद्धहै औ संकेतको तोड़ना अतोड़ना तथा भय अभय जड़ पदार्थ जानतेही नहीं चैतन्य पुरुषही संकेतको तथा तिसके तोड़ने न तोड़नेको तथा तिनके न्यूनाधिक होने न होने से भय अभय को जानता है औ चैतन्य भिन्न सर्वको जड़होने तें॥ औ अनादि पक्षमे तो जगत् करता ईश्वर है नहीं तिसमें तो ईश्वरके भयसे सूर्य्यादि चलते हैं यह वात वनतीनहीं जगत्‌के अवांतर अनेकप्रकारके द्रव्य गुण संयोगसे पुरुषोंकी वनावट वन सक्तीहै सादि पक्षमेंही उत्पत्ति वनेगी परंतु सादि अनादिका कछु मालूम पड़ता नहीं मनुष्योंके वनाये शास्त्र द्वाराही जगत्‌को सादि अनादि आदि व्यवहार कहना पड़ताहै जीवतोंने शास्त्र वनायेहैं मृतकों ने वनाये नहीं क्या जाने क्या तद्‌वीरहै प्रत्यक्ष दृष्टांत तो तार रेलादि अनेक जड पदार्थोंके अनेक प्रकारके प्रजाके व्यवहार सिद्धि लिये चैतन्य पुरुषोंने ही संकेत करेहैं रेलादि पदार्थोंको भय अभयादि कछु नहीं ताते भय शब्दका अर्थ संकेत करना तात्पर्य यह कि जिस रीतिका जड पदार्थोंका चैतन्य पुरुषने संकेत बांधाहै वैसेही चलताहै अन्यथा नहीं सो संकेतक चैतन्य पुरुषहैं चाहे ईश्वरहो चाहे

जीवहो चाहे आत्माहो चाहे खुदाहो नामांतर भेद बेशकहों परंतु चैतन्य पुरुषमे भेद नहीं पुनः हिमवान पर्वतों का कोई मनुष्य राजा था तिसका नाम हिमालय पर्वत था सो आय बोला हे एकाग्रचित्तवानसभा गुरुका शरीर हिमालय पर्वतहै और जिज्ञासुका शरीर तिसकी स्त्री मेना जाननी तिनके परस्पर आत्मा नात्माके विचार रूप मैथुनते ब्रह्माकार वृत्तिरूप पार्वती होती भईहै और मैत्र तादि वृतियां तिसकी सखियां होती भई हैं सो प्रत्यक् अभिन्न ब्रह्मात्मा रूप महादेवका तथा पूर्वोक्त पार्वतीका अज्ञान तत्कार्य अनर्थकी निवृत्ति और निरतशय परमआनंदकी प्राप्तीरूप विवाह कर्ते भये नाम " यत्रयत्र मनोयाति तत्रतत्र समाध्यः" यही अर्थ जिज्ञासुओंको उपादेयहै नहीं तो बाहरकी कथाका मुमुक्षुओंको कछु उपयोग नहीं मनुष्योंके व्यव हार जड पर्वतोंसे नहीं होते और तैसेही मच्छ कच्छ संज्ञावाले समुद्रके तीरे मनुष्ययोनियोंमें विष्णुके अवतार वा तिनके राजोंकेभी मच्छ कच्छ नाम थे सो मच्छ कच्छ पूर्वोक्त सभामें बोलते भयेहैं कोई जल जंतु मनुष्यवत् बोल नहीं सक्ते पुनः ध्रुव बोला हे साधो जीवरूप स्वयंभुव मनुके कुलविषे मनरूप उत्तानपाद जानना तिसकी राजसी तामसी वृत्तिरूप प्रवृत्ति तथा सात्विकी वृत्तिरूप निवृत्ति दोस्त्री हैं तिस निवृत्तिरूप स्त्री ते पूर्व पुण्योंके वशते सर्व वैरागादि देवी गुणोंसंयुक्त मुमुक्षुतारूप व्यव साय दृढ़ सात्विकी वृत्तिरूप निश्चय उत्पन्न होता है सोई ध्रुव तुमने जानना सो प्रवृत्ति वृत्तिरूप स्त्री मनरूप उत्तानपाद राजाको अतिप्रिय होनेते सदा सन्मुख रहती है निवृत्ति नहीं यह सर्वके अनुभव सिद्ध है औ प्रवृत्ति निवृत्तिका विरोधभी सर्वके अनुभव सिद्ध है तत्जन्य प्रजाका विरोधभी सर्वके अनुभव सिद्ध है सो कदाचित्त निवृत्तिका पुत्र दृढ सात्वकी निश्चयरूप ध्रुव प्रवृत्तिरूप स्त्रीके सन्मुख हुआ सो प्रवृत्ति अपना तथा निज बालबच्चोंका मुमुक्षुतारूप दृढ सात्विकी निश्चयरूप ध्रुवको अनिष्ठ जानके तिरस्कार करा तात्पर्य यह कि राजसी तामसी प्रवृत्तिमें जो प्रवृत्तिपुरुष हैं तिनको वैरागादि सहित मुमुक्षु पुरुषोंका संबंध नही बनता यही तिरस्कार है औ कदाचित्त जो वैरागवान मुमुक्षु पुरुष किसी अदृष्ट निमित्तसे

प्रवृत्ति कर्तेंभी हैं तो तिस राजसी व्यवहारमें अवश्यमेव दुःख पाते हैं परंतु निज पूर्व पुण्योंके वशते वा ईश्वर अनुग्रह ते कल्याणकारी पुरुष पुनः निवृत्तिरूप ब्रह्मविद्या स्त्रीकोही प्राप्त होते हैं सो ब्रह्म विद्यारूप माता मुमुक्षुओंको उपदेश कर्त्ती हैं हे मुमुक्षु जनो जो तुमने प्रवृत्तिजन्य विषय सुख भोगना है तो प्रवृत्तिके उदर नाम तिसके वीच मेंही रहो और ब्रह्मानंद सम्यक् विचार रूप निवृत्ति रूप स्त्रीमे है आगे जो इच्छा होय सोई करो सो पूर्वोक्त ध्रुव रूप मुमुक्षु ब्रह्म विद्या रूप माताके उपदेश ते चित्तकी एकाग्रता रूप तपको कर्त्ता भया नाम चित्तकी वृत्ति और प्राणोंको सर्व ओरते खेंचकर एक अंगुष्ठ में धारण कर्ता भया सकाम मन रूप इंद्र सज्जनोंकी नीतिसे अधिक शब्दादि विषयोंको ग्रहण करने वाला श्रोत्रादि इंद्रिय रूप देवता सहित सकाम मन रूपी इंद्रका यह शरीर रूप स्वर्गही विषय सुख भोगनेका स्थान है जब मुमुक्षु चित्तकी एकाग्रतादि तप साधन कर आत्म ज्ञान संपादन करेगा तो पुनः देह धारणका अभाव होगा इसते पूर्वोक्त मन इंद्र रूप कामादि आसुरी संपदा सहित देवतोंके समाज काभी मनुष्य देह रूप स्वर्ग में अभाव होगा इसवास्ते अपने इष्टकी रक्षा वास्ते पूर्वोक्त मन इंद्रिय रूप देवता मुमुक्षु रूप ध्रुवको विघ्न कर्त्ते भये जो ऐसे नहीं माने तो इंद्रकी शास्त्र में नियत आयु अवाध लिखी है तथा इंद्र सर्वज्ञ लिखा है जो किसीके उग्रतपसे इंद्रनिजपद से गिरेगा तो इंद्रकी नियत आयु कथन करने वाला शास्त्र व्यर्थ हो जावेगा ताते पूर्वोक्त व्यवस्था ही ठीकहै येतेमे हनुमान आयकर बोलत भये हे संतो षट्वस्तु अनादि पक्षमें जीव ईश्वर दोनों भाई है राम ईश्वर हैं और लक्ष्मण जीवरूप मुमुक्षु हैं मन इंद्रिय रूप इंद्र देवतोंको जीतनेवाला इंद्रजीत रूप गुरूने ज्ञान रूप शक्ति मारन से मुमुक्षु रूप लक्ष्मण को मूर्छा हुई नाम आवर्ण विशिष्ट अज्ञानांशका नाश यही मूर्च्छा है विक्षेप विशिष्ट आज्ञानांश रूप हनुमान ने शरीर रूप पर्वत से प्रारब्ध रूप सजीवन बूटी से तथा राम रूप ईश्वरकी कृपा से निज स्वरूप से भिन्न सर्व नाम रूप जगत्का मिथ्यत्व वा अभाव निश्चय रूप बाधत संसारकी प्रतीति पूर्वक जो जीवनमुक्ति सोई मूर्च्छा खुलनी है इइति प्रसिद्धं नू इति वितर्क कर्के जो मान्यके

196

योग्य होवे वा माया तत्कार्य में नहीं औ मेरा नहीं किन्तु मैं तिसका द्रष्टा हूं इस निश्चयवानका नाम हनुमान है सो मन इंद्रियादि जड़ पदार्थोंकर प्रत्यक् आत्मा ही मान्य देने योग्य है चैतन्य होनेते इसते प्रत्यक् आत्माको ही हनुमान कहे हैं ताते हे अधिकारी जनो मुझ प्रत्यक् आत्मा हनुमान कोही अपना आप स्वरूप जानो जो जन्म मरण ते रहित जीवनमुक्त होकर मुझकी न्याई विचरोगे॥

इति पक्षपातरहित श्रीअनुभवप्रकाशस्यसप्तमःसर्गः ॥ ७ ॥

कार्णदेवका पुत्र कार्यदेव छोटी अवस्थामेंही गुरूके गृह जायके वेदादि विद्या सर्व पढके निज गृहमें आयके माता पिताका शास्त्ररीति अनुसार पूजन करा परंतु नित्य नैमित्यादि कर्म रहित तूष्णी स्थित होरहा पिता यह अवस्था पुत्रकी देखकर बोला । हेपुत्र कर्मोंकी पालना तू क्यों नहीं कर्ता तात्पर्य यहकि कायिक वाचिक मानासिक कर्मनाम कर्नेकाहै कर्म नहीं कर्नेसे शरीर नष्ट होवेगा पुत्रने कहा हे पिता वेदमें कहाहै कर्मों करहीं बंधन होताहै ताते मोक्ष प्राप्तिके यत्नवान मुमुक्षु पुरुष कर्मनहीं कर्ते औ न कर्मोंकर मोक्ष होतीहै न धनकर न पुत्रकर होतीहै केवल कार्य कार्ण रूप इस संघात रूप अहंकारके त्याग करही मोक्ष होतीहै इत्यादि अनेक वाक्य हैं औ पुनः यहभी वेदमें कहाहै कि उपनयनसे वा विवाहसे उपरांत जितने तक जीवे अग्निहोत्र कर्म कर्त्ता हुआही जीवनेकी इच्छा करै इत्यादि अनेक वेद में वाक्य देखनेमें आते हैं इसवास्ते दोनो मध्ये मुझको क्या कर्तव्य है तात्पर्य यहकि कर्म नाम कर्नेका है कायिक वाचिक मानसिक कर्म कर्नेसे ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष नाम सुखकी प्राप्ति होती है ॥ इस संशय रूप समुद्र विषे मैं डूब रहा हों मुझको पार करो मैं आपकी शरणागत हूं पिताने कहा हे पुत्र कर्म उपासना ज्ञान तीनोंके प्रतिपादक वेद विषे वाक्यहैं तात्पर्य्य यह कि अंतःकर्णकी शुद्धि वास्ते कर्मकांड है अंतःकर्णकी निश्चलता वास्ते निर्गुण वा सगुण वस्तु की अनेक प्रकारकी अहं ग्रह वा प्रतीक ध्यान भक्ति रूप उपासना कांडहै औ अंतःकर्ण विषे ब्रह्मात्माके अवर्ण की निवृत्ति वास्ते ज्ञानकांड है औ शुद्ध औ निश्चल अंतःकर्ण विषे ही ज्ञान होवे है अन्यथा नहीं ताते ब्रह्मात्म एकत्व ज्ञानते प्रथमहीं कर्म उपासनाके

प्रतिपादिक वाक्योंका मुमुक्षको अनुष्ठान कर्तव्य है औ ज्ञान उत्तर काल कर्मोंका त्याग कर्तव्य है जैसे छोटे वृक्षको ही जल सिंचनादि व्यवहार है दृढको नहीं तथा पक्षी बच्चाके माता पिता तबलगही बच्चेको सेवन करते हैं जबलग परवृद्धि नहीं होते उपरांत करेगा तो पर गल जावेंगे यह तिन वेद वचनोकी व्यवस्था है ताते हे पुत्र तू ब्रह्मात्मा एकत्व ज्ञानके योग्यहै पुत्रने कहा हे पिता ब्रह्मका अनुभव क्याहै पिताने कहा हे पुत्र जो चैतन्य वस्तु अंतर आप मन बुद्धि आदिकोंसे अज्ञात हुआ २ अरु अज्ञान तत्कार्य मन बुद्धि आदियोंका अंतर ज्ञाता करके जो चैतन्यकी स्फूर्ति है सोई ब्रह्मका अनुभव जानना है तथा देश देशांतर जो वृत्ति जाती है तथा स्वप्न में स्वप्नांतर जो मनको होताहै तिनके अनुभव करनेवालेको ब्रह्म निजात्म जानना यही ब्रह्मका अनुभव है मैं ब्रह्मको जानता हूं यह जो निश्चय है सो अब्रह्म अनात्म मिथ्या निश्चय है काहेते जो जानने में आताहै सो निश्चय दृश्य होताहै जैसे जो सूर्य सें प्रकाशने में आताहै सो निश्चय प्रकाश्य सूर्यकी दृश्य होताहै औ सूर्य चैतन्य भिन्न किसीसे प्रकाश्यरूप दृश्य प्रकाशने योग्य नहीं ताते दृष्टांत विषे सूर्य स्वयंप्रकाश है काहेते घटपटादि प्रकाशसूर्यको प्रकाशता नहीं अन्य प्रकाशकका अभाव होनेते तैसे ब्रह्म रूप आत्मा बुद्धि आदिसे जानने में आवेगा तो ब्रह्मात्मा दृश्य हो जावेगा अरु बुद्धि स्वयंप्रकाश होवेगी यह अर्थ श्रुति विद्वानोको अंगीकार नहीं ताते मैं ब्रह्म रूप आत्माको जानता हूं यह निश्चय ठीक नहीं॥ किंतु ब्रह्मरूप आत्मा तो जानने वालेका स्वरूप स्वयं प्रकाश सर्व बुद्धि आदियोंका द्रष्टा है बुद्धि आदियोंसे जानने में कैसे आवेगा किंतु नहीं आवेगा जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्ननरोंके मन बुद्धि आदियों से नहीं जानाजाता है ॥ उलटा स्वप्ननरोंको जानता है इसी ते स्वयंप्रकाश है हे पुत्र ब्रह्मात्माका स्वरूप केवल शुष्क तरको करके नहीं सम्यक् अपरोक्ष जानने में आता न बहुते श्रवण करने से जाना जाता है न केवल चतुराईसे जाना जाता है न अभिमान पूर्वक वेदादि विद्याध्ययनसे प्राप्त होताहै किंतु केवल अहंकार रहित सरलता बुद्धि पूर्वक उतकट जिज्ञासा सहित सम्यक् श्रद्धालु आचार्य्यवानको हीं यह आत्मा सुलभ प्राप्त होता

है पुत्रने कहा हे पिता इस मन्नादि जड संघातका प्रेरक जीवहै कि ब्रह्मात्मा पिताने कहा हे पुत्र इसमे दृष्टांत सुनो जिससे तुझको जीवेश ब्रह्म तथा प्रेरक प्रेरय भाव जाना जावेगा जैसे आकाश सूर्य्यके प्रतिबिंब विना जल नहीं होता है अरु जल विना प्रतिबिंब नहीं होता है जल प्रतिबिंब एकट्ठेहीं होते हैं जलके ग्रहण से प्रतिबिंब काभी ग्रहण होताहै तात्पर्य्य यहकि जिस सूर्य्य वा चक्षु वा आकाशने जलको प्रकाशा है वा अवकाश दिया है तथा जिसने सर्व जगत्को प्रकाश अवकाश दिया है सोई जल सहित प्रतिबिंबको प्रकाशता है वा अवकाश देताहै यह दृष्ट सिद्ध है ताते जलको प्रकाश्य योग होनेतें प्रतिबिंब भी अवश्य प्रकाश्य योग्य होवेगा तैसेही अंतःकर्ण रूपी जलमे वा अविद्या अंशमे ब्रह्मात्मा रूप सूर्य्य वा आकाशका प्रतिबिंबवत् प्रतिबिंब पड़ता है दोनो मिले हुयेका नाम जीवहै औ बिंबका नाम ब्रह्म ईश्वर आत्मा है अंतःकर्ण वा अविद्या सहित प्रतिबिंब रूप जीव ते भिन्न और कहीं जीवकी सिद्धि होती नहीं और होती हो तो तुमही कहो तुम भी शास्त्रज्ञ निज अनुभव वाले हो ताते अंतःकर्ण सहित प्रतिबिंब जीवहै तात्पर्य्य यहकि त्वं पदका वाच्यर्थ है यही पूर्वोक्त जीवही जल सहित प्रतिबिंबके गमनादि की न्याई कर्ता भोक्ता परलोकमे गमन पुनः इसलोकमे आगमन ज्ञान अज्ञान हर्ष शोक सुख दुःख बंध मोक्षादि धर्मोंवालाहै बिंबनहीं जैसे जलमें प्रतिबिंब का लक्ष रूप जो सूर्य्यादि बिंबहै सो पूर्वोक्त सर्व जल सहित प्रतिबिंबके धर्मोंते रहितहै तैसे अंतःकर्ण सहित प्रतिबिंबरूप जीवका लक्ष रूप जो ब्रह्मात्मा बिंब स्वरूप साक्षी चैतन्य ईश्वर अंतर बाहिर स्थितहै सो पूर्वोक्त सर्व समन प्रतिबिंब मनका रूप जीवके धर्मोंते रहित स्वतःही निर्विकार निर्विकल्पहै ताते यह सिद्ध हुआ जो अंतर वस्तु मन बुद्धि आदियोंसे अज्ञात हुई २ और सर्व बुद्धि आदियोंको जो अंतर प्रकाश करे नाम जाने तिस वस्तुको ब्रह्मकहो चाहे अल्ला खुदा रहीम ईश्वर चाहे नारायण चाहे कृष्ण चाहे राम चाहे अंतर्यामी चाहे गाड चाहे परमात्मा कहो चाहे ईश्वर चाहे आत्मा प्रत्यक् कहो चाहे पुरुष कहो चाहे सत् चित् आनंद कहो परंतु पूर्वोक्त लक्षण युक्त बिंब भूत वस्तुही तुम्हारा तथा हमारा तथा सर्व जगत्का निःसंदेह स्वरूपहै यही वस्तु सर्व इंद्रिय प्राण देह मनादि

संघातका प्रेरकहै अन्य जीवनहीं जीव प्रेर्य्यहै काहेते पूर्वोक्त रीतिसे जीवत्वको दृश्य होनेते मिथ्याहै तात्पर्य यह कि जो अंतःकर्ण रूप दृश्यकी व्यवहारक वा प्रातिभासक सत्ताहै सोई प्रतिबिंबकीभी सत्ताहै भिन्न नहीं काहेते अंतःकर्णके अनुजाई प्रतिबिंबकोहोनेते बिंब मनके अनुसारी नहीं परंतु संसार दशामें नाम ब्रह्मातम अज्ञात दशामें पूर्वोक्त जीव अबाध्य रूप सतहै इसीते शास्त्रने जीवको सनातन सत कहाहै परंतु जीवका परमार्थ लक्ष स्वरूप बिंबभूत ब्रह्मात्मा त्रिकालक सत स्वरूप अबाध्यहै अन्य जीवादि नहीं॥ जैसे जल सहित प्रतिबिंब मिथ्याहै बिंब भानुसतहै॥ हे पुत्र यह सर्व बुद्धि आदियोंका प्रकाशक प्रेरक ब्रह्म रूप आत्माको श्रुतिने प्राणोंका प्राण है चक्षुओंका चक्षु है श्रोत्रोंका श्रोत्र है त्वचाका त्वचारूप है मनका मनरूप है आकाशका आकाश रूप है इत्यादि सर्वको जान लेना तात्पर्य्य यह कि सर्व नाम रूप दृश्य वस्तुओंका अस्ति भाति प्रियरूप आत्मा स्वरूपभूत है जैसे सर्व नाम रूप तरंगादियोंका मधुरता द्रवता शीतलतारूप जल अपना स्वरूप है तथा जैसे सर्व स्वप्न पदार्थोंका स्वप्नद्रष्टा स्वरूपभूत है जैसे भूषणोंका स्वरूप स्वर्ण है जैसे खिलौनोका स्वरूप चीनी है जैसे कल्पित सर्प दंड माला आ-दियोंका रज्जु अपना स्वरूप है इत्यादि अनेक दृष्टांत हैं तैसे नाम रूप प्रपंचका अस्ति भाति प्रियरूप मैंहीं स्वरूप हूं वा कार्य कारणरूप प्रपंच मन वाणी सहित वाङ्मनसगोचर ते मैं आत्मा अवाङ्मनसगोचर हूं इस निश्चयवाला पुरुष जीवत अव स्थामेंही अमृतभावको प्राप्त होता है हे पुत्र जो चैतन्य मन बुद्धि श्रोत्रादि इंद्रियोंके अंतर मन श्रोत्रादि इंद्रियोंसे अभिन्न हुये की न्याई स्थित हुआ २ जो मन बुद्धि प्राण श्रोत्रादि जड़ इंद्रियोंको आप अपने व्यवहारमें जड़ पुतलीको पुरुषवत् प्रेरकर जोडता है तथा तिनके न्यूनाधिक व्यवहारको जानता है अरु मन इंद्रियादि जिस अपने प्रेरककोभी नहीं जानते उलटा मनादियोंको जो प्रेरता जानता है नाम सत्ता स्फूर्ति प्रदानकर्ता है सोई देव मनादि इंद्रियों ते भिन्न मनादियोंका साक्षी तुम्हारा स्वरूप है ऐसेही पृथिवी आदि सर्व पदार्थोंमें जोड लेना हे पुत्र जैसे धान काटनेके शस्त्रको पुरुष धान काट-

ने वास्ते प्रेरता है तैसे यह येक आत्मा मनादि इंद्रियोंको भिन्न होकर आप अपने व्यवहारमें प्रेरता नहीं किंतु जैसे स्वप्नद्दष्टा स्वप्नइंद्रिया दि पदार्थोंमें स्थित हुआ २ निर्विकार होकर प्रेरताहै जैसे आकाश सर्वमें स्थित हुआ २ सर्वको अवकाश देता असंग है यही तिसका प्रेरणत्वहै तैसे तुम ब्रह्मात्मा नाम रूप मनादि दृश्य विषे स्थित हुये २ तथा मनादि दृश्यके प्रेरक प्रकाशकहुये २ भी असंग होनेते स्वतः निर्विकार निर्विकल्प शांत रूप स्थित हो यद्यपि मनादि जड प्रेरय्य अरु तुम्हारा स्वरूप चैतन्य प्रेरक एक रूप अविवेक दृष्टिसे भासते भी हैं ॥ जैसे काष्ठ अरु अग्नि अविवेक से एक रूप भासते भी हैं तथा दूध घृत विचारे विना एकमेक भासते भी हैं परंतु एक नहीं तथापि विवेक दृष्टिसे प्रेरय प्रेरक जड चैतन्य तथा अग्नि अरु काष्ठ एक रूप होते नहीं प्रसिद्ध तंत्र तंत्रीकी न्याई वा देह विषे देहीकी न्याई वा देह विषे पिशाचवत् वास्तवभिन्न हीं हैं ताते तुम आपको मनादियों का प्रेरक अंतर्यामी ब्रह्मात्मा जानो पुत्रने कहा हे पिता जब मन इंद्रियादियोंको आप अपने शुभाशुभ व्यवहारकी प्रवृत्ति निवृत्ति प्रेरक कोई अन्यदेव है तो इस जीवको शुभाशुभ कर्मोंका फल सुख दुःख न होनाचाहिये काहेते दुःख की इच्छा न कर्त्ता हुआ वलात्का र राज पुरुषने शुभाशुभ जोडते हुये की न्याई दुःखके साधनो में पुरुष जुडता है तैसे ही सुखके साधनोमें भी जान लेना हे पुत्र शुभाशुभ कर्म संघातके प्रसिद्ध धर्म हैं धर्म सहित इस संघातके दृष्टा आत्माके नहीं परंतु भ्रांतिसे निज धर्म मानता है ॥ इसीते कर्मका फल सुख दुःख भोक्ता है परंतु पर संघातके धर्म निजधर्म नहीं मानेतो नहीं भोक्ता जैसे पुत्रके सुख दुःखसे पिता भ्रम कर सुखी दुःखी होताहै विचारे तो पिताको पुत्रके सुख दुःख नहीं हे पुत्र जैसे घटाकाश तथा स्वप्नदृष्टा घट स्वप्नको अवकाश सत्ता स्फूर्ति देतेभी घट स्वप्नके व्यवहार ते आकाश स्वप्नदृष्टा सदा असंग निर्विकार है तैसे निजात्मा इस संघातको प्रेरता भी सदा असंग है ऐसे जाननाहीं कर्तव्य है और शारिरिक साधन नहीं करने पुनः पिताने कहा हे पुत्र इस प्रश्नका उत्तर पूर्वहीं हम स्वप्न और स्वप्नदृष्टाके दृष्टांत से तथा आकाशके दृष्टांत से समाधान कह

चुकेथे धान काटने पुरुषकी न्याई यह चैतन्य आत्मा मनादियोंको नहीं प्रेरता किंतु जैसे आकाश सर्वव्यापी होकर सर्वको अव
काश देताभी असंग है परंतु स्वप्नद्रष्टाका दृष्टांत अनुभव रूप होनेते प्रधान है तैसे यह साक्षी चैतन्य देव तुम्हारा आत्मा सर्व
ध्याता ध्यान धेयादि त्रिपुटियोंका स्वरूप भूत हुआ २ नाम सर्वको सत्ता स्फूर्ति प्रदानकर्ता हुआ भी असंग है हे पुत्र जैसे भूमि
अनेक बीज अंकुरोंका आधार है तथा अंकुरोंमे अनस्यूत है भूमि विना एक अंकुर भी स्थित नहीं हो सक्ता सारांश
यहकि जैसे आकाश सर्व अंकुर मे तथा पत्र फल फूलमें तथा भूमि में व्यापक और असंग हुआ २ सर्वको अवकाश
देता है जो आकाश अवकाश नहीं देवे तो सर्वका व्यवहार कैसे होवे परंतु अनेक बीजों में तथा अंकुरों में आप अपने
पूर्वसंस्कारके अनुसार अनेक प्रकारके गुण व्यक्ति फल फूल पत्र सहित भिन्न भिन्न अंकुर निकसते हैं आकाश अवकाश
सर्वको देनेवाला एकही है तथा भूमि भी एकही है यह दृष्टांत समदार्ष्टांतमें जोड लेना तैसे अस्ति भाति प्रिय रूप
आत्मा सर्व नाम रूपात्मक जगत्में व्यापक आधार अधिष्ठान हुआ २ तथा द्रष्टा प्रकाशक हुआ २ भी तिनके व्यवहारोंसे
अलिप्त है औ कर्तव्य अकर्तव्यके गुण दोषको प्राप्त नहीं होता और असत् जड जगत्का नियामक भी है और तुम्हारे
प्रश्नके अनुसार तो ओषधीयोंके गुण दोष आकाश और भूमि में होनेचाहिये काहेते भूमि औ आकाशको तिनके निर्वाहका
कारण होनेते सो ऐसा देखने में नहींआता जैसे सूर्य्यादिकोंके तेजकर सर्व सृष्टी आप अपने व्यवहार में बहिर जुड़ती है परन्तु तेज
किसकी अंगुली पकड़के नहीं जोड़ता इसीते किसीके गुण दोषको नहीं प्राप्तहोता आप अपने संस्कारके आधीन सर्वसृष्टी निज
निज व्यवहार में जुड़ती है तैसेही चैतन्यदेव अन्तर्यामी तुम्हारा आत्मा मन बुद्धि आदि सर्वसृष्टी का नियामक हुआ २भी असंग है
सृष्टिके कर्तव्य अकर्तव्यजन्य गुण दोषको नहीं प्राप्तहोता मनादि सृष्टि आप अपने संस्कारके अनुसार आप अपने संकल्प विकल्पा
दि व्यवहार में जुड़ती है ॥ ताते हेपुत्र अन्तर मनादि दृश्यका द्रष्टा विकाररहित निर्विकल्प एकरस अक्रय अन्तर अमृत अभय

अजन्मा सुख दुःख रूप बंध मोक्षते रहितहै तात्पर्य यह कि सर्वसंसार अरु संसारके धर्मोंते रहित स्वतः सिद्ध अन्तर कोई वस्तु है ॥ ऐसा अनुभव होता है सो आकाशवत् सर्व मनादियोंको सत्ता स्फूर्ति करती हुई भी असंग है सोई हमारा तुम्हारा स्वरूप है यह जाननाही कर्तव्य है करना कछुनहीं स्वतःही बनरहा है हे पुत्र इस निज आत्मवस्तुको मन वाणी कथन चिंतन नहीं करसक्ते काहेते कथन चिंतनते प्रथमहीं कथन चिंतनके भावाभावको प्रकाशता है जो प्रथम सिद्ध न होवे तो कथन चिंतनकी उत्पत्ति अनुत्पत्ति कैसे जानने में आवेगी जैसे लड़केकी उत्पत्तिसे प्रथम दाई सिद्ध लडकेकी उत्पत्ति को तथा उत्पत्तिके स्थान को जानती है जो दाई प्रथम सिद्ध नहींहोवे तो लड़केके सर्वव्यवहार जाने कैसे जावें इत्यादि अंकुरादि अनेक दृष्टांत हैं जैसे अंकुरके प्रथमही पुरुष वा आकाश सिद्ध है इसीते स्वतः निजआत्मा निर्विकार निर्विकल्पहै काहेते निर्विकार सविकार निर्विकल्प सविकल्पादि कथन चिंतन वाणी मनमें हीहै जब सुषुप्ति में मन वाणी लीन होते हैं तो विकार अव्यकार निर्विकल्पादि कथन चिंतन भी नहीं रहते परंतु जो वस्तु जाग्रत में कथन चिंतनके भावका साक्षी है सोई वस्तु सुषुप्ति मे तिन जाग्रतादियोंके अभाव कल्पनाका साक्षीहै औ जो चेतन सुषुप्तिमें निर्विकारहै सोई चेतन जाग्रतमे है वास्तवमें सोई वस्तु निर्विकल्प निर्विकारहै सोई प्रत्यक्ष आत्मा तेरा स्वरूपहै तू चैतन्य आत्मा हीं इस जड संघात की चेष्टा का कारण है हेपुत्र जैसे अचल जड वृक्षोंको चलावनेते अरूप वायुका अनुमान होताहै वा त्वचा इंद्रिय से अनुमान होता है यह घटवत् वायुकी मूर्ति है ऐसे वायुका चाक्षुस स्वरूप दिखावनेको कोई भी समर्थ नहीं हुया नहै न हुआ होगा ऐसे ही ब्रह्मात्मा तेरा स्वरूप है ऐसा है वा तैसाहै इस प्रकार किसी धर्म विशिष्ट हमनहीं कहसक्ते जिसकर उपदेश करें काहेते जब यह मन बुद्धि आदियोंका साक्षी आत्मा मनादि इंद्रियोंका विषय होवे तो जाति गुण क्रिया संबंधादि विशेषणोंसे तुझको उपदेश करें सो आत्मा जाति आदि विशेषणों नाम धर्मोंवाला है नहीं कैसे तुझको गो शृं-गकी न्याई आत्मा दिखलानेको समर्थ होवें किंतु नहीं दुर्घट समझहै अवाङमनसगोचरको अपरोक्ष अपने हस्त विषे

अपरोक्ष फलकी न्याई जाननेवत् जानना यही दुर्घट समझ है ताते जो अंतर बुद्धि आदि संघात जड़का प्रेरक अंतर्यामीहै सोई तुम्हारा स्वरूप है अरु यह प्राण मनादि संघात व्यभिचारी है अरु तुम्हारा स्वरूप आत्मा अव्य भिचारी एक रसहै इसीते सतहै जो सत रूप है सोई चैतन्य रूप है जो सत चित् पूर्ण है सोई आनंद रूप है ॥ ताते सत् चित् सुखरूप तुझ आत्मा ते भिन्न असत जड़ दुःख अनात्मा व्यभिचारीरूप मनादि दृश्यका दृष्टा तेरा स्वरूप है सो यह दृष्टा विदित वस्तु ते न्यारा है नाम वृत्तिरूप ज्ञानका विषय समष्टी व्यष्टी भूत भौतिक मायाका कार्य्यरूप प्रपंच वस्तुतेभी न्यारा है तैसे विदित ते विपरीत अस्पष्ट पूर्वोक्त कार्यका कारण प्रकृति प्रधान माया अज्ञान अविद्या है सो वृत्ति ज्ञानका अविषय होने ते अविदित है तिस अविदित वस्तुतेभी तेरा स्वरूप न्यारा है काहेते विदित अविदितका तू दृष्टा होने ते तात्पर्य्य यह कि प्रसिद्ध सुषुप्ति स्वप्न जाग्रतमे अविदित विदित माया तत्कार्यका तू चैतन्य दृष्टा है इसीते तू इनते भिन्न है हे पुत्र विदित अविदितपना दृश्य कोटिमेंही है तिस दृश्यकाही विद्यत अविद्यतसे ग्रहण त्याग होता है जैसे स्वप्न सृष्टिमेंही विदित अविदित पना तथा ग्रहण त्यागपना है स्वप्नदृष्टामें नहीं तैसे तेरा स्वरूप स्वभाविक ग्रहण त्यागके योग्य नहीं जैसे अपना शरीर ग्रहण त्यागके योग्य नहीं काहेते ग्रहण त्याग करनेवाली वस्तु अपनेते भिन्न परिछिन्न दुःखरूप होती है तथा दृश्य मिथ्यत्व स्वप्नवत् वस्तु होती है सो तेरा स्वरूप आत्मा ऐसा नहीं न सुख दुःखका साधन है किंतु ग्रहण त्याग विदित अविदितादि सर्व पदार्थोंका तथा सर्व पदार्थोंको विषय करनेवाली विदित अविदिताकार सर्व वृत्तियोंका साक्षी है ॥ हे पुत्र विचार देखिये तो विदित अविदितरूप ग्रहण त्यागादि वस्तुभी अपने अस्ति भाति प्रियरूप आत्म स्वरूप ते भिन्न नहीं जैसे सूर्य वा लालकी किर्ण दमकाको हम किसकि र्ण दमकका ग्रहण करें किसको त्यागें अरु कौन किर्ण दमक विदितहै कौन नहीं यह सब कहनमात्रहै तात्पर्य यह कि सर्व नाम रूपात्मको जगत् आपके स्वरूप सूर्यकी किर्णा है दुःख सुखभी किर्णहैं तथा समाधि असमाधिभी किर्णहैं मन वाणी शरीर स-

हित जो संघातकी चेष्टाहै सो सब आत्माकी दमकां हैं कोई राजसी किर्णहैं कोई तामसी किर्णहैं कोई सात्वकी किर्णहैं कोई माया रूप किर्णहैं और कई आकाशादि किर्ण हैं ऐसे हुआ २ भी आत्मारूप सूर्य लाल अपनी महिमामे स्थितहै जैसे स्वप्नके पदार्थ विदित अविदित ग्रहण त्यागके योग्य प्रतीति होतेभी हैं परंतु वास्तवते स्वप्नद्रष्टाते भिन्न नहीं जैसे जलते तरंगादि भिन्न नहीं तैसे तुझ मनादियोंके साक्षी चैतन्य सूर्य लालकी यह नाम रूपात्म जगत् किर्णादमकाहैं ग्रहण त्याग किसका करें किसका न करें सूक्ष्म विचारें तो अस्ति भाति प्रियरूप आत्माते भिन्न कल्पित नामरूप पदार्थोंमे वृत्तिरूप ज्ञानकी विदित अविदित रूप विषयता अवि षयता है नहीं किंतु आत्मामेंहींहै॥काहेते वृत्तिरूप ज्ञानकी विषयता अविषयताका आवर्ण भंग अभंग मात्र प्रयोजनहै सो आवर्ण रूप अज्ञान चैतन्यके आश्रय होवेहै जैसे नीलमा आकाशके आश्रयहै तैसे आत्माते भिन्न सर्व पदार्थ कल्पित अज्ञान आवर्ण रूपही हैं अवर्ण रूप अज्ञान अज्ञानके आश्रय होवे नहीं जैसे अंधकारके आश्रय अंधकार नहीं ॥ जैसे स्वप्न पदार्थोंके आश्रय स्वप्न पदार्थ नहीं किंतु स्वप्नद्रष्टाके आश्रयहैं ॥जैसे रज्जुमें कल्पित सर्प दंड मालादि सो परस्पर किसीके आश्रय नहीं ॥ किंतु रज्जुकेही आश्रयहैं जैसे आकाश भिन्न नीलमा किसीके आश्रय नहीं ताते वृत्ति रूप ज्ञानकी विदित अविदित रूप आवर्ण भंग अभंग रूप विषयता अविष यता आत्मा रज्जुमेंहीहै भूषणों तरंगो घटों पटोंमें भौतिक पदार्थों और स्वप्न पदार्थोंमे जो वृत्ति ज्ञानकी विद्यत अविद्यत रूप विषयता अविषयता भासती है सो स्वर्ण जल मृत्तिकातंतु पंचभूत स्वप्नद्रष्टामेंहीं है अन्य भूषणादियोंमे नहीं इसी दृष्टीके लिये ब्रह्मात्म अपरोक्ष वि द्वानकी वृत्ति जहां जहां जाती है तहां तहांही तत्तत् पदार्थ उपहित ब्रह्मात्माकोंही विषय करे है नामरूप कार्यका विवर्तउपादान सर्व रूप ब्रह्मात्माहोनेते वृत्ति ज्ञानका विषय परोक्ष अपरोक्ष ब्रह्मात्माही है इसीवास्ते विद्वानकी स्वतःसिद्ध नित्य समाधि अयत्न सिद्ध है इत्यादि श्रुति है हे पुत्र घट पट भूषण तरंग शस्त्र सर्प रजत स्थंभ स्थित पुतलीआदि कल्पित पदार्थों में जो वृत्तिरूप ज्ञानकी विषयता अविषय ता प्रतीत होती भी है परन्तु मृत्तिका तंतु स्वर्ण जल लोहा रज्जु सुक्ति स्थंभादि वृत्ति ज्ञानके विषय हैं अन्य घटादि नहीं ताते सर्वभेद

रहित सर्वाधिष्ठान जगद्विध्वंस प्रकाशक स्वतः बंध मोक्षरहित अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंदको श्रुति अनुभव कर जबअपना आपस्वरूप जानोगे तभी शांतिहोगी अन्यथानहीं ॥ हे पुत्र काम संकल्प श्रद्धा अश्रद्धा धैर्य्य अधैर्य्य भय अभय लज्जा अलज्जा शांति अशांति राग औ वैराग बंध मोक्ष ज्ञान अज्ञान क्रोध अक्रोध उदारता अनउदारता अहंकार अनअहंकारता मान अपमानादि जितनेक आसुरी दैवी सद असद गुणरूपी धर्म अधर्म हैं सो अन्तःकर्णकी वृत्तिरूप धर्म हैं सो अन्तःकर्ण अपने वृत्तिरूप धर्मोंसहित जिस अपने प्रकाशक ज्योति ब्रह्मात्माको अंतष्कर्णरूप मन मनन नहीं करसक्ता नाम जानतानहीं काहेते आत्माको मनादि प्रकाश्य नियम्यका प्रकाशक नियाम्यकहोनेते प्रकाश्य अपने प्रकाशकको नहींजानता सूर्य्यादि दृष्टांतप्रसिद्ध है ॥ उलटा चैतन्य ज्योति आत्मासेही मनादि प्रकाशते हैं ॥ ताते जिस वस्तुने अन्तर पूर्वोक्त निश्चयादि वृत्ति रूप धर्म सहित मनको मनन किया है तिसीको तू ब्रह्मात्मा निजस्वरूपजानो जिस वस्तुको मन मनन करता है सो तुम्हारा स्वरूप नहीं ॥ वो माया ततकार्य का रूप है ॥ सो मनसहित तुम्हारी दृश्य है ॥ इसीप्रकार सर्व इंद्रिय प्राणादिमें तथा अन्य पदार्थों में भी जोड लेना इत्यादि श्रुति हैं ॥ हेपुत्र ग्रहण त्याग योग्य वस्तु ते विपरीत तू ब्रह्मरूप आत्मा है ॥ इस हमारे उपदेश से तुझको निज स्वरूपका अनुभव हुआहै वा नहीं सो कहो ॥ पुत्रने कहा हे पिता मैं सम्यक् अपने आत्म स्वरूपको जानता हूं पिताने कहा हेपुत्र मैं सम्यक् आत्मा जानता हूं यह तेरा जानना भ्रांति रूप है काहेते जैसे अग्निसे जलावने योग्य काष्ठादि वस्तु हैं सो काष्ठादि जलावने वाले अग्निका स्वरूप नहीं किंतु भिन्न है औ दाहक शक्तिका अग्नि आत्मा होनेते अग्निको जलावै नहीं तैसे जानने योग्य ब्रह्मात्म वस्तु किसीका विषय होवे तो सम्यक् जाननेको सामर्थ्य होवे परंतु ब्रह्मात्मा जाननेवालेका स्वरूप है जानना त्रिपुटीमें होताहै ब्रह्मात्मा त्रिपुटीका प्रकाशक त्रिपुटीका विषय नहीं यह सर्व वेदांतका सिद्धांतहै याते सम्यक् जाननेवालेका ब्रह्मात्मा स्वरूप होनेते जाननेको शक्य नहीं है जैसे अग्निकी दाह शक्ति अग्निते पृथक् काष्ठादि वस्तुको जलावे है परंतु दाहशक्तिका जो अपना

आत्मा अग्नि स्वरूप है तिसको नहीं दाह कर सक्ता तैसे दाह रूप वृत्ति ज्ञानका विषय काष्ठकी न्याई ज्ञानते भिन्न ब्रह्मात्मा होवे तो जानने योग्य होवे परंतु दाहि शक्तिका आत्मा अग्निकी न्याई जाननेवालेका स्वरूप ब्रह्मात्मा है इसीते ब्रह्मात्माका अन्य जानने वाला कोई नहीं जैसे स्वप्नद्रष्टाको स्वप्ननर जानने योग्य नहीं स्वप्ननरोंका स्वप्नद्रष्टा आत्मा है जैसे किर्णोंका सूर्य आत्मा होनेते सूर्य्य किर्णों से अज्ञात है जैसे देहसे देही अज्ञात है काहेते स्वप्नद्रष्टाते भिन्न सर्व स्वप्नको कल्पित होनेते इसीते स्वयंप्रकाश है जो अन्य किसी साधनसे जाना जाता है सो स्वयंप्रकाश नहीं होता किंतु परप्रकाश होता है जो परप्रकाश होता है सो मिथ्या होता है ॥ ताते हेपुत्र तू जब ब्रह्मात्माको सम्यक् जानता है तो तू निश्चयकर परिछिन्न असत् जड़ दुःख दृश्य मिथ्या वस्तुकोही जानता है काहेते ब्रह्मात्मा कैसा है, अशब्द, अस्पर्श, अरस, अगंध, अरूप, अचिंत, अमन, अप्राण, अन अहंकार, अक्रय निर्विकल्प निर्विकार गमनागमनादि रहित अशरीर अव्रण शुद्ध पापरहित जाति गुण क्रियादि धर्मोंते रहित अस्तित्वमात्र होनेते बुद्धिके निश्चयमें नहीं आता बुद्धिका द्रष्टा होनेते जाति गुण क्रियासंबंधवान पदार्थोंकोही बुद्धि जानती है इनसे रहितको नहीं जानती ऐसे अवाङ्मन सगोचर ब्रह्मात्माको तू कैसे जानता है॥ तू आपको बुद्धिरूप मानके आत्माको जानता है वा आत्मा आपको मानके आत्माको जानताहै वा आभास आपको मानके आत्माको जानताहै जो आत्मा कहें तो आत्मा श्रयादि दोष होवेंगे औ चिदाभास सहित निश्चयात्मक वृत्तिरूप बुद्धि सो आत्माकी दृश्य होनेते स्वद्रष्टाको जाने नहीं जो जाने तो आत्मादृश्य मिथ्या होगा घटवत् ताते हे पुत्र अवास्तव स्वरूप-के जाननेसे कल्याण नहीं होता पुत्रने कहा हे पिता जिस धर्मसे जो निरूपण करिये सोई तिसका स्वरूप है ॥ जैसे मनुष्यका मनुष्यत्व धर्मसे निरूपण करीता है सोई तिसका स्वरूप है तैसे ब्रह्मात्मा पूर्वोक्त सत् चित् आनंदरूप विशेषणोंसे जो निरूपण करिये सोई तिसका स्वरूप है पिताने कहा हे पुत्र जितनेक शब्द हैं सो सर्व सापेक्षक सविकल्प जाति गुण क्रियावान् वस्तुकोही निरूपण करसक्ते हैं ॥ अरु ब्रह्मात्मा जाति आदि गुणोंते रहित निर्पेक्ष निर्विकल्प है अरु आत्मा सर्व मनादि कल्पनाके आदि

सिद्ध है सो कैसे निरूपण कियाजावे तथापि मुमुक्षुके बोधवास्ते सत् चित् आनंदरूप जो वस्तु है सोई ब्रह्मात्मा तुम्हारा स्वरूप है ऐसा श्रुतिने कहा है सो सत् चित् आनंदभूत भौतिक कार्य कारण रूप प्रपंच में किसीभी मन प्राण श्रोत्र इंद्रियादि अनात्म पदार्थों में घटे नहीं तथा आकाशादि भूतोंमें भी घटे नहीं भौतकों में भी घटे नहीं ॥ तात्पर्य्य माया तत्कार्य किसी पदार्थ में भी घटे नहीं किंतु बुद्धि आदियोंके साक्षी आत्मा मेंहीं घटे है ताते सत् चित् आनंद रूप वस्तुही अपना आप आत्मा जानो हे पुत्र यह आत्माका स्वरूप भी मन प्राण देह इंद्रियादि संघात समष्टी व्यष्टीके असत् जड दुःख रूप उपाधि द्वारा कहा है वास्तव अवाङ्मनसगोचर अपनी आत्मा है जैसे वृक्षकी चलन रूप क्रिया करही वायुका रूप जानने में आता है अन्यथा नहीं ॥ तैसे सर्व मनादि जड़ पदार्थोंका प्रेरक होनेते आत्मा जाना जाता है परंतु वास्तव ते ब्रह्मात्माका स्वरूप जानने वालेको अज्ञात है अरु न जाननेवालेको ज्ञात है तात्पर्य्य यह कि वाङ्मनसगोचरकर जाननेवालेको अज्ञात है अरु अवाङ्मनसगोचर कर जाननेवालेको ज्ञात है ॥ हे पुत्र देह प्राण इंद्रिय मन बुद्धयादि आनंदमयादिकोष अध्यात्म उपाधि परिछिन्न रूप पदार्थों मध्ये किसीको तू ब्रह्मात्माका स्वरूप जानता है तो तुच्छ जानता है तैसे चक्षु आदि इंद्रियोंके सूर्य्यादि आधिदैव परिछिन्न रूप पदार्थों में किसी एकको तू ब्रह्मात्माका स्वरूप जानता है सो भी तुच्छही है तैसे भूत भौतक शब्दादि अधिभूत पदार्थों में किसी एकको तू ब्रह्मात्माका स्वरूप जानता है तो अत्यंत तुच्छ जानता है तात्पर्य्य यहकि माया तत्कार्य मध्ये किसी भी पदार्थको तू ब्रह्मात्माका स्वरूप जानेगा तो ब्रह्म असत् जड़ दुःख द्रश्य मिथ्या सिद्ध होवेगा काहेते जो जानने में आताहै सो ब्रह्मात्मा नहीं किंतु ब्रह्मात्मा सर्व मनादियोंके जाननेवाला है ताते सर्व पूर्वोक्त उपाधि रहित ब्रह्मात्माका स्वरूप जाना जाता नहीं काहेते स्वयंप्रकाश होनेते बुद्धिकी वृत्ति रूप ज्ञानका विषय नहीं ताते तुमको स्वात्मविचार करने योग्यहै पुत्रने कहा मैंवत् मैं ब्रह्मात्मा अपने निज स्वरूप स्वभाविक

बंध मोक्ष रहित अवाङ्मनसगोचर सर्वाधिष्ठान जगद्विध्वंस प्रकाशक अवेद्यत्व सदा अपरोक्ष साक्षी सच्चिदाघन विशुद्धानंदको सम्यक् निजात्मा जाननेवत् जानता हूं कोई विषय विषयी भाव कर नहीं जानता हूं किंतु स्वयंप्रकाश भूमा में सर्वका अनुभवी आत्मा विदित अविदित ते भिन्न ग्रहण त्यागके योग्य नहीं अरु सर्व विदित अविदित ग्रहण त्याग रूपभी मैंही हूं ॥ स्वप्न द्रष्टावत् पिताने कहा हे पुत्र तू धन्य है ऐसे जाननाही सम्यक् जानना है पुत्रने कहा हे पिता विधिपक्षसेभी ब्रह्मात्मा सर्वथा अज्ञातही है काहेते सर्व रूप आप होनेते तथा अन्यके अभावते भी अज्ञातही हुआ अरु निषेधी पक्षसे भी अवाङ मनसगोचर होनेते भी अज्ञातही हुआ तो ज्ञानी अज्ञानीका क्या भेद है अरु तिसके जाननेके साधन व्यर्थही हुये पिताने कहा हे पुत्र अनेक विधि आप अपने वस्तुओंके स्वरूप हैं जो जिस वस्तुका जैसा स्वरूप है सो तैसाही जानता है सोई सम्यक्दर्शी है अन्य असम्यक्दर्शी हैं जैसे प्रकाश्य प्रकाशक दृश्य द्रष्टा प्रेर्य्य प्रेरक आत्मा अनात्माको भिन्न अभिन्न ज्ञानियोंको सम्यक् असम्यक्दर्शी कहते हैं तथा वाङ्मनसगोचर अवाङ्मनसगोचर ब्रह्मात्माके स्वरूप भिन्न अभिन्न ज्ञानियोंको सम्यक् असम्यक्दर्शी ब्रह्मवेत्ता कहते हैं जैसे आत्मा सत् चित् आनंद रूप वा सत् चित् आनंद आत्माके गुण जानने वालेको सम्यक् असम्यक्दर्शी कहते हैं औ सम्यक् ब्रह्मात्मा एकत्व ज्ञानते सुखरूप मोक्ष अरु ज्ञान भिन्न अन्य साधन ते सुख रूप मोक्ष जाननेवाले को सम्यक् असम्यक्दर्शी विद्वान कहते हैं तैसे चाक्षुस आदि ज्ञानो में भी जानलेना इत्यादि अनेक दृष्टांत हैं तैसेही जो अवाङ्मनसगोचर ब्रह्मात्माके स्वरूपको जानते हैं सोई आत्मज्ञानी हैं अन्य अनात्मज्ञानी हैं ॥ हे पुत्र शमादि पूर्वक कर्म उपासनाके अनुष्ठान से शुद्ध अचल अंतःकर्ण विषेही गुरू उपदेश द्वारा ऐसा निश्चय होताहै अन्यको नहीं ताते साधन भी कर्म उपासना शमादि सफलहै अरु जो वाङ्मनसगोचर कर ब्रह्मात्माको जानता है सोई अनात्मदर्शी है और कोई ज्ञानी अज्ञानीके शिरपर शृंग अशृंग नहीं जो भिन्न भिन्न पहँचान होवे हे पुत्र इष्ट साधनता योग्यता स्वकृति साध्यता ज्ञानपूर्वक ही ब्रह्मासे आदि लेके चींटी पर्यंत सर्व ज्ञानी अज्ञानीकी प्रवृत्ति होतींहै इसते विपरीत हेतुओंसे

सर्वकी निवृत्ति होती है परंतु परमा अपरमा ज्ञानका नेमनहीं कहो भेद ज्ञानी अज्ञानी का क्या हुआ हे पुत्र सर्व पदार्थोंके समान्य विशेष ज्ञानमें माया विशिष्ट ईश्वर विना सर्व जीव ज्ञानी भी हैं तथा अज्ञानी भी हैं तथा एक पदार्थके ज्ञान मे भी ज्ञानी अज्ञानी जीव कहे जातेहैं जैसे माणिक की सम्यक् परीक्षा वाला माणिक का ज्ञानी कहा जाता है अन्य नहीं तैसेही शिल्प विद्या वाला शिल्पज्ञ कहाजाता है अरु वही मनुष्य धनुषविद्या में अल्पज्ञ है अरु धनुषविद्या वाला शिल्पविद्या में अल्पज्ञ है इसीरीति से सर्व समष्टी व्यष्टी पदार्थों में जानलेना ताते यथार्थ स्वरूप पदार्थों का सम्यक् असम्यक् जाननाहीं ज्ञानी अज्ञानीपनाहै और कोई चिह्ननहीं केवल दृष्टिका भेद है सोभी स्वसंवेद है पर संवेद नहीं हे पुत्र जब यह अधिकारी अपने नित्य ज्ञान अनंत रूप सर्वात्माको सम्यक् अपरोक्ष निज स्वरूप जानता है तब किस चक्षु आदि साधनोकर वा चक्षुसादिजन्य ज्ञानोंसे किस रूपादिक पदार्थोंको देखे नाम जाने किंतु किसी करभी नहीं देखता काहेते सर्व रूप आप होने ते जैसे पंचभूतों का कोईक कार्य अपने स्वरूपको सम्यक् जानता है तो सर्व नाम रूप प्रपंच आप होता है इदंता कर अपने ते भिन्न अन्यको नहीं देखता जैसे तरंग अपने मधुर शीतल द्रवता स्वरूप जलको सम्यक् जानता है तो सर्व जल रूप आप होताहै जैसे स्वप्नदृष्टा निज विज्ञान ते सर्व स्वप्न पदार्थों को अपना आपही जानता है सो सर्वात्मा होताहै तो किससे किसको देखे किंतु भिन्न नहीं देखता अन्यथा आपको भिन्न कलपता है अन्यको भिन्न जानके दुःख पाताहै हे पुत्र शब्द स्पर्श रूप रस गंध अरु मैथुनजन्यसुख अनिष्ट संबंधजन्य दुःख इष्ट संबंधजन्यसुख औ संकल्प निश्चयादि जिसकर जाने जाते हैं सोई तेरा स्वरूप है पुत्रने कहा चक्षु मन आदि इंद्रियों कर रूपादि विषय जानने में आते हैं ताते चक्षु आदि इंद्रिय ही आतमा हुये पिताने कहा हे पुत्र जैसे तीर (बाण) से वा बंदूकसे निशाना बेधा प्रतीति होता भी है परंतु जब विचारें तो चैतन्य पुरुष विना जड परतंत्र तीरादि निशानेको कैसे बेधेंगे किंतु नहीं बेधेंगे काहेते निशाना तीर बंदूक धनुष अरु हाथ चक्षु मनादि पुरुष प्रयत्न विना कछु नहीं करसक्के तथा न जान सक्केहैं

पुरुष ही सभ तीरादियोंके न्यूनाधिक हालको जाने है तथा न्यूनाधिक भाव कर सक्ता है जैसे मंदरमें दीपक वारीयों द्वारा वाहिर्प दार्थोंको प्रकाशता है वारियां नहीं तैसे दार्ष्टांत जान लेना तीरादियोंकी तुल्य मनादि हैं लौकिक पुरुषवत् आत्मा है ताते जड पर्तं त्र मन इंद्रियादि आत्मा नहीं जैसे तीरादि पुरुष नहीं हे पुत्र जैसे रज्जु सर्पके सम्यक् विवेक सम कालमें हीं रज्जु विषे सर्पकी निवृत्ति रूप फलके हुये पुनः रज्जु ज्ञानका अन्य फल वा अन्य प्रमाण वा अन्य साधन खोजने योग्य नहीं तथा भयादियोंकी निवृत्ति अरु अकंपादियों की प्राप्ती वास्ते भी अन्य प्रमाण वा अन्य साधनादि खोजने जाना नहीं जो खोजता है सो भ्रांतिवान् है किंतु ज्ञान सम कालही भय कंपकी निवृत्ति अरु रज्जुकी प्राप्ति होतींहै तैसे प्रत्यक् आत्माके सम्यक् जानने से ही बंधकी निवृत्ति मोक्षकी प्राप्ति वास्ते अन्य प्रमाण वा अन्यसाधन वा अन्य फल खोजने योग्य नहीं जो खोजे तो भ्रांतिवान् हैं हे पुत्र यद्यपि प्रत्यक्षादि प्रमाणों कर यह संसार सतभी भासताहै तथा प्रत्यक्षादि प्रमाण रूपादियोंके ज्ञानमें साधन भी प्रतीत होतेहैं तथा रूपादिज्ञेय भी प्रतीति होते हैं तो भी यह त्रिपुटी मिथ्या मायामात्रहै प्रमाता प्रमाण प्रमेयका ज्ञाता द्रष्टा तुम्हारा स्वरूप है त्रिपुटी तुम्हारा स्वरूप नहीं जैसे स्वप्नके प्रमाता प्रमाण प्रमेय त्रिपुटी सतरूपसे भासती भी है तथा प्रत्यक्षादि प्रमाण रूपादियोंके साधन भासते भी हैं तो भी मिथ्या मायामात्र हैं स्वप्नके सर्व इंद्रियादि पदार्थ एक द्रष्टा चैतन्य आत्मासे ही प्रकाशमान हैं तिस द्रष्टा विना कोई भी स्वप्नके इंद्रिय सूर्य घट पटादि पदार्थ आपसमें प्रकाश्य प्रकाशिक भाव नहीं तैसे आत्माही प्रत्यक्षादि प्रमाणोंका तथा सर्व दृश्यका प्रकाशकहै इंद्रिय सूर्य्यादियोंसे घट पटादि प्रकाशते नहीं किंतु आत्माहीं इंद्रिय सूर्य्यादि पदार्थोंमें स्थित हुआ २ मन इंद्रियादि सहित सर्व पदार्थोंको प्रकाशता है जैसे पुरुषही मंदिरमें स्थित वारी द्वारा वाहर सर्व पदार्थोंको देखता है वारीयां नहीं जैसे दर्पणमें अनेक प्रतिबिंबोंको पुरुषही प्रकाशता है दर्पण नहीं जैसे दुरवीनमें पुरुषही देखता है दुरवीन नहीं परंतु दुरवीनादि देखनेका साधन है हे पुत्र इस कार्य कारण संघातकी ही अविवेक दृष्टिसे प्रतीतिकी प्रधानता होनेते

आत्मा अधिष्ठानकी स्फूर्ति नहीं होती जैसे रज्जुके अज्ञानसे कल्पित सर्पादियोंकी प्रधानतासे प्रतीति होनेते रज्जु भासे नहीं तैसे आत्मा सर्पादिऔ इस संघातके अंतर गूढ छिपा हुआ है विवेकीको आत्मा रज्जुकीही प्रधानता स्फुट भान होती है अविवेकी को नहीं जैसे मायावी इंद्रजालक पुरुष एक तंतु ऊपर आकाशमें फेंकके आप आयुध सहित तंतु पर आरूढ होके अदृश्य हुआ युद्ध करै है पुनः खंड खंड होयके आप नीचे पतन हुआ भी प्रतीत होवे है पुनः पूर्ववत् वैसाही उठ खड़ा होता है परंतु तिस इंद्रजालकके सम्यक् सत स्वरूपको जाननेवाले पुरुष तिस इंद्रजालककी रची माया और मायाके कार्य स्वरूपोंको प्रत्यक्षादि प्रमाणों से अपरोक्ष देखते भी इंद्रजालककी लीलामात्र मिथ्या माने हैं स्वमाया कर आच्छादितभी अमायक परमार्थ रूप एक इंद्रजालक कोही सत माने हैं अन्य सर्व लीला मिथ्या माने हैं मूर्ख आश्चर्य मान हुये २ लीला सहित मायक इंद्रजालीको हीं सत माने हैं तैसे नित्य सुख प्रकाश निजात्मा रूप महा मायावी इंद्रजाली ने यह नाम रूप जाग्रतादि मिथ्या प्रपंचतंतुपसारी है तंतु पर आरूढ इंद्रजालीके समान जाग्रतादियोंकें अभिमानी समष्टी वैराट्‌ आदियोंसे अभिन्न विश्व तैजस प्राज्ञादि सभास्व अंतःकर्ण जीव हैं सो अप्रमार्थ रूप हैं तिनों मेहीं युद्ध करना खंड खंड होना पुनः पूर्व रूप होना आदि सर्व व्यवहार हैं जैसे तंतु अरूढ से भिन्नही परमार्थ रूप आमायावी इंद्र जाली पृथिवी विषे स्थित भी स्वमाया से आच्छादित अदृश्य है पूर्वोक्त युधादि सर्व विकारोंते रहित स्थित है बुद्धिमान जानते हैं अन्य नहीं जानते तैसे तुरीय प्रत्यगात्मा तुम्हारा सत स्वरूप इस कार्य कारण संघातके अंतर स्थित भी स्वमाया रूप वस्त्र से ढाप्या हुआ भी स्वतः निर्विकार है परंतु प्रत्यक्षादि प्रमाणों से अदृश्य मान हुआ भी कोईक श्रद्धा आदि साधनों सहित मुमुक्षु श्रुति अनुभव से सम्यक् अपरोक्ष करसक्ते हैं अन्य नहीं हे पुत्र व्यष्टि जाग्रतादि उपाधियों से तूही तुरीय आत्मा भी विश्वादि संज्ञाको पाता है तैसेही समष्टी उपाधियोंसे तू चैतन्य आत्माही वैराटादि संज्ञाको पाता है उपाधियों ते रहित तूही शुद्ध ब्रह्म कहाता है जैसे क्रिया भेदसे एकही मनुष्य अनेक संज्ञा पाताभी सर्व क्रियारहित शुद्ध मनुष्य

मात्र है जैसे एक आकाश घटादि उपाधियोंसे घटाकाशादि संज्ञा पाताहै उपाधियों रहित शुद्ध आकाशमात्र है हे पुत्र तुम्हारा स्वरूप सर्व मन बुद्धि आदियोंका अनुभव करनेवाला मनादियोंके अंतर स्थित है इसीते मनादियोंसे अदृष्ट है जैसे सर्व स्वप्नसृष्टीके अनुभव करनेवाले स्वप्नद्रष्टा सर्व स्वप्नसृष्टीके अंतर स्थित हैं इसीते स्वप्नसृष्टि ते स्वप्नद्रष्टा अज्ञात अचिंत हुयाभी सर्वका द्रष्टा है हे पुत्र तू चैतन्य सर्व धर्माधर्म ते नाम माया तत्कार्य ते रहित है इसी ते तू शांत है तुझ द्रष्टाका द्रष्टा कोई नहीं तू चैतन्य अजाग्रत अस्वप्न अनिद्रत है इसीते तू जाग्रतादियोंके अभिमानी विश्वादि भीनही काहेते इनका द्रष्टा होनेते जैसे काष्ठमें हस्ती आदि पुतलियोंका काष्ठ विशेष अधिष्ठान आधार है काष्ठते हस्ती आदि भिन्न हैं नहीं तैसे तू चैतन्य इन नाम रूप आकाशादि पुतलियोंका अधिष्ठान है काहेते असत जड़ दुःख द्रश्य कल्पित ते तुझ चैतन्यका सत् चित् आनंद स्वभाव जुदा देखनेमें आवे है अधिष्ठान ते विषम सत्ता भ्रमकी कही है तात्पर्य यहकि अस्ति भाति प्रिय रूप आत्मा ते जो भिन्न भासे सोई भ्रमका रूप है ताते तुम दलील देके विचारो द्रष्टाका स्वभाव अरु द्रश्यका स्वभाव जुदा जुदा है क्यों एकमेक कर्तेहो सम्यक्दर्शी होवो हे पुत्र वाङ्मनसगोचर करके जो ज्ञान होताहै सो नाम रूप जातिगुण क्रिया संबंधवान् पदार्थोंका ही ज्ञान होताहै सो आत्मज्ञान नहीं किंतु मिथ्या भ्रांतिरूप ज्ञानहै सम्यक् अपरोक्ष अवाङ्मनसगोचरकर जो निजात्मज्ञानहै सोई सम्यक् ब्रह्मात्मा ज्ञानहै वास्तवते इन दोनों वृत्तिरूप ज्ञानोंका निजात्मा दृष्टाहै इसीते कथन चिंतन ते अगोचरहै जैसे स्वप्ननरोंके वाङ्मनसगोचर अवाङ्मनसगोचर दोनों ज्ञानोका स्वप्नद्रष्टाद्रष्टाहै दोनोंका विषय नहीं हे पुत्र जैसे शुद्धस्फटिकमणि दूरस्थित रक्तके प्रतिबिंब सहित भासतीभी वास्तवते शुद्ध स्फटिकमणिको लालरंगवाली जानना भ्रांतिहै पुत्रने कहा हे पिता स्वप्न अल्पकाल स्थायीहै अरु जाग्रत दीर्घ काल स्थायी है स्वप्नका पदार्थ देखा पुनः वही नहीं देखा जाता अरु जाग्रतका देखा पदार्थ स्वप्न वा सुषुप्ति हुआ पीछे भी देखा जाताहै तो स्वप्न जाग्रतको तुल्य कैसे कहाहै पिताने कहा हे पुत्र जैसे रज्जु विषे सर्पकी दीर्घकाल पुरुषको प्रतीति हुई पुनः तिसी रज्जु विषे तिसी पुरुषको माला

वा जलकीलकीर अल्पकाल प्रतीति होकर पुनः तिसी रज्जु विषे तिसी पुरुषको पुनः पूर्ववत् सर्प प्रतीति दीर्घकाल माला दंड प्रतीति रहित हुआ तो तूही विचार कि क्या भेद हुआ कछु नहीं हुआ जैसे स्वप्नमें स्वप्नांतर होताहै तो प्रथम स्वप्नके देखे पदार्थ स्वप्नांतरके हुये भी वैसेही रहतेहैं ॥ अरु स्वप्नांतरके देखे पदार्थ प्रथम स्वप्नमें वही नहीं रहते यह अनुभव सिद्धहै ॥ हे पुत्र सर्व जाग्रतादि प्रपंच तुझ अधिष्ठानमें स्वप्न रज्जु सर्पवत् समानहीं कल्पितहैं ताते किंचित् भेद नहीं हे पुत्र जैसे सूर्य नेत्रोंमें स्थित हुआ २ नेत्रोंको प्रकाशे अरु नेत्र द्वारा रूपकोभी प्रकाशेहै तैसेही तू चैतन्य मन प्राण देह इंद्रियादियोंमें स्थित हुआ २ मन इंद्रियादियोंको भी प्रकाशे अरु मन इंद्रियादियों द्वारा सर्व जगतका व्यवहार सिद्ध करेहै काहेते तुझ आत्मा भिन्न सर्वको जड़ होनेते हे पुत्र मन संकल्प द्वारा क्रमसे सर्व पदार्थोंको चिंतन रूप संबंध करेहै अरु यह आत्मा मनके पहुँचनेसे पहलेही मन विषे तथा नाम रूप पदार्थोंमें अस्ति भाति प्रिय रूपसे प्राप्त है जैसे वायुके वा वायुसे चलाया तृणके अन्य स्थान पहुँचनेसे पहलेही आकाश वायुमें तथा सर्व पदार्थोंमें प्राप्त है जैसे स्वप्नमें स्वप्ननरोंके अन्य स्थानके पहुँचनेसे पहलेही स्वप्नद्रष्टा स्वप्ननरोंको हाजिर हुजूर है जैसे जहां तरंग जावेगा जल आगेही लाधेगा जैसे यह शरीर जहां जावेगा तहां आगेही पंचभूत लाधेंगे हे पुत्र अन्तष्क-र्णकी जो जो वृत्तियां स्वतंत्र वा इंद्रियों द्वारा उत्पन्न होती हैं सो सो आत्माके प्रकाश कर प्रकाशित हुई हुई उत्पन्न होती हैं जैसे अग्नि कर तपाये लोहके कूटनेसे जितनेक लोहेके चिनगारे निकसते हैं सो सर्व अग्नि कर प्रकाशितही निकसते हैं हे पुत्र जैसे एकही सूर्य जलके अनेक पात्रोंमें अनेक रूप दीखता है पर वास्तव एकही है तैसे आत्मा तेरा स्वरूप अन्तष्कर्णादि उपाधि कर अनेक रूप हुआ भी वास्तव एक रूपही है सत् चित् आनंद स्वरूप निजात्माही दुःखोंसें रहित अपरोक्ष सुख मोक्ष स्वरूप है अन्य अनात्म संसार दुःख रूप बंध है आगे जो इच्छा होय सोई कीजिये पुत्रने कहा ज्ञानवान्को भी ध्यान कर्तव्य है वा नहीं पिताने कहा हे पुत्र जब शुद्ध दर्पणसे सम्यक् अपना मुख देखा तो कहो

पुनः मुखका ध्यान करना चाहिये कि नहीं पुनः दर्पणसे मुख देखे तो विलासमात्र है कर्तव्य नहीं हे पुत्र प्रत्यगात्मा तुम्हारा स्वरूप स्वभावसेही बंध मोक्षादि विकल्प ते रहित है परंतु सम्यक् आत्मज्ञान रहित पुरुष अपनेमें बंध मोक्षकी कल्पना करके पुनः तिनकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते अनेक प्रकारके यत्न करते हुये दुःख पाते हैं तैसे आपही आत्म विचारकर सुख पाता है ॥ ताते आपही सुख दुःख कल्पता है अरु आपही मिटाता है तो यही मालिक रहा जैसे आकाशके स्वरूप अज्ञानी नीलता रजादि मलीनसे आकाशको मलीन जानके तिसकी निवृत्तिके वास्ते यत्न करे परंतु सम्यक् आकाशके स्वरूप ज्ञानी आकाशमे मलीनता जाने नहीं इसी ते यत्न करते नहीं हे पुत्र जैसे पंच विषय सर्व ब्रह्मादि लोकोंमें एक सरीखे हैं ॥ अरु जैसे षोडश कलारूप सूक्ष्म शरीर सर्व ब्रह्मादि चींटीतक स्थूल शरीरोंमें एकही सरीखे हैं तैसे यह मन्त्रादियोंका साक्षी आत्मा विष्णुसे चींटी पर्यंत निर्विकार असंग निर्विकल्प सत् चित् सुखरूप बंध मोक्षसे रहित एक सरीखा सर्वके हृदयमें स्थित है इसी ते ग्रहण त्याग आविर्भाव तिरोभाव होवे नहीं अपना आप होने ते चित्तकी एकाग्रतारूप समाधि चित्तका विक्षेपरूप असमाधि दोनोका द्रष्टा आपको जानना यही परमसमाधि है हे पुत्र मन सहित प्रतिबिंबरूप जीवने समाधिआदि कर्म करने हैं वा नहीं करने परंतु बिंबरूप सूर्य आत्माने नहीं करने यह प्रत्यक्ष सिद्ध है ॥ प्रतिबिंबकी समाधि क्या है चल अचल जलमें स्थितभी बिंबस्वरूप जानना औ प्रतिबिंबकी असमाधि क्या है आपको बिंबते पृथक् जानना यही समाधि असमाधिका स्वरूप मालूम देता है जो बिंब प्रतिबिंबके कर्तव्य आप में माने तो भ्रांति है ताते तू बिंबभूत आत्मा त्यागका त्यागकर वैराग ते वैरागकर समाधि असमाधिके सिद्ध करनेवाला प्रथम स्वतःसिद्ध आपको जाननेवत् जानो जो सुखीवत् सुखी होवो यही ब्रह्म रूप अस्पर्श योग रूप समाधि है निर्विषाद सर्वको सुलभ अत्यंत हितकर है यही ब्रह्म विदन का धन है शास्त्र विद्वान अरु स्वरूस्व अनुभव से सम्यक् विचार से सुलभ प्राप्त है अधिकारियोंको ॥ हे पुत्र आत्मा अनात्मा दो वस्तु हैं तिनके भिन्न भिन्न स्वभाव हैं आत्मा अनात्मा नहीं होता अरु अनात्मा

आत्मा नहीं होता है तम प्रकाशवत् दोनोके मध्य में आत्मा वा अनात्मा में तुझको अहं प्रत्यय अवश्य करनाहीं पड़ेगा काहेते तीसरी वस्तुका अभाव होनेते किसी न किसी पदार्थ विषे अहं प्रत्यय करे विना मन माने नहीं ताते तू सम्यक् विचार कर कहो॥ दोनोके मध्य में तू कौन है आत्मा वा अनात्मा जो तू आत्मा है तो कार्य कारण रूप संघातादि अनात्मा तथा तिसके धर्म जन्मादि योंका तू आत्मा द्रष्टा होनेते तुझ आत्माको नहीं पहुँच सक्ते जो तू अनात्मा है तो अनेक यत्न से भी तुझके जन्मादि बंधन दूर हो सक्ते नहीं काहेते दोनोंका स्वतः स्वभाव सिद्ध होनेते ताते दोनों रीतिसे तुझको बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते अनेक साधनोका कर्तव्य निष्फल है यही रीति द्रष्टा और दृश्य विषे प्रेरक प्रेरय्य विषे असत् सत् विषे जड चैतन्य विषे सुख और दुःख विषे पूर्ण अपूर्ण विषे संगी असंगी विषे स्वभाविक निर्विकल्प सविकल्प विषे संसारी असंसारी विषे वाङमनसगोचर विषे अवाङमनसगोचर विषे निर्वि कार सविकार विषे परमार्थ शुद्ध अशुद्ध विषे इत्यादि सर्व पदार्थों मे जोडलेना तात्पर्य यहकि पूर्वोक्त विशेषणोंमे एक तो अनात्मादि कार्य कारण प्रपंच दृश्य कोटिकाहै अरु एक आत्मादि विशेषण ब्रह्मात्म कोटिकाहै जो अर्थ आत्मा नात्मामे कराहै सोई अन्यमे भी जानलेना हे पुत्र सम्यक् विचारके कहो तू अब आपको क्या जानता है पुत्रने कहा हे पिता आत्मा नात्मादि विचार का निश्चय मनन चिंतन अहं प्रत्यय करना अंतःकर्ण का स्वभावहै मैं चैतन्य तो इस स्वभावते रहित मन वाणी ते अवाच्य स्वयं प्रकाश रूप हूं मुझमें जानना न जानने का मार्ग नहीं मुझ चैतन्यको किंचित् मात्र भी बंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्ति वास्ते कर्तव्य नहीं यही हमारा निश्चय है हे पुत्र वाङमनसगोचरादि विशेषण सहित मनादि दृश्यको तथा तिनके संकल्पादि धर्मोंको अपना द्रष्टा स्वरूप मत मानियो किंतु क्षेत्रज्ञ कृष्ण आपहो क्षेत्र दृश्य रूप क्षेत्रज्ञ कृष्णको मत करियो यह भक्ति भी अभक्ति है अरु पूजाभी अपूजा है सम्यक् कृष्ण की पूजा यही जाननी जो क्षेत्र क्षेत्रज्ञको जुदा २ जानना हे पुत्र माया रूप पृथ्वी विषे तूला विद्या रूपी वृंदावन मे इस संघातरूप मंदिर विषे अंन्तष्कर्ण रूप हिंडोले मे स्थित क्षेत्रज्ञ रूप तुझ कृष्णको सत रज तम रूप जो

डोरियोंसें चिदाभासयुक्त अहंकार रूप जीव पुजारी झुलानेवत् झुलारहा है अरु अनेक दैवी आसुरी गुण रूप पुष्पोंकी सुगंधि लेनेवत् लेरहे हो नाम तिनको प्रकाश कर रहे हो अरु मन चक्षुआदि इंद्रियरूप लोक तुम्हारे दर्शनकर प्रसन्न होते हैं नाम आप अपने विषयमें तुझ कृष्ण क्षेत्रज्ञकी सत्ता स्फूर्तिकर प्रवृत्ति निवृत्तिरूप व्यवहार करते हैं अरु शब्द स्पर्श रूप रस गंध विषयरूप भोग्य नाम रूप प्रपंचरूपी थालमें रखके पूर्वोक्त जीव वा माया विशिष्ट शबलब्रह्म चिदाभास सहित मायारूप ईश्वर महंत तुझ कृष्णको सुख दुःखका अनुभवरूपी भोग लगाता है नाम तुम चैतन्यही सुख दुःखादियोंका अनुभव करनेवाले हो अन्य जड़ नहीं ॥ औ शरीरमें रूमावली तुझ आगे वृक्षोंके बगीचे हैं ॥ और तुझ क्षेत्रज्ञ कृष्णको अवाङ्मनसगोचरकर कथन चिंतन करनेवाली ब्रह्मविद्यारूप बुद्धि राधासे तथा अनेक बुद्धिकी वृत्तियांरूपी गोपियोंसे पूर्वोक्त वृंदावनमें रास खेल रहे हो नाम सर्वकर्ता भोक्ता त्यागीभी अकर्त्ता अभोक्ता अत्यागी अपनी महिमामे स्थित हो औ पंचभूत तुम्हारी पूजाके पात्र हैं पंचकोश पूर्वोक्त मंदिरके किंवाड हैं अस्ति भाति प्रियरूप सम्यक् अपरोक्ष निजात्मज्ञान मंदिरकी परिक्रमा है काहेते परीक्रमा करने ते ठाकुर बीच आजाता है तैसे सत् चित् आनंद स्वरूप ते भिन्न तुझ ब्रह्मात्माका स्वरूप है नहीं औ श्रुति स्मृति विद्वानोंका अनुभव मंदिरमें घंटेसमान हैं सूर्य चंद्रमा दोनो झाडोंके समान हैं ॥ औ तारागण अंतर बाहर छोटे दीपकोंके तुल्य हैं ॥ औ दिन रात्रि नगारेके समान हैं जगत्का अत्यंताभाव दृढ़ निश्चय इस मंदिरकी शोभा है धर्मार्थ काम मोक्ष मंदिरके चारोकोन हैं विषयोंमें अरती मंदिरकी कांति है पुत्र ईक्षणा धन ईक्षणा वित्त ईक्षणाका त्याग रूप मनोनाश वासना क्षय तत्त्व ज्ञानरूपी ठाकुरके माथेमें तिलकहै अपने कार्य सहित माया अविद्यारूप मलते मैं सत् चित् आनंद असंगहूं यह निश्चय ठाकुरका स्नानहै और अंतर बाहिर सर्व नामरूप मनादि दृश्यकामैं सत् चित् सुखरूप द्रष्टा आत्माहूं यह निरंतर ब्रह्माकार वृत्ति रूप तुलसी ठाकुरपरहै अपने सहित सर्व हरि रूप जानना पूर्वक सर्वकायिक वाचिक मानसिक व्यवहारमें निष्कर्तव्यता चिंतन तुझ ठाकुरके भूषणहैं मैं परिछिन्न नहींतूहीहै यही नमस्कार रूप स्तुति

है मुझ अस्ति भाति प्रियरूप आत्मामें नामरूप जगत् हैही नहीं यह दृढ निश्चय तुझ ठाकुरका चरणामृतहै औ मैं आत्मा त्रिगुणा तीत गुणोंका साक्षी हूं यह निश्चय ठाकुरकी पान बीडी है संसार रूप जड पुतलीकी चेष्टा करनेवाला आपको जानना यही तुम्हारी आर्तीहै मनरूपी वायुके फुर्णे अफुर्णेमे मैं चैतन्य आकाश वत् समहों यही तुझको पंखा होरहाहै जैसे सूर्यकी किरण सूर्य्यसे अभिन्नहैं तैसे नामरूप तुझ चैतन्यमें अध्यस्त होनेते तुझसे अभिन्नहीहैं यही तेरे आगे धूपहै मन इंद्रियोंका दमनहीं तुझका मर्दनहै जो इस प्रकार ध्यान कर्ताहै इसीलोकमें वा ब्रह्मलोकमें ज्ञानद्वारा मोक्षको प्राप्त होताहै हे पुत्र सम्यक् आत्मज्ञानीकी सर्वचेष्टा समाधि रूपहीहै जैसे इस संघातकी सर्व चेष्टा पंचभूत रूपहीहै आत्मज्ञानी मोक्षकी नहीं इच्छाकर्त्ताभी मोक्षको पाताहै जैसे पक्का फल वृक्षसे न गिडनेकी इच्छाकर्ताभी बलात्कारते नीचे गिड़ताहै ॥ अरु ब्रह्मात्मा अज्ञानी मोक्षके लिये लाखों इच्छा कर्ताभी मोक्षको नहीं पाता जैसे कूपमें पड़ा पुरुष लाखों बार कूदनेसे बाहर नहीं निकसैहै ताते सम्यक् देह अभिमान त्याग पूर्वक आत्मदर्शी होवो पुत्रने कहा सम्यक् त्याग क्याहै हे पुत्र जैसे तरंग भूषण खिलौनोमें भौतिक पदार्थ घटपटादिमें रज्जुके सर्पादि पदार्थोंमें स्वप्न पदार्थोंमे जल स्वर्ण चीनी पंचभूत मृत्तिका तंतु रज्जु स्वप्नद्रष्टा आदिरूप सम्यक् विचार पूर्वक बुद्धि करनी नाम जलादि कारण ते भिन्न तरंगादि कार्योंको मिथ्या वा अभाव वा जलरूप जानना यही तरंगादियोंका त्याग है तैसे नाम रूप कार्य कारण संघातरूप प्रपंचमें अस्ति भाति प्रिय रूप आत्मबुद्धि करनी वा पूर्वोक्त आत्माते भिन्न सर्व नाम रूपको मिथ्या वा अत्यंताभाव जानना यही प्रपंचका परमत्याग है औ एकको ग्रहण एकका त्याग करना इसका नाम त्याग नहीं काहेते जब शरीर है तबतक हजारों बार अनेक पदार्थोंका त्याग ग्रहण होनेते कार्यको कारण रूप जानना यही कार्यका परमत्याग है तैसे इस नाम रूप प्रपंचका अस्ति भाति प्रिय रूप आत्मा विवर्त उपादान कारण है अरु नाम रूप कल्पित है ताते आत्मरूपही है कल्पित परंतु अधिष्ठान ते भिन्न नहीं होती इस

निश्चयका नाम त्याग है हे पुत्र अपने सहित सर्व कार्य कारण प्रपंच अस्ति भाति प्रियरूप आत्माही है इस विधिपक्षको ग्रहण कर वा वाङ्मनसगोचर कार्य कारण संसारते मैं सत् चित् आनंदरूप आत्मा अवाङ्मनसगोचर हों इस निषेधीपक्षको ग्रहण करो वा विधिनिषेधी दोनों मन वाणीका कथन चिंतन रूप अनात्मा तुझकी द्रश्य होनेते मैं चैतन्य विधि निषेधी ते रहित हूं अरु मुझकरही विधिनिषेधी सिद्ध होवे है मैं चैतन्य विधि निषेधीका विषय नहीं हुआ विधिनिषेधी भो मैंही हूं सर्व रूप होनेते इन तीनों निश्चयोंते भिन्न और निश्चय तुझको भयका हेतु होगा तथा संसारका कारण होगा आगे जो इच्छा हो सोई करो हे पुत्र चारो वर्णाश्रम पुरुषके मल रहित सफेद वस्त्रोंपरही रंग चढताहै मलीनपर नहीं चढता रंगको कछु पक्षपात नहीं चाहे किसीका वस्त्र होवे तैसे शम दम अमानित्वादि तथा सत संभाषणादि धर्मानुष्ठान कर शुद्ध अंतःकर्ण में हीं गुरु शास्त्र द्वारा निजात्मबोध होता है अन्यकोई जाति निजात्म बोधमें कारण नहीं यह सर्वके अनुभवमें सिद्धहै ताते हेपुत्र निष्काम कर्मोंके अनुष्ठानसे शुद्ध मन करो औ सगुण वा निर्गुण उपासनाके अनुष्ठानसे निश्चल मन करो पश्चात् ज्ञानरूपी रंग चढ़ेगा अन्यथा नहीं चढ़ेगा वा निर्अहंकार सरल बुद्धि आदि साधन से गुरूभक्ति करो गुरू सेवाते भी शुद्ध अन्तष्कर्ण हुये पाछे ज्ञानरूप रंग लगेगा यह शास्त्रका असाधारण संकेत है पुत्रने कहा हे पिता ब्रह्म सगुणहै वा निर्गुण है पिताने कहा हे पुत्र एक किर्लं काटी नाम कर्के जीव विशेष है उसके एक दिनमें स्वभाविक अनेक रंग वदलते हैं तिसको न जानता हुआ नगरनिवासी पुरुष वन वासीसे पूछा कि किर्लकाटीका लाल रंगहै वा सफेद उसने कहा कि लाल भी यही होताहै अरु सफेद भी यही होताहै ॥ तैसेहो हे पुत्र सत् चित् आनंदरूप तेरा स्वरूप ही सगुण औ निर्गुण दोनो रूप हैं अन्य नहीं मूर्ख विवाद कर्ते हैं हे पुत्र जो ईश्वर निर्गुण होवे तो सगुण माननेवालोंको दंड देवे औ जो ईश्वर सगुण होवे तो निर्गुण माननेवालोंको दंडदेवे जो जीव ईश्वरका भेद होवे तो अभेदवालों

को दंड होवे जो अभेद होवे तो भेद माननेवालोंको दंड होवे ऐसेही अन्यबातोंमे जोड लेना ताते तुझ सत् चित् आनंद प्रत्यक् आत्माते भिन्न सर्व असत् जड़ दुःख रूप कल्पित हैं हेपुत्र मैं वाणी बिना कहता हूं अरु तुम श्रोत्रोंविना श्रवण करो तूहीं जीव ईश्वरको तथा सर्व जगत्को सिद्धकर्त्ता है तू नहीं होवे तो जीव ईश्वर जगत्को कौन जानता है सो तेरी सभ मनोतहै आज तक किसीने भी जीवेश्वरका साक्षात्कार करा नहीं यद्यपि शास्त्र प्रमाणसे साक्षात् विष्णु आदि मूर्त्तिमान ईश्वर देख नेमें आये हैं तथापि साक्षात् पंचभूत वा माया रूप अन्य पुरुषोंकी व्यक्तियोंकी न्याई व्यक्ति तथा व्यवहार देखनेमें आये हैं ईश्वर है वा नहीं यह ईश्वर जाने जो ईश्वर जगत्को रचके आप तिसमें प्रवेश हुआ है ताते सर्व ईश्वरही है जो नहीं तो नहीं काहेते बुद्धि आदियोंका साक्षी अंतर्यामी पट् भाव विकार रहित सत सुख अव्यक्त निज चैतन्य भिन्न सर्व जीवेश्वरको मिथ्या जड़ होनेते सो चैतन्य तू है जो चैतन्य तू नहोवे तो मनादि जडकी न्याई स्वपरको तू नजाने अरु तू मनादियोंको जानता है ताते तू चैतन्य सिद्ध हुआ तू मनादि योंको सिद्धकर्त्ता है मनादि तुझको सिद्ध नहीं कर्त्ते तैसेही सूर्यादि सर्व पदार्थों में जान लेना हे पुत्र सुन सुनाके अपने ऊपर ईश्वरको तू क्यों थापता है जैसे चक्रवर्ती राजा भ्रम से अपने ऊपर अन्य राजाथापे तो भ्रम है विचार देख तुझ मनादियोंके साक्षी चैतन्य अंतर व्यापक आत्मा ते पृथक् ईश्वर किसी वैकुंठादि देशमे है नहीं काहेते ईश्वरको पूर्ण होनेते मूर्खोंवत् मिथ्या दृश्य पदार्थोंका आश्रय मतकरो इस मनादि दृश्यका दृष्टा तूहीं सत् चित् आनंद रूप आत्मा हो हे पुत्र जो अनेक पुरुषोंको मनकी कल्पना दृश्य रूप अनेक वैकुंठादि देश में विष्णु आदि ईश्वरोंकी मनोत मे फल होगा तो सर्वके अनुभव सिद्ध सत् चित् आनंद साक्षी आत्मारूप ईश्वरकी मनोत में तुझको फल क्यों न होगा किंतु अवश्य होगा काहेते दोनों भावना शास्त्र प्रतिपाद्य होनेते तथा दोनो भावना माया वा अंतःकर्णका परिणाम होनेते सत हैं तो दोनों भावना सत हैं असत हैं तो दोनो

असत हैं परंतु सर्वके अनुभव सिद्ध आत्मा रूप ईश्वरका लोप परोक्ष वातों से नहीं होता औ वहिर्मुख बुद्धि मुमुक्षुको मनकी निश्चलतावास्ते कथन करे जो देश काल वस्तु भेद सहित विष्णुआदि ईश्वर तिनका नाम मिथ्यापना सम्यक् वाध्य ज्ञानकर होजाता है ॥ तातें तू अपने सत् चित् आनंदरूप आत्माकोही ईश्वर जानो जो तू आपको ईश्वर माननेमें भय राखे तो मतमान परंतु यह मनादियोंका साक्षी सत् चित् आनंदरूप निजात्माही मैं हौं ऐसी भावना करो जो वहीरूप होवे ॥ जो ऐसे नहीं जानेगा तो असत् जड दुःखरूप माया तत्कार्य पदार्थोंमध्ये किसीको तू ईश्वर आत्मा निश्चय करेगा तो अंत वही माया तत्कार्य असत जड दुःखरूप होवेगा काहेते वैकुंठादि जानेका भावनाही कारण है तो पूर्वोक्त रीतिसे निजात्माको ईश्वर जानना यहभी भावनाही है आगे जो इच्छा हो सो करो पुत्रने कहा हे पिता मनके रुकनेका उपाय कहो काहेते मन रूकेविना दुःख होता है रोकनेसे सुख होता है ऐसे शास्त्रोंमें सुना है पिताने कहा हे पुत्र जैसे घटाकाश वायुके रोकनेका उपाय पूछे अरु वायुके रुकने अरुकनेसे सुख दुःख माने तथा जैसे स्वप्नद्रष्टा स्वप्ननरोंके मनके रोकनेका उपाय पूछे तथा रुकने अरुकनेसे हर्ष शोक माने तैसे तुम्हारा प्रश्न है हे पुत्र आकाशसे वायु वाहर जावे तो घटाकाश वायुको रोके परंतु वायु आकाशसे वाहर जावे नहीं आकाशके भीतरही वायु स्थित है आकाशका कार्य होने ते आकाशसे वायु वाहिर न जाना है यही वायुका रुकना है सो स्वतःसिद्ध है तथा वायुके रुकने न रुकनेसे आकाशको हानि लाभभी नहीं तैसेही स्वप्नद्रष्टाके अंतर्भूतही स्वप्नसृष्टी है बाहिर जावेनहीं जो वाहर जावे तो रोकना चाहिये ताते स्वप्नसृष्टीको स्वप्नद्रष्टाने स्वतःसिद्ध ही रोक राखा है अब नवीन नहीं रोकना अरु स्वप्न मन रुकने नरुकने से स्वप्नद्रष्टाको हानि लाभ भी नहीं इत्यादि और भी दृष्टांतकी अंशु जानके दार्ष्टांत में जोड़ लेना हे पुत्र मनादि प्रपंच तुझ सच्चिदानंद रूप आत्मा में रज्जु सर्पवत् कल्पित है सो स्वतः ही कल्पितवस्तुको अधिष्ठानने रोक राखाहै अधिष्ठान से पृथक् कल्पित वस्तु भागे नहीं हे पुत्र जैसे सूर्यके आभास सहित

तलावका जल है तथा नाली का जल भी आभास सहित है तथा केदारे का जल भी सभासही है इस वहिर्त्रिपुटीको पुरुष चाहे तोडदेवे चाहे बना लेवे चाहे न्यूनाधिक भाव करे तथा त्रिपुटीके सर्व न्यूनाधिक भावाभावको जानता है इस जड त्रिपुटी का पुरुष ही मालिक है यह अनुभव प्रत्यक्ष दृष्टांत है तैसेही अंतर प्रमाता प्रमाण प्रमेयादि जड त्रिपुटी का तूही तुरीय आत्मा चैतन्यहीं मालिक है तथा त्रिपुटीयोंका न्यूनाधिक भाव जानता है ताते त्रिपुटी का दृष्टा तूही चैतन्य निर्विकारहै हे पुत्र तू अपने पुत्रपने के अहंकार त्याग,' मैं पितापने का अहंकार त्यागता हूं अरु मैं वाणी विना कहता हूं तू श्रोत विना सुन्न अरु कहो परंतु ऐसे कहो जिसते परे कहना सुनना सूंघना स्पर्श करना देखना रसलेना ध्यान करना जाननादिव्यवहार वाकी नरहै अथवा सर्व कहना सुनना सूंघना देखना स्पर्श करना रस लेना ध्यान करना जाननादि सर्व व्यवहार आजावे जैसे पंचभूतोंके जानने सें सर्व भौतिक पदार्थ जाने जाते हैं ऐसेही पंचभूतों सहित माया तत्कार्य सर्व पदार्थ जिसके जाननेसे जाने जातेहैं ऐसा जानना सुनना चाहिये ताते हे पुत्र तू इंद्र अज्ञानरूपी वृत्तासुरको विष्णु रूप गुरूकी सहायतासे ज्ञानरूपी वज्र कर हनन करोगे तो निर्भयराज्य भोगोगे हे पुत्र अहल्यारूपी अविद्यासे तू चैतन्य साक्षी इंद्र क्यों एकमेक होते हो विद्वानोंकी नेष्ठाको ग्रहण करो मूर्ख मत होवो हे पुत्र शमादि गुण अनेक दैवी गुणोरूप देवतों कर पूज्य जो विवेकरूप वृहस्पतिकी ब्रह्मविद्या रूप स्त्रीसे चतुष्टय साधन सम्पन्न पापरूप तमते रहित तुझ अधिकारी रूप चंद्रमाके संगम ते वोधरूपी वुध पुत्र उत्पन्न होवेगा तो वंध मोक्षकी निवृत्ति प्राप्तिवास्ते सर्व कर्तव्योंतें अकर्तव्य होवेगा आगे जैसे इच्छा हो तैसे करो पुत्रने कहा चित्तकी एकाग्रता विना आनंद नहीं आता तो चित्तकी एकाग्रता करनी योग्य है पिताने कहा हे पुत्र चित्तकी एकाग्रता स्वभावसे ही आप होती रहती है तैसे यत्न विनाही हरवक्त नाम रूपात्मक सात्विकी राजसी तामसी पदार्थोंका वा अध्यात्म आधिभौतक आधिदेव पदार्थोंका वा माया तत्कार्य रूप पदार्थोंका स्वभाविक ही चित्तकी

एकाग्रता पूर्वकही ज्ञानहोता रहताहै ज्ञानपूर्वकही हमारी तुम्हारी तथा सर्व जीवोंकी इष्ट अनिष्टमे प्रवृत्ति निवृत्ति होती रहतीहै औ आनंद स्वरूप आत्माहीं सभका इष्ट है सो एक पदार्थोंका ज्ञान एक क्षण रहे वा दो क्षण रहे वा चार वा आठ वा दश क्षण रहके पुनः दूसरे पदार्थका ज्ञान होताहै इसीतरह हर वक्त हर पदार्थका वृत्ति रूप ज्ञान अदल बदल होता रहताहै परंतु यह नेम देखनेमें आताहै किंचित्की एकाग्रता विना पदार्थका ज्ञान होताही नहीं किंतु क्षणमात्र वा दो क्षणमात्र वा चार क्षण एकाग्र बुद्धिसे ही पदार्थका सम्यक् ज्ञान होताहै सो आनंद स्वरूप तथा ज्ञान स्वरूप निजात्माही है अन्य पदार्थ नहीं हैं सो निजात्मा सर्व देशमे सर्वकालमें सर्ववस्तुमें आकाशकी न्याई पूर्ण है एकना एक वस्तुका सर्वकालमें स्वभाविक ज्ञान वना रहताहै ताते यह सिद्ध हुआ कि यत्न विना स्वभाविक वृत्ति ज्ञानरूप चित्तकी एकाग्रता सिद्ध हुई और चित्तकी एकाग्रता निमित्तक जो आत्मरूप सुखकी प्रगटता भी यत्न विनाही सिद्ध हुई कर्तव्य करनेसे नहीं इसीवास्ते सम्यक् आत्मदर्शीको हरवक्त निर्यत्न समाधि कहीहै ये नहींकि चित्तके अफुर होनेसेही समाधिहै फुरनेसे नहीं किंतु चित्तके फुरने अफुरनेसे भी पूर्वोक्त रीतिसे समाधिहीहै हे पुत्र जैसे वायुके दशोदिशाके फुरने अफुरनेका आकाशही विषय नाम संवंधीहै काहेते आकाश व्यापक होनेते तैसे मन रूप वायुके दशोदिशा फुरने अफुरनेका सत् चित् आनंद रूप आत्माही विषय नाम संवंधीहै क्योंकि पूर्ण होनेते ताते सर्व प्रकारसे निष्कर्त्तव्य रूप मालाको फेरतेरहो हे पुत्र जैसे समुद्रकी झाल हमेसा होती रहतीहै परंतु आकाश तिन झालमें आपको निष्कर्त्तव्य असंग अक्रिय विकाररहित मानताहै तैसे मन रूपी वृत्तियोंके फुरने अफुरने रूप झालमें तुम आकाश रूप आत्मा निष्कर्त्तव्य हो ये वात सवके अनुभव सिद्धहै हे पुत्र जव तू आपको अज्ञानी पूर्वमानताथा जैसे संघातका धर्म्म खान पान मान लज्जादि व्यवहार पूर्वथा तैसेही अव ज्ञानकालमें भी होताहै कछु अदल वदल नहीं हुआ ये नहीं कि पूर्व शिरपर वोझथा अव उतर गयाहै कोई

विलक्षणता हुई नहीं ताते विचार देखो ज्ञान अज्ञानादि केवल मननमात्र सिद्ध होतेहैं हे पुत्र तू चैतन्य ही निर्गुण ब्रह्मको मन रूप मंत्रीकर कल्पता है तूही सगुणब्रह्मको तथा तिसकी भक्तिको कल्पता है तथा ज्ञान कर्म उपासना कल्पके आपको अधिकारी अन्यको अन्यधिकारी कल्पता है तूही पाप पुण्य धर्म्माधर्म्म बंध मोक्ष कल्पता है तथा सत् असत् कर्तव्य अकर्त्तव्य सुख दुःख दैव असुर माया अविद्या जीव ईश्वर ब्रह्म जड अजड जीवेश्वरका भेदाभेद कल्पता है इत्यादि सर्व पदार्थोंकी कल्पना अकल्पना का तूही चैतन्य मालिक रहा जो तू नहीं होवे तो कौन किसको जाने काहेते तुझ सत सुख चैतन्य ते पृथक् सर्वको असत् जड दुःख रूप होनेते हे पुत्र जिस जिसकी तू कल्पना करता हैं पुनः जिस जिसको तू जानता है तथा ध्यान करता है सो तू नहीं काहेते जो जानने में ध्यान करने में आवे तिस तिस ते तू न्यारा है पुत्रने कहा तुम कौन हो पिताने कहा जो तुम हो पुत्रने कहा तुम आये कहाँ से हो पिताने कहा जहाँ से तुम आये हो जावोगे कहां जहां तुम जावेगो कर्त्ते क्या हो जो तुम करते हो भोगते क्या हो जो तुम भोगते हो तुम्हारे माता पिता कौन हैं जो तुम्हारे माता पिता हैं तात्पर्य्य यहकि जो तुम्हारी सामग्री है तथा सर्व जगत्की है सोही हमारी है जो तुम ब्रह्मरूप होतो हम भी ब्रह्मरूप हैं जो तुम जीव हो तो हम भी जीव हैं जो कछु तुम जानते हो सो हमभी जानते हैं जो तुमको अपमानादि अनिष्ट भान होते हैं तथा मानादि इष्ट भासते हैं सोई हमको है जो तुम्हारे सुख दुःखके साधन हैं सोई हमारे हैं जो तुमको शब्दादि विषयोंका सर्व प्रकारसे अनुभव होता है तैसेही हमको होता है जो तुम्हारे मन इंद्रियोंके स्वभाव हैं सोई हमारे हैं कहांतक गिने सर्व रूपसे जो तुम्हारे संघातके स्वभाव हैं सोही हमारे संघातके स्वभाव हैं जो तुम संघातके साक्षी हो तो हम भी संघातके साक्षी हैं सब में आत्म उपमा जानो इसीते सर्वब्रह्म है ऐसे शास्त्र कहते हैं ताते सर्व कल्पनाको छाँड़के सम निष्कर्त्तव्य रूप जो जप है तिसी जपको जपो जो पूर्वोक्त रीतिसे इस जपके अर्थको सम्यक् जानता है सोही ज्ञानी है जो अर्थको न जानके भी इस जपको प्रेमसे जपता

है तो उपासना रूप भक्तिमान् कहाता है राम राम वत् मन वाणीसे जो इस जपका कथन चिंतन करता है सो मन वाणीका कर्म कहाता है शारीरक कर्मवत् हे पुत्र पूर्वोक्त ज्ञानका फल तो अनुभव प्रत्यक्ष है परंतु जो तू राम राम जपका विष्णु आदियोंके ध्यान रूप उपासनाका वैकुंठादियोंकी प्राप्ति रूप अदृष्ट फल शास्त्रोक्त रीतिसे सत होगा तो मैं सत् चित् आनंदरूप आत्मा सर्व मन्नादियोंका द्रष्टा असंग त्रिगुणातीत मुक्ष अवाङ्मनसगोचर आत्माको स्वभाव सेही बंध मोक्षकी प्राप्ति निवृत्ति वास्ते किंचित्मात्रभी कर्त्तव्य नहीं वा सर्व अस्ति भाति प्रिय रूप मे आत्माही होनेते भी बंध मोक्षके कर्त्तव्यते निष्कर्त्तव्य हूं इस शास्त्रोक्त निर्गुण उपासना रूप जपका भी फल अवश्य होगा जो गोलमाल होगा तो सर्वका होगा एकका नहीं जो पोल है तो सर्व मेही पोल है सत है तो सबका कथन चिंतन सत है ये नहीं कि एक शास्त्र सत्य है अन्य असत् है हे पुत्र अत्यंत अपने से भिन्न दूर वैकुंठादि में विष्णु आदि ईश्वरोंकी दृढ भावना रूप भजन से ताकी प्राप्ति होती है तो अत्यंत अपने से अभिन्न सच्चिदानंद निजात्माकी दृढ भावना रूप भजन से क्यों न तद् रूपता की प्राप्ति होगी किंतु अवश्य होगी ताते मैं सच्चिदानंद सर्व मनादियोंका साक्षी आत्माहूं वा मनवाणीके विषय जाति गुण क्रियावान् पदार्थों सहित मन वाणी ते मैं अवाङ्मनसगोचर हुवाभी अस्ति भाति प्रियरूप मैंही सर्वात्मा हूं वा इत्यादि विकल्पोंते रहित मैं निर्विकल्पहूं इस दृढ़ भावनारूप भजनको करो जो आगेही स्वतः वही रूप हुये २ पुनः भावनाके वश ते वही रूप होवोगे जैसे घटाकाश तथा प्रतिबिंब यह भावनाकरे कि हम महाकाश और बिंबरूप हैं सो महाकाश तथा बिंबभावको आगेही प्राप्त हुये २ पुनः भ्रांतिकी निवृत्तिसे वही रूप होते हैं इसीवास्ते शास्त्रोंमे निजस्वरूप आत्मवस्तुमें कारण सहित संसाररूप दुःखोंकी निवृत्तिकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्तिकी प्राप्ति कही है जैसे गुडके स्वभाविक स्वरूपमें कटुकताकी निवृत्तिकी निवृत्ति औ मधुरताकी प्राप्तिकी प्राप्ति कही है पुत्रने कहा हे पिता किसी शा-

स्त्रमें कर्मोंको मोक्षका साधन कहा है किसीमें नहीं दोनोमध्ये कौन ठीक है पिताने कहा हे पुत्र कर्म नाम करनेका है सो कायिक वाचिक मानसिक संघातके कर्म करनेसेही धर्म अर्थ काम मोक्ष नाम सुखकी प्राप्ति होती है कछु नहीं करनेसे चारोंकी अप्राप्ति होता है यह सर्वके अनुभव सिद्ध है जैसे क्षुधारूप दुःखकी निवृत्ति औ तृप्तिरूप सुखकी प्राप्ति भोजनका करना रूप कर्मसेही होती है इत्यादि जानलेना औ आत्मा नात्माका सम्यक् विचाररूपी ज्ञान मोक्षका साधन लिखा है सोभी मानसीकर्म है यह नहीं कि शारीरकही कर्म है मानसिक कर्म नहीं किंतु जो संघातसे करिये तिसीका नाम कर्म है ताते कर्मोंसेही सुखरूप मोक्ष प्राप्त होता है औ सुखरूप आत्मा है तिस आत्माकीभी संघातरूप कर्ममेंही उपलब्धी होती है अन्यत्र नहीं दूसरी रीतिसे कर्मोंसे मोक्ष नहीं कही है यहभी ठीकही है औ काहे ते मोक्ष सुखरूप आत्मा संघातकी चेष्टारूप कर्मकी उत्पत्ति स्थिति नाशका साक्षीरूप करकें संघातकी चेष्टासे प्रथमही स्वतःसिद्ध है इसवास्ते आत्मा सुखरूप मोक्ष कर्मोंकर सिद्ध नहींहोता यहभी ठीकही है हे पुत्र सर्व शास्त्रोंमे स्वपक्ष मंडन परपक्षखंडन लिख रक्खा है क्याजाने किसशास्त्रकी बात सत है किसकी नहीं कछु अक्ल काम नहीं करसक्ती ताते सर्व संमत मृत्यु यादपूर्वक सतसंभाषणादि सद्गुणोंको अपनी सामर्थ्य अनुकूल ग्रहण करने औ असत् संभाषणादि असत् गुणोंका निजशक्ति अनुसार त्याग करना औ ईश्वरको स्वस्वरूपकरकें वा भेदबुद्धिकरकें अपने व्यवहारके अवसर अनुकूल कालमे सच्चे दिलसे घडी वा दोघडी वा याद एकवक्त वा दोवक्त तात्पर्य यह कि निजशक्ति मुवाफिक सगुण वा निर्गुण ईश्वरका गुरूदत्त नाम उच्चारणादि पूर्वक सुमरन वा ध्यान करना और सचावटका व्यवहार करना इतनेमे अकल्याण होवे तो होनेदो तात्पर्य यह कि धर्मपूर्वक अपना हक किसीसे छोडना नहीं और अन्यायपूर्वक दूसरेका हक लेना नहीं हे पुत्र पूर्वोक्त प्रकारही सर्व गृहस्थ सज्जन पुरुषोंको उभय लोकके सुखका कारण है सारादिन भजनमें रहना यह गृहस्थ विमुख साधु पुरुषोंका काम है गृहस्थोंका नहीं काहेते चोर यार ठग राजा

राजपुरुष अभ्यागत साधु तथा पशु पक्षी जीव तथा देवता तथा बेटी भगिनी आदि निजसंबंधी तथा ब्राह्मणादि तथा धाडवी
जुलमी फकीर फुकरा लुच्चा जुआरी उठाईगीरा भूत पिशाच प्रेत डाकणी इंद्रजाली भ्रमावक कालवेलि स्वांगी झूंठे मंत्री तंत्री रसायनी
वैद वेश्या कांजड इत्यादि साधु असाधु हजारों जीव फोकट (मुफ्त) मालखाने वाले गृहस्थके आश्रय हैं गृहस्थ विमुख साधु पुरुषोंके
तो आश्रय नहीं साधुही उलटा गृहस्थके आश्रय है और खेती व्यापार नौकरी हुनरादि व्यवहारसे विनाधन आकाशसे वा नदीमेंसेतो
आता नहीं और न किसीको पूर्व आयाहै और धन विना कार्यकी सिद्धि होवे नहीं जो गृहस्थ व्यवहार नहीं करे और सारे दिन भज
नहीं करता रहे इत्यादि पूर्वोक्त जीवोंकी तथा अपनी पालना कैसे होवै जो व्यवहार करेगा तो हजारों तरहके हानि लाभका चिंतन
रूप दलील भी तथा शरीर वाणीका व्यापार भी कई थोड़ा कई घणा करना हीं पडेगा इतना करनेसे भी नेम नहीं है कि नफा हो वा
नुकसान होवेगा ताते सम्यक् विचार देखिये तो ग्रहस्थोंको किंचित् काल भी सच्चेदिलसे ईश्वरका भजन और सचावट का व्यवहार
मोक्षदायक होवेगा जो कोई न्यायकारी ईश्वरहै तो जो ऐसा नहीं माने तो गृहस्थ लाचारहै और कोई परलोक तथा इसलोकके भय दूर
करनेका उपाय नहीं काहेते संघातके धर्म थोरे वा घने काम क्रोधादि तथा दर्शन स्पर्शादि संघातमें होने ठहरे काहेते इनहीका शरीरहै
यह भी ईश्वरका संकेत है शब्दादि ग्राह्य विषय सर्वत्र हाजिरहुजूर है तथा श्रोत्रादि इंद्रिय भी स्वस्वतिन विषयोंके ग्राहक सर्वत्र मौ
जूद होनेते दोनोंका संबंध अनिवारण है यह भी ईश्वरका संकेत है ताते श्रोत्रादि इंद्रियोंकी स्वस्व विषयमें धर्म पूर्वक प्रवृत्ति
होने देनी यही पुरुषार्थ रूप तप गृहस्थको मोक्षदायक होगा अन्यथा कोई प्रकार तप वन सक्ता नहीं काहेते जैसे काम क्रोध लोभ
मोह अहंकार झूठ कपटादि छलसे ठगी चोरी यारी आदि कर्त्ता है तथा इंद्रियोंकी स्वस्व विषयमें प्रवृत्ति कायदेसे वाहर अन्याय
जुल्मसे कर्त्ते हैं तथा जो स्वपरके प्राणोंको पीडन कर्ते हैं तिनहींको राजा दंड देताहै अन्यको नहीं यह नहीं कि राजाकी स्तुति करने

